श्रीहेमचन्द्रकृत

प्राकृत व्याकरण

(हेमचन्द्रकृत सिद्धहेमशब्दानुशासनका आठवाँ अध्याय)

डॉ. के.वा.आप्टे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ श्रीः ॥

चौखम्भा संस्कृतभवन ग्रन्थमाला
८

श्रीहेमचन्द्रकृत

प्राकृत-व्याकरण

(हेमचन्द्रकृत सिद्धहेमशब्दानुशासनका आठवाँ अध्याय)

मूलग्रन्थ, संस्कृत-संहिता, वृत्ति एवं सटिप्पण हिन्दी अनुवाद

सम्पादक
प्रा. डॉ. के. वा. आप्टे एम्. ए., पीएच्. डी.
संस्कृत-प्राकृतके भूतपूर्व अध्यापक
विलिंग्डन कालेज, सांगली

चौखम्भा संस्कृत भवन
संस्कृत, आयुर्वेद एवं इन्डोलाजिकल ग्रन्थों के प्रकाशक एवं वितरक
पोस्ट बाक्स नं० ११६०
चौक (दी बनारस स्टेट बैंक बिल्डिंग)
वाराणसी-२२१००१ (भारत)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशक : चौखम्भा संस्कृत भवन, वाराणसी
मुद्रक : वि० प्रि० प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि० सं० २०५२
मूल्य : रु० २००-००

© चौखम्भा संस्कृत भवन, वाराणसी
इस ग्रन्थ के परिष्कृत तथा परिवर्धित मूल-पाठ
एवं टीका, परिशिष्ट आदि के सर्वाधिकार
प्रकाशक के अधीन हैं।

फोन : ३२०४१४

प्रधानकार्यालय
चौखम्भा संस्कृत संस्थान
पोस्ट बाक्स नं० ११३९
के. ३७/११६, गोपाल मन्दिर लेन (गोलघर समीप मैदागिन)
वाराणसी—२२१ ००१ (भारत)
फोन : ३३३४४५, ३३५६३०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

THE
CHAUKHAMBHA SANSKRITBHAWAN SERIES
8

PRĀKRITA VYĀKARAṆA

By

HEMACHANDRA

(*8th CHAPTER OF SIDHAHEMAŚABDĀNUŚASANAM*)

TEXT, SANSKRIT COMMENTARY AND TRANSLATION
IN HINDI WITH NOTES

EDITED By
Dr. K. V. APTE M. A., Ph. D.
Ex LECTURER, in SANSKRIT AND PRĀKRIT
Wildingden College, SANGALI

CHAUKHAMBHA SANSKRIT BHAWAN
Sanskrit Ayurveda & Indological Publishers & Distributors
Post Box No. 1160
CHOWK (The Benaras State Bank Bldg.)
VARANASI-221001

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

© *Chaukhambha Sanskrit Bhawan, Varanasi*
Phone : 320414
Edition : First 1996

Head Office—
CHAUKHAMBHA SANSKRIT SANSTHAN
Post Box No. 1139
K. 37/116, Gopal Mandir Lane (Golghar Near Maidagin)
VARANASI-221001 (INDIA)
Phone : 333445, 335930

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना १

पादानुसार विषय

(विषयके अगले अंक सूत्रोंके अनुक्रमांक हैं ।)

प्रथमपाद

प्राकृत और आर्ष १-३, समासमें स्वरोंका ह्रस्वीभवन और दीर्घीभवन ४, संधि ५-१०, शब्दमें अन्त्य व्यञ्जनके विकार ११-२४ ङ् ञ् ण् न्के विकार २५, अनुस्वारागम २६-२७, अनुस्वारलोप २८-२९, अनुस्वारका वैकल्पिक विकारे ३०, लिंगविचार ३१-३६, अकारके आगे विसर्गका विकार ३७, निर् और प्रति शब्दोंके विकार ३८, आदिस्वरविकार ३९-१७५, स्वरके आगे अनादि असंयुक्त व्यञ्जनके विकार १७६-२७१ ।

द्वितीयपाद

संयुक्त व्यञ्जनके विकार १-११५, स्थितिपरिवृत्ति ११६-१२४, कुछ संस्कृत शब्दोंको होनेवाले आदेश १२५-१४४, प्रत्ययोंको होनेवाले आदेश १४५-१६ , भवार्थी प्रत्यय १६३, स्वार्थे प्रत्यय १६४, कुछ शब्दोंके आगे आनेवाले स्वार्थे प्रत्यय १६५-१७३, गोणादि निपात शब्द १७४, अव्ययोंके उपयोग १७५- १८ ।

तृतीयपाद

वीप्सार्थी पदके आगे स्यादिके स्थानपर वैकल्पिक मकार १ संज्ञारूपविचार २-५७, सर्वनामरूप विचार ५८-८९, युष्मद्के रूप ९०-१०४, अस्मद्के रूप १०५-११७, संख्यावाचक शब्दोंके रूप ११८ १२३, विभक्तिरूपोंके बारेमें संकीर्ण नियम १२४-१३०, विभक्तियोंके उपयोग १३१-१३७, नामधातु १३८, वर्तमानकालमें लगनेवाले प्रत्यय १३९-१४५, अस धातुके वर्तमानकालके रूप १४६-१४८, प्रेरक प्रत्यय १४९-१५३, प्रत्यय लगते समय होनेवाले विकार १५४-१५९, धातुके कर्मणि अंग १६०-१६१, भूतकाल १६२-१६३, अस धातुका भूतकाल १६४, विध्यर्थ-प्रत्यय-आदेश १६५, भविष्यकाल १६६-१७२, विध्यर्थ-आज्ञार्थ-प्रत्यय १७३-१७६, प्रत्ययोंको होनेवाले ज्ज और ज्जा आदेश १७७-१७८, संकेतार्थ १७९-१८०, शतृ-शानश्-प्रत्ययोंके आदेश १८१, शतृ-शानश्-प्रत्ययान्तोंके स्त्रीलिंगी अंग १८२ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्थपाद

धातुके आदेश १-२०, प्रेरक धातुके आदेश २१-५१, धातुके आदेश ५२-२०९, विशिष्ट प्रत्ययोंके पूर्व धातुको होनेवाले आदेश २१०-२१४, धातुके अन्त्य व्यञ्जनमें होनेवाले विकार २१५-२३२, धातुके अन्त्य स्वरके विकार २३३-२३७, धातुमें स्वरके स्थानपर अन्य स्वर २३८, व्यञ्जनान्त धातुके अन्तमें अकार २३९, अकारान्तेतर स्वरान्त धातुके अन्तमें वैकल्पिक अकारागम २४०, चि इत्यादि धातुओंके अन्तमें णकारागम २४१, चि इत्यादि धातुओंके वैकल्पिक कर्मणि अंग २४२-२४३, हन् खन् इत्यादि धातुओंके वैकल्पिक कर्मणि अंग २४४-२५०, कुछ धातुओंके आदेशरूप कर्मणि अंग २५१-२५७, क० भू० धा० वि० के स्वरूपमें आनेवाले निपात २५८, धातुओंके अर्थमें बदल २५९, शौरसेनी भाषा २६०-२८६, मागधी भाषा २८७-३०२, पैशाची-भाषा ३०३-३२४, चूलिका पैशाची भाषा ३२५-३२८, अपभ्रंश भाषा ३२९-४४६, प्राकृतभाषा-लक्षणों का व्यत्यय ४४७, उपसंहार ४४८।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तावना

भारत की कुछ विशिष्ट प्राचीन भाषाओंको प्राकृत नाम दिया जाता है। उसका व्याकरण कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्रने संस्कृतमे लिखा है। यह प्राकृत व्याकरण विस्तृत और प्रमाणभूत है। हिंदी अनुवाद सहित वह सम्पूर्ण व्याकरण यहाँ पहली बार प्रस्तुत किया जा रहा है।

भारतीय भाषाओंमें प्राकृत

भारतीय भाषाओंका आर्यभाषा और आर्येतर भाषा ऐसा वर्गीकरण किया जाता है। उनमेंसे आर्य भाषाएँ भारतीय इतिहास-संस्कृतिसे घनिष्ठ रूपमें संबंधित हैं। पिछले चार साढ़े चार सहस्र वर्षोंसे आर्य भाषाओंका विकास भारतमें चल रहा है। इन्हीं आर्यभाषाओंमें प्राकृतका समावेश होता है।

प्राकृत शब्द का अर्थ

प्राकृत शब्दकी निश्चित व्युत्पत्ति तथा अर्थ—इनके बारेमें विद्वानोंमें मतभेद है। (अ) कुछ लोगोंके मतानुसार, प्राकृत शब्द संस्कृतके 'प्रकृति' शब्दसे सिद्ध हुआ है। तथापि प्रकृति शब्दसे क्या अभिप्रेत है इसके बारेमें भी मतभिन्नता है। (१) भारतीय प्राकृत वैयाकरणोंके [1]मतानुसार, प्रकृति शब्दसे संस्कृत भाषा सूचित होती है। संस्कृतरूप [2]प्रकृतिसे उद्भूत वह प्राकृत ऐसा अर्थ होता है। प्राकृतका [3]मूल (योनि) संस्कृत है; संस्कृतरूप प्रकृतिकी विकृति यानी विकार प्राकृत है। इसका अभिप्राय यह है कि संस्कृत भाषासे ही प्राकृत भाषा निर्माण हुई है। (२) कुछ पंडितोंके मतानुसार, प्रकृति शब्दसे संस्कृत भाषा अभिप्रेत नहीं है। प्रकृति शब्दका अर्थ है मूल स्वभाव, इसलिए प्राकृत यानी मूलतः अथवा[4] स्वभावतः सिद्ध होनेवाली भाषा है। (३) कुछ लोगों के मतानुसार, प्रकृति यानी जनसाधारण अथवा सामान्य लोग; उनकी जो भाषा[5] वह प्राकृत है। सामान्यजनोंके जिस भाषा पर व्याकरण इत्यादि संस्कार नहीं हुए हैं ऐसी सहज होनेवाली भाषा प्रकृति है; वही प्राकृत है; अथवा उस प्रकृति से सिद्ध[6] होनेवाली प्राकृत है। एवं सर्वसाधारण लोगोंकी संस्काररहित/अकृत्रिम भाषा प्राकृत है। (आ) नमिसाधु प्राकृत शब्दकी व्युत्पत्ति ऐसी भी देता है :—प्राक् कृत यानी प्राकृत, यानी पहलेकी हुई, और स्त्री, बाल इत्यादिको समझनेमें सुलभ होनेवाली [7]वह प्राकृत है।

प्राकृत शब्दका एक नया स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया जा सकता है:—'संस्कृत भाषा' शब्द प्रचारमें आनेपर भाषा बोधक प्राकृत शब्द प्रचारमें आया। अभिप्राय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह है कि संस्कृतसे भिन्नत्व दिखानेके लिए प्राकृत शब्द प्रयुक्त किया जाने लगा। संस्कृत शब्द सम् + कृ धातुका कर्मणि भूतकालवाचक धातुसाधित विशेषण है और उसका अर्थ है 'संस्कारित किया हुआ' वचन या भाषा। प्राकृत शब्द भी प्र + आ + कृ धातु का कर्मणि भूतकालवाचक धातुसाधित विशेषण है, और उसका अर्थ है, 'बहुत (प्र) विरुद्ध अथवा भिन्न (आ) किया अथवा हुआ, वचन किंवा भाषा। मतलब यह कि संस्कृतसे भिन्न स्वरूप होनेवाली भाषाओंके पृथकत्व दिखानेके लिए प्राकृत शब्द प्रचारमें आया। संक्षेपमें, प्राकृत यानी संस्कृतसे भिन्न (पूर्वकालीन) भाषा।

प्राकृत शब्दसे सूचित होनेवाली भाषाएँ

प्राकृत शब्दसे कौनसी भाषाएँ सूचित होती हैं इस बातमें भारतीय प्राकृत वैयाकरण और आलंकारिक इनका एक मत नहीं है:—(अ) प्राकृत (माहाराष्ट्री), शौरसेनी, मागधी और पैशाची इन चार प्राकृतोंका विवेचन वररुचि करता है। (आ) माहाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी, आवन्तिका और प्राच्या इन पांच प्राकृतोंका निर्देश मृच्छकटिक नाटकका टीकाकार करता है। (इ) प्राकृत (माहाराष्ट्री), शौरसेनी, मागधी, पैशाची, चूलिका पैशाची और अपभ्रंश ये छः प्राकृतें लक्ष्मीधर कहता[८] है। (ई) मागधी अवन्तिजा, प्राच्या, शौरसेनी, अर्धमागधी, बाह्लीका और दाक्षिणात्या ऐसी सात प्राकृत भाषाओंका निर्देश भरत[९]ने किया है। (उ) प्राकृत (माहाराष्ट्री), आर्ष, शौरसेनी, मागधी, पैशाची, चूलिका पैशाची और अपभ्रंश इन सात भाषाओंकी चर्चा हेमचन्द्र करता है। (ऊ) माहाराष्ट्री, शौरसेनी, प्राच्या, आवन्ती, मागधी, शाकारी, चाण्डाली, शाबरी, टक्कदेशीया, अपभ्रंश (और उसके प्रकार), पैशाची (और उसके प्रकार) पुरुषोत्तमदेवके प्राकृतानुशासनमें दिखाई देते हैं। (ए) मार्कंडेय सोलह प्राकृतोंका विवरण करता है। सर्वप्रथम वह प्राकृतके भाषा, विभाषा, अपभ्रंश और पैशाच ये चार विभाग करता है और इन विभागों में वह निम्नानुसार प्राकृतें कहता है:—(१) भाषा:—माहाराष्ट्री, शौरसेनी, प्राच्या, आवन्ती और मागधी। (२) विभाषा:—शाकारी, चाण्डाली, शाबरी, आभीरिका और टाक्की। (३) अपभ्रंश:—नागर, व्राचड और उपनागर। (४) पैशाच:—कैकेय, शौरसेन और पांचाल।

प्रधान प्राकृत भाषाएँ

ऊपर दी गई प्राकृत भाषाओंके बारेमें भी यह बात लक्षणीय है कि कुछ भारतीय प्राकृत व्याकरणकार[१०] कुछ प्राकृतोंको अन्य प्राकृतोंका मिश्रण अथवा उपप्रकार समझते हैं। उदा०—आवन्ती (= अवन्तिजा, आवन्तिका) माहाराष्ट्री और शौरसेनीके संकटसे बनी[११] है। प्राच्या[१२] भाषाकी सिद्धि शौरसेनीसे ही हुई है। 'र का ल होना' यह फर्क छोड़ दे, तो बाह्लीकी [१३]भाषा आवन्ती भाषामें ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतर्भूत होती है। [१४]शाकारी भाषा मागधीका ही एक प्रकार है : चाण्डाली भाषा मागधी और शौरसेनी के मिश्र से बनी है, ऐसा मार्कंडेय[१५] का कहना है, तो पुरुषोत्तम देवके [१६]मतानुसार, चाण्डाली भाषा मागधीका ही एक प्रकार है। शाबरी भाषा[१७] मागधीका ही एक प्रकार है। आभीरी भाषा शाबरीके समान है: सिर्फ क्त्वा-प्रत्ययको इअ और उअ ऐसे आदेश[१८] आभीरीमें होते हैं। टाक्की भाषा[१९] संस्कृत और शौरसेनीके संकरसे बनी है। जैनोंके अर्धमागधीको हेमचन्द्र आर्ष कहता है, और उसे (माहाराष्ट्री-) प्राकृतके नियम विकल्पसे लागू पड़ते हैं ऐसा उसका[२०] कहना है। और अर्धमागधी बहुतांशोंमें [२१]माहाराष्ट्रीके समान ही है। तथा चूलिका पैशाची और पैशाचीके अन्य प्रकार ये तो पैशाचीके उपभेद हैं। उसी प्रकार अपभ्रंश भाषाके प्रकारभी अपभ्रंशके उपभेद हैं।

ऊपरका विवेचन ध्यानमें रखे, तो माहाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी, पैशाची और अपभ्रंश इन पाँच भाषाओंको ही प्रधान प्राकृत भाषाएँ समझनमें कुछ आपत्ति न हो।

प्राकृत भाषाओं के नाम

जो जाति और जमाथि विशिष्ट प्राकृत बोलती थीं, उनसे उन प्राकृतोंको नाम दिये गए ऐसा दिखाई देता है। उदा०—शाबरी, चाण्डाली, इत्यादि। तथा जिन देशोंमें जो प्राकृतें बोली जातीं थी उन देशोंके नामोंसे उन प्राकृतोंको नाम दिये गए ऐसा भी दिखाई देता है। उदा०—शौरसेनी, मागधी, इत्यादि। इस सन्दर्भ में लक्ष्मीधरका कहना लक्षणीय है :—शूरसेनोद्भवा भाषा शौरसेनीति गीयते। मगधोत्पन्नभाषां तां मागधीं सम्प्रचक्षते॥ पिशाचदेशनियतं पैशाची—द्वितयं भवेत्॥

भारतीय आर्यभाषाओंमें प्राकृतोंका स्थान

ऊपर निर्दिष्ट हुई प्राकृत भाषाएँ पूर्वकालमें बोली-भाषाएँ थीं; तथापि आज मात्र वे वैसी नहीं हैं; परन्तु उनके अवशेष साहित्य में दिखाई देते हैं। संस्कृत भाषा और आधुनिक आर्य भारतीय भाषाएँ इनसे प्राकृतोंका स्वरूप कुछ प्रकारोंमें भिन्न है; फिर भी वे उन दोनोंके बीचमें आती हैं। कुछ विद्वानोंके मतानुसार, प्रधान प्राकृतोंसे अथवा उन प्राकृतोंके अपभ्रंशोंसे आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ उत्पन्न हुई हैं।

प्राकृतोंका शब्द-संग्रह

प्राकृत वैयाकरणोंके मतानुसार, प्राकृत संस्कृतसे सिद्ध हुई हैं। अपने इस मत के अनुसार वे प्राकृत शब्दोंका त्रिविध वर्गीकरण देते हैं :—(१) तत्सम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(= संस्कृत सम)—जो संस्कृत शब्द कोई भी विकार न होते हुए प्राकृतमें जैसे के तैसे आते हैं वे तत्सम शब्द। उदा०—इच्छा, उत्तम, मन्दिर इत्यादि। (२) तद्भव (= संस्कृतभव)—जो संस्कृत शब्द कुछ विकार/बदल पाकर प्राकृतमें आते हैं, वे तद्भव शब्द। उदा०—अग्गि (√अग्नि), हत्थ (√हस्त), पसाय (√प्रसाद) किवा (√कृपा) इत्यादि। प्राकृतमेंसे ९५ प्रतिशतसे अधिक शब्दोंके मूल संस्कृत भाषामें दिखाई देते हैं। (३) देशी अथवा देश्य—प्रायः जिन शब्दोंका संस्कृतसे कुछ सम्बन्ध नहीं जोड़ा जा सकता है, ऐसे शब्द। उदा०—खोडी, बप्प, पोट्ट इत्यादि।

प्राकृतों की स्तुति

कुछ पूर्ववर्ति लेखकोंका मत है कि संस्कृतसे प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाएँ अधिक अच्छी हैं। बालरामायणमें राजशेखर कहता है :—प्रकृतिमधुराः प्राकृतगिरः। शाकुन्तल नाटकके टीकाकार शङ्करके मतानुसार :—संस्कृतात् प्राकृतं श्रेष्ठं ततोऽपभ्रंश भाषणम्। कुवलयमालाकार उद्योतन कहता है :—संस्कृत भाषा दुर्जनों के हृदयके समान विषम है; प्राकृत सज्जनोंके वचनके समान सुखसङ्गत/शुभसङ्गत (सुह-संगम) है; तो अपभ्रंश प्रणयकुपित प्रणयिनीके वचनके समान मनोहर है।

हेमचन्द्र और उसके ग्रन्थ

प्रारम्भमें ही कहा गया है कि प्रस्तुत प्राकृत व्याकरण आचार्य हेमचन्द्रने लिखा है। यह हेमचन्द्र जैनधर्मियोंमें माननीय था। उसके पास तीव्रबुद्धिमत्ता, गहरा ज्ञान और अच्छी प्रतिभा थी। व्याकरण, कोश, काव्य, छन्द, चरित्र इत्यादि साहित्यके विविध अङ्गोंमें हेमचन्द्रने लेखन किया है। उसका लेखन संस्कृत और प्राकृत दोनों भाषाओंमें है। उसका बहुतांश लेखन उसके आश्रयदाता राजाकी सूचनानुसार हुआ ऐसा दिखाई देता है। अपने जिन ग्रन्थोंका अधिक स्पष्टीकरण करना हेमचन्द्रको आवश्यक लगा, उन ग्रन्थोंपर उसने अपनी स्वोपज्ञ वृत्ति लिखी है।

गुजरात देशके धन्धुका नामक गाँवमें विक्रम सम्वत् ११४५ (इ० स० १०८८ में) में हेमचन्द्रका जन्म मोढ महाजन (वाणी) जातिमें हुआ। उसके परिवारके धर्मके बारेमें निश्चित जानकारी उपलब्ध नहीं है; फिर भी उसपर जैनधर्मका प्रभाव दिखाई देता है। हेमचन्द्रका जन्मनाम चांगदेव था; उसके पिता का नाम चच्च था; और उसकी माताका नाम पाहिणी (या चाहिणी) था। एक बार देवचन्द्र सूरि नाम एक जैनधर्मानुयायी धन्धुका गाँवमें आया। चांगदेवके कुछ अङ्ग चिह्न देखकर, उसको जैनसाधु बनानेकी इच्छासे, देवचन्द्रने पाहिणीके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पास चांगदेवकी याचना की। उस समय चांगदेवका पिता दूसरे गाँवमें गया हुआ था। माताने बहुत कष्टसे देवचन्द्रकी याचना स्वीकार की। यह बात समझने पर, वापस आया हुआ चच्च क्रुद्ध हुआ। परन्तु सिद्धराजके उदयन नामके जैन मन्त्री ने उसे समझाया।

चांगदेवको पाँचवें वर्षमें देवचन्द्रने जैनसाधुकी दीक्षा दी, और उसका सोमचन्द्र नाम रखा। सोमचन्द्रने आवश्यक विद्याभ्यास किया। आगे चलकर सोमचन्द्रने गिरनार पर्वतपर सरस्वतीदेवीकी उपासनाकी। प्रसन्न हुई सरस्वतीने उसको सारस्वत मन्त्र दिया। जिसके बलसे सोमचन्द्र विद्वान् हो गया। उसकी विद्वत्ता देखकर, कुछ कालके अनन्तर देवचन्द्रने उसे 'सूरि' उपाधि दी, और उसका 'हेमचंद्र' ऐसा नया नामकरण किया।

एक बार हेमचन्द्रने गुजरातकी राजधानीको भेंट दी। वहाँ सिद्धराज नामक तत्कालीन राजासे उसका परिचय करा दिया गया। और अनन्तर हेमचन्द्र उसके आश्रयमें रहा। इस सिद्धराजकी सूचनानुसार हेमचन्द्रने "सिद्धहेमशब्दानुशासन" नामक व्याकरण रचा। सिद्धराजके कुमारपाल नामक पुत्रपर हेमचन्द्रका बहुत प्रभाव पड़ा। कुमारपालके शासनकालमें हेमचन्द्रने अपने अन्य ग्रन्थोंकी रचना की।

चौऱ्यासी वर्षोंकी लम्बी आयु हेमचन्द्रको प्राप्त हुई थी। उसने अनेक वाद-विवाद किए, बहुत लोगोंको जैनधर्मके प्रति आकृष्ट किया, अनेक शिष्य किए, विविध ग्रन्थ रचे, और विक्रम सम्वत् १२२९ (इ० स० ११७२) में देहत्याग किया।

हेमचन्द्रका पांडित्य देखकर उसे प्राचीन कालमें 'कलिकालसर्वज्ञ' उपाधि दी गई थी। कुछ अर्वाचीन लोग उसे 'ज्ञानसागर कहते हैं।

हेमचन्द्रके नामपर अनेक ग्रंथ हैं। उनमेंसे कुछ ग्रन्थोंके उसके होनेपर संदेह किया जाता है। तथा इन ग्रन्थोंमेंसे कुछ सद्यःकालमें अनुपलब्ध, कुछ अमुद्रित, तो कुछ मुद्रित हैं। कुछ ग्रंथोंके नाम ऐसे हैं:—छन्दोनुशासन, सिद्धहेमशब्दानुशासन, अभिधानचिंतामणि, देशीनाममाला, काव्यानुशासन, द्व्याश्रयमहाकाव्य, प्रमाणमीमांसा, योगशास्त्र, त्रिषष्टिशलाका पुरुषचरित, इत्यादि।

हेमचन्द्र का प्राकृत व्याकरण

सिद्धराजकी सूचनानुसार हेमचन्द्रने 'सिद्धहेमशब्दानुशासन' नामक संस्कृत और प्राकृतका व्याकरण लिखा। इसपर उसकी स्वोपज्ञ वृत्ति है। इस व्याकरणके कुल आठ अध्याय हैं। पहले सात अध्यायोंमें संस्कृत व्याकरणका विवरण है और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतिम आठवें अध्यायमें प्राकृत व्याकरणका विवेचन है। आठवाँ अध्याय चार पादोंमें विभक्त है। इस अध्यायमें प्राकृत (= माहाराष्ट्री), आर्ष, शौरसेनी, मागधी, पैशाची, चूलिका पैशाची और अपभ्रंश इन भाषाओंके लक्षण और उदाहरण हेमचन्द्रने दिए हैं। इस प्राकृत व्याकरणमेंसे नियमोंके उदाहरण हेमचन्द्रकृत 'कुमारपालचरित' ग्रन्थमें भी दिखाई देते हैं।

हेमचन्द्रके वर्णित प्राकृतोंका संक्षिप्त परिचय

हेमचन्द्रका 'प्राकृत' शब्द सामान्यतः प्राकृतभाषावाचक न होकर, वह शब्द उसने माहाराष्ट्री प्राकृतके लिए प्रयुक्त किया है। उससे कहा हुआ प्राकृतका स्वरूप माहाराष्ट्रीके स्वरूपसे मिलता-जुलता है। और इस संदर्भमें, 'तत्र तु प्राकृतं नाम महाराष्ट्रोद्भवं विदुः 'यह लक्ष्मीधरका बचन ध्यान देने योग्य है। आर्ष प्राकृत का उल्लेख हेमचन्द्र बीच-बीचमें करता है। हेमचन्द्रसे वर्णित चूलिका पैशाची प्रधान प्राकृत न होने, पैशाचीकी ही एक उपभाषा दिखाई देती है। इसकी पुष्टि होती है उस वचनसे जो हेमचन्द्रने अन्यत्र कहा है। अभिधानचिंतामणि नामक अपने ग्रंथमें, 'भाषाशट् संस्कृतादिकाः' इस अपने वाक्यका विवरण करते समय हेमचन्द्र लिखता है:—'संस्कृत-प्राकृत-मागधी शौरसेनी-पैशाची-अपभ्रंश-लक्षणाः। यहाँ चूलिका पैशाचीका स्वतन्त्र भाषाके स्वरूपमें उसने निर्देश नहीं किया है। इसलिए चूलिका पैशाचीको पैशाचीका प्रकार समझना अनुचित नहीं होगा। एवं,प्राकृत (=माहाराष्ट्री) शौरसेनी, मागधी, पैशाची और अपभ्रंश इन प्रधान प्राकृतोंका विवेचन हेमचन्द्रने किया है, ऐसा कहनेमें कोई आपत्ति नहीं होगी। इन प्राकृतोंकी अधिक जानकारी निम्नानुसार है—

माहाराष्ट्री

हेमचन्द्र इत्यादि वैयाकरण माहाराष्ट्रीको प्राकृत कहते हैं, तो प्राकृतचन्द्रिका उसे 'आर्ष' नाम देती है। दंडिन्के मतानुसार, महाराष्ट्राश्रया प्राकृत प्रकृष्ट है (महाराष्ट्राश्रयां भाषां प्रकृष्टं प्राकृतं विदुः)। प्राकृत वैयाकरणोंके मतानुसार, सर्व प्राकृत भाषाओंमें माहाराष्ट्रीही मुख्य/प्रधान और महत्त्वपूर्ण है। वह अन्य प्राकृतोंकी मूलभूत[२२] मानी गई है। अथवा अन्य प्राकृतोंके अध्ययन[२३] के लिए अत्यन्त उपयुक्त समझी गई है। अतः प्राकृत वैयाकरण प्रथम माहाराष्ट्रीका स्वरूप सम्पूर्ण और सविस्तार रूपमें बताते हैं, और बादमें उससे अन्य प्राकृतोंकी जो विभिन्न विशेषताएँ हैं उनको बताते हैं। हेमचन्द्रने इसी पद्धतिको स्वीकारा है।

माहाराष्ट्री नामसे यह स्पष्ट होता है कि यह प्राकृत महाराष्ट्रमें उत्पन्न हुई और वहाँ प्रचारमें थी। परन्तु इस बारेमें कुछ लोग संदेह व्यक्त करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेक काव्यग्रन्थ माहाराष्ट्री प्राकृतमें हैं। उदा०—गउडवहृ, सेतुबन्ध इत्यादि। संस्कृत नाटकोंमें पद्यभाग प्रायः महाराष्ट्री में होता है।

आर्ष (अर्धमागधी)

हेमचन्द्र कहता हैं कि प्राकृत (= माहाराष्ट्री) के नियम विकल्पसे आर्ष प्राकृतपर लागू पड़ते हैं। आर्ष प्राकृत शब्दसे हेमचन्द्रको श्वेतांबर जैनोंके मूलातम ग्रन्थोंकी अर्धमागधी भाषा अभिप्रेत है, यह उसके सूत्र ४·२८७ के ऊपरकी वृत्तिसे [२४]स्पष्ट हो जाता है। इसीको ही अर्धमागध, अर्धमागधा (या अर्धमागधी) नाम दिये जाते हैं। इसीको जैन ग्रन्थ 'ऋषि-भाषिता' कहते हैं। यह अर्धमागधी संस्कृत के नाटकमें दिखाई देनेवाली अर्धमागधीसे भिन्न स्वरूप है; इसीलिए इसको कभी-कभी जैन अर्धमागधी कहा जाता है।

शौरसेनी

शूरसेन देशमें उत्पन्न हुई शौरसेनी भाषा है। संस्कृत नाटकोंमें नायिका और सखी मुख्यतः गद्यभागमें शौरसेनी प्रयुक्त करती हैं। प्राकृत व्याकरणोंमें भी इस भाषाके उदाहरण मिलते हैं।

मागधी

मगध देशकी भाषा मागधी है। संस्कृत नाटकोंमें राजाके अन्तःपुरके लोग अश्वपालक, राक्षस इत्यादि पात्र मागधी भाषा प्रयुक्त करते हैं। अशोकके शिलालेख और प्राकृत व्याकरण इनमें भी इस मागधीके उदाहरण दिखाई देते हैं।

पैशाची

पिशाच देशोंकी भाषा पैशाची ऐसा लक्ष्मीधर कहता है। तथापि ये पिशाच देश कौनसे हैं—इस बारेमें मतभेद है। वाग्भट पैशाची को 'भूतभाषित' कहता है। भूतपिशाच इत्यादि कुछ नीच पात्रोंके लिए पैचाचीका प्रयोग कहा गया है। मार्कंडेय कहता है कि पैशाचीके ग्यारह उपप्रकार हैं; तथापि वह स्वयं मात्र कैकेय, शौरसेन और पांचाल ये पैशाचीके तीन ही प्रकार मानता है।

गुणाढ्य की बृहत्कथा—जो आज अनुपलब्ध है—पैशाची भाषामें थी ऐसा कहा जाता है। प्राकृत व्याकरण, हेमचन्द्रके कुमारपालचरित और काव्यानुशासन, कुछ षड्भाषा स्तोत्र इनमें पैशाचीके उदाहरण मिलते हैं।

चूलिका पैशाची

हेमचन्द्रने चूलिका पैशाचीकी जो विशेषताएँ दी हैं वे अन्य वैयाकरणोंके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मतानुसार पैशाचीकी ही हैं। चूलिका पैशाचीको पैशाचीका उपभेद समझनेमें कोई आपत्ति नहीं है। इसके उदाहरण हेमचन्द्रके कुमारपालचरित और काव्यानुशासन इनमें दिखाई देते हैं।

अपभ्रंश

अपभ्रंश शब्दके भिन्न स्पष्टीकरण पूर्वग्रन्थोंमें मिलते हैं। दंडिनूके मतानुसार, काव्यमें आभीर इत्यादिको भाषा और शास्त्रमें संस्कृतेतरभाषा यानी अपभ्रंश। रुद्रट कहता है:—देशविशेषादपभ्रंशः। इस वाक्यकी टीकामें प्राकृतमेवापभ्रंशः' ऐसा नमिसाधु कहता है। तो उस-उस देशमें शुद्ध भाषा यानी अपभ्रंश ऐसा वाग्भट का वचन[२६] है। माहाराष्ट्री इत्यादि प्राकृत भाषाओंकी अन्तिम अपस्था यानी अपभ्रंश ऐसा कहा जा सकता है।

अपभ्रंशके अनेक उपप्रकार मार्कंडेय इत्यादि लोग कहते हैं। हेमचन्द्र मात्र अपभ्रंशका कोईभी प्रकार नहीं देता है।

बिक्रमोर्वशीय नाटक और प्राकृत व्याकरण इनमें अपभ्रंशके उदाहरण हैं। इसके अलावा भविसमत्त कहा, करकण्डचरिउ इत्यादि अनेक अपभ्रंश भाषाके ग्रन्थ आज उपलब्ध हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थकी रचना

हिन्दी अनुवाद-टिप्पणी सहित हेमचन्द्रका प्राकृत व्याकरण यहाँ प्रस्तुत करते समय आगे दी हुई पद्धति स्वीकृत की गई है:—

(१) पहले हेमचन्द्रका मूल संस्कृत सूत्र और उसका अनुक्रमांक अनन्तर उस सूत्रके ऊपरकी संस्कृतवृत्ति, और बादमें हिन्दी अनुवाद दिया है। एकाद अक्षरके ऊपरका ˘ यह चिह्न स्वरका लघु/ह्रस्व उच्चारण दिखाता है। अक्षरके ऊपरका ˙ यह चिह्न सानुनासिक उच्चारण दिखाता है। वृत्तिमें पद्यात्मक उदाहरण होनेपर' उन्हें उस-उस सूत्रके नीचे एक (१), दो (२) इत्यादि अनुक्रमांक दिये हैं। (२) वृत्ति में सूत्रका अर्थ आता है; इसलिए सूत्रका स्वतन्त्र भाषान्तर न देते हुए, केवल वृत्ति का ही भाषान्तर दिया है। मूल में से पारिभाषिक/तान्त्रिक शब्द अनुवादमें जैसे के तैसे ही रखे हैं; उनका स्पष्टीकरण अन्तमें टिप्पणियोंमें दिया है। मूल में होनेवाले परन्तु अर्थ समझनेके लिए आवश्यक होनेवाले शब्द कोष्ठकोंमें रखे हैं। अनुवादक में भी आवश्यक स्थानों पर कुछ शब्दोंका स्पष्टीकरण उन शब्दोंके आगे कोष्ठ में = इस समीकरण चिह्न से दिया है। अनेक बार हेमचन्द्र सूत्रोंमें दिए हुए शब्द वृत्ति में पुनः नहीं देता है; ऐसे शब्द भाषान्तरमें लेकर कोष्ठकमें रखे हैं। कभी-कभी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूलका शब्दशः भाषान्तर थोड़ा भिन्न होता हो, तो वह कोष्ठकमें 'श' शब्द प्रयुक्तकर दिया है। वृत्तिमें से उदाहृत शब्दोंकी पुनरुक्ति अनुवादमें न करते हुए उनमें से केवल पहला शब्द देकर आगे ३-४ बिन्दु रखकर बादमें अन्तिम शब्द दिया है। पद्यात्मक उदाहरणोंके बारेमें भी ऐसा ही संक्षेप किया है क् ख् इत्यादि व्यञ्जन हेमचन्द्र उनमें 'अ' स्वर मिलाकर क ख इत्यादि प्रकार से देता है; अनुवादमें भी बहुधा वैसा ही किया है। कुछ स्थानोंपर मात्र अनुवादमें व्यञ्जन क् ख् इत्यादि पद्धति से दिए हैं। वृत्तिमें से उदाहरणात्मक शब्दोंके अर्थ प्रायः नहीं दिये हैं; केवल पद्यात्मक उदाहरणोंके अर्थ अन्तमें टिप्ठणियोंमें दिये हैं। अपभ्रंश-भाषाके विवरण में जब पिछले कुछ पद्य फिरभी आगे आये हैं, तब उनके पिछले सन्दर्भ दिये हैं; पुनः उनका अनुवाद नहीं दिया है। (३) हेमचन्द्र कभी मूल संस्कृत शब्द सूत्रमें देता है और उनका प्राकृत वर्णान्तर सूत्रमें अथवा वृत्तिमें कहता है, कभी उसने वृत्तिमें पहले संस्कृत शब्द देकर बादमें उनके प्राकृत वर्णान्तर दिये हैं; कभी वृत्तिमें प्राकृत शब्द पहले रखकर बादमें वह उनके मूल संस्कृत शब्द देता है, कभी वह कुछ प्राकृत शब्दोंके ही संस्कृत प्रतिशब्द देता है; तो कभी वह संस्कृत प्रतिशब्द देता ही नहीं है; पद्योंकी ही संस्कृत छाया उसने नहीं दी है। इसलिए जहाँ हेमचन्द्र मूल संस्कृत शब्द नहीं देता है, केवल उन्हीं स्थानोंपर संस्कृत शब्द पृष्ठके नीचे फुटनोटमें दिया है। प्राकृत वैकल्पिक शब्दोंके बारेमें संस्कृत शब्द केवल एक बारही फुटनोटमें दिया है। क्वचित् अनुवादमें भी उस प्राकृत शब्दके बाद संस्कृत प्रतिशब्द कोष्ठकमें दिया है। जब पिछले प्राकृत शब्द अथवा पद्य आगे पुनः आते हैं, तब वहाँ उनके मूल संस्कृत शब्द (या छाया) बहुधा पुनः नहीं दिये हैं। प्राकृत अव्ययोंका प्रयोग जिसमें है ऐसे शब्द समूहके अथवा पद्यके बारेमें, संस्कृत प्रतिशब्द देते समय प्राकृत के अव्ययभी कोष्ठकमें रखे हैं; उनके समानार्थी संस्कृत शब्दभी कभी-कभी कोष्ठक में रखे हैं। प्राकृत शब्दरूपके विभागमें, केवल मूल संस्कृत शब्दही फुटनोटमें दिया है। और फुटनोटमें भी आवश्यक स्थानोंपर अगले-पिछले सूत्रोंके सन्दर्भ निर्दिष्ट किये हैं। (४) तान्त्रिक/पारिभाषिक इत्यादि शब्दोंका तथा अन्य आवश्यक स्पष्टीकरण अन्तकी टिप्पणियोंमें दिया है। पद्यात्मक उदाहरणोंका अनुवादभी टिप्पणियोंमें दिया है। टिप्पणियोंमें अनेक बार मराठी-हिन्दीमेंसे सदृश शब्द दिये हैं। जिनपर एक बार टिप्पणी की गई है उनपर प्रायः टिप्पणी नहीं की गई है, परन्तु कभी-कभी टिप्पणियोंके अगले-पिछले सन्दर्भ निर्दिष्ट किए हैं। रूप इत्यादि के स्पष्टीकरणके लिए और अन्य कुछ कारणोंके लिए टिप्पणियोंमें अनेक बार अगले-पिछले सूत्रोंके सन्दर्भ दिये गये हैं। (५) सूत्रोंके सन्दर्भ देते समय, पहले पाद, फिर सूत्रका अनुक्रमांक और अनन्तर उस सूत्रके नीचे होनेवाला उस पद्यका क्रमांक निर्दिष्ट किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आभारप्रदर्शन

प्रस्तुत लेखनके लिए म० स० श्रीदासराम महाराज केलकरजीके शुभाशीर्वाद हैं। मूलग्रन्थमेंसे कुछ तान्त्रिक शब्दोंका स्पष्टीकरण मा० प्रा० डॉ० प० ल० वैद्यजी ने अतिस्नेहभावसे किया; मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। मेरे इस अनुवादमेंसे हिन्दी भाषाका सुधार और जाँच कार्य विलिंग्डन महाविद्यालयके हिन्दीके प्रधान प्राध्यापक श्री अ० अ० दातारजीने बड़ी आस्थापूर्वक अपना बहुमूल्य समय खर्च करके किया है जिसके लिए मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ। इस ग्रन्थके कुछ अन्य कार्यमें सहायता करनेवाली मेरी पत्नी सौ० मायादेवी तथा मेरा पुत्र श्री नारायण इनकाभी मैं आभारी हूँ। इस लेखनकार्यमें जिन पूर्वसूरियोंके ग्रन्थोंका मुझे उपयोग हुआ उन सबका मैं ऋणी हूँ। चौखम्भा संस्कृत संस्थान इस ग्रन्थको प्रकाशित कर रहा है; इसलिए उसके पदाधिकारियोंका मैं अत्यन्त ऋणी हूँ।

सम्भव है कि इस ग्रन्थमें कुछ त्रुटियाँ और मुद्रणदोष रहे होंगे। वे क्षमादृष्टिसे देखे जाएँ ऐसी प्रार्थना है।

सांगली

के० वा० आपटे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फुटनोट्स : प्रस्तावना

१—प्राकृत व्याकरणपर अनेक ग्रन्थ हैं। उदा०—चण्डकृत प्राकृतलक्षय, वररुचिकृत प्राकृतप्रकाश, त्रिविक्रमरचित प्राकृतशब्दानुशासन, मार्कंडेय-प्रणीत प्राकृतसर्वस्व इत्यादि।

२—प्रकृतिः संस्कृतं, तत्र भवं तत आगतं वा प्राकृतम् (हेमचन्द्र), प्रकृतिः संस्कृतं, तत्र भवं प्राकृतमुच्यते (मार्कंडेय)।

३—प्राकृतस्य तु सर्वं एव संस्कृतं योनिः(प्राकृतसंजीवनी), प्रकृतेः संस्कृतायास्तु विकृतिः प्राकृती मता (षड्भाषाचन्द्रिका)।

४—प्रकृत्या स्वभावेन सिद्धं प्राकृतम्।

५—प्रकृतीनां साधारणजनानां इदं प्राकृतम्।

६—सकलजगज्जंतूनां व्याकरणादिभिः अनाहितसंस्कारः सहजो वचनव्यापारः प्रकृतिः तत्र भवं, सा एव वा, प्राकृतम् (नमिसाधु)।

७—प्राक् पूर्वं कृतं प्राक्कृतं बालमहिलादिसुबोधं सकलभाषानिबन्धनभूतं वचनं उच्यते (नमिसाधु)।

८—षड्विधा सा च प्राकृती च शौरसेनी च मागधी।
पैशाची चूलिकापैशाच्यपभ्रंश इति क्रमात्॥ लक्ष्मीधर

९—मागध्यवन्तिजा प्राच्या शौरसेन्यर्धमागधी।
बाह्लीका दाक्षिणात्या च सप्तभाषाः प्रकीर्तिताः॥ भरत

१०—दाक्षिणात्या प्राकृतका निर्देश भरतने किया है। उसके बारेमें मार्कंडेय कहता हैः—दाक्षिणात्या भाषाका लक्षण और उदाहरण कहीं भी नहीं दिखाई देते हैं (दाक्षिणात्यावास्तु न लक्षणं नोदाहरणं च कुत्रचिद् दृश्यते)।

११—आवन्ती स्यान्माहाराष्ट्री-शौरसेन्योस्तु संकरात्। मार्कंडेय

१२—प्राच्यासिद्धिः शौरसेन्याः (मार्कंडेय)।

१३—आवन्त्यामेव बाह्लीकी किन्तु रस्यात्र लो भवेत्। मार्कंडेय।

१४—विशेषो मागध्याः (पुरुषोत्तमः); मागध्या-शाकारी (मार्कंडेय)।

१५—चाण्डाली मागधी-शौरसेनीभ्यां प्रायशो भवेत्। मार्कंडेय।

१६—मागधी-विकृतिः। पुरुषोत्तमदेव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७—शाबरी च मागधी-विशेषः(पुरुषोत्तम);चाण्डाल्याः शाबरीसिद्धिः(मार्कंडेय)।

१८—आभीर्यप्येवं स्यात् क्त्व इअ-उओ मात्यपभ्रंशः। मार्कंडेय।

१९—टाक्की स्यात् संस्कृतं शौरसेनी चान्योन्यमिश्रिते। मार्कंडेय।

२०—आर्षे हि सर्वे विधयो विकल्प्यन्ते। हेमचन्द्र।

२१—जिन्हें पाश्चात्य पंडित जैन माहाराष्ट्री और जैन शौरसेनी नामों से पुकारते हैं, वे अनुक्रमसे माहाराष्ट्री और अर्धमागधीका मिश्रण, तथा शौरसेनी—अर्धमागधीका मिश्रण हैं।

२२—सर्वासु भाषास्विह हेतुभूतां
भाषां महाराष्ट्रभुवां पुरस्तात्।
निरूपयिष्यामि यथोपदेशं
श्रीरामशर्माहमिमां प्रयत्नात्॥ रामशर्मतर्कवागीश।

२३—तत्र सर्वभाषोपयोगित्वात् प्रथमं माहाराष्ट्रीभाषा अनुशिष्यते मार्कंडेय।

२४—यदपि "पोराणमद्धमागहभासानियमं हवइ सुत्तं" इत्यादिना आर्षस्य अर्धमागधभाषानियतत्वमाम्नायि वृद्धैस्तदपि प्रायोस्यैव विधानान्न वक्ष्यमाणलक्षणस्य।

२५—आभीरादिगिरः काव्येष्वपभ्रंशतया स्मृताः।
शास्त्रे तु संस्कृतादन्यदपभ्रंशतयोदितम्॥ दंडिन्।

२६—अपभ्रंशस्तु यच्छुद्धं तत्तद्देशेषु भाषितम्॥ वाग्भट।

हेमचन्द्रकृत

प्राकृत व्याकरण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रथमः पादः

अथ प्राकृतम् ॥ १ ॥

अथशब्द आनन्तर्यार्थोऽधिकारार्थश्च। प्रकृतिः संस्कृतम्। तत्र भवं तत आगतं वा प्राकृतम्। संस्कृतानन्तरं प्राकृतमधिक्रियते। संस्कृतानन्तरं च प्राकृतस्यानुशासनं सिद्धसाध्यमानभेदसंस्कृतयोनेरेव तस्य लक्षणं न देश्यस्य इति ज्ञापनार्थम्। संस्कृतसमं तु संस्कृतलक्षणेनैव गतार्थम्। प्राकृते च प्रकृति-प्रत्ययलिङ्गकारकसमाससंज्ञादयः संस्कृतवद् वेदितव्याः। लोकाद् इति च वर्तते। तेन ऋॠऌॡऐऔङञशषविसर्जनीयप्लुतवर्ज्यो वर्णसमाम्नायो लोकाद् अवगन्तव्यः। ङञौ स्ववर्ग्यसंयुक्तौ भवत एव। ऐदौतौ च केषांचित्। कैतवम् कैअवं। सौन्दर्यम् सौंअरिअं। कौरवाः कौरवा। तथा अस्वरं व्यञ्जनं द्विवचनं चतुर्थीबहुवचनं च न भवति ॥ १ ॥

(सूत्र में) 'अथ' शब्द 'अनन्तर' अर्थ में तथा (नूतन विषय का) 'आरम्भ' अर्थ में प्रयुक्त है। प्रकृति यानी संस्कृत (भाषा)। वहाँ (यानी संस्कृत में) हुआ अथवा वहाँ से (= संस्कृत से) आया हुआ (यानी उत्पन्न हुआ) प्राकृत है। संस्कृत के अनन्तर प्राकृत का प्रारम्भ किया जाता है। सिद्ध और साध्यमान (ऐसे दो प्रकार के) शब्द होनेवाला संस्कृत जिसका मूल (= योनि) है, वह प्राकृत ऐसा उस प्राकृत का लक्षण है और यह लक्षण देश्य का नहीं, इस बात का बोध करने के लिए 'संस्कृत के अनन्तर प्राकृत का विवेचन' (ऐसा कहा है)। तथापि जो प्राकृत संस्कृत-समान है वह (पहले कहे हुए) संस्कृत के व्याकरण से ज्ञात हुआ है। तथा प्राकृत में प्रकृति, प्रत्यय, लिंग, कारक, समास, संज्ञा, इत्यादि संस्कृत के अनुसार होते हैं ऐसा जानें। और 'लोगों से' (= लोगों के व्यवहार से) यह भी (यहाँ अध्याहृत है)। इसलिए ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ऐ और औ, ङ्, ञ्, श्, और ष्, विसर्ग तथा प्लुत छोड़कर (प्राकृत में अन्य) वर्ण समूह लोगों के व्यवहार से जानना है। अपने वर्ग के व्यंजन से संयुक्त रहनेवाले ङ् और ञ् वर्ण (प्राकृत में) होते ही हैं; और कुछ लोगों के मतानुसार ऐ और औ (ये स्वर भी प्राकृत में होते हैं)। उदा०— कैतवम्‥‥‥कौरवा। तथा स्वररहित व्यंजन, द्विवचन और चतुर्थी बहु-वचन (ये भी प्राकृत में) नहीं होते हैं ॥ १ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुलम् ॥ २ ॥

बहुलम् इत्यधिकृतं वेदितव्यम् आ शास्त्रपरिसमाप्तेः। ततश्च क्वचित् प्रवृत्तिः क्वचिद् अप्रवृत्तिः क्वचिद् विभाषा क्वचिद् अन्यदेव भवति। तच्च यथास्थानं दर्शयिष्यामः ॥ २ ॥

(प्रस्तुत व्याकरण —) शास्त्र के समाप्ति तक 'बहुल' का अधिकार है ऐसा जाने। और इसलिए (इस शास्त्र में कहे हुए नियम इत्यादि की) क्वचित् प्रवृत्ति होती है, क्वचित् (वैसी) प्रवृत्ति नहीं होती है, क्वचित् विकल्प होता है, और क्वचित् (नियम में कथित से) भिन्न कुछ (रूप या वर्णान्तर) होता है। और वह हम योग्य स्थान पर बताएंगे ॥ २ ॥

आर्षम् ॥ ३ ॥

ऋषीणाम् इदं आर्षम्। आर्षं प्राकृतं बहुलं भवति। तदपि यथास्थानं दर्शयिष्यामः। आर्षे हि सर्वे विधयो विकल्प्यन्ते ॥ ३ ॥

ऋषियों का यह (वह) आर्ष (प्राकृत) है। आर्ष प्राकृत बहुल है। वह भी हम योग्य स्थान पर दिखाएंगे। (प्रस्तुत व्याकरण में दिये हुए) सर्व नियम आर्ष प्राकृत में विकल्प से लगते हैं ॥ ३ ॥

दीर्घह्रस्वौ मिथो वृत्तौ ॥ ४ ॥

वृत्तौ समासे स्वराणां दीर्घह्रस्वौ बहुलं भवतः। मिथः परस्परम्। तत्र ह्रस्वस्य दीर्घः। अन्तर्वेदिः अन्तावेई। सप्तविंशतिः सत्तावीसा। क्वचिन्न भवति। जुवइ-[1]जणो। क्वचिद् विकल्पः। वारीमई[2] वारिमई। भुजयन्त्रम् भुआयन्तं भुअयन्तं। पतिगृहम् पईहरं पइहरं। वेलू[3]वणं वेलुवणं। दीर्घस्य ह्रस्वः। निअम्बसिल[4]-खलिअ-वीइमालस्स। क्वचिद् विकल्पः। जउँणयडं[5] जउँणायडं। नइ[6]सोत्तं नईसोत्तं। गोरि[7]हरं गोरीहरं। वहुमुहं[8] वहूमुहं।

वृत्ति में यानी समास में (आदिम पद के अन्त्य ह्रस्व या दीर्घ) स्वरों के दीर्घ और ह्रस्व स्वर बहुलत्व से होते हैं। (सूत्र में से) मिथः (शब्द का अर्थ) परस्पर में है (यानी ह्रस्व स्वर का दीर्घ स्वर होता है और दीर्घ स्वर का ह्रस्व स्वर होता है)। उनमें—ह्रस्व स्वर का दीर्घ (होने का उदाहरण) :—अन्तर्वेदि··· ··· सत्तावीसा। क्वचित् (ह्रस्व स्वर का दीर्घ स्वर) नहीं होता है। उदा०—जुवइ

१. युवतिजन। २. वारिमति।
३. वेणुवन। ४. नितम्ब-शिला-स्खलित-वीचि-मालस्य।
५. यमुना-तट। ६. नदी-स्रोतस्।
७. गौरीगृह। ८. वधूमुख।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जणो। क्वचित् विकल्प से (ह्रस्व स्वर का दीर्घ स्वर होता है। उदा०—) वारी-मई······ वेलुवणं। (अब) दीर्घ स्वर का ह्रस्व स्वर (होने का उदाहरण :—) निअम्ब···मालस्स। क्वचित् विकल्प से (दीर्घ स्वर का ह्रस्व स्वर होता है। (उदा०—) जउँणयडं······बहूमुहं।

पदयोः सन्धिर्वा ॥ ५ ॥

संस्कृतोक्तः सन्धिः सर्वः प्राकृते पदयोर्व्यवस्थितविभाषया भवति। वासेसी वास-[1]इसी। विसमायवो विसम-[2]आयवो। दहीसरो[3] दहि-ईसरो। साऊअयं[4] साउ-उअयं। पदयोरिति किम्। [5]पाओ। [6]पई। [7]वच्छाओ। मुद्धाइ[8]। [9]मुद्धाए। महइ। महए। बहुलाधिकारात् क्वचिद् एक- पदेपि। [10]काहिइ काही। [11]बिईओ बीओ।

संस्कृत (व्याकरण) में कही हुई सर्व संधियाँ प्राकृत में दो पदों में व्यवस्थित-विभाषा से होती हैं। उदा-वासेसी···साउ-उअयं। (सूत्र में) दो पदों में (संधि होती है) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण एक ही पद के दो स्वरों में प्रायः संधि नहीं होती हैं। उदा०) पाओ···महए। तथापि बहुल का अधिकार होने से क्वचित् एक पद में भी (दो स्वरों में संधि होती है। उदा०) काहिइ···बीओ।

न युवर्णस्यास्वे ॥ ६ ॥

इवर्णस्य च उवर्णस्य च अस्वे वर्णे परे सन्धिर्न भवति। [12]न वेरिवग्गे वि अवयासो। वन्दामि[13] अज्ज-वइरं।

> दणु इन्द[14]रुहिर-लित्तो सहइ उइन्दो नह-प्पहावलि-अरुणो।
> संझा-वहु-अवऊढो णववारिहरो व्व विज्जुला-पडिभिन्नो ॥ १ ॥

---

१. व्यास-ऋषि। २. विषम-आतप।
३. दधि-ईश्वर। ४. स्वादु-उदक।
५. पाद। ६. पति।
७. वत्स या वक्षस् का पंचमी एक वचन है।
८. मुग्धा का तृतीया इत्यादि का एक वचन है।
९. कांक्ष् धातु का आदेश मह है(४.१९२); उसका वर्तमानकाल तृतीयपुरुष एकवचन।
१०. कर धातु का भविष्यकाल तृतीय पुरुष एकवचन। ११. द्वितीय।
१२. न वैरिवर्गेऽप्यवकाशः। १३. वन्दे आर्यवज्रम्।
१४. दनुजेन्द्ररुधिरलिप्तः शोभते उपेन्द्रो नखप्रभावल्यरुणः।
सन्ध्यावधूपगूढो नववारिधर इव विद्युत्-प्रतिभिन्नः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

युवर्णस्येति किम् ।
गूढोअर[1]-तामरसाणुसारिणी भमरपन्ति व्व ॥ २ ॥
अस्व इति किम् । [2]पुहवीसो ।

इ-वर्ण और उ-वर्ण इनके आगे विजातीय स्वर होने पर संधि नहीं होती है। उदा०—न वेरि···पडिमिन्नो । इ-वर्ण और उ-वर्ण के (आगे आने वाले विजातीय स्वर से संधि नहीं होती है ; ऐसा क्यों कहा है ? (कारण उनके आगे दिए वैसी संधियाँ शक्य होती हैं—) गूढोअर···पन्ति व्व । (सूत्र में) विजातीय स्वर (आगे रहने पर) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण इ और उ के आगे होने वाले सजातीय स्वर से संधि शक्य होती है । उदा०—) पुहवीसो ।

एदोतोः स्वरे ॥ ७ ॥

एकार-ओकारयोः स्वरे परे सन्धिर्न भवति ।
वहुआइ [3]नहुल्लिहणे आबन्धन्तीएँ कञ्चुअं अंगे ।
मयरद्धयसरधोरणिधाराछेअ व्व दीसन्ति ॥ १ ॥
उवमासु[4] अपज्जत्तेभकलभदन्तावहासमूरुजुअं ।
तं चेव मलिअबिसदण्डविरसमालक्खिमो एण्हि ॥ २ ॥
अहो[5] अच्छरिअं । एदोतोरिति किम् ।
अत्[6]थालोअणतरला इअरकईणं भमन्ति बुद्धीओ ।
अत्थ च्चेअ निरारम्भमेन्ति हिअयं कइन्दाणं ॥ ३ ॥

एकार (=ए) और ओकार (=ओ) के आगे स्वर होने पर संधि नहीं होती है। उदा०—वहुआइ······अच्छरिअं । ए और ओ स्वरों की, ऐसा सूत्र में क्यों कहा है ? (कारण ए और ओ स्वर छोडकर अ इत्यादि स्वरों के आगे आने वाले स्वर से संधि हो सकती है । उदा०—) अत्थालोअण······कइन्दाणं ।

---

१. गूढोदर-तामरसानुसारिणी भ्रमरपंक्तिरिव ।

२. पुहवी+ईसो (पृथ्वी+ईश) ।

३. वध्वा नखोल्लेखने आबध्नत्या कञ्चुकमङ्गे ।
मकरध्वजशरधोरणिधाराछेदा इव दृश्यन्ते ॥ १ ॥

४. उपमासु अपर्याप्तेभकलभदन्तावभासमूरुयुगम् ।
तदेव मृदितबिसदण्डविरसमालक्षयामह इदानीम् ॥२॥

५. अहो आश्चर्यम् ।

६. अर्थालोचनतरला इतरकवीनां भ्रमन्ति बुद्धयः ।
अर्था एव निरारम्भं यन्ति हृदयं कवीन्द्राणाम् ॥ ३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वरस्योद्वृत्ते ॥ ८ ॥

व्यञ्जनसंपृक्तः स्वरो व्यञ्जने लुप्ते योवशिष्यते स उद्वृत्त इहोच्यते। स्वरस्य उद्वृत्तो स्वरे परे सन्धिर्न भवति।

विससि[1]ज्जन्तमहापसुदंसणसम्भमपरोप्परारूढा ।

गयणे च्चिअ गन्धउडिं कुणन्ति तुह कउलणारीओ ॥ १ ॥

निसाअरो[2] निसिअरो। रयणी[3] अरो। मणु[4] अत्तं। बहुलाधिकारात् क्वचिद् विकल्पः। कुम्भआरो[5] कुम्भारो। सु[6]-उरिसो सूरिसो। क्वचित् सन्धिरेव। साला[7]हणो। चक्[8]काओ। अतएव प्रतिषेधात् समासेऽपि स्वरस्य सन्धौ भिन्नपदत्वम्।

(शब्द में) एकाध व्यंजन का लोप होने पर, उस व्यंजन से संपृक्त होनेवाला जो स्वर शेष।अवशिष्ट रहता है, उसको यहाँ उद्वृत्त कहा है। शब्द में एकाध स्वर के आगे उद्वृत्त स्वर होने पर (उन दो स्वरों की) संधि नहीं होती है। उदा०—विससिज्जंत······मणुअत्तं। बहुल का अधिकार होने से क्वचित् विकल्प (यानी विकल्प से संधि) होता है। उदा०—कुम्भआरो······सूरिसो। क्वचित् संधि ही होती है। उदा०—सालाहणो, चक्काओ। इसलिए (संधि का) ऐसा निषेध होने से, समास में भी स्वर—संधि के बारे में भिन्न पद माने जाते हैं।

त्यादेः ॥ ९ ॥

तिबादीनां स्वरस्य स्वरे परे सन्धिर्न भवति। भवति इह होइ इह।

धातु में लगने वाले प्रत्यय इत्यादि में, अन्त्य स्वर के आगे स्वर होने पर संधि नहीं होती है। उदा०—भवति······इह।

लुक् ॥ १० ॥

स्वरस्य स्वरे परे बहुलं लुग् भवति। त्रिदशेशः तिअसीसो। निःश्वासोच्छ्वासौ नीसासूसासा।

एकाध स्वर के आगे (दूसरा) स्वर होने पर, बहुलत्व से (पूर्व रहने वाले स्वर का) लोप होता है। उदा०—त्रिदशेश······सूसासा।

---

१. विशस्यमानमहापशुदर्शनसंभ्रमपरस्परारूढाः ।
गगन एव गंधकु (पु) टीं कुर्वन्ति तव कौलनार्यः ॥

२. निशाचर/निशाकर। ३. रजनीकर/रजनीचर

४. मनुजत्व। ५. कुम्भकार।

६. सुपुरुष। ७. शातवाहन।

८. चक्रवाक।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्त्यव्यञ्जनस्य ॥ ११ ॥

शब्दानां यद् अन्त्यव्यञ्जनं तस्य लुग् भवति। जाव[1]। ताव। जसो। तमो। जम्मो। समासे तु वाक्यविभक्त्यपेक्षायाम् अन्त्यत्वं अनन्त्यत्वं च। तेनोभयमपि भवति। सद्भिक्षुः सभिक्खू। सज्जनः सज्जणो। एतद्गुणाः एअ-गुणा। तद्गुणाः तग्गुणा।

शब्दों का जो अन्त्य व्यंजन होता है उसका लोप होता है। उदा०—जाव······ जम्मो। परंतु समास में वाक्यविभक्ति की अपेक्षा होने पर (समास के आदिम पद का अन्त्य व्यंजन) कभी अन्त्य माना जाता है तो कभी अनन्त्य माना जाता है। इसलिए दोनों भी होते हैं (यानी कभी उसका लोप होता है तो कभी वह वैसे ही रहकर अनंतर योग्य वर्णान्तर होता है। उदा०—) सद्भिक्षु······तग्गुणा।

न श्रदुदोः ॥ १२ ॥

श्रद् उद् इत्येतयोरन्त्यव्यञ्जनस्य लुग् न भवति। [2]सद्दहिअं। सद्धा। उग्गयं उन्नयं।

श्रद् और उद् इन (शब्दों) के अन्त्य व्यंजन का लोप नहीं होता है। उदा०—सद्दहिअं······उन्नयं।

निर्दुरोर्वा ॥ १३ ॥

निर् दुर् इत्येतयोरन्त्यव्यञ्जनस्य वा लुग् भवति। निस्सहं[3] नीसहं। दुस्सहो[4] दूसहो। दुक्खिओ [5]दुहिओ।

निर् और दुर् इन (उपसर्गों) में अन्त्य व्यंजन का लोप विकल्प से होता है। उदा०—निस्सहं······दुहिओ।

स्वरेऽन्तरश्च ॥ १४ ॥

अन्तरो निर्दुरोश्चान्त्यव्यञ्जनस्य स्वरे परे लुग् न भवति। अन्त[6]-रप्पा। निरन्तरं। निरवसेसं। दुरुत्तरं। दुरवगाहं। क्वचिद् भवत्यपि। [7]अन्तोवरि।

अंतर् (शब्द तथा) निर् और दुर् शब्दों में अन्त्य व्यंजन के आगे स्वर होने पर उस अन्त्य व्यंजन का लोप नहीं होता है। उदा०—अंतरप्पा······दुरवगाहं। (परंतु इस अन्त्य व्यंजन का) क्वचित् लोप होता भी है। उदा०—अन्तोवरि।

---

१. यावत्। तावत्। यशस्। तमस्। जन्मन्।

२. श्रद्धित। श्रद्धा। उद्गत। उन्नत।

३. निःसह। ४. दुःसह। ५. दुःखित।

६. अन्तरात्मा। निरन्तर। निरवशेष। दुरुत्तर। दुरवगाह। ७. अंतर्-उपरि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्त्रियामादविद्युतः ॥ १५ ॥

स्त्रियां वर्तमानस्य शब्दस्यान्त्यव्यञ्जनस्य आत्वं भवति। विद्युच्छब्दं वर्जयित्वा। लुगपवादः। सरित् सरिआ। प्रतिपद् पाडिवआ। सम्पद् सम्पआ। बहुलाधिकाराद् ईषत्स्पृष्टतरयश्रुतिरपि। सरिया। पाडिवया। सम्पया। अविद्युत इति किम्। विज्जू।

विद्युत् शब्द छोडकर, अन्य स्त्रीलिंगी शब्दों में अन्त्य व्यंजन का आ होता है। अन्त्य व्यंजन का लोप होता है (१.११) इस नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—सरित्······संपआ। बहुल का अधिकार होने से (यहाँ आने वाले आ स्वर के उच्चारण की ध्वनि) किंचित् प्रयत्न से उच्चारित य् व्यंजन जैसी भी सुनाई देती है। उदा०—सरिया······संपया। (सूत्र में) विद्युत् शब्द छोड़कर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण विद्युत् शब्द के अन्त्य व्यंजन का 'आ' न होते उसका लोप होता है। उदा०—) विज्जू।

रो रा ॥ १६ ॥

स्त्रियां वर्तमानस्यान्त्यस्य रेफस्य रा इत्यादेशो भवति। आत्वापवादः। गिरा[1]। धुरा। पुरा।

स्त्रीलिंगी शब्दों में अन्त्य रेफ को (= र् व्यंजन को) रा आदेश होता है। (स्त्रीलिंगी शब्दों में अन्त्य व्यंजन का) आ होता है (१.१५) इस नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—गिरा······पुरा।

क्षुधो हा ॥ १७ ॥

क्षुध् शब्दस्यान्त्यव्यञ्जनस्य हादेशो भवति। छुहा।

क्षुध् शब्द के अन्त्य व्यंजन को हा आदेश होता है। उदा०—छुहा।

शरदादेरत् ॥ १८ ॥

शरदादेरन्त्यव्यञ्जनस्य अत् भवति। शरद् सरओ। भिषक् भिसओ।

शरद् इत्यादि शब्दों के अन्त्य व्यंजन का अ होता है। उदा०—शरद्···भिसओ।

दिक्प्रावृषोः सः ॥ १९ ॥

एतयोरन्त्यव्यञ्जनस्य सो भवति। दिसा। पाउसो।

(दिश् और प्रावृष्) इन दोनों के अन्त्य व्यंजन का स होता हैं। उदा०—दिसा, पाउसो।

---

१. गिर्। धुर्। पुर्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयुरप्सरसोर्वा ॥ २० ॥

एतयोरन्त्यव्यञ्जनस्य सो वा भवति। दीहाउसो दीहाऊ[1]। अच्छरसा अच्छरा।

(आयुस् और अप्सरस्) इन (दोनों) के अन्त्य व्यंजन का विकल्प से स होता है। उदा०—दीहाउसो······अच्छरा।

ककुभो हः ॥ २१ ॥

ककुभ्शब्दस्यान्त्यव्यञ्जनस्य हो भवति। कउहा।

ककुभ् शब्द के अन्त्य व्यंजन का ह होता है। उदा०—कउहा।

धनुषो वा ॥ २२ ॥

धनुः शब्दस्यान्त्यव्यञ्जनस्य हो वा भवति। धणुहं। धणू।

धनुस् शब्द के अन्त्य व्यंजन का विकल्प से ह होता है। उदा०—धणुहं, धणू।

मोऽनुस्वारः ॥ २३ ॥

अन्त्यमकारस्यानुस्वारो भवति। जलं फलं वच्छं गिरिं पेच्छ[2]। क्वचिद् अनन्त्यस्यापि। [3]वणम्मि वणंमि।

अन्त्य मकार का अनुस्वार होता है। उदा०—जलं······पेच्छ। क्वचित् अन्त्य न होने वाले मकार का भी अनुस्वार होता है। उदा०—वणम्मि वणंमि।

वा स्वरे मश्च ॥ २४ ॥

अन्त्यमकारस्य स्वरे परेऽनुस्वारो वा भवति। पक्षे लुगपवादो मस्य मकारश्च भवति। वंदे [4]उसभं अजिअं। उसभमजिअं च वन्दे। बहुलाधि—कारादु अन्यस्यापि व्यञ्जनस्य मकारः। साक्षात् सक्खं। यत् जं। तत् तं। विष्वक् वीसुं। पृथक् पिहं। सम्यक् सम्मं। इह[5] इहयं। आले[6]ट्ठुअं इत्यादि।

आगे स्वर होने पर अन्त्य मकार का विकल्प से अनुस्वार होता है। विकल्प पक्ष में (अन्त्य व्यंजन का) लोप होता है (१.११) इस नियम का अपवाद (प्रस्तुत नियम) है। और म् का मकार होता है (यानी विकल्प से म् में अगला स्वर संपृक्त

---

१. दीर्घायुस्। अप्सरस्।

२. पेच्छ शब्द दृश् धातु का आदेश है (सूत्र ४.१८१ देखिए)।

३. वन।

४. वन्दे ऋषभं अजितम्।

५. इह।

६. आश्लेष्टुम्।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

हो जाता है)। उदा॰—वंदे······वंदे। बहुल का अधिकार होने से अन्य कुछ व्यंजनों का भी मकार (=अनुस्वार) होता है। उदा॰—साक्षात्···आलेट्ठुअं इत्यादि।

ङञणनो व्यञ्जने ॥ २५ ॥

ङ ञ ण न इत्येतेषां स्थाने व्यञ्जने परे अनुस्वारो भवति। ङ। पङ्क्तिः पन्ती। पराङ्मुखः। परंमुहो। ञ। कञ्चुकः कंचुको। लाञ्छनम् लंछणं। ण। षण्मुखः छंमुहो। उत्कंठा उक्कंठा। न। सन्ध्या संझा। विन्ध्यः विंझो।

आगे व्यंजन होने पर, ङ् ञ् ण् और न् इनके स्थान पर अनुस्वार होता है। उदा॰—ङ् (के स्थान पर)—पङ्क्तिः······परंमुहो। ञ् (के स्थान पर)—कञ्चुकः······लंछणं। ण् (के स्थान पर)—षण्मुखः······उक्कंठा। न् (के स्थान पर)—सन्ध्या······विंझो।

वक्रादावन्तः ॥ २६ ॥

वक्रादिषु यथादर्शनं प्रथमादेः स्वरस्य अन्त आगमरूपोऽनुस्वारो भवति। वंकं। तंसं। अंसुं। मंसू। पुंछं। गुंछं। मुंढा। पंसू। बुंधं। कंकोडो। कुंपलं। दंसणं। विंछिओ। गिंठी। मंजारो। एष्वाद्यस्य। वयंसो। मणंसी। मणंसिणी। मणंसिला। पडंसुआ। एषु द्वितीयस्य। अवरिं। अणिउँतयं। अइमुंतयं। अनयोस्तृतीयस्य। वक्र। त्र्यस्र। अश्रु। श्मश्रु। पुच्छ। गुच्छ। मूर्धन्। पर्शु। बुध्न। कर्कोट। कुड्मल। दर्शन। वृश्चिक। गृष्टि। मार्जार। वयस्य। मनस्विन्। मनस्विनी। मनःशिला। प्रतिश्रुत्। उपरि। अतिमुक्तक। इत्यादि। क्वचिच्छंदःपूरणेपि। देवं[1] नाग-सुवण्ण। क्वचिन्न भवति। [2]गिट्ठी। मज्जारो। मणसिला मणासिला। आर्षे। [3]मणोसिला। अइमुत्तयं।

वक्र इत्यादि शब्दों में, जैसा (साहित्य में) दिखाई देगा वैसा, प्रथम इत्यादि स्वरों के आगे (शब्दशः—अन्त में) आगम रूप अनुस्वार (= अनुस्वार का आगम) होता है। उदा॰—वंकं··· ···मंजारो इन शब्दों में प्रथम स्वर के आगे (अनुस्वार का आगम हुआ है)। वयंसो··· ···पडंसुआ इन शब्दों में दूसरे स्वर के अनन्तर (अनुस्वारागम होता है)। अवरिं (और) अणिउँतयं। अइमुंतयं इन दो शब्दों में तीसरे स्वर के उपरान्त (अनुस्वारागम दिखाई देता है)। (अब तक कहे हुए शब्दों के मूल संस्कृत शब्द ऐसे हैं :—) वक्र··· ···अतिमुक्तक, इत्यादि।

१. देवनाग सुवर्ण। २. गृष्टि, मार्जार, मनःशिला।

३. मनःशिला, अतिमुक्तक।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्वचित् छन्दःपूरण के लिए भी (अनुस्वारागम होता है। उदा०—) देवंनाग सुवण्ण। क्वचित् (उपर दिए गए कुछ शब्दों में अनुस्वारागम) नहीं भी होता है। उदा०—गिट्ठी···मणासिला। आर्ष प्राकृत में (कुछ शब्दों के वर्णान्तर ऐसे होते हैं)–मणोसिला अइमुत्तयं।

क्त्वास्यादेर्णस्वोर्वा ॥ २७ ॥

क्त्वायाः स्यादीनां च यौ णसू तयोरनुस्वारोन्तो वा भवति। क्त्वा। [1]काऊणं काऊण। काउआणं काउआण। स्यादि। [2]वच्छेणं वच्छेण। वच्छेसुं [3]वच्छेसु। णस्वोरिति किम्। १ करिअ। [4]अग्गिणो।

क्त्वा (प्रत्यय) और विभक्ति प्रत्यय इनमें जो 'ण' और 'सु' आते हैं, उनके अन्त में (यानी उनके ऊपर) विकल्प से अनुस्वार आता है। उदा०—क्त्वा–प्रत्यय में :—काऊणं··· ···काउआण। विभक्ति प्रत्यय में :—वच्छेणं··· ··· वच्छेसु। (सूत्र में) ण और सु के बारे में (अनुस्वार आता है) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण जहाँ ण और सु नहीं होते हैं वहाँ अनुस्वारागम नहीं होता है। उदा—); करिअ; अग्गिणो।

विंशत्यादेर्लुक् ॥ २८ ॥

विंशत्यादीनां अनुस्वारस्य लुग् भवति। विंशतिः वीसा। त्रिंशत् तीसा। संस्कृतम् सक्कयं। संस्कारः सक्कारो। इत्यादि।

विंशति इत्यादि शब्दों में अनुस्वार का लोप होता है। उदा०—विंशति······ सक्कारो, इत्यादि।

मांसादेर्वा ॥ २९ ॥

मांसादीनामनुस्वारस्य लुग् वा भवति। मासं मंसं। मासलं मंसलं। कासं कंसं। पासू पंसू। कह कहं। एव एवं। नूण नूणं। इआणि इआणिं, दाणि दाणिं। कि [5]करेमि किं करेमि। समुहं संमुहं। केसुअं किंसुअं। सीहो सिंघो। मांस। मांसल। कांस्य। पांसु। कथम्। एवम्। नूनम्। इदानीम्। किम्। संमुख। किंशुक। सिंह। इत्यादि।

१. काऊणं··· ···काउआण और करिअ ये सर्व कर धातु के पूर्वकाल वाचक धातु-साधित अव्यय हैं। २. वच्छ शब्द का तृतीया एकवचन।

३. वच्छ शब्द का सप्तमी अनेक वचन।

४. अग्गि (अग्नि) शब्द का प्रथमा अनेक वचन, इत्यादि (सूत्र ३.२२ देखिए)।

५. कर धातु का वर्तमान काल प्रथम पुरुष एक वचन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मांस इत्यादि शब्दों में अनुस्वार का लोप विकल्प से होता है। उदा०—मासं······सिघो। (इन शब्दों के मूल संस्कृत शब्द ऐसे हैं—) मांस···सिंह, इत्यादि।

वर्गेन्त्यो वा ॥ ३० ॥

अनुस्वारस्य वर्गे परे प्रत्यासत्तेस्तस्यैव वर्गस्यान्त्यो वा भवति। पङ्को[1] पंको। सङ्खो संखो। अङ्गणं अंगणं। लङ्घणं लंघणं। कञ्चुओ कंचुओ। लञ्छणं लंछणं। अञ्जिअं अंजिअं। सञ्झा संझा। कण्टओ कंटओ। उक्कण्ठा उक्कंठा। कण्डं कंडं। सण्ढो संढो। अन्तरं अंतरं। पन्थो पंथो। चन्दो चंदो। बन्धवो बंधवो। कम्पइ [2]कंपइ। वम्फइ[3]वंफइ। कलम्बो [4]कलंबो। आरम्भो [5]आरंभो। वर्ग इति किम्। संसओ[6]। संहरइ[7]। नित्यमिच्छन्त्यन्ये।

अनुस्वार के आगे वर्गीय व्यंजन होने पर (उसके) सांनिध्य से (अनुस्वार के स्थान पर) उस ही वर्ग का अन्त्य व्यंजन (= उस वर्ग का अनुनासिक) विकल्प से आता है उदा०—पङ्को······आरंभो। (सूत्र में) वर्गीय व्यजन (आगे होने पर) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण वर्गीय व्यंजन आगे न हो, तो उस वर्ग का अन्त्य व्यंजन विकल्प से नहीं आता है। उदा०—) संसओ, संहरइ। कुछ (वैयाकरणों) के मतानुसार, (यह वर्गीय अन्त्य व्यंजन विकल्प से न होते) नित्य आता है।

प्रावृट्-शरत्तरणयः पुंसि ॥ ३१ ॥

प्रावृष् शरद् तरणि इत्येते शब्दाः पुंसि पुल्लिगे प्रयोक्तव्याः। पाउसो। सरओ। एस[8] तरणी। तरणि शब्दस्य पुंस्त्रीलिङ्गत्वेन नियमार्थमुपादानम्।

प्रावृष्, शरद् (और) तरणि ये शब्द पुंसि यानी पुलिंग में प्रयुक्त करे। उदा०—पाउसो······तरणी। तरणि शब्द (संस्कृत में) पुल्लिगी तथा स्त्रीलिंगी होने से, (इस सूत्र में तरणि शब्द का निर्देश), (यह शब्द प्राकृत में) निश्चित रूप से पुल्लिगी होता है, यह बात दिखाने के लिए किया है।

---

१. पङ्को से बंधवो तक जो शब्द हैं उनके मूल संस्कृत शब्द ऐसे हैं—पङ्क, शङ्ख, अङ्गन, लङ्घन, कञ्चुक, लाञ्छन, अञ्जित, सन्ध्या, कण्टक, उत्कण्ठा, काण्ड, षण्ढ, अन्तर, पथिन् (पन्था), चन्द्र, बान्धव।

२. कम्प/कंप धातु का वर्तमान काल तृतीय पुरुष एकवचन।

३. वम्फ/वंफ धातु वल् धातु का आदेश है (सूत्र ४.१७६ देखिए)। उसका वर्तमान काल तृतीय पुरुष एकवचन।

४. कदम्ब।

५. आरम्भ। ६. संशय। ७. संहरति।

८. 'तरणी' रूप पुल्लिगी है, यह दिखाने के लिए उसके पीछे एस (=एषः) यह एतद् सर्वनाम का पुल्लिगी रूप प्रयुक्त किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्नमदामशिरोनभः ॥ ३२ ॥

दामन्शिरस्नभस्वर्जितं सकारान्तं नकारान्तं च शब्दरूपं पुंसि प्रयोक्तव्यम्। सान्तम्। [1]जसो। पओ। तमो। तेओ। उरो। नान्तम्। [2]जम्मो। नम्मो। मम्मो। अदामशिरोनभ इति किम्। दामं। सिरं। नहं। यच्च[3] सेयं वयं सुमणं सम्मं चम्मं इति दृश्यते तद् बहुलाधिकारात्।

दामन्, शिरस् और नभस् शब्द छोड़कर, अन्य सकारान्त तथा नकारान्त शब्दों के रूप पुंलिंगमें प्रयुक्त करे। उदा०—सकारान्त (शब्द)—जसो......उरो। नकारान्त (शब्द)—जम्मो......मम्मो। (सूत्र में) दामन्, शिरस्, नभस् छोड़कर ऐसा क्यों कहा है? (कारण ये शब्द प्राकृत में नपुंसकलिंग में ही प्रयुक्त होते हैं। उदा०—) दामं......नहं। और (साहित्य में) जो सेयं......चम्मं ऐसे नपुंसकलिंगी रूप दिखाई देते हैं वे बहुल का अधिकार होने के कारण हैं (ऐसा जाने)।

वाक्ष्यर्थवचनाद्याः ॥ ३३ ॥

अक्षिपर्याया वचनादयश्च शब्दाः पुंसि वा प्रयोक्तव्याः। अक्ष्यर्थाः। [4]अज्ज विसा सवइ ते अच्छी। [5]नच्चावियाइँ तेणम्ह अच्छीइं। अञ्जल्यादिपाठादक्षिशब्दः स्त्रीलिङ्गोऽपि। एसा [6]अच्छी। चक्खू [7]चक्खूइं। नयणा नयणाइं। लोअणा लोअणाइं। वचनादि। वयणा[8] वयणाइं। विज्जुणा[9] विज्जूए। कुलो कुलं। छंदो छंदं। माहप्पो माहप्पं। दुक्खा दुक्खाइं। भायणा भायणाइं। इत्यादि। इति वचनादयः। नेत्ता[10] नेत्ताइं। कमला कमलाइं इत्यादि तु संस्कृतवदेव सिद्धम्।

अक्षि (= आँख) शब्द के समानार्थक शब्द और वचन इत्यादि शब्द विकल्प से पुंल्लिग में प्रयुक्त करे। उदा०—आँख अर्थ होने वाले शब्द :—अज्ज वि...अच्छीइं। अक्षि शब्द अञ्जल्यादि-गण में होने से, वह स्त्रीलिंग में भी (प्रयुक्त होता है।

---

१. क्रम से:—यशस्। पयस्। तमस्। तेजस्। उरस्।

२. जन्मन्। नर्मन्। मर्मन्।

३. श्रेयस्, वचस् / वयस्, सुमनस्, शर्मन्, चर्मन्।

४. अद्यापि सा शपति ते अक्षिणी। यहाँ 'अच्छी' पुंल्लिगी रूप है।

५. नर्तितानि तेन अस्माकं अक्षीणि। यहाँ 'अच्छीइं' नपुंसकलिंगी रूप है।

६. यहाँ 'अच्छी' स्त्रीलिंगी रूप है, यह दिखाने के लिए उसके पीछे 'एसा' यह एतद् सर्वनाम का स्त्रीलिंगी रूप प्रयुक्त किया गया है।

७. चक्षुस्। नयन। लोचन। यहाँ दिए हुए रूपों में पहला रूप पुंल्लिगी है और दूसरा नपुंसकलिंगी है।

८. वचन।

९. क्रम से :—विद्युत्। कुल। छंदस्। माहात्म्य। दुःख। भाजन।

१०. क्रम से :—नेत्र। कमल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदा०—) एसा अच्छी । (आँख अर्थ होने वाले अन्य शब्द :—) चक्खू······लोअणाइं । वचन इत्यादि शब्दः—वयणा·········भायणाइं, इत्यादि; ऐसे ये वचन इत्यादि शब्द होते हैं । (परन्तु) नेत्ता······कमलाइं इत्यादि (पुल्लिगी तथा नपुंसकलिंगी रूप) तो संस्कृत जैसे सिद्ध हुए हैं ।

गुणाद्याः क्लीबे वा ॥ ३४ ॥

गुणादयः क्लीबे वा प्रयोक्तव्याः । गुणाइं गुणा[1] । विहवेहिँ गुणाइँ [2]मग्गन्ति । देवाणि देवा[3]। बिन्दूइं बिन्दुणो । खग्गं खग्गो । मंडलग्गं मंडलग्गो । कररुहं कररुहो । रुक्खाइं रुक्खा । इत्यादि । इति गुणादयः ।

गुण इत्यादि शब्द विकल्प से नपुंसकलिंग में प्रयुक्त करे । उदा०—गुणाइं······रुक्खा, इत्यादि । ऐसे ये गुण इत्यादि शब्द होते हैं ।

वेमाञ्जल्याद्याः स्त्रियाम् ॥ ३५ ॥

इमान्ताञ्जल्यादयश्च शब्दाः स्त्रियां वा प्रयोक्तव्याः । एसा गरिमा[4] एस गरिमा । असा महिमा एस महिमा । एसा निल्लज्जिमा एस निल्लज्जिमा । एसा धुत्तिमा एस धुत्तिमा । अञ्जल्यादि । एसा[5] अञ्जली एस अञ्जली एस अञ्जली । पिट्ठी[6] पिट्ठं । पृष्ठमित्वे कृते स्त्रियामेवेत्यन्ये । अच्छी[7] अच्छिं । पण्हा पण्हो । चोरिआ चोरिअं । एवं [8]कुच्छी । बली । निही । विही । रस्सी । गंठी । इत्यञ्जल्यादयः । गड्डा [9]गड्डो इति तु संस्कृतवदेव सिद्धम् । इमेति तन्त्रेण त्वादेशस्य डिमा इत्यस्य पृथ्वादीम्नश्च संग्रहः । त्वादेशस्य स्त्रीत्वमेवेच्छन्त्येके ।

इमन् (प्रत्यय) से अन्त होने वाले शब्द और अञ्जलि इत्यादि शब्द विकल्प से स्त्रीलिंग में प्रयुक्त करे । उदा०—एसा गरिमा ···धुत्तिमा । अञ्जलि इत्यादि शब्द—एसा अंजली, एस अंजली । पिट्ठी, पिट्ठं; इस पृष्ठ शब्द में (ऋ स्वर का) इ ऐसा स्वर किये जाने पर, वह पृष्ठ शब्द केवल स्त्रीलिंग में (प्रयुक्त होता है) ऐसा कुछ लोग कहते हैं । (अन्य अञ्जल्यादि शब्द)—अच्छी······चोरिअं । इसी तरह कुच्छी···

---

१. गुण । २. विभवैः गुणाः मृग्यन्ते ।

३. क्रम से :—देव । बिन्दु । खड्ग । मण्डलाग्र । कररुह । वृक्ष ।

४. क्रम से—गरिमन् । महिमन् । √ निर्लज्ज । √ धूर्त । रूप समान होने के कारण एसा और एस ये सर्वनामों के रूप प्रयुक्त करके, पुलिंग और स्त्रीलिंग दिखाया गया है ।

५. एसा और एस का उपयोग स्त्रीलिंग और पुलिंग दिखाने के लिए है ।

६. पृष्ठ । ७. क्रम से—अक्षि । प्रश्न । चौर्य ।

८. क्रम से—कुक्षि । बलि । निधि । विधि । रश्मि । ग्रंथि । ९. गर्ता, गर्त ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गंठी, ऐसे ये अञ्जलि इत्यादि शब्द हैं। गड्डा और गड्डो ये शब्द तो संस्कृत के समान सिद्ध हुए हैं। (सूत्र में) इम (न्) ऐसा नियमन होने से, (भाववाचक संज्ञा) सिद्ध करने वाले त्व (प्रत्यय) का आदेश स्वरूप में आने वाला इमा (डिमा) प्रत्यय तथा पृथु इत्यादि शब्दों में लगने वाला इमन् प्रत्यय, इनका ग्रहण होता है। त्व (प्रत्यय) के आदेश स्वरूप में आनेवाला इमा (इमन्) प्रत्यय लगकर बने हुए शब्द स्त्रीलिंग में ही होते हैं, ऐसा कुछ लोगों का मत है।

बाहोरात् ॥ ३६ ॥

बाहुशब्दस्य स्त्रियामाकारान्तादेशो भवति। बाहाए जेण[1] धरिओ एक्काए। स्त्रियामित्येव। वामेअरो[2] बाहू।

बाहु शब्द स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होने पर, उसके अन्त में आकार आदेश होता है। उदा०—बाहाए... एक्काए। (बाहु शब्द) स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होने पर ही (उसके अन्त में आकार आदेश होता है; वह पुल्लिंग में प्रयुक्त होने पर, उकारान्त ही रहता है। उदा०—) वामेअरो बाहू।

॥ अतो डो विसर्गस्य ॥ ३७ ॥

संस्कृतलक्षणोत्पन्नस्यातः परस्य विसर्गस्य स्थाने डो इत्यादेशो भवति। सर्वतः सव्वओ। पुरतः पुरओ। अग्रतः अग्गओ। मार्गतः मग्गओ। एवं सिद्धावस्थापेक्षया। भवतः भवओ। भवन्तः भवन्तो। सन्तः सन्तो। कुतः कुदो।

संस्कृत व्याकरण के नियमानुसार उत्पन्न हुए और अकार के आगे आने वाले विसर्ग के स्थान पर ओ (डो) आदेश होता है। उदा०—सर्वतः... ...मग्गओ। (संस्कृत शब्दों की) सिद्धावस्था की अपेक्षा से वर्णान्तर इसी प्रकार होता है:—भवतः... ...कुदो।

॥ निष्प्रती ओत्परी माल्यस्थोर्वा ॥ ३८ ॥

निर् प्रति इत्येतौ माल्यशब्दे स्थाधातौ च परे यथासंख्यं ओत् परि इत्येवं रूपौ वा भवतः। अभेदनिर्देशः सर्वादेशार्थः। ओमालं[3] निम्मल्लं। ओमालयं[4] वहइ। परिट्ठा [5]पइट्ठा। परिट्ठिअं [6]पइट्ठिअं।

निर् (निस्) और प्रति (उपसर्गों) के आगे माल्य शब्द तथा स्था धातु होने पर, विकल्प से उनके रूप अनुक्रम से ओ और परि होते हैं। (सूत्र में 'निष्प्रती ओत्परी' ऐसा) अभेद-निर्देश 'सम्पूर्ण शब्द को आदेश होता है, यह दिखाने के लिए है। उदा०—ओमालं...पइट्ठिअं।

---

१. बाहुना येन धृत एकेन। २. वामेतरः बाहुः।
३. निर्माल्य। ४. निर्माल्यं वहति।
५. प्रतिष्ठा। ६. प्रतिष्ठित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदेः ॥ ३९ ॥

आदेरित्यधिकारः कगचजं (१.१७७) इत्यादिसूत्रात् प्रागविशेषे वेदितव्यः।

'आदिम वर्ण (= स्वर) का इस सूत्र का अधिकार 'कगचजं इत्यादि के पिछले सूत्र तक सामान्यतः लागू है ऐसा जाने।

तदाद्यव्ययात् तत्स्वरस्य लुक् ॥ ४० ॥

त्यदादेरव्ययाच्च परस्य तयोरेव त्यदाद्यव्ययोरादेः स्वरस्य बहुलं लुग् भवति। अहेत्थ[1] अम्हे एत्थ। जइमा जइ[2] इमा। जइहं जइ[3] अहं।

सर्वनाम और अव्यय के आगे आने वाले वे ही सर्वनाम और अव्यय के आदि स्वर का बहुलत्व से (विकल्प से) लोप होता है। उदा०—अम्हेत्थ··· ··· अहं।

पदादपेर्वा ॥ ४१ ॥

पदात् परस्य अपेरव्ययस्यादेर्लुग् वा भवति। तं पि [4]तमवि। किं [5]पि किमवि। केण वि [6]केणावि। कहंपि[7] कहमवि।

(एकाध) पद के आगे आने वाले अपि अव्यय के आदि स्वर का विकल्प से लोप होता है। उदा०—तं पि··· ···कहमवि।

इतेः स्वरात् तश्च द्विः ॥ ४२ ॥

पदात् परस्य इतेरादेर्लुग् भवति स्वरात् परश्च तकारो द्विर्भवति। [8]किं ति। जं ति। दिट्ठं ति। न जुत्तं ति। स्वरात्। [9]तहत्ति। झत्ति। पिओ त्ति। पुरिसो त्ति। पदादित्येव। इअ[10] विञ्झ-गुहा-निलयाए।

(एकाध) पद के आगे आने वाले इति (अव्यय) के आदि स्वर का लोप होता है, और स्वर के आगे (इति होने पर, इति के आदि स्वर का लोप होकर, शेष ति में से) तकार का द्वित्व होता है। उदा०—किं ति······जुत्तं ति। स्वर के आगे

---

१. वयं अत्र।
२. यदि इमा।
३. यदि अहम्।
४. तं अपि।
५. किं अपि।
६. केन अपि।
७. कथं अपि।
८. क्रम से :—किं इति। यद् इति। दृष्टं इति। न युक्तं इति।
९. क्रम से :—तथा इति। झटिति। प्रियः इति। पुरुषः इति।
१०. इति विन्ध्यगुहानिलयया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(इति होने पर)—तह त्ति······पुरिसोत्ति । पद के आगे ही इति में आदि स्वर का लोप होता है; वैसा न होने पर लोप नहीं होता है । उदा०) इअ···निलयाए ।

लुप्त-य-र-व-श-ष-सां शषसां दीर्घः ॥ ४३ ॥

प्राकृतलक्षणवशाल्लुप्ता याद्या उपरि अधो वा येषां शकार-षकार-सकाराणां तेषामादेः स्वरस्य दीर्घो भवति। शस्य यलोपे। पश्यति पासइ। कश्यपः कासवो। आवश्यकं आवासयं र-लोपे। विश्राम्यति वीसमइ। विश्रामः वीसामो। मिश्रं मीसं। संस्पर्शः। संफासो। वलोपे। अश्वः आसो। विश्वसिति वीससइ। विश्वासः वीसासो। शलोपे। दुश्शासनः दूसासणो। मनश्शिला मणासिला। षस्य य-लोपे। शिष्यः सीसो। पुष्यः पूसो। मनुष्यः मणूसो। रलोपे। कर्षकः कासओ। वर्षाः वासा। वर्षः वासो। वलोपे। विष्वाणः वीसाणो। विष्वक् वीसुं। षलोपे। निष्षिक्तः नीसित्तो। सस्य यलोपे। सस्यम् सासं। कस्यचित् कासइ। रलोपे। उस्रः ऊसो। विस्रम्भः वीसंभो। वलोपे। विकस्वरः विकासरो। निःस्वः नीसो। सलोपे। निस्सहः नीसहो। न दीर्घानुस्वारात् (२·९२) इति प्रतिषेधात्। सर्वत्र अनादौ शेषादेशयोर्द्वित्वम् (२.८९) इति द्वित्वाभावः।

प्राकृत व्याकरण के अनुसार, (संयुक्त व्यंजन में से) प्रथम अथवा द्वितीय अवयव होने वाले य् र् व् श् ष् और स् व्यञ्जनों का लोप होकर, अवशिष्ट जो शकार, षकार और सकार होते हैं, उनके आदि स्वर का दीर्घ (स्वर) होता है । उदा०—श में य् का लोप होने पर, श् के बारे में—पश्यति······आवासयं । (श्र या र्श में) र् का लोप होने पर—विश्राम्यति······संफासो । (श्व में) व् का लोप होने पर अश्वः··· वीसासो । (श्श में) श् का लोप होने पर—दुश्शासनः······मणासिला । (ष्य में) य् का लोप होने पर, ष् के बारे में—शिष्यः······मणूसो । (र्ष में) र् का लोप होने पर—कर्षकः······वासो । (ष्व में) व् का लोप होने पर—विष्वाणः······वीसुं । (ष्ष में) ष् का लोप होने पर:—निष्षिक्तः नीसित्तो । (स्य में) य् का लोप होने पर, स् के बारे में—सस्यं······कासइ । (स्र में) र् का लोप होने पर—उस्रः ··· वीसंभो । (स्व में) व् का लोप होने पर—विकस्वरः······नीसो । (स्स में) स् का लोप होने पर—निस्सहः नीसहो । 'न दीर्घानुस्वारात्' ऐसा निषेध होने से, (उपर्युक्त) सर्व स्थानों पर 'अनादौ शेषादेशयोर्द्वित्वम्' सूत्र से होनेवाला द्वित्व नहीं होता है ।

अतः समृद्ध्यादौ वा ॥ ४४ ॥

समृद्धि इत्येवमादिषु शब्देषु आदेरकारस्य दीर्घो वा भवति। सामिद्धी समिद्धी। पासिद्धी पसिद्धी। पायडं पयडं। पाडिवआ पडिवआ। पासुत्तो पसुत्तो। पाडिसिद्धी पडिसिद्धी। सारिच्छो सरिच्छो। माणंसी मणंसी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माणंसिणी मणंसिणी। आहिआई अहिआई। पारोहो परोहो। पावासू पवासू। पाडिप्फद्धी पडिप्फद्धी। समृद्धि। प्रसिद्धि। प्रकट। प्रतिपत्। प्रसुप्त। प्रतिसिद्धि। सदृक्ष। मनस्विन्। मनस्विनी। अभियाति। प्ररोह। प्रवासिन्। प्रतिस्पर्धिन्। आकृतिगणोयम्। तेन। अस्पर्शः आफंसो। परकीयं पारकेरं पारक्कं। प्रवचनं पावयणं। चतुरन्तम् चाउरन्तं इत्याद्यपि भवति।

समृद्धि इत्यादि प्रकार के शब्दों में, आदि अकार का विकल्प से दीर्घ (यानी आकार) होता है। उदा०—सामिद्धी······पडिफद्धी। (इन शब्दों के मूल संस्कृत शब्द ऐसे हैं—) समृद्धि······प्रतिस्पर्धिन्। यह (समृद्ध्यादि गण) आकृति गण है; इसलिए अस्पर्शः······चाउरन्तं इत्यादि भी (वर्णान्तर) होवे हैं।

दक्षिणे हे ॥ ४५ ॥

दक्षिणशब्दे आदे रतो हे परे दीर्घो भवति। दाहिणो। ह इति किम्। दक्खिणो।

दक्षिण शब्द में (क्ष का वर्णान्तर होकर, आदि अकार के) आगे 'ह' आने पर, आदि अकार का दीर्घ (यानी आकार) होता है। उदा०—दाहिणो। (आगे) ह आने पर ऐसा (सूत्र में) क्यों कहा है? (कारण क्ष का वर्णान्तर होकर, ह नहीं आता, तो अ का दीर्घस्वर नहीं होता है। उदा०—) दक्खिणो।

इः स्वप्नादौ ॥ ४६ ॥

स्वप्न इत्येवमादिषु आदेरस्य इत्वं भवति। सिविणो सिमिणो। आर्षे उकारोऽपि। सुमिणो। ईसि। वेडिसो। विलिअं। विअणं। मुइंगो। किविणो। उत्तिमो। मिरिअं। दिण्णं। बहुलाधिकाराण्णत्वाभावे न भवति। दत्तं। देवदत्तो। स्वप्न। ईषत्। वेतस। व्यलीक। व्यजन। मृदङ्ग। कृपण। उत्तम। मरिच। दत्त। इत्यादि।

स्वप्न इत्यादि प्रकार के शब्दों में, आदि अ का इ होता है। उदा०—सिविणो, सिमिणो; आर्ष प्राकृत में (स्वप्न शब्द में आदि अ का) उकार भी होता है। उदा०—सुमिणो (अन्य उदाहरण :—) ईसि······दिण्णं। बहुल का अधिकार होने से, (दत्त शब्द में वर्णान्तर से त्त के स्थान पर) ण्ण नहीं आता, तो (आदि अ का इ) नहीं होता है। उदा०—दत्तं, देवदत्तो। (इन शब्दों के मूल संस्कृत शब्द ऐसे हैं :—) स्वप्न······दत्त; इत्यादि।

पक्वाङ्गार-ललाटे वा ॥ ४७ ॥

एष्वादेरत इत्वं वा भवति। पिक्कं पक्कं। इंगालो अंगारो। णिडालं णडालं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पक्व, अङ्गार और ललाट शब्दों में आदि अ का इ विकल्प से होता है। उदा०—पिक्कं··· ···णडालं।

मध्यम-कतमे द्वितीयस्य ॥ ४८ ॥

मध्यमशब्दे कतमशब्दे च द्वितीयस्यात इत्वं भवति। मज्झिमो। कइमो।

मध्यम शब्द में तथा कतम शब्द में द्वितीय अ का इ होता है। उदा०—मज्झिमो। कइमो।

सप्तपर्णे वा ॥ ४९ ॥

सप्तपर्णे द्वितीयस्यात इत्वं वा भवति। छत्तिवण्णो छत्तवण्णो।

सप्तपर्ण शब्द में द्वितीय अ का विकल्प से इ होता है। उदा०—छत्तिवण्णो, छत्तवण्णो।

मयट्यइर्वा ॥ ५० ॥

मयट्प्रत्यये आदेरतः स्थाने अइ इत्यादेशो भवति वा। विषमयः विसमइओ विसमओ।

मयट् प्रत्यय में आदि अ के स्थान पर अइ आदेश विकल्प से होता है। उदा०—विषमयः··· ···विसमओ।

ईर्हरे वा ॥ ५१ ॥

हरशब्दे आदेरत ईर्वा भवति। हीरो हरो।

हर शब्द में आदि अ का विकल्प से ई होता है। उदा०—हीरो, हरो।

ध्वनिविष्वचोरुः ॥ ५२ ॥

अनयोरादेरस्य उत्वं भवति। झुणी। वीसुं। कथं सुणओ। शुनक इति प्रकृत्यन्तरस्य। श्वन्शब्दस्य तु सा साणो इति प्रयोगौ भवतः।

ध्वनि और विष्वक् (विष्वच्) शब्दों में आदि अ का उ होता है। उदा०—झुणी, वीसुं। सुणओ रूप कैसे होता है? (उत्तर :—सुणओ रूप) शुनक् इस दूसरे मूल (संस्कृत) शब्द से होता है। श्वन् शब्द के तो सा, साणो ऐसे प्रयोग होते हैं।

वन्द्र-खण्डिते णा वा ॥ ५३ ॥

अनयोरादेरस्य णकारेण सहितस्य उत्वं वा भवति। वुन्द्रं वन्द्रं। खुडिओ खंडिओ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृन्द्र शब्द में (आदि अ का) और खण्डित शब्द में (अगले) णकार सहित आदि अ का विकल्प से उ होता है। उदा०—वुन्द्रं··· ···खण्डिओ।

गवये वः ॥ ५४ ॥

गवयशब्दे वकाराकारस्य उत्वं भवति। गउओ गउआ।

गवय शब्द में वकार में से अकार का (वकार के सह) उ होता है। उदा०—गउओ, गउआ।

प्रथमे प्रथोर्वा ॥ ५५ ॥

प्रथमशब्दे पकारथकारयोरकारस्य युगपत् क्रमेण च उकारो वा भवति। पुढुमं पुढमं पढुमं पढमं।

प्रथम शब्द में, पकार और थकार में से अकार का उकार एक ही समय और क्रम से विकल्प से होता है। उदा०—पुढुमं··· ···पढमं।

ज्ञो णत्वेभिज्ञादौ ॥ ५६ ॥

अभिज्ञ एवं प्रकारेषु ज्ञस्य णत्वे कृते ज्ञस्यैव अत उत्वं भवति। अहिण्णू[1]। सव्वण्णू। कयण्णू। आगमण्णू। णत्व इति किम्। [2]अहिज्जो। सव्वज्जो। अभिज्ञादाविति किम्। प्राज्ञः पण्णो। येषां ज्ञस्य णत्वे उत्वं दृश्यते ते अभिज्ञादयः।

अभिज्ञ ऐसे प्रकार के शब्दों में, ज्ञ का ण किए जाने पर अ का ही उ होता है। उदा०—अहिण्णू··· आगमण्णू ज्ञ का ण किए जाने पर, ऐसा (सूत्र में) क्यों कहा है? (कारण यदि ज्ञ का ण नहीं किया हो, तो ज्ञ में से अ का उ नहीं होता है। उदा०—) अहिज्जो, सव्वजो। (सूत्र में) अभिज्ञ इत्यादि शब्दों में ऐसा क्यों कहा है? (कारण अभिज्ञ इत्यादि शब्द छोड़कर, अन्य शब्दों में ज्ञ में से अ का उ नहीं होता है। उदा०—प्राज्ञः पण्णो। जिन शब्दों में ज्ञ का ण होकर, (ज्ञ में से अ का) उ हुआ है ऐसा दिखाई देता है, वे होते हैं अभिज्ञ इत्यादि शब्द।

एच्छय्यादौ ॥ ५७ ॥

शय्यादिषु आदेरस्य एत्वं भवति। सेज्जा। सुंदेरं। गेन्दुअं। एत्थ। शय्या। सौन्दर्यं। कन्दुक। अत्र। आर्षे पुरेकम्मं।

शय्या इत्यादि शब्दों में आदि का ए होता है। उदा०—सेज्जा··· ···एत्थ। (इनके मूल शब्द क्रम से ऐसे हैं :—) शय्या··· ···अत्र। आर्ष प्राकृत में अन्य कुछ शब्दों में भी अ का ए होता है। उदा—[3]पुरेकम्मं।

---

१. क्रम से :—अभिज्ञ, सर्वज्ञ, कृतज्ञ, आगमज्ञ।

२. क्रम से :—अभिज्ञ, सर्वज्ञ।

३. पुरःकर्म।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वल्लुयुत्करपर्यन्ताश्चर्ये वा ॥ ५८ ॥

एषु आदेरस्य एत्वं वा भवति। वेल्ली वल्ली। उक्केरो उक्करो। पेरन्तो पज्जन्तो। अच्छेरं अच्छरिअं अच्छअरं अच्छरिज्जं अच्छरीअं।

वल्ली, उत्कर, पर्यन्त और आश्चर्य शब्दों में, आदि अ का विकल्प से ए होता है। उदा०—वेल्ली······अच्छरीअं।

ब्रह्मचर्ये चः ॥ ५९ ॥

ब्रह्मचर्यशब्दे चस्य अत एत्वं भवति। बम्हचेरं।

ब्रह्मचर्य शब्द में, च में से अ का ए होता है। उदा०—बम्हचेरं।

तोन्तरि ॥ ६० ॥

अन्तर्शब्दे तस्य अत एत्वं भवति। अन्तःपुरम् अंते उरं अन्तश्चारी अंतेआरी। क्वचिन्न भवति। अन्तग्गयं[1]। अन्तो-वीसम्भ-[2]निवेसिआणं।

अन्तर् शब्द में, त में से अ का ए होता है। उदा०—अन्तःपुरं·· अंतेआरी। क्वचित् (ऐसा) नहीं होता है। उदा०—अन्तग्गयं······सिआणं।

ओत्पद्मे ॥ ६१ ॥

पद्मशब्दे आदेरत ओत्वं भवति। पोम्मं। पद्म-छद्म (२·११२) इति विश्लेषे न भवति। पउमं।

पद्म शब्द में आदि अ का ओ होता है। उदा०—पोम्मं। 'पद्म-छद्म'···सूत्र के अनुसार (यदि द्म में से अवयवों का स्वर भक्ति से) विश्लेष हुआ हो, तो वहाँ (ओ स्वर) नहीं होता है। उदा०—पउमं।

नमस्कारपरस्परे द्वितीयस्य ॥ ६२ ॥

अनयोर्द्वितीयस्य अत ओत्वं भवति। नमोक्कारो। परोप्परं।

नमस्कार और परस्पर शब्दों में, द्वितीय अ का ओ होता है। उदा०—नमोक्कारो, परोप्परं।

वार्पौ ॥ ६३ ॥

अर्पयतौ धातौ आदेरस्य ओत्वं वा भवति। ओप्पेइ अप्पेइ। ओप्पिअं[3] अप्पिअं।

अर्पयति धातु में आदि अ का ओ विकल्प से होता है। उदा०—ओप्पेइ······अप्पिअं।

---

१. अन्तर्गत। २. अन्तर्विश्रम्भनिवेशितानाम्। ३. अर्पित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वपावुच्च ॥ ६४ ॥

स्वपितौ धातौ आदेरस्य ओत् उत् च भवति । सोवइ । सुवइ ।

स्वपिति धातु में आदि अ का ओ और उ होते हैं । उदा०—सोवइ, सुवइ ।

नात्पुनर्यादाई वा ॥ ६५ ॥

नञः परे पुनः शब्दे आदेरस्य आ आइ इत्यादेशौ वा भवतः । न उणा न उणाइ । पक्षे । न उण न उणो । केवलस्यापि दृश्यते । पुणाइ ।

न (नञ्) के आगे पुनः शब्द होने पर, (पुनः शब्द में से) आदि अ को आ और आइ आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—न उणा······उणाइ । (विकल्प-) पक्ष में—न उण, न उणो । (क्वचित्) केवल (पुनः शब्द होते भी आइ आदेश) दिखाई देता है । उदा०—पुणाइ ।

वालाब्वरण्ये लुक् ॥ ६६ ॥

अलाब्वरण्यशब्दयोरादेरस्य लुग् वा भवति । लाउं [1]अलाउं लाऊ अलाऊ । रण्णं अरण्णं । अत इत्येव । [2]आरण्ण कुंजरो व्व वेल्लंतो ।

अलाबु और अरण्य शब्द में, आदि अ का लोप विकल्प से होता है । उदा०—लाउं···...अरण्णं । (इन शब्दों में) अ का ही विकल्प से लोप होता है । वैसा न होने पर लोप नहीं होता है । उदा०—) आरण्ण ·····वेल्लंतो ।

वाव्ययोत्खातादावदातः ॥ ६७ ॥

अव्ययेषु उत्खातादिषु च शब्देषु आदेराकारस्य अद् वा भवति । अव्ययम् । जह[3] जहा । तह तहा । अहव अहवा । व वा । ह हा इत्यादि । उत्खातादि । उक्खयं उक्खायं । चमरो चामरो । कलओ कालओ । ठविओ ठाविओ । परिट्ठविओ[4] परिट्ठाविओ । संठविओ [5]संठाविओ । पययं पाययं । तलवेण्टं तालवेण्टं तलवोण्टं तालवोण्टं । हलिओ हालिओ । नराओ नाराओ । बलया बलाया । कुमरो कुमारो । खइरं खाइरं । उत्खात । चामर । कालक । स्थापित । प्राकृत । तालवृन्त । हालिक । नाराच । बलाका । कुमार । खादिर । इत्यादि । केचिद् ब्राह्मणपूर्वाह्णयोरपीच्छन्ति । बम्हणो बाम्हणो । पुव्वण्हो पुव्वाण्हो । दवग्गी दावग्गी । चडू चाडू इति शब्दभेदात् सिद्धम् ।

---

१. पहले दो रूप नपुंसकलिंगी हैं; बाद के दो रूप पुल्लिंगी हैं ।

२. आरण्य-कुञ्जरः इव वेल्लन् ।

३. क्रम से—यथा । तथा । अथवा । वा । हा ।

४. परिस्थापित ।

५. संस्थापित ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अव्ययों में और उत्खात इत्यादि शब्दों में, आदि आकार का अ विकल्प से होता है। उदा०--अव्ययों में--जह······हा, इत्यादि। उत्खात इत्यादि शब्दों में--उक्खयं······खाइरं। (इनके मूल संस्कृत शब्द क्रम से ऐसे हैं:--) उत्खात······खादिर, इत्यादि। ब्राह्मण और पूर्वाह्ण शब्दों में भी (आदि आ का विकल्प से अ होता है) ऐसा मत कुछ वैयाकरण व्यक्त करते हैं; (इसलिए--) बम्हणो···पुव्वाण्हो। दवग्गी, दावग्गी और चडू, चाडू ये रूप तो (मूल) भिन्न (संस्कृत) शब्दों से ही सिद्ध हुए हैं (इसलिए उन शब्दों में आ का विकल्प से अ होता है, ऐसा मानने की आवश्यकता नहीं है।)

घञ्वृद्धेर्वा ॥ ६८ ॥

घञ्निमित्तो यो वृद्धिरूप आकारस्तस्यादिभूतस्य अद् वा भवति। पवहो[1] पवाहो। पहरो[2] पहारो। पयरो पयारो। प्रकारः प्रचारो वा। [3]पत्थवो पत्थावो। क्वचिन्न भवति। रागः राओ।

घञ् प्रत्यय लगने से वृद्धि के स्वरूप में जो आकार आता है, वह आदि होने पर, उसका विकल्प से अ होता है। उदा०—पवहो······पहारो; पयरो, पयारो (इन दोनों के मूल संस्कृत शब्द ऐसे हैं—) प्रकार किंवा प्रचार; पत्थवो पत्थावो। क्वचित् (ऐसे आ का अ नहीं होता है। उदा०--) रागः राओ।

महाराष्ट्रे ॥ ६९ ॥

महाराष्ट्रशब्दे आदेराकारस्य अद् भवति। मरहट्ठं। मरहट्ठो।

महाराष्ट्र शब्द में आदि आकार का अ होता है। उदा०—मरहट्ठं, मरहट्ठो।

मांसादिष्वनुस्वारे ॥ ७० ॥

मांसप्रकारेषु अनुस्वारे सति आदेरातः अद् भवति। मंसं। पंसू। पंसणो। कंसं। कंसिओ। वंसिओ। पंडवो। संसिद्धिओ। संजत्तिओ। अनुस्वार इति किम्। मासं। पासू। मांस। पांसु। पांसन। कांस्य। कांसिक। वांशिक। पांडव। सांसिद्धिक। सांयात्रिक। इत्यादि।

मांस (इत्यादि) प्रकार के शब्दों में, अनुस्वार होते समय, आदि आ का अ होता है। उदा०--मंसं······संजत्तिओ। अनुस्वार होते समय, ऐसा क्यों कहा है? (कारण यदि इस अनुस्वार का लोप सूत्र १.२९ के अनुसार किया हो, तो आ का अ नहीं होता है। उदा०—) मांस, पासू।

(उपर्युक्त शब्दों के मूल संस्कृत शब्द ऐसे हैं—) मांस···सांयात्रिक, इत्यादि।

---

१. प्रवाह। २. प्रहार। ३. प्रस्ताव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्यामाके मः ॥ ७१ ॥

श्यामाके मस्य आतः अद् भवति । सामओ ।

श्यामाक शब्द में,म् से संपृक्त होने वाले आ का अ होता है । उदा०—सामओ ।

इः सदादौ वा ॥ ७२ ॥

सदादिषु शब्देषु आत इत्वं वा भवति । सइ[1] सया । निसिअरो निसा-अरो । कुप्पिसो कुप्पासो ।

सदा इत्यादि शब्दों में आ का इ विकल्प से होता है । उदा०—सइ···कुप्पासो ।

आचार्ये चोच्च ॥ ७३ ॥

आचार्यशब्दे चस्य आत इत्वं आत्वं च भवति । आइरिओ आयरिओ ।

आचार्य शब्द में, च् से संपृक्त रहने वाले आ के इ और अ होते हैं । उदा०—आइरिओ, आयरिओ ।

ईः स्त्यानखल्वाटे ॥ ७४ ॥

स्त्यानखल्वाटयोरादेरात ई र्भवति । ठीणं थीणं[2] थिण्णं । खल्लीडो । संखायं इति तु सकः स्त्यः खा (४·१५) इति खादेशे सिद्धम् ।

स्त्यान और खल्वाट शब्दों में, आदि आ का ई होता है । उदा०—ठीणं······खल्लीडो । (प्रश्न—संखायं रूप कैसे हुआ है ? उत्तर—) 'समः स्त्यः खा' सूत्रानुसार स्त्यै को) खा आदेश होकर, संखायं रूप सिद्ध हुआ है ।

उः सास्नास्तावके ॥ ७५ ॥

अनयोरादेरात उत्वं भवति । सुण्हा । थुवओ ।

सास्ना और स्तावक शब्दों में,आदि आ का उ होता है । उदा०—सुण्हा,थुवओ ।

ऊद्वासारे ॥ ७६ ॥

आसारशब्दे आदेरात ऊद् वा भवति । ऊसारो आसारो ।

आसार शब्द में आदि आ का ऊ विकल्प से होता है । उदा०—ऊसारो,आसारो ।

आर्यायां र्यः श्वश्र्वाम् ॥ ७७ ॥

आर्याशब्दे श्वश्र्वां वाच्यायां र्यस्यात ऊर्भवति । अज्जू । श्वश्र्वामिति किम् । अज्जा ।

---

१. क्रम से—सदा । निशाक (च) र । कूर्पास ।

२. आगे संयुक्त व्यंजन होने के कारण, पिछला दीर्घ ई स्वर ह्रस्व हुआ है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्या शब्द में, सास अर्थ वाच्यार्थ होने पर, र्य् से संपृक्त रहने वाले आ का ऊ होता है। उदा०—अज्जू। सास (अर्थ वाच्यार्थ होने पर) ऐसा क्यों कहा है? (कारक यदि सास अर्थ वाच्य न हो, तो आ का ऊ नहीं होता है। उदा०—)अज्जा।

एद् ग्राह्ये ॥ ७८ ॥

ग्राह्यशब्दे आदेरात एत् भवति। गेज्झं।

ग्राह्य शब्द में आदि आ का ए होता है। उदा०—गेज्झं।

द्वारे वा ॥ ७९ ॥

द्वारशब्दे आत एद् वा भवति। देरं। पक्षे। दुआरं दारं बारं। कथं नेरइओ नारइओ। नैरयिकनारयिकशब्दयोर्भविष्यति। आर्षे अन्यत्रापि। [1]पच्छेकम्मं। असहेज्ज[2] देवासुरी।

द्वार शब्द मे आ का ए विकल्प से होता है। उदा०—देरं। (विकल्प) पक्ष में दुआरं···बारं। नेरइओ और नारइओ रूप कैसे होते हैं? (उत्तरः—) नैरयिक और नारकिक (शब्दों) के (ये रूप) होंगे। आर्ष प्राकृत में अन्य शब्दों में भी (आ का ए होता है। उदा०—पच्छेकम्मं······देवासुरी।

पारापते रो वा ॥ ८० ॥

पारापतशब्दे रस्थस्यात एद् वा भवति। पारेवओ पारावओ।

पारापत शब्द में र् से संपृक्त रहने वाले आ का ए विकल्प से होता है। उदा०—पारेवओ, पारावओ।

मात्रटि वा ॥ ८१ ॥

मात्रट्प्रत्यये आत एद् वा भवति। एत्तिअमेत्तं[3] एत्ति अमत्तं। बहुलाधिकारात् क्वचिन्मात्रशब्देपि। भो [4]अणमेत्तं।

मात्र (मात्रट्) प्रत्यय में आ का ए विकल्प से होता है। उदा०—एत्तिअमेत्तं, एत्तिअमत्तं। बहुल का अधिकार होने से, क्वचित् मात्र शब्द में भी (आ का ए होता है। उदा०—) भोअणमेत्तं।

उदोद् वार्द्रे ॥ ८२ ॥

आर्द्रशब्दे आदेरात उद् ओच्च वा भवतः। उल्लं ओल्लं। पक्षे। अल्लं अद्दं। बाहसलिलपवहेण[5] उल्लेइ।

---

१. पश्चात्कर्म।
२. असहायदेवासुरी।
३. इयन्मात्र।
४. भोजनमात्र।
५. बाष्प-सलिल-प्रवाहेण आर्द्रयति (आर्द्रीकरोति)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्द्र शब्द में आदि आ के उ और ओ विकल्प से होते हैं। उदा०—*उल्लं,ओल्लं।* (विकल्प) पक्ष में—*अल्लं......उल्लेइ।*

ओदाल्यां पङ्क्तौ ॥ ८३ ॥

आलीशब्दे पङ्क्तिवाचिनि आत ओत्वं भवति। ओली। पङ्क्ताविति किम्। आली सखी।

आली शब्द में, पंक्ति अर्थ होने पर, आ का ओ होता है। उदा०—ओली। पंक्ति (अर्थ होने पर) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण पंक्ति अर्थ न होने पर, आ का ओ नहीं होता है। उदा०—) आली (यानी) सहेली।

ह्रस्वः संयोगे ॥ ८४ ॥

दीर्घस्य यथादर्शनं संयोगे परे ह्रस्वो भवति। आत्। आम्रम् अम्बं। ताम्रम् तम्बं। विरहाग्निः विरहग्गी। आस्यम् अस्सं। ईत्। मुनीन्द्रः मुणिन्दो। तीर्थम् तित्थं। ऊत्। गुरूल्लापाः गुरुल्लावा। चूर्णः चुण्णो। एत्। नरेन्द्रः नरिन्दो। म्लेच्छः मिलिच्छो। दिट्ठिक्क-थण[1]-वट्ठं। ओत्। अधरोष्ठः अहरुट्ठं। नीलोत्पलम् नीलुप्पलं। संयोग इति किम्। [2]आयासं। ईसरो। ऊसवो।

(साहित्य में) जैसा दिखाई देता है वैसा, संयुक्त व्यंजन आगे होने पर, (पिछले) दीर्घ स्वर का-ह्रस्व स्वर होता है। उदा०—आ (के आगे संयोग होने पर—) आम्रम्......अस्सं। ई (के आगे संयोग होने परः—) मुनीन्द्रः......तित्थं। ऊ (के आगे संयोग होने परः—) गुरूल्लापाः...चुण्णो। ए (के आगे संयोग होने पर—) नरेन्द्रः......वट्ठं। ओ (के आगे संयोग होने पर —) अधरोष्ठः......नीलुप्पलं। (आगे) संयोग (=संयुक्त व्यंजन) होने पर, ऐसा क्यों कहा है ? (कारण आगे संयोग न हो, तो पिछला दीर्घ स्वर-ह्रस्व नहीं होता है। उदा०—) आयासं; (तथा आगे आने वाले संयुक्त व्यंजन में से एक अवयव का लोप किया हो, तो भी पिछला दीर्घ स्वर-ह्रस्व नहीं होता है : उदा०—) ईसर, ऊसव।

इत एद्वा ॥ ८५ ॥

संयोग इति वर्तते। आदेरिकारस्य संयोगे परे एकारो परे वा भवति। पेण्डं[3] पिण्डं। धम्मेल्लं धम्मिल्लं। सेन्दूरं सिन्दूरं। वेण्ट विण्ट। पेटठं पिटठं। बेल्लं बिल्लं। क्वचिन्न भवति। चिन्ता।

---

१. दृष्टिक-स्तन-पृष्ठम्। २. क्रम से—आयास (आकाश)। ईश्वर। उत्सव।
३. क्रम से—पिण्ड। धम्मिल्ल। सिन्दूर। विष्णु। पृष्ठ। बिल्व।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयोग शब्द की अनुवृत्ति (इस सूत्र में) है। (तब इस सूत्र का अर्थ ऐसा होता है—) आगे संयोग होने पर, आदि इकार का एकार विकल्प से होता है। उदा०—पेण्डं...बिल्लं। क्वचित् (आगे संयोग होने पर भी इ का ए) नहीं होता है। उदा०—चिन्ता।

किंशुके वा ॥ ८६ ॥

किंशुकशब्दे आदेरित एकारो वा भवति। केसुअं किंसुअं।

किंशुक शब्द में आदि इ का एकार विकल्प से होता है। उदा०—केसुअं, किंसुअं।

मिरायाम् ॥ ८७ ॥

मिराशब्दे इत एकारो भवति। मेरा।

मिरा शब्द में इ का एकार होता है। उदा०—मेरा।

पथिपृथिवी प्रतिश्रुन्मूषिकहरिद्राबिभीतकेष्वत् ॥ ८८ ॥

एषु आदेरितोकारो भवति। पहो। पुहई पुढवी। पडंसुआ। मूसओ। हलद्दी हलद्दा। बहेडओ। पंथं किर[1] देसित्तेति तु पथिशब्दसमानार्थस्य पन्थ-शब्दस्य भविष्यति। हरिद्रायां विकल्प इत्यन्ये। हलिद्दी हलद्दा।

पथिन्, पृथिवी, प्रतिश्रुत्, मूषिक, हरिद्रा और बिभीतक इन शब्दों में, आदि इ का अकार होता है। उदा०—पहो... ... ...बहेडओ। 'पन्थं किर देसित्ता' यहाँ तो पथिन् शब्द के समानार्थी होने वाले 'पंथ' शब्द का 'पंथं' ऐसा रूप होगा। कुछ के मतानुसार, हरिद्रा शब्द के बारे में (इ का अकार होने का) विकल्प है। उदा०—हलिद्दी, हलद्दा।

शिथिलेङ्गुदे वा ॥ ८९ ॥

अनयोरादेरितोद् वा भवति। सढिलं पसढिलं सिढिलं [2]पसिढिलं। अंगुअं इंगिअं। निर्मितशब्दे तु वा आत्वं न विधेयम्। निर्मातनिर्मितशब्दाभ्यामेव सिद्धेः।

शिथिल और इंगुद इन दो शब्दों में, आदि इ का अ विकल्प से होता है। उदा०—सढिलं इंगुअं। परन्तु निर्मित शब्द में मात्र (इ का) विकल्प से आ होता है, ऐसा विधान करना नहीं है; कारण (निम्माअ और निम्मिअ ये शब्द) निर्मात और निर्मित इन शब्दों से सिद्ध होते हैं।

१. पन्थं किल देशित्वा। २. प्रशिथिल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तित्तिरौ रः ॥ ९० ॥

तित्तिरिशब्दे रस्येतोद् भवति। तित्तिरो।

तित्तिरि शब्द में, र् से संपृक्त रहने वाले इ का अ होता है। उदा०—तित्तिरो (√तित्तिर)।

इतौ तो वाक्यादौ ॥ ९१ ॥

वाक्यादिभूते इतिशब्दे यस्तस्तत्संबंधिन इकारस्य अकारो भवति। इअ[1] जंपि आवसाणे। इअ विअसि[2]अकुसुमसरो। वाक्यादाविति किम्। पिओ[3] त्ति। पुरिसो[4]त्ति।

वाक्य के आदि रहने वाले इति शब्द में जो त् है उससे सम्बन्धित होने वाले इकार का अकार होता है। उदा०—इअ···सरो। वाक्य के आदि रहने वाले (इति शब्द में) ऐसा क्यों कहा है? (कारण यदि इति शब्द वाक्य के आरम्भ में न हो, तो त् से संपृक्त रहने वाले इ का अ न होकर, सूत्र १.४२ के अनुसार वर्णान्तर होता है। उदा०—) पिओ···त्ति।

ईर्जिह्वासिंहत्रिंशद्विंशतौ त्या ॥ ९२ ॥

जिह्वादिषु इकारस्य तिशब्देन सह ई भवति। जीहा। सीहो। तीसा। वीसा। बहुलाधिकारात् क्वचिन्न भवति। [5]सिंहदत्तो। सिंहराओ[6]।

जिह्वा इत्यादि शब्दों में, ति शब्द के साथ इकार का ई होता है। उदा०—जीहा··· ···वीसा। बहुल का अधिकार होने से, क्वचित् (इकार का ई) नहीं होता है। उदा०—सिंह···राओ।

लुकि निरः ॥ ९३ ॥

निर् उपसर्गस्य रेफलोपे सति ईकारो भवति। नीसरइ। नीसासो। लुकीति किम्। निण्णओ[7]। निस्सहाइँ[8] अंगाइं।

निर् उपसर्ग में से रेफ का (= र् व्यञ्जन का) लोप होने पर, इ का ईकार होता है। उदा०—नीसरइ, नीसासो। (निर् उपसर्ग में से) र् का लोप होने पर ऐसा क्यों कहा है? (कारण यदि र् का लोप न हो, तो इ का ईकार नहीं होता है। उदा०—) निण्णओ··· ···अंगाइं।

---

१. इति जल्पितावसाने।
२. इति विकसितकुसुमश (स) रः।
३. प्रियः इति।
४. पुरुषः इति।
५. सिंहदत्तः।
६. सिंहराजः।
७. निर्णयः।
८. निःसहानि अङ्गानि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विन्योरुत् ॥ ९४ ॥

द्विशब्दे नावुपसर्गे च इत उद् भवति । द्वि।[1] दुभत्तो । दुआई । दुविहो । दुरेहो[2] । दुवयणं[3] । बहुलाधिकारात् क्वचिद् विकल्पः । [4]दुउणो बिउणो । दुइओ बिइओ । क्वचिन्न भवति । द्विजः दिओ । द्विरदः दिरओ । क्वचिद् ओत्वमपि । दोवयणं । नि । [5]णुमज्जइ । णुमन्नो । क्वचिन्न भवति । निवडइ[6] ।

द्वि शब्द में और नि उपसर्ग में, इ का उ होता है । उदा०—द्वि में :—दुमत्तो ......दुवयणं । बहुल का अधिकार होने से, क्वचित् (द्वि में से इ का उ) विकल्प से होता है । उदा०—दुउणो......बिइओ । क्वचित् (द्वि में से इ का उ) नहीं होता है । उदा०—द्विजः......दिरओ । क्वचित् (द्वि में से इ का) ओ भी होता है । उदा०—दोवयणं । (अब) नि उपसर्ग में :—णुमज्जइ, णुमन्नो । क्वचित् (नि में से इ का उ) नहीं होता है । उदा०—निवडइ ।

प्रवासीक्षौ ॥ ९५ ॥

अनयोरादेरित उत्वं भवति । पावासुओ । उच्छू ।

प्रवासिन् (न्) और इक्षु शब्दों में, आदि इ का उ होता है । उदा०—पावासुओ । उच्छू ।

युधिष्ठिरे वा ॥ ९६ ॥

युधिष्ठिरशब्दे आदेरित उत्वं वा भवति । जुहुट्ठिलो जहिट्ठिलो ।

युधिष्ठिर शब्द में, आदि इ का उ विकल्प से होता है । उदा०—जहुट्ठिलो, जहिट्ठिलो ।

ओच्च द्विधाकृगः ॥ ९७ ॥

द्विधा शब्दे कृग्धातोः प्रयोगे इत ओत्वं चकारादुत्वं च भवति । दोहाकिज्जइ[7] दुहाकिज्जइ । दोहाइअं दुहाइअं । कृग इति किम् । दिहा[8]गयं । क्वचित् केवलस्यापि दुहा वि सो [9]सुरवहू सत्थो ।

(द्विधा शब्द के आगे) कृ धातु का प्रयोग/उपयोग होने पर, द्विधा शब्द में इ का ओ, और (सूत्र में प्रयुक्त) चकार के कारण (= च शब्द के कारण) उ भी

---

१. क्रम से :—द्विमात्र । द्विजाति । द्विविध ।
२. द्विरेफ ।
३. द्विवचन ।
४. क्रम से :—द्विगुण । द्वितीय ।
५. क्रम से :—निमज्जति । निमग्न ।
६. निपतति ।
७. क्रम से :—द्विधाक्रियते । द्विधाकृत ।
८. द्विधागत ।
९. द्विधा अपि सः सुर-वधू-सार्थः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

होता है। उदा·—दोहा··· ···दुहाइअं। (द्विधा शब्द के आगे) कृ धातु का (प्रयोग होने पर) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण वैसा न हो, तो द्विधा में के इ का ओ अथवा उ नहीं होता है। उदा०—) दिहागयं। क्वचित् (आगे कृ धातु का प्रयोग न होने पर) केवल (द्विधा शब्द में भी इ का उ होता है। उदा०—) दुहा··· ···सत्थो।

वा निर्झरे ना ॥ ९८ ॥

निर्झरशब्दे नकारेण सह इत ओकारो वा भवति। ओज्झरो निज्झरो।

निर्झर शब्द में, नकार के साथ इ का ओकार विकल्प से होता है। उदा०—ओज्झरो, निज्झरो।

हरितक्यामीतोत् ॥ ९९ ॥

हरीतकीशब्दे आदेरीकारस्य अद् भवति। हरडई।

हरीतकी शब्द में, आदि ईकार का अ होता है। उदा०—हरडई।

आत्कश्मीरे ॥ १०० ॥

कश्मीरशब्दे ईत् आद् भवति। कम्हारा।

कश्मीर शब्द में ई का आ होता है। उदा०—कम्हारा।

पानीयादिष्वित् ॥ १०१ ॥

पानीयादिषु शब्देषु ईत् इद् भवति। पाणिअं। अलिअं। जिअइ। जिअउ। विलिअं। करिसो। सिरिसो। दुइअं। तइअं। गहिरं। उवणिअं। आणिअं। पलिविअं। ओसिअन्तं। पसिअ। गहिअं। वम्मिओ। तयाणिं। पानीय। अलीक। जीवति। जीवतु। व्रीडित। करीष। शिरीष। द्वितीय। तृतीय। गभीर। उपनीत। आनीत। प्रदीपित। अवसीदत्। प्रसीद। गृहीत। वल्मीक। तदानीम्। इति पानीयादयः॥ बहुलाधिकारादेषु क्वचिन्नित्यं क्वचिद् विकल्पः। तेन। पाणीअं। अलीअं। जीअइ। करीसो। उवणीओ। इत्यादि सिद्धम्।

पानीय इत्यादि शब्दों में ई का इ होता है। उदा०—पाणिअं··· ···तयाणिं। (इनके मूल संस्कृत शब्द ऐसे हैं :—) पानीय··· ···तदानीम्। ऐसे ये पानीय इत्यादि शब्द हैं। बहुल का अधिकार होने से, इन शब्दों में, (ई का इ) क्वचित् नित्य होता है तो कभी विकल्प से होता है। इसलिए पाणीअं··· ···उवणीओ (ऐसे वर्णान्तर भी) सिद्ध होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उज्जीर्णे ॥ १०२ ॥

जीर्णशब्दे ईत् उद् भवति । जुण्णसुरा[1] । क्वचिन्न भवति । जिण्णे[2] भोअणमत्ते ।

जीर्ण शब्द में ई का उ होता है । उदा०—जुण्णसुरा । क्वचित् (जीर्ण में से ई का उ) नही होता । उदा०—जिण्णे··· ···मत्ते ।

उर्हीनविहीने वा ॥ १०३ ॥

अनयोरति ऊत्वं वा भवति । हूणो हीणो । विहूणो विहीणो । विहीन इति किम् । पहीण-जर-[3]मरणा ।

हीन और विहीन इन दो शब्दों में ई का ऊ विकल्प से होता है । उदा०—हूणो··· ···विहीणो । विहीन शब्द में (ई का ऊ विकल्प से होता है) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण हीन शब्द के पीछे 'वि' छोड़कर अन्य उपसर्ग होने पर, ई का ऊ नहीं होता है । उदा०—) पहीण··· ···मरणा ।

तीर्थे हे ॥ १०४ ॥

तीर्थशब्दे हे सति ईत ऊत्वं भवति । तूहं । ह इति किम् । तित्थं ।

तीर्थ शब्द में (वर्ण विकार होकर ती के आगे) ह् व्यञ्जन होने पर, ई का ऊ होता है । उदा०—तूहं । (आगे) ह् (व्यञ्जन) आने पर, ऐसा क्यों कहा है ? (कारण यदि आगे ह् न हो, तो ई का ऊ नहीं होता है । उदा० —) तित्थं ।

एत्पीयूषापीडबिभीतक कीदृशेदृशे ॥ १०५ ॥

एषु ईत एत्वं भवति । पेऊसं । आमेलो । बहेडओ । केरिसो । एरिसो ।

पीयूष, आपीड, बिभीतक, कीदृश और ईदृश शब्दों में, ई का ए होता है । उदा०···पेथसं··· ···एरिसो ।

नीडपीठे वा ॥ १०६ ॥

अनयोरीत एत्वं वा भवति । नेडं नीडं । पेढं पीढं ।

नीड और पीठ इन दो शब्दों मे, ई का ए विकल्प से होता है । उदा०—नेडं ··· ···पीढं ।

---

१. जीर्णसुरा । २. जीर्णे भोजनमात्रे ।

३. प्रहीणजरामरणाः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उतो मुकुलादिष्वत् ॥ १०७ ॥

मुकुल इत्येव मादिषु शब्देषु आदे रुतोत्वं भवति। मउलं मउलो। मउरं। मउडं। अगरुं। गरुई। जहुट्ठिलो जहिट्ठिलो। सोअमल्लं। गलोई। मुकुल। मुकुर। मुकुट। अगुरु। गुर्वी। युधिष्ठिर। सौकुमार्य। गुडूची। इति मुकुलादयः। क्वचिदाकारोपि। विद्रुतः विद्दाओ।

मुकुल इत्यादि प्रकार के शब्दों में, आदि उ का अ होता है। उदा०—मउलं... गलोई। (इनके मूल संस्कृत शब्द ऐसे —) मुकुल गुडूची। ऐसे ये मुकुल इत्यादि शब्द होते हैं। क्वचित् (उ का) आकार (=आ) भी होता है। उदा०—विद्रुतः विद्दाओ।

वोपरौ ॥ १०८ ॥

उपरावुतोद् वा भवति। अवरिं उवरिं।

'उपरि' शब्द में उ का अ विकल्प से होता है। उदा०—अवरिं, उवरिं।

गुरौ के वा ॥ १०९ ॥

गुरौ स्वार्थे के सति आदेरुतोद् वा भवति। गरुओ गुरुओ। क इति किम्। गुरू।

गुरु शब्द में, आगे स्वार्थे क प्रत्यय होने पर, आदि उ का विकल्प से अ होता है। उदा०—गरुओ, गुरुओ। (आगे स्वार्थे) क प्रत्यय आने पर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण स्वार्थे क प्रत्यय आगे न होने पर, उ का अ नहीं होता है। उदा०—) गुरू।

इर्भ्रुकुटौ ॥ ११० ॥

भ्रुकुटावादेरुत इर्भवति। भिउडी।

भ्रुकुटि शब्द में आदि उ का इ होता है। उदा०—भिउडी।

पुरुषे रोः ॥ १११ ॥

पुरुषशब्दे रोरुत इर्भवति। पुरिसो। [1]पउरिसं।

पुरुष शब्द से रु में से उ का इ होता है। उदा०—पुरिसो, पउरिसं।

ईः क्षुते ॥ ११२ ॥

क्षुतशब्दे आदेरुत ईत्वं भवति। छीअं।

क्षुत शब्द में आदि उ का ई होता है। उदा०—छीअं।

---

१. पौरुष।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्सुभगमुसले वा ॥ ११३ ॥

अनयोरादेरुत ऊद् वा भवति । सूहवो सुहओ । मूसलं मुसलं ।

सुभग और मुसल इन दो शब्दों में, आदि उ का ऊ विकल्प से होता है। उदा०—सूहवो...मुसलं ।

अनुत्साहोत्सन्ने त्सच्छे ॥ ११४ ॥

उत्साहोत्सन्नवर्जिते शब्दे यौ त्सच्छौ तयोः परयोरादेरुत ऊद् भवति । त्स । [1]ऊसुओ । ऊसवो । ऊसित्तो । ऊसरइ । च्छ । उद्गताः शुकाः यस्मात् सः [2]ऊसुओ । [3]ऊससइ । अनुत्साहोत्सन्न इति किम् । उच्छाहो । उच्छन्नो ।

उत्साह और उत्सन्न शब्द छोड़कर, (अन्य) शब्दों में रहनेवाले जो त्स और च्छ, वे आगे होने पर, (उन शब्दों में) आदि उ का ऊ होता है। उदा०—त्स (आगे होने पर)—ऊसुओ...ऊसरइ । च्छ (आगे होने पर)—जहाँ से शुक (= तोते) गए हुए हैं वह, ऊसुओ; ऊससइ । उत्साह और उत्सन्न शब्द छोड़कर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण इन दो शब्दों में, उ का ऊ नहीं होता है । उदा०—) उच्छाहो, उच्छन्नो ।

लुकि दुरो वा ॥ ११५ ॥

दुर् उपसर्गस्य रेफस्य लोपे सति उत ऊत्वं वा भवति । दूसहो[4] दुसहो । दूहवो दुहवो । लुकीति किम् । [5]दुस्सहो विरहो ।

दुर् उपसर्ग में से रेफ का (=र् का) लोप होने पर, उ का ऊ विकल्प से होता है । उदा ---दूसहो...दुहवो । (दुर् में से) रेफ का लोप होने पर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण यदि ऐसा लोप नहीं हुआ हो, तो उ का ऊ नहीं होता हैं । उदा० —) दुस्सहो विरहो ।

ओत्संयोगे ॥ ११६ ॥

संयोगे परे आदेरुत ओत्वं भवति । तोण्डं[6] । मोण्डं । पोक्खरं । कोट्टिमं । पोत्थओ । लोद्धओ । मोत्था । मोग्गरो । पोग्गलं । कोण्ढो । कोन्तो । वोक्कन्तं ।

---

१. क्रम से—उत्सुक । उत्सव । उत्सिक्त । उत्सरति ।

२. उच्छुक ।

३. उच्छ्वसिति ।

४. क्रम से—दुःसह । दुर्भग ।

५. दुःसहः विरहः ।

६. क्रम से—तुण्ड । मुण्ड । पुष्कर । कुट्टिम । पुस्तक । लुब्धक । मुस्ता । मुद्गर । पुद्गल । कुण्ठ । कुन्त । व्युत्क्रान्त ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगे संयोग (= संयुक्त व्यञ्जन) होने पर, आदि उ का ओ होता है। उदा०—तोण्डं······वोक्कंतं।

कुतूहले वा ह्रस्वश्च ॥ ११७ ॥

कुतूहलशब्दे उत ओद् वा भवति तत्संनियोगे ह्रस्वश्च वा। कोऊहलं कुऊहलं कोउहल्लं।

कुतूहल शब्द में उ का ओ विकल्प से होता है और उसके सान्निध्य में (तू में से दीर्घ ऊ) विकल्प से ह्रस्व होता है। उदा०—कोऊहलं······कोउहल्लं।

अदूतः सूक्ष्मे वा ॥ ११८ ॥

सूक्ष्मशब्दे ऊतोद् वा भवति। सण्हं सुण्हं। आर्षे। सुहुमं।

सूक्ष्म शब्द में ऊ का अ विकल्प से होता है। उदा०—सण्हं, सुण्हं। आर्ष प्राकृत में (मात्र) सुहुमं (ऐसा सूक्ष्म शब्द का वर्णान्तर होता है)।

दुकूले वा लश्च द्विः ॥ ११९ ॥

दुकूलशब्दे ऊकारस्य अत्वं वा भवति तत्संनियोगे च लकारो द्विर्भवति। दुअल्लं दुऊलं। आर्षे। दुगुल्लं।

दुकूल शब्द में ऊकार का अ विकल्प से होता है और उसके सान्निध्य में लकार का द्वित्व होता है। उदा०—दुअल्लं, दुअलं। आर्ष प्राकृत में (दुकूल का वर्णान्तर) दुगुल्लं (होता है)।

ईर्वोद्व्यूढे ॥ १२० ॥

उद्व्यूढशब्दे ऊत ईत्वं वा भवति। उव्वीढं उव्वूढं।

उद्व्यूढ शब्द में ऊ का ई विकल्प से होता है। उदा०—उव्वीढं, उव्वूढं।

उर्भ्रू-हनुमत्कण्डूयवातूले ॥ १२१ ॥

एषु ऊत उत्वं भवति। भुमया। हणुमन्तो। कण्डुअइ। वाउलो।

भ्रू, हनूमत्, कण्डूय और वातूल शब्दों में ऊ का उ होता है। उदा०—भुमया······वाउलो।

मधूके वा ॥ १२२ ॥

मधूकशब्दे ऊत उद् वा भवति। महुअं महूअं।

मधूक शब्द में ऊ का उ विकल्प से होता है। उदा०—महुअं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इदेतौ नूपुरे वा ॥ १२३ ॥

नूपुरशब्दे ऊत इत् एत् इत्येतौ वा भवतः। निउरं नेउरं। पक्षे। नूउरं।

नूपुर शब्द में ऊ के इ और ये दो (स्वर) विकल्प से होते हैं। उदा०—निउरं, नेउरं। (विकल्प···) पक्ष में :—नूउरं।

ओत्कूष्माण्डी-तूणीर-कूर्पर-स्थूल-ताम्बूल-गुडूची-मूल्ये ॥१२४॥

एषु ऊत ओद् भवति। कोहण्डी कोहली। तोणीरं। कोप्परं। थोरं। तम्बोलं। गलोई। मोल्लं।

कूष्माण्डी, तूणीर, कूर्पर, स्थूल, ताम्बूल, गुडूची और मूल्य इन शब्दों में, ऊ का ओ होता है। उदा०—कोहण्डी··· ···मोल्लं।

स्थूणातूणे वा ॥ १२५ ॥

अनयोरूत ओत्वं वा भवति। थोणा थूणा। तोणं तूणं।

स्थूणा और तूण शब्दों में, ऊ का ओ विकल्प से होता है। उदा०—थोणा······तूणं।

ऋतोऽत् ॥ १२६ ॥

आदेर्ऋकारस्य अत्वं भवति। घृतम् घयं। तृणम्। तणं। कृतम्। कयं। वृषभः। वसहो। मृगः। मओ। घृष्टः घट्ठो। दुहाइ अमिति। कृपादिपाठात्।

(शब्द में से) आदि ऋकार का अ होता है। उदा०—घृतम्··· ···घट्ठो। (प्रश्न···दुहाइअं [द्विधाकृतम्] वर्णान्तर कैसे होता है? उत्तर :—) दुहाइअं शब्द कृपादिगण होने के कारण (इस शब्द में ऋ का इ हुआ है)।

आत्कृशामृदुकमृदुत्वे वा ॥ १२७ ॥

एषु आदे ऋत आद् वा भवति। कासा किसा। माउक्कं मउअं। माउक्कं मउत्तणं।

कृशा, मृदुक और मृदुत्व शब्दों में, आदि ऋ का आ विकल्प से होता है। उदा०—कासा··· ···मउत्तणं।

इत्कृपादौ ॥ १२८ ॥

कृपा इत्यादिषु शब्देषु आदेर्ऋत इत्वं भवति। किवा। हिययं। मिट्ठं रसे एव। अन्यत्र मट्ठं। दिठ्ठं। दिट्ठी। सिट्ठं। सिट्ठी। गिण्ठी। पिच्छी। भिऊ। भिंगो। भिंगारो। सिंगारो। सिआलो। घिणा। घुसिणं। विद्धकई। समिद्धी। इद्धी। गिद्धी। किसो। किसाणू। किसरा। किच्छं। तिप्पं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किसिओ। निवो। किच्चा। किई। धिई। किवो। किविणो। किवाणं। विञ्चुओ। वित्तं। वित्ती। हिअं। वाहित्तं। बिंहिओ। विसी। इसी। विइण्हो। छिहा। सइ। उक्किट्ठं। निसंसो। क्वचिन्न भवति। रिद्धी। कृपा। हृदय। मृष्ट। दृष्ट। दृष्टि। सृष्ट। सृष्टि। गृष्टि। पृथ्वी। भृगु। भृंग। भृंगार। शृंगार। शृगाल। घृणा। घुसृण। वृद्धकवि। समृद्धि। ऋद्धि। गृद्धि। कृश। कृशानु। कृसरा। कृच्छ्र। तृप्त। कृषित। नृप। कृत्या। कृति। धृति। कृप। कृपण। कृपाण। वृश्चिक। वृत्त। वृत्ति। हृत। व्याहृत। बृंहित। वृसी। ऋषि। वितृष्ण। स्पृहा। सकृत्। उत्कृष्ट। नृशंस।

कृपा इत्यादि शब्दों में आदि ऋ का इ होता है। उदा०—किवा...हियय; मिट्ठं (यह शब्द) रस-वाचक होने पर ही (ऋ का इ होता है; वह अर्थ न होने पर) अन्यत्र मट्ठं ऐसा वर्णान्तर होता है; दिट्ठं...निसंसो। क्वचित् (आदि ऋ का इ) नहीं होता है। उदा०—रिद्धी (∠ ऋद्धि)। (उपर्युक्त शब्दों के मूल संस्कृत शब्द ऐसे—) कृपा...नृशंस।

पृष्ठे वानुत्तरपदे ॥ १२९ ॥

पृष्ठशब्देनुत्तरपदे ऋत इद् भवति वा। पिट्ठी पट्ठी। पिट्ठि[1]—परिट्ठविअं। अनुत्तरपद इति किम्। महि[2]वट्ठं।

पृष्ठ शब्द (समास में) उत्तर पद न होने पर, (उसमें से) ऋ का इ विकल्प से होता है। उदा०—पिट्ठी...ट्ठविअं। (पृष्ठ शब्द समास में) उत्तरपद न होने पर ऐसा क्यों कहा है? (कारण पृष्ठ शब्द समास में उत्तरपद होने पर, ऋ का इ नहीं होता है। उदा०—) महिवट्ठं।

मसृण-मृगाङ्क-मृत्यु-शृङ्ग-धृष्टे वा॥ १३० ॥

एषु ऋत इद् वा भवति। मसिणं मसणं। मिअंको मयंको। मिच्चु मच्चु। सिगं संगं। धिट्ठो धट्ठो।

मसृण, मृगांक, मृत्यु, शृङ्ग, और धृष्ट शब्दों में ऋ का इ विकल्प से होता है। उदा०—मसिणं...धट्ठो।

उदृत्वादौ ॥ १३१ ॥

ऋतु इत्यादिषु शब्देषु आदे ऋत उद् भवति। उऊ। परामुट्ठो। पुट्ठो। पउट्ठो। पुहई। पउत्ती। पाउसो। पाउओ। भुई। पहुडि। पाहुडं। परहुओ। निहुअं। निउअं। विउअं। संवुअं। वुत्तंतो। निव्वुअं। निव्वुई। वुंदं। वुंदावणो। वुड्ढो। वुड्ढी। उसहो। मुणालं। उज्जू। जामाउओ।

1. पृष्ठपरिस्थापितम्। 2. महीपृष्ठम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माउओ। माउआ। भाउओ। पिउओ। पुहुवी। ऋतु। परामृष्ट। स्पृष्ट। प्रवृष्ट। पृथिवी। प्रवृत्ति। प्रावृष्। प्रावृत। भृति। प्रभृति। प्राभृत। परभृत। निभृत। निवृत। विवृत। संवृत। वृत्तान्त। निर्वृत। निर्वृति। वृंद। वृंदावन। वृद्ध। वृद्धि। ऋषभ। मृणाल। ऋजु। जामातृक। मातृक। मातृका। भ्रातृक। पितृक। पृथ्वी। इत्यादि।

ऋतु इत्यादि शब्दों में आदि ऋ का उ होता है। उदा०—उउ···पुहुवी। (मूल संस्कृत शब्द क्रम से ऐसे हैं—) ऋतु···पृथ्वी। इत्यादि।

निवृत्तवृन्दारके वा ॥ १३२ ॥

अनयोर्ऋत उद् वा भवति। निवुत्तं निअत्तं। वुंदारया वंदारया।

निवृत्त और वृन्दारक इन दो शब्दों में ऋ का उ विकल्प से होता है। उदा०—निवुत्तं···वंदारया।

वृषभे वा वा ॥ १३३ ॥

वृषभे ऋतो वेन सह उद् वा भवति। उसहो वसहो।

वृषभ शब्द में व् के साथ ऋ का उ विकल्प से होता है। उदा०—उसहो, वसहो।

गौणान्त्यस्य ॥ १३४ ॥

गौणशब्दस्य योन्त्य ऋत् तस्य उद् भवति। [1]माउ-मंडलं। माउ-हरं। पिउ-हरं। माउसिआ। पिउसिआ। पिउ-वणं। पिउ-वई।

(समास में गौण शब्द का जो अन्त्य ऋ, उसका उ होता है। उदा०—माउ···पिउवई।

मातुरिद्वा ॥ १३५ ॥

मातृशब्दस्य गौणस्य ऋत इद् वा भवति। माइ[2]-हरं माउ-हरं। क्वचिदगौणस्यापि।[3] माईणं।

(समास में) गौण होने वाले मातृ शब्दके ऋ का इ विकल्प से होता है। उदा—माई···हरं। क्वचित् (मातृशब्द समास में) गौण न होने पर भी (उसमें से ऋ का इ होता है। उदा०—) माईणं।

---

१. क्रम से-- मातृमण्डल। मातृगृह। पितृगृह। मातृष्वसा। पितृष्वसा। पितृवन पितृपति।
२. मातृगृह।
३. माईं·····मातृ। माइ शब्द का षष्ठी एकवचन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदूदोन्मृषि ॥ १३६ ॥

मृषाशब्दे ऋत उत् ऊत् ओच्च भवंति। मुसा [1]मूसा मोसा। मुसावाओ [2]मूसावाओ मोसावाओ।

मृषा शब्द में ऋ के उ, ऊ और ओ होते हैं। उदा०—मुसा…वाओ।

इदुतौ वृष्टवृष्टिपृथङ्मृदङ्गनप्तृके ॥ १३७ ॥

एषु ऋत इकारोकारौ भवतः। विट्ठो वुट्ठो। विट्ठी वुट्ठी। पिहं पुहं। मिइंगो मुइंगो। नत्तिओ नत्तुओ।

वृष्ट, वृष्टि, पृथक्, मृदङ्ग, और नप्तृक शब्दों में, ऋ के इकार और उकार होते हैं। उदा०—विट्ठो… नत्तुओ।

वा बृहस्पतौ ॥ १३८ ॥

बृहस्पतिशब्दे ऋत इदुतौ वा भवतः। बिहप्फई बुहप्फई। पक्षे। बहप्फई।

बृहस्पति शब्द में ऋ के इ और उ विकल्प से होते हैं। उदा०—बिहप्फई। बुहप्फई। (विकल्प-) पक्ष में—बहप्फई।

इदेदोद्वृन्ते ॥ १३९ ॥

वृन्त शब्दे ऋत् इत् एत् ओच्च भवन्ति। विण्टं वेण्टं वोण्टं।

वृन्त शब्द में ऋ के इ, ए, और ओ होते हैं। उदा०—विण्टं… वोण्टं।

रिः केवलस्य ॥ १४० ॥

केवलस्य व्यञ्जनेनासंपृक्तस्य ऋतो रिरादेशो भवति। रिद्धी[3]। रिच्छो।

व्यंजन से संपृक्त न रहने वाले केवल ऋ को रि आदेश होता है। उदा०—रिद्धी, रिच्छो।

ऋणर्ज्वृषभर्त्वृषौ वा ॥ १४१ ॥

ऋणऋजुऋषभऋतुऋषिषु ऋतो रिर्वा भवति। रिणं अणं। रिज्जू उज्जू। रिसहो उसहो। रिऊ उऊ। रिसी इसी।

ऋण, ऋजु, ऋषभ, ऋतु और रिषि शब्दों में ऋ का रि विकल्प से होता है। उदा०—रिणं…इसी।

---

१. मृषा। २. मृषावाद।
३. क्रमसे—ऋद्धि। ऋक्ष।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दृशः क्विप्टक्सकः ॥ १४२ ॥

क्विप् टक् सक् इत्येतदन्तस्य दृशेर्धातो ऋतो रिरादेशो भवति। सदृक्। सरि[1]वण्णो। सरिरूवो। सरि-बंदीणं। सदृशः सरिसो। सदृक्षः सरिच्छो। एवम्। [2]ए आरिसो। भवारिसो। जारिसो। तारिसो। केरिसो। एरिसो। अन्नारिसो। अम्हारिसो। तुम्हारिसो। टक् सक् साहचर्यात् 'त्यदाद्यन्यादि' (हेम० ५.१) सूत्रविहितः क्विबिह गृह्यते।

क्विप्, टक् और सक् प्रत्यय जिसके अन्त मे होते हैं, उस दृश् धातु के ऋ को रि आदेश होता है। उदा०—सदृक् में—सरिवण्णो...बंदीणं; सदृक्ष:...सरिच्छो; इसी प्रकार—ए आरिसो...तुम्हारिसो। यहाँ टक् और सक् के साहचर्य के कारण 'त्यदाद्यन्यादि' सूत्र में कहा हुआ क्विप् प्रत्यय यहाँ लेना है।

आदृते ढिः ॥ १४३ ॥

आदृतशब्दे ऋतो ढिरादेशो भवति। आढिओ।

आदृत शब्द में ऋ को ढि आदेश होता है। उदा०—आढिओ।

अरिर्दृप्ते ॥ १४४ ॥

दृप्तशब्दे ऋतो रिरादेशो भवति। दरिओ। दरिअ[3]-सीहेण।

दृप्त शब्द में ऋ को अरि आदेश होता है। उदा०—दरिओ...सीहेण।

लृत इलिः क्लृप्तक्लृन्ने ॥ १४५ ॥

अनयोर्लृत इलिरादेशो भवति। किलित्त [4]कुसुमोवयारेसु। धाराकिलिन्नवत्तं।

क्लृप्त और क्लृन्न इन दो शब्दों में, लृ को इलि आदेश होता है। उदा०—किलित्त...वत्तं।

एत इद्वा वेदनाचपेटादेवरकेसरे ॥ १४६ ॥

वेदनादिषु एत इत्त्वं वा भवति। विअणा वेअणा। चविडा। विअड-चवेडा[5]-विणोआ। दिअरो देवरो। महमहि अ-[6]दसण-किसरं। केसरं। महिला महेला इति तु महिलामहेलाभ्यां शब्दाभ्यां सिद्धम्।

---

१. क्रम से—सदृक्-वर्णं। सदृक्-रूप। सदृक्-बन्दिनाम्।

२. एतादृश। भवादृश। यादृश। तादृश। कीदृश। ईदृश। अन्यादृश। अस्मादृश। युष्मादृश।　　　३. दृप्त—सिंहेन।

४. क्रम से—क्लृप्तकुसुमोपचारेषु। धाराक्लृन्नपत्रम्। ५. विकट, चपेटा, विनोदाः।

६. प्रसृत, दशन, केसरम्। सूत्र ४.७८ के अनुसार 'महमह' धातु प्र + ल धातुका धात्वादेश है।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

बेदना इत्यादि—वेदना, चपेटा, देवर, और केसर—शब्दों में, ए का इ विकल्प से होता है। उदा०विअणा…केसरं। (प्रश्नः—यह नियम महिला और महेला वर्णान्तरों के बारे में लगा है क्या ? उत्तर–नहीं) महिला और महेला में वर्णान्तर तो महिला और महेला शब्दों से सिद्ध हुए हैं।

ऊः स्तेने वा ॥ १४७ ॥

स्तेने एत ऊद् वा भवति। थूणो थेणो।

स्तेन शब्द में ए का ऊ विकल्प से होता है। उदा०—थूणो, थेणो।

ऐत एत् ॥ १४८ ॥

ऐकारस्यादौ वर्तमानस्य एत्वं भवति। सेला[1]। तेलोक्कं। एरावणो। केलासो। वेज्जो। केढवो। वेहव्वं।

आदि रहने वाले ऐकारका ए होता है। उदा०—सेला…वेहव्वं।

इत्सैन्धवशनैश्चरे ॥ १४९ ॥

एतयोरैत इत्वं भवति। सिन्धवं। सणिच्छरो।

सैन्धव और शनैश्चर इन दो शब्दों में ऐ का इ होता है। उदा०—सिंधवं, सणिच्छरो।

सैन्ये वा ॥ १५० ॥

सैन्यशब्दे ऐत इद् वा भवति। सिन्नं सेन्नं।

सैन्य शब्द में ऐ का इ विकल्प से होता है। उदा०—सिन्नं, सेन्नं।

अइर्दैत्यादौ च ॥ १५१ ॥

सैन्यशब्दे दैत्य इत्येवमादिषु च ऐतः अइ इत्यादेशो भवति। एत्वापवादः। सइन्नं। दइच्चो। दइन्नं। अइसरिअं। भइरवो। वइजवणो। दइवअं। वइआलीअं। वइएसो। वइएहो। वइदब्भो। वइस्साणरो। कइअवं। वइसाहो। वइसालो। सइरं। चइत्तं। दैत्य। दैन्य। ऐश्वर्य। भैरव। वैजवन। दैवत। वैतालीय। वैदेश। वैदेह। वैदर्भ। वैश्वानर। कैतव। वैशाख। वैशाल। स्वैर। चैत्य। इत्यादि। विश्लेषे न भवति। चैत्यम् चेइअं। आर्षे। चैत्य-वन्दनम् ची-वंदणं।

सैन्य शब्द में तथा दैत्य इत्यादि प्रकार के शब्दों में, ऐ को अइ आदेश होता है। (आदि ऐकारका) ए होता है (सूत्र १.१४८) इस नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—सइन्नं; दइच्चो…चइत्तं। (इनके मूल संस्कृत शब्द क्रमसे ऐसे हैं—) (सैन्य); दैत्य…चैत्य, इत्यादि। (संयुक्त व्यंजन में से अवयवों का स्वरभक्ति

---

१. क्रमसे—शैलाः। त्रैलोक्यम्। ऐरावतः। कैलासः। वैद्यः। कैटभः। वैधव्यम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से) विश्लेष हुआ हो, तो (ऐ का अइ) नहीं होता है। उदा०—चैत्यम् चेइअं। आर्ष प्राकृत में—चैत्यवन्दनम् (शब्द का) ची-वंदणं (ऐसा वर्णान्तर होता है)।

वैरादौ वा ॥ १५२ ॥

वैरादिषु ऐतः अइरादेशो वा भवति। वइरं वेरं। कइलासो केलासो। कइरवं केरवं। वइसवणो वेसवणो। वइसंपायणो वेसंपायणो। वइआलिओ वेआलिओ। वइसिअं वेसिअं। चइत्तो चेत्तो। वैर। कैलास। कैरव। वैश्रवण। वैशम्पायन। वैतालिक। वैशिक। चैत्र। इत्यादि।

वैर इत्यादि शब्दों में ऐ को अइ आदेश विकल्प से होता है। उदा०-वइरं... चेत्तो। (मूल संस्कृत शब्द क्रम से ऐसे:—) वैर...चैत्र,इत्यादि।

एच्च दैवे ॥ १५३ ॥

दैवशब्दे ऐत एत् अइश्चादेशो भवति। देव्वं दइव्वं दइवं।

दैव शब्द में ऐ का ए और अइ आदेश होते हैं। उदा०—देव्वं...दइवं।

उच्चैर्नीचैस्यअः ॥ १५४ ॥

अनयोरैतः अअ इत्यादेशो भवति। उच्चअं। नीचअं। उच्चनीचाभ्यां के सिद्धम्। उच्चैर्नीचैसोस्तु रूपान्तरनिवृत्यर्थं वचनम्।

उच्चैः और नीचैः इन दो शब्दों में ऐ को अअ आदेश होता है। उदा०-उच्चअं, नीचअं। (तो) उच्च और नीच इन शब्दों से कौन से वर्णान्तर होते हैं ? उच्चैः और नीचैः शब्दों के अन्य वर्णान्तर नहीं होते हैं, यह बताने के लिए (यहाँ का) विधान है।

ईद्धैर्ये ॥ १५५ ॥

धैर्यशब्दे ऐत ईद् भवति। धीरं [1]हरइ विसाओ।

धैर्य शब्द में ऐ का ई होता है। उदा०—धीरं···विसाओ।

ओतोद्वान्योन्यप्रकोष्ठातोद्यशिरोवेदनामनोहरसरोरुहे क्तोश्च वः॥१५६॥

एषु ओतोत्त्वं वा भवति तत्संनियोगे च यथासंभवं ककारतकारयो—र्वादेशः। अन्नन्नं अन्नुन्नं। पवट्ठो पउट्ठो। आवज्जं आउज्जं। सिरविअणा सिरोविअणा। मणहरं मणोहरं। सररुहं सरोरुहं।

अन्योन्य. प्रकोष्ठ, आतोद्य, शिरोवेदना, मनोहर, और सरोरुह इन शब्दों में, ओ का अ विकल्प से होता है, और उसके सांनिध्य में, संभवनीय जहाँ तो वहाँ, ककार और तकार को व (ऐसा) आदेश होता है। उदा०—अन्नन्नं···सरोरुहं।

1. धैर्यं हरति विषादः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऊत्सोच्छ्वासे ॥ १५७ ॥

सोच्छ्वासशब्दे ओत ऊद् भवति । सोच्छ्वासः सूसासो ।

सोच्छ्वास शब्द में ओ का ऊ होता है । सोच्छ्वासः सूसासो ।

गव्यउ आअः ॥ १५८ ॥

गोशब्दे ओतः अउ आअ इत्यादेशौ भवतः । गउओ । गउआ । गाओ । हरस्स[1] एसा गाई ।

गो शब्द में ओ को अउ और आअ आदेश होते हैं । उदा०—गउओ···गाई ।

औत ओत् ॥ १५९ ॥

औकारस्यादेरोद् भवति । कौमुदी कोमुई । यौवनम् जोव्वणं । कौस्तुभः कोत्थुहो । कौशाम्बी कोसंबी । क्रौंचः क्रोंचो । कौशिकः कोसिओ ।

आदि (रहनेवाले) औकार का ओ होता है । उदा०—कौमुदी···कोसिओ ।

उत्सौन्दर्यादौ १६० ॥

सौन्दर्यादिषु शब्देषु औत उद् भवति । सुंदेरं सुंदरिअं । मुंजायणो । सुण्डो । सुद्धो अणी । दुवारिओ । सुगंधत्तणं । पुलोमी । सुवण्णिओ । सौन्दर्य । मौञ्जायन । शौण्ड । शौद्धोदनि । दौवारिक । सौगन्ध्य । पौलोमी । सौवर्णिक ।

सौन्दर्य इत्यादि शब्दों में औ का उ होता है । उदा०—सुंदेरं···सुवण्णिओ । (इनके मूल संस्कृत शब्द क्रम से—) सौन्दर्य···सौवर्णिक ।

कौक्षेयके वा ॥ १६१ ॥

कौक्षेयकशब्दे औत उद् वा भवति । कुच्छेअयं कोच्छेअयं ।

कौक्षेयक शब्द में औ का उ विकल्प से होता है । उदा०—कुच्छेअयं, कोच्छेअयं ।

अउः पौरादौ च ॥ १६२ ॥

कौक्षेयके पौरादिषु च औत अउरादेशो भवति । कउच्छेअयं । पौरः । पउरो । प[2]उरजणो । कौरवः । कउरवो । कौशलम् । कउसलं । पौरुषम् पउरिसं । सौधम् सउहं । गौडः गउडो । मौलिः । मउली । मौनम् । मउणं सौराः । सउरा । कौलाः । कउला ।

कौक्षेयक शब्द में तथा पौर इत्यादि शब्दों में, औ को अ उ आदेश होता है उदा०—कउच्छेअयं; पौरः···कउला ।

1. हरस्य एषा गौः । 2. पौरजन ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आच्च गौरवे ॥ १६३ ॥

गौरवशब्दे औत आत्वं अउश्च भवति । गारवं गउरवं ।

गौरव शब्द में औ के आ और अ उ होते हैं । उदा०—गारवं, गउरवं ।

नाव्यावः ॥ १६४ ॥

नौशब्दे औत आवादेशो भवति । नावा ।

नौ शब्द में औ को आव आदेश होता है । उदा०—नावा ।

एत् त्रयोदशादौस्वरस्य सस्वरव्यञ्जनेन ॥ १६५ ॥

त्रयोदश इत्येवं प्रकारेषु संख्याशब्देषु आदेः स्वरस्य परेण सस्वरेण व्यञ्जनेन सह एद् भवति । तेरह[1] । तेवीसा । तेतीसा ।

त्रयोदश इत्यादि प्रकार के संख्या (-वाचक) शब्दों में, अगले स्वर सहित व्यञ्जन के साथ, आदि स्वर का ए होता है । उदा०—तेरह... तेतीसा ।

स्थविरविचकिलायस्कारे ॥ १६६ ॥

एषु आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह एद् भवति । थेरो । वेइल्लं । मुद्धविअइल्ल[2]पसूणपुंजा इत्यपि दृश्यते । एक्कारो ।

स्थविर, विचकिल, और अयस्कार शब्दों में, अगले स्वर सहित व्यञ्जन के सह, आदि स्वर का ए होता है । उदा०—थेरो, वेइल्लं; मुद्धविअइल्लपसूणपुंजा (शब्द समूह में, ए न होते, विअइल्ल) ऐसा (वर्णान्तर) भी दिखाई देता है; एक्कारो ।

वा कदले ॥ १६७ ॥

कदलशब्दे आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह एद् वा भवति । केलं कयलं । केली[3] कयली ।

कदल शब्द में, अगले स्वर सहित व्यञ्जन के साथ, आदि स्वर का ए विकल्प से होता है । उदा०—केलं...कयली ।

वेतः कर्णिकारे ॥ १६८ ॥

कर्णिकारे इतः सस्वरव्यञ्जनेन सह एद् वा भवति । कण्णेरो कण्णिआरो ।

कर्णिकार शब्द में, (र्णि में से) इ का (अगले) स्वर सहित व्यञ्जप के साथ विकल्प से ए होता है । उदा०—कण्णेरो, कण्णिआरो ।

---

१. क्रमसे—त्रयोदश । त्रयोविंशति । त्रयस्त्रिंशत् । २. मुग्धविचकिलप्रसूनपुञ्जाः । ३. कदली ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अयौ वैत् ॥ १६९ ॥

अयिशब्दे आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह ऐद् वा भवति । ऐबि-[1]हेमि । अइ [2]उम्मत्तिए । वचनादैकारस्यापि प्राकृते प्रयोगः ।

अयि शब्द में, अगले स्वर सहित व्यञ्जन के साथ, आदि स्वर का ऐ विकल्प से होता है । उदा०—ऐ...म्मत्तिए । (ऐ होता है ऐसा) विधान होने से, प्राकृत में ऐकार का भी प्रयोग (कभी-कभी दिखाई देता है ऐसा जाने) ।

ओत् पूतरबदरनवमालिकानवफलिकापूगफले ॥ १७० ॥

पूतरादिषु आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह ओद् भवति । पोरो । बोरं । [3]बोरी । नोमालिआ । नोहलिआ । पोप्फलं [4]पोप्फली ।

पूतर इत्यादि—पूतर, बदर, नवमालिका, नवफलिका, पूगफल—शब्दों में अगले स्वर सहित व्यञ्जन के साथ आदि स्वरका ओ होता है । उदा —पोरो...पोप्फली ।

न वा मयूख-लवण-चतुर्गुण-चतुर्थ-चतुर्दश-चतुर्वार-सुकुमार-कुतूहलोदूखलोलूखले ॥ १७१ ॥

मयूखादिषु आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह ओद् वा भवति । मोहो मऊहो । लोणं । इअ [5] लवणुग्गमा । चोग्गुणो चउग्गुणो । चोत्थो चउत्थो । चोत्थी चउत्थी [6] । चोद्दह चउद्दह । चोद्दसी [7]चउद्दसी । चोव्वारो चउव्वारो । सोमालो । सुकुमालो । कोहलं कोउहल्लं । तह [8]मन्ने कोहलिए । ओहलो उऊहलो । ओक्खलं उलूहलं । मोरो मऊरो इति तु मोरमयूरशब्दाभ्यां सिद्धम् ।

मयूख इत्यादि—मयूख, लवण, चतुर्गुण, चतुर्थ, चतुर्दश, चतुर्वार; सुकुमार, कुतूहल, उदूखल, उलूखल—शब्दों में, अगले स्वर सहित व्यञ्जन के साथ, आदि स्वरका ओ विकल्प से होता है । उदा०—मो हो...उलूहलं । (प्रश्न—इस नियम से ही मयूर शब्द से मोरो और मऊरो ये वर्णान्तर होते हैं क्या ? उत्तर—नहीं) । मोरो और मऊरो ये वर्णान्तर मोर और मयूर शब्दों से सिद्ध हुए हैं ।

अवापोते ॥ १७२ ॥

अवापयोरुपसर्गयोरुत इति विकल्पार्थंनिपाते च आदेः स्वरस्य परेण

---

१. बहि धातु भी धातु का आदेश है (सूत्र ४.५३ देखिए) । २. उन्मत्तिके ।
३. बदरी । ४. √ पूगफल ।
५. इति लवण—उद्गमाः । ६. चतुर्थी ।
७. चतुर्दशी । ८. तथा मन्ये कुतूहलिके ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सस्वरव्यञ्जनेन सह ओद् वा भवति। अव। ओ अरइ[1] अवयरइ। ओआसो अवयासो। अप। ओसरइ [2]अवसरइ। ओसारिअं अवसारिअं। उत। ओ [3]वणं। ओ घणो। उ [4]अवणं। उअघणो। क्वचिन्न भवति। अवगयं। अवसद्दो। उअ रवी।

अव और अप उपसर्गों में तथा विकल्प-अर्थबोधक उत अव्यय में (निपात), अगले स्वर सहित व्यंजन के साथ, आदि स्वरका ओ विकल्प से होता है। उदा०—अव–ओअरइ···अवयासो। अपः–ओसरइ···अवसारिअं। उतः—ओवणं··· ··घणो। क्वचित् (यहाँ कहा हुआ वर्णान्तर) नहीं होता है। उदा०–अवगयं···रवी।

ऊच्चोपे ॥ १७३ ॥

उपशब्दे आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह ऊत् ओच्चादेशौ वा भवतः। ऊह[5]सिअं ओहसिअं उवहसिअं। ऊज्झाओ ओज्झाओ उवज्झाओ। ऊआसो ओआसो उववासो।

उपशब्द में, अगले स्वर सहित व्यञ्जन के साथ, आदि स्वर को ऊ और ओ आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—ऊहसिअं···उववासो।

उभो निषण्णे ॥ १७४ ॥

निषण्णशब्दे आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह उभ आदेशो वा भवति। णुमण्णो णिसण्णो।

निषण्ण शब्द में, अगले स्वर सहित व्यञ्जन के साथ, आदि स्वर को उभ आदेश विकल्प से होता है। णुमण्णो, णिसण्णो।

प्रावरणे अङ्ग्वाऊ ॥ १७५ ॥

प्रावरणशब्दे आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह अङ्गु आउ इत्येतावादेशौ भवतः। पंगुरणं पाऊरणं पावरणं।

प्रावरण शब्द में, अगले स्वर सहित व्यञ्जन के साथ, आदि स्वरको अंगु और आउ ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—पंगुरणं···पावरणं।

स्वरादसंयुक्तस्यानादेः ॥ १७६ ॥

अधिकारोयम्। यदित ऊर्ध्वमनुक्रमिष्यामस्तत्स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेर्भवतीति वेदितव्यम्।

यह (सूत्र में से शब्द समूह) अधिकार है। यहाँ से आगे हम अनुक्रम से जो

---

१. क्रमसे–अवतरित। अवकाश। २. क्रमसे—अपसरति। अपसारित।
३. क्रमसे—उतवनम्। उतधनः। ४. क्रमसे—अपगत। अपशब्द। उत रविः।
५. क्रमसे—उपहसित, उपाध्याय, उपवास।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहेंगे: वह स्वर के अगले (=स्वर के आगे होने वाले), असंयुक्त (और) अनादि वर्ण के बारे में होता है ऐसा जाने।

कगचजतदपयवां प्रायो लुक्॥ १७७॥

स्वरात् परेषामनादिभूतानामसंयुक्तानां कगचजतदपयवानां प्रायो लुग् भवति। क। ति[1]त्थयरो। लोओ। सयढं। ग। नओ[2]। नयरं। मयंको। च। [3]सई। कयग्गहो। ज। [4]रययं। पयावई। गओ। त। विआणं[5]। रसायलं। जई। द। गया[6]। मयणो। प। रिऊ[7]। सुउरिसो। य। दयालू[8]। नयणं। विओओ। व। [9]लायण्णं। विउहो। वलयाणलो। प्रायो ग्रहणात् क्वचिन्न भवति। सुकुसुमं[10]। पयागजलं। सुगओ। अगरू। सचावं। विजणं। सुतारं। विदुरो। सपावं। समवाओ। देवो। दाणवो। स्वरादित्येव। [11]संकरो। संगमो। नक्कंचरो। धणंजओ। विसंतवो। पुरंदरो। संवुडो। संवरो। असंयुक्तस्येत्येव। [12]अक्को। वग्गो। अच्चो। वज्जं। धुत्तो। उद्दामो। विप्पो। कज्जं। सव्वं। क्वचित् संयुक्तस्यापि। नक्तंचरः नक्कंचरो। अनादेरित्येव। [13]कालो। गंधो। चोरो। जारो। तरू। दवो। पावं। वण्णो। यकारस्य तु जत्वं आदौ वक्ष्यते। समासे तु वाक्यविभक्त्यपेक्षया भिन्नपदत्वमपि विवक्ष्यते। तेन तत्र यथादर्शनमुभयमपि भवति। सुहकरो[14] सुहयरो। आगमिओ आयमिओ। जलचरो जलयरो। बहुतरो बहुअरो। सुहदो सुहओ। इत्यादि। क्वचिदादेरपि। स पुनः सउण। स च सो अ। चिह्नं इन्धं। क्वचिच्चस्य जः। पिशाची पिसाजी॥ एकत्वं एगत्तं। एकः।

---

१. क्रमसे—तीर्थंकर, लोक, शकट।

२. क्रमसे—नग, नगर, मृगांक।

३. क्रमसे—शची, कचग्रह।

४. क्रमसे रजत, प्रजापति, गज।

५. क्रमसे वितान, रसातल, यति।

६. क्रमसे—गदा, मदन।

७. क्रमसे—रिपु, सुपुरुष।

८. क्रमसे—दयालु, नयन, वियोग।

९. क्रमसे—लावण्य। विबुध। वडवानल।

१०. क्रमसे—सुकुसुम। प्रयागजल। सुगत। अगुरु। सचाप। विजन। व्यञ्जन सुतार। विदुर। सपाप। समवाय। देव। दानव।

११. क्रमसे—शंकर। संकर, संगम, नक्तंचर, धनंजय, विषंतप, पुरंदर, संवृत, संवर। संवर।

१२. क्रमसे—अर्क, वर्ग, अर्च्य, वज्र। वर्ज्य, धूर्त, उद्दाम, विप्र, कार्य, सर्व।

१३. क्रमसे—काल, गंध, चौर, जार, तरु, दव, पाप, वर्ण।

१४. क्रमसे—सुखकर/शुभकर, आगमिक, जलचर, बहुतर, सुखद, शुभद।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगो। अमुकः अमुगो। असुकः असुगो। श्रावकः सावगो। आकारः आगारो। तीर्थंकरः नित्थगरो। आकर्षः। आगारिसो। लोगस्सु[७]ज्जो अगरा। इत्यादिषु तु व्यत्ययश्च (४.४४७) इत्येव कस्य गत्वम्। आर्षे अन्यदपि दृश्यते। आकुञ्चनं आउण्टणं। अत्र चस्य टत्वम्।

स्वर के अगले, अनादि होने वाले और असंयुक्त ऐसे जो क् ग् च् ज् त् द् प् य् और व् व्यंजन, उनका प्रायः लोप होता है। उदा०—क् (का लोप)—नित्थयरो··· सयढं। ग् (का लोप)—न ओ···मयंको। च् (का लोप)–सइ···ग्गहो। ज् (का लोप)—रययं···गओ। त् (का लोप)—विआणं··जई। द् (का लोप)—गया मयणो। प् (का लोप)—रिऊ, सुउरिसो। य् (का लोप)—दयालू···विओओ। व् (का लोप —लायण्णं···याणलो। प्रायः (लोप होता है) ऐसा निर्देश होने से, क्वचित् (क् ग् च् ज् इत्यादि का लोप) नहीं होता है। उदा०—सुकुसुमं···दाणवो। स्वर के आगे ही (होने वाले क् ग् इत्यादि का लोप होता है; इसलिए पीछे अनुस्वार होने पर, ऐसा लोप नहीं होता है। उदा०—) संकरो...संवरो। (क् ग् इत्यादि) असंयुक्त होने पर ही (उनका लोप होता है; वे संयुक्त हो, तो उनका लोप नहीं होता है। उदा० —) अक्को...सव्वं। क्वचित् संयुक्त होने वाले (क् इत्यादि का लोप होता है। उदा०—) नक्तंचरः नक्कंचरो। अनादि होने वाले ही (क् ग् इत्यादि का लोप होता है; वे आदि हो, तो उनका लोप नहीं होता है। उदा०—) कालो···वण्णो। यकार आदि होने पर, उसका ज होता है, यह आगे (सूत्र १.२४५ में) कहा जाएगा। समास में तो वाक्य विभक्तिकी अपेक्षा से (द्वितीय पद) भिन्न है ऐसी विवक्षा हो सकती है; उस कारण उस स्थान पर जैसा साहित्य में दिखाइ देता है वैसा दोनों भी (=यानी समास में द्वितीय पदके आदि व्यंजन कभी आदि तो कभी अनादि समझकर, वर्णान्तर) होते हैं। उदा०—सुहकरो···सुहओ, इत्यादि। क्वचित् (च् प् इत्यादि) आदि होने पर भी (उसका लोप होता है। उदा०—) स पुनः··इन्धं। क्वचित् च् का ज् होता है। उदा०–पिशाची, पिसाजी। परंतु एकत्वं एगत्तं··ज्जो इत्यादि शब्दों में, 'व्यत्ययश्च' सूत्रानुसार क् का ग् होता है। आर्ष प्राकृत में अन्य वर्णान्तर भी दिखाइ देता है। उदा०—आकुञ्चनं आउण्टणं; यहाँ च् का ट् हुआ है।

यमुनाचामुण्डाकामुकातिमुक्तके मोनुनासिकश्च ॥ १७८ ॥

एषु मस्य लुग् भवति लुकि च सति मस्य स्थाने अनुनासिको भवति। जउँणा। चाउँण्डा। काउँओ। अणिउँतयं। क्वचिन्न भवति। अइमुंतयं अइमुत्तयं।

यमुना, चामुण्डा, कामुक, अतिमुक्तक शब्दों में, म् का लोप होता है, और लोप होने पर, म् के स्थान पर अनुनासिक आता है। उदा०—जउँणा···अणि उँतयं। क्वचित् (म् का लोप) नहीं होता है। उदा०–अइमुंतयं, अइमुत्तयं।

७. लोकस्य उद्योतकराः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नावर्णात् पः ॥ १७९ ॥

अवर्णात् परस्यानादेः पस्य लुग् न भवति। [1]सवहो। सावो अनादेरित्येव। [2]परउट्ठो।

अवर्ण के आगे होने वाले, अनादि प् का लोप नहीं होता है। उदा०—सवहो। सावो। (प्) अनादि होने पर ही ऐसा होता है। (प् आदि होगा, तो वह वैसा ही रहता है। उदा०—) परउट्ठो।

अवर्णो यश्रुतिः ॥ १८० ॥

कगचजेत्यादिना (१.१७७) लुकि सति शेषः अवर्णः अवर्णात् परो लघुप्रयत्नतरयकारश्रुतिर्भवति। तित्थयरो। सयढं। नयरं। मयंको कयग्गहो। [3]कायमणी। रययं। पयावई। रसायलं। [4]पायालं। मयणो। गया। नयणं। दयालू। लायण्णं। अवर्ण इति किम्। [5]सउणो। पउणो। पउरं। राईवं। निहओ। निनओ। वाऊ। कई। अवर्णादित्येव। [6]लोअस्स। देअरो। क्वचिद् भवति। [7]पियइ।

'कगचज' इत्यादि सूत्र से (क् ग् इत्यादि का) लोप होने पर, शेष अवर्ण यदि अवर्ण के आगे हो, तो लघु प्रयत्न से उच्चारित 'य' जैसी (उस अवर्ण की) श्रुति होती है (यानी लघु प्रयत्न से उच्चारित य जैसा वह अवर्ण सुनाई देता है)। उदा०—तित्थयरो…लायण्णं। अ-वर्ण ऐसा क्यों कहा? (कारण क् ग् इत्यादि का लोप होने पर यदि शेष वर्ण अ-वर्ण न हो, तो उसकी य-श्रुति नहीं होती है। उदा०—) सउणो…कई। अवर्ण के आगे होने पर ही (शेष अ-वर्ण की य-श्रुति होती है; पीछे अवर्ण न हो, तो प्रायः य-श्रुति नहीं होती है। उदा०—) लोअस्स, देअरो। क्वचित् पीछे अ-वर्ण न होने पर भी शेष अ-वर्ण की य श्रुति होती है। उदा०)—पियइ।

कुब्जकर्परकीले कः खोऽपुष्पे ॥१८१॥

एषु कस्य खो भवति पुष्पं चेत् कुब्जाभिधेयं न भवति। खुज्जो। खप्परं। खीलओ। अपुष्प इति किम्। बंधेउं [8]कुज्जयपसूणं। आर्षेऽन्यत्रापि। कासितं खासिअं। कसितं खसिअं।

कुब्ज, कर्पर, कील शब्दों में, क का ख होता है; (कुब्ज शब्द का) यदि कुब्ज नामका फूल ऐसा अर्थ हो, तो कुब्ज शब्द में (क का ख) नहीं होता है।

१. क्रमसेः—शपथ शाप। २. परपृष्ट। ३. काचमणि। ४. पाताल।

५. क्रमसे...शुकनि (शकुन)। प्रगुण। प्रचुर। राजीव। निहृत। निनत (नि+नत)। वायु। कवि।कपि।

६. क्रमसे—लोकस्य। देवरः। ७. पिबति। ८. बद्ध्वा कुब्जक-प्रसूनम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदा०—खुज्जो…खलिओ। (कुब्ज शब्द का अर्थ) फूल न होने पर, (क का ख होता है) ऐसा क्यों कहा है? (कारण कुब्ज शब्द का अर्थ उस नामका फूल ऐसा होने पर, क का ख नहीं होता है। उदा०—) बंधेउं…पसूणं। आर्ष प्राकृत में अन्यत्र भी यानी अन्य कुछ शब्दों में भी (क का ख होता है। उदा०—) कासितं…खसिअं।

मरकतमदकले गः कन्दुके त्वादेः ॥१८२॥

अनयोः कस्य गो भवति कन्दुके त्वाद्यस्य कस्य। मरगयं। मयगलो। गेन्दुअं।

मरकत और मदकल इन दो शब्दों में क का ग होता है; परन्तु कन्दूक शब्द में मात्र आद्य क का ग होता है। उदा०—गरगयं…गेन्दुअं।

किराते चः ॥ १८३ ॥

किराते कस्य चो भवति। चिलाओ। पुलिन्द एवायं विधिः। कामरूपिणि तु नेष्यते। नमिमो[1] हरकिरायं।

किरात शब्द में क का च होता है। उदा०—चिलाओ। (किरात शब्द का अर्थ किरात यानी) पुलिन्द (=एक वन्य जाति) होने पर ही, (क का च होता है) यह नियम लागू पड़ता है। परन्तु (किरात शब्द का अर्थ यदि किरात का) वेश धारण करने वाला (किरात ऐसा हो, तो इस नियम की प्रवृत्ति) इष्ट नहीं मानी जाती है। उदा०—नमिमो…किरायं।

शीकरे भहौ वा ॥ १८४ ॥

शीकरे कस्य भहौ वा भवतः। सीभरो सीहरो। पक्षे। सीअरो।

शीकर शब्द में क के भ और ह विकल्प से होते हैं। उदा०—सीभरो, सीहरो। (विकल्प—) पक्ष में—सीअरो।

चन्द्रिकायां मः ॥ १८५ ॥

चन्द्रिकाशब्दे कस्य मो भवति। चंदिमा।

चन्द्रिका शब्द में क का म होता है। उदा०—चंदिमा।

निकषस्फटिकचिकुरे हः ॥ १८६ ॥

एषु कस्य हो भवति। निहसो। फलिहो। चिहरो। चिहरशब्दः संस्कृतेपि इति दुर्गः।

---

१. नमामः हरकिरातम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निकष, स्फटिक और चिकुर शब्दों में क का ह होता है। उदा०-चिहुरो। दुर्ग के मतानुसार, चिहुर ऐसा शब्द संस्कृत भाषा में भी है।

खघथधभाम् ॥ १८७ ॥

स्वरात् परेषामसंयुक्तानामनादिभूतानां खघथधभ इत्येतेषां वर्णानां प्रायो हो भवति। ख। [1]साहा। मुहं। मेहला। लिहइ। घ। [2]मेहो। जहणं। माहो। लाहइ। थ। [3]नाहो। आवसहो। मिहुणं। कहइ। ध। [4]साहू। वाहो। बहिरो। बाहइ। इंद-हणू। भ। [5]सहा। सहावो। नहं। थणहरो। सोहइ। स्वरादित्येव। संखो[6]। संघो। कंथा। बंधो। खंभो। असंयुक्तस्येत्येव। [7]अक्खइ। अग्घइ। कत्थइ। सिद्धओ। बंधइ। लब्भइ। अनादेरित्येव। [8]गज्जन्ते खे मेहा। गच्छइ घणो। प्राय इत्येव। सरिसव[9]-खलो। पलय-घणो। अथिरो। जिण धम्भो। पणट्ठभओ। नभं।

स्वर के आगे होने वाले, असंयुक्त, अनादि होने वाले ख् घ् थ् ध् और भ् वर्णोंका प्रायः ह् होता है। उदा०-ख (का ह)-साहा...लिहइ। घ (का ह)—मेहो... लाहइ। थ (का ह)—नाहो...कहइ। ध (का ह)—साहू...इन्दधणू। भ (का ह)—सहा...सोहइ। स्वर के आगे होने पर ही (ख् ध् इत्यादि का ह् होता है; पीछे अनुस्वार होने पर, ऐसा ह् नहीं होता है। उदा०—) संखो........खंभो। असंयुक्त होने पर ही (ख् ध् इत्यादि का ह् होता है; वे संयुक्त होने पर, ऐसा ह् नहीं होता है। उदा०—) अक्खइ......लब्भइ। अनादि होने पर ही (ख् ध् इत्यादि का ह् होता है; वे आदि हो, तो ह् नहीं होता है। उदा०—) गज्जंते.....घणो। (ख् ध् इत्यादि का ह्) प्रायः ही होता है; (कभी कभी ऐसा ह् नहीं होता है। उदा०—) सरिसव.....नभं।

---

१. क्रमसे—शाखा। मुख। मेखला। लिखति।

२. क्रमसे—मेघ। जघन। माघ। श्लाघते।

३. क्रमसे—नाथ। आवसथ। मिथुन। कथयति।

४. क्रमसे—साधु। व्याध। बधिर। बाधते। इन्द्रधनुस्।

५. क्रमसे—सभा। स्वभाव। नभस्। स्तनभर। शोभते।

६. क्रमसे—शंख। संघ। कंथा। बंध। स्तं (स्कं) भ।

७. क्रमसे—आख्याति, राजते (सूत्र ४.१०० अनुसार, राज् का आदेश अग्घ है), कथ्यते (सूत्र २.१७४ देखिए), सिद्धक, बध्नाति, लभ्यते।

८. क्रमसे—गर्जन्ति खे मेघाः। गच्छति घनः।

९. क्रमसे—सर्षप-खल प्रलय-घन। अस्थिर। जिनधर्म। प्रणष्ट-भय। नभस।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृथकि धो वा ॥ १८८ ॥

पृथक् शब्दे थस्य धो वा भवति। पिधं पुधं। पिहं पुहं।

पृथक् शब्द में थ का ध विकल्प से होता है। उदा०—पिधं……पुहं।

शृङ्खले खः कः ॥ १८९ ॥

शृङ्खले खस्य को भवति। सङ्कलं।

शृङ्खल शब्द में ख का क होता है। उदा०—संकलं।

पुन्नागभागिन्योर्गो मः ॥ १९० ॥

अनयोर्गस्य मो भवति। [1]पुन्नामाई वसंते। भामिणी।

पुन्नाग और भागिनी शब्दों में ग का म होता है। उदा०—पुन्नामाइँ…भामिणी।

छागे लः ॥ १९१ ॥

छागे गस्य लो भवति। छालो[2] छाली।

छाग शब्द में ग का ल होता है। उदा०—छालो, छाली।

ऊत्वे दुर्भगसुभगे वः ॥ १९२ ॥

अनयोरूत्वे गस्य वो भवति। दूहवो। सूहवो। ऊत्व इति किम्। दुहओ। सुहओ।

दुर्भग और सुहग इन दो शब्दों में, (आदि उकारका) ऊ होने पर, ग का व होता है। उदा०—दूहवो, सूहवो। ऊ होने पर ऐसा क्यों कहा है? (कारण इन शब्दों में, यदि उ का ऊ न हो, तो ग का व नही होता है। उदा०—)दुहओ, सुहओ।

खचितपिशाचयोश्चः सल्लौ वा ॥ १९३ ॥

अनयोश्चस्य यथासंख्यं स ल्ल इत्यादेशौ वा भवतः। खसिओ खइओ। पिसल्लो पिसाओ।

खचित और पिशाच शब्दों में, च को अनुक्रम से स और ल्ल आदेश विकल्प से होते है। उदा०—खसिओ… …पिसाओ।

जटिले जो झो वा ॥ १९४ ॥

जटिले जस्य झो वा भवति। झडिलो जडिलो।

जटिल शब्द में, ज का झ विकल्प से होता है। उदा०—झडिलो, जडिलो।

---

१. पुन्नागानि वसन्ते।   २. √छाग।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

टो डः ॥ १९५ ॥

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेष्टस्य डो भवति । नडो[1] । भडो । घडो । घडइ । स्वरादित्येव । घंटा । असंयुक्तस्येत्येव । [2]खट्टा । अनादेरित्येव । [3]टक्को । क्वचिन्न भवति । अटति अटइ ।

स्वर के आगे होने वाले, असंयुक्त और अनादि ट का ड होता है । उदा०—नडो····· घडइ । स्वर के आगे होने पर ही (ट का ड होता है; पीछे अनुस्वार होने पर, यह वर्णान्तर नहीं होता है । उदा०—) घंटा । असंयुक्त होने पर ही (ट का ड होता है; संयुक्त होने पर नहीं होता है । उदा०—) खट्टा । अनादि होने पर ही (ट का ड होता है; ट आदि हो, तो उसका ड नहीं होता है । उदा०—) टक्को । क्वचित् (ट का ड) नहीं होता है । उदा०—अटति अटइ ।

सटाशकटकैटभे ढः ॥ १९६ ॥

एषु टस्य ढो भवति । सढा । सयढो । केढवो ।

सटा, शकट, कैटभ शब्दों में ट का ढ होता है । उदा०—सढा······केढवो ।

स्फटिके लः ॥ १९७ ॥

स्फटिके टस्य लो भवति । फलिहो ।

स्फटिक शब्द में ट का ल होता है । उदा०—फलिहो ।

चपेटापाटौ वा ॥ १९८ ॥

चपेटाशब्दे ण्यन्ते पटिधातौ टस्य लो वा भवति । चविला चविडा । फालेइ फाडेइ ।

चपेटा शब्द में और प्रयोजक प्रत्ययान्त पट् धातु में, ट का ल विकल्प से होता है । उदा०—चविला······फाडेइ ।

ठो ढः ॥ १९९ ॥

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेष्ठस्य ढो भवति । [4]मढो । सढो । कमढो । कुढारो । पढइ । स्वरादित्येव । वेकुंठो[5] । असंयुक्तस्येत्येव । चिट्ठइ[6] । अनादेरित्येव । हिअए[7] ठाइ ।

1. क्रम से—नट । भट । घटति । घट । 2. खट्वा । 3. टङ्क ।
4. क्रमसे—मठ । शठ । कमठ । कुठार । पठति । 5. वैकुण्ठ । 6. तिष्ठति ।
7. हृदये तिष्ठति । हेमचंद्र के मतानुसार, चिट्ठ और ठा ये धातु स्था धातु के आदेश हैं (सूत्र ४.१६ देखिए) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वर के आगे होने वाले, असंयुक्त, अनादि ठ का ढ होता है। उदा०—मढो··· पढइ। स्वर के आगे होने पर ही (ठ का ढ होता है, पीछे अनुस्वार हो, तो ठ का ढ नहीं होता है। उदा०—) वेकुंठो। असंयुक्त होने पर ही (ठ का ढ होता है, संयुक्त होने पर नहीं होता है। उदा०—) चिट्ठइ। अनादि होने पर ही (ठ का ढ होता है; आदि होने पर नहीं होता है। उदा०—) हिअए ठाइ।

अंकोठे ल्लः ॥ २०० ॥

अंकोठे ठस्य द्विरुक्तौ लो भवति। अंकोल्ल-तेल्ल-[1]तुप्पं।

अंकोठ शब्द में ठ का द्वित्वयुक्त ल (=ल्ल) होता है। उदा—अंकोल्लतेल्लतुप्पं।

पिठरे हो वा रश्च डः ॥ २०१ ॥

पिठरे ठस्य हो वा भवति तत्संनियोगे च रस्य डो भवति। पिहडो। पिढरो।

पिठर शब्द में ठ का ह विकल्प से होता है और उसके सानिध्य में र का ड होता है। उदा०—पिहडो, पिढरो।

डो लः ॥ २०२ ॥

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेर्डस्य प्रायो लो भवति। वडवामुखम्। वलयामुहं। [2]गरुलो। तलायं। कीलइ। स्वरादित्येव। मोंडं[3]। कोंडं। असंयुक्तस्येत्येव।[4] खग्गो। अनादेरित्येव। रमइ[5] डिम्भो। प्रायोग्रहणात्। क्वचिद् विकल्पः। [6]वलिसं वडिसं। दालिमं दाडिमं। गुलो गुडो। णाली णाडो। णलं[7] णडं। आमेलो आवेलो। क्वचिन्न भवत्येव। [8]निविडं। गउडो। नीडं। उडू। तडी।

स्वर के आगे होने वाले, अनादि ड का प्रायः ल होता है। उदा०—बडवामुखं··· कीलइ। स्वर के आगे होने पर ही (ड का ल होता है; पीछे अनुस्वार होने पर नहीं होता है। उदा०—मोंडं, कोंडं। असंयुक्त होने पर ही (ड का ल होता है, संयुक्त होने पर नहीं होता है। उदा०—) खग्गो। अनादि होने पर ही (ड का ल होता है आदि होने पर नहीं होता है। उदा०—) रमइ डिम्भो। प्रायः ऐसा निर्देश होने से क्वचित् विकल्प से (ड का ल होता है। उदा०— वलिसं··· ···आवेडो क्वचित् (ड का ल) होता ही नहीं है। उदा०—निबिडं··· ···तडी।

---

१. अंकोठतैलधृतम्। २. क्रमसे:—गरुड। तडाग। क्रीडति।
३. क्रमसे:—मुण्ड। कुण्ड। ४. खड्ग। ५. रमते डिम्भः।
६. बडिश। दाडिम। गुड। नाडी। ७. क्रम से:—नड आपीड।
८. क्रम से:—निबिड। गौड। पीडित। नीड। उडु। तडी (+नटी)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेणौ णो वा ॥ २०३ ॥

वेणौ णस्य लो वा भवति । वेलू । वेणू ।

वेणु शब्द में ण का ल विकल्प से होता है। उदा०—वेलू, वेणू ।

तुच्छे तश्चछौ वा ॥ २०४ ॥

तुच्छशब्दे तस्य च छ इत्यादेशौ वा भवतः । चुच्छं छुच्छं तुच्छं ।

तुच्छ शब्द में, त को च और छ ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—चुच्छं…तुच्छं ।

नगरत्रसरतूवरे टः ॥ २०५ ॥

एषु तस्य टो भवति । टगरो । टसरो । टूवरो ।

तगर, त्रसर, और तूवर शब्दों में त का ट होता है । उदा०—टगरो… …टूवरो ।

प्रत्यादौ डः ॥ २०६ ॥

प्रत्यादिषु तस्य डो भवति । पडिवन्नं[1] । पडिहासो । पडिहारो । पाडिहारो । पाडिप्फद्धी । पडिसारो । पडिनिअत्तं । पडिमा । पडिवया । पडंसुआ । पडिकरइ । पहुडि । पाहुडं । वावडो । पडाया । बहेडओ । हरडई । मडयं । आर्षे दुष्कृतं । दुक्कडं । सुकृतम् सुकडं । आहृतम् आहडं । अवहृतं अवहडं । इत्यादि । प्राय इत्येव । प्रतिसमयम् पइसमयं । प्रतीपम् पईवं । संप्रति संपइ । प्रतिष्ठानम् । पइट्ठाणं । प्रतिष्ठा पइट्ठा । प्रतिज्ञा । पइण्णा । प्रति[2] । प्रभृति[3] । प्राभृत । व्यापृत । पताका । बिभीतक । हरीतकी । मृतक । इत्यादि ।

प्रति इत्यादि शब्दों में त का ड होता है । उदा०—पडिवन्नं… …मडयं । प्राकृत में (त का ड होने के उदा०:—) दुष्कृतम्… …अवहडं, इत्यादि । (त का ऐसा ड) प्रायः ही होता है । (तस्मात् ऐसा ड कभी नहीं होता है । उदा०—) प्रतिसमयम्… …पइण्णा । (क्रम से मूल संस्कृत शब्द ऐसे हैं :—) प्रति… …मृतक, इत्यादि ।

---

१. पडिवन्नं से पडिकरइ तक के शब्दों में प्रति है । इनके मूल संस्कृत शब्द क्रम से ऐसे :—प्रतिपन्न । प्रतिहास । प्रतिहार । प्रतिस्पर्धिन् । प्रतिसार । प्रतिनिवृत्त । प्रतिमा । प्रतिपद् । प्रतिश्रुत् । प्रतिकरोति ।

२. 'प्रति' शब्द पडिवन्नं से पडिकरइ तक के शब्दों में है ।

३. प्रभृति से मृतक तक के शब्द क्रम से पहुडि से मडयं तक के शब्दों के मूल संस्कृत शब्द हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इत्वे वेतसे ।। २०७ ।।

वेतसे तस्य डो भवति इत्वे सति । वेडिसो । इत्व इति किम् । वेअसो । इः स्वप्नादौ (१·४६) इति इकारो न भवति इत्व इति व्यावृत्तिबलात् ।

वेतस शब्द में (त में से अ का) इ होने पर, त का ड होता है । उदा०-- वेडिसो । इ होने पर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण ऐसा न होने पर, त का ड नहीं होता है । उदा०) वेअसो । (प्रस्तुत सूत्र में) इत्व होने पर ऐसे जो शब्द हैं उनके व्यावृत्ति करने के सामर्थ्य के कारण ('वेअस' इस वर्णान्तर में) 'इः स्वप्नादौ' सूत्र के अनुसार (अ का इ) नहीं होता है ।

गर्भितातिमुक्तके णः ।। २०८ ।।

अनयोस्तस्य णो भवति । गब्भिणो ! अणिउँतयं । क्वचिन्न भवत्यपि । अइमुत्तयं । कथम् एरावणो । ऐरावणशब्दस्य । एरावओ इति तु ऐरावतस्य ।

गर्भित और अतिमुक्तक इन दो शब्दों में त का ण होता है । उदा०—गब्भिणो ... उँतयं । क्वचित् (ऐसा त का ण) नहीं भी होता है । उदा०—अइमुत्तयं । (प्रश्नः—) एरावण शब्द कैसे सिद्ध होता है ? ऐरावत शब्द में त का ण होकर सिद्ध होता नहीं क्या ? उत्तर :—) ऐरावण शब्द का रूप है (एरावण); एरावओ (वर्णान्तर) मात्र ऐरावत शब्द का है ।

रुदिते दिना ण्णः ।। २०९ ।।

रुदिते दिना सह तस्य द्विरुक्तो णो भवति । रुण्णं । अत्र केचिद् ऋत्वादिषु द इत्यारब्धवन्तः स तु शौरसेनीमागधीविषय एव दृश्यते इति नोच्यते । प्राकृते हि । ऋतुः । रिऊ उऊ । रजतम् रययं । एतद् रअं । गतः गओ । आगतः आगओ । सांप्रतम् संपयं । यतः । जओ । ततः तओ । कृतम् कयं । हतम् हयं । हताशः हयासो । श्रुतः सुओ । आकृतिः आकिई । निवृतः निव्वुओ । तातः ताओ । कतरः कयरो । द्वितीयः दुइओ । इत्यादयः प्रयोगा भवन्ति । न पुनः उदु[1] रयदं इत्यादि । क्वचित् भावेपि व्यत्ययश्च (४·४४७) इत्येव सिद्धम् । दिही इत्येतदर्थं तु धृतेर्दिहिः (२·१३१) इति वक्ष्यामः ।

रुदित शब्द में दि के साथ त का ण्ण—द्विरुक्त ण—होता है । उदा०—रुण्णं । इस स्थल पर 'ऋत्वादिषु द ' (= ऋतु इत्यादि शब्दों में त का द होता है, इस) नियम का प्रारंभ कुछ (वैयाकरण) करते हैं, परंतु वह नियम शौरसेनी और मागधी भाषा के बारे में ही दिखाई देता है; इसलिए (वह नियम यहाँ) हमने कहा नहीं

---

१. ऋतु । रजत ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। सच बात यह है—प्राकृत में ऋतु······दुइओ इत्यादि प्रयोग होते हैं, परंतु उदू, रयद इत्यादि प्रयोग तो नहीं होते हैं। क्वचित् (त का द होने वाले प्रयोग प्राकृत में) यदि होते भी हैं, तो वे 'व्यत्ययश्च' (इस हमारे व्याकरण के) नियम से ही सिद्ध होते हैं। (धृति शब्द से सिद्ध होन वाले) दिही (वर्णान्तर) के लिए मात्र 'धृतेर्दिहिः' (यह नियम) हम (आगे) कहने वाले हैं।

सप्ततौ रः ॥ २१० ॥

सप्तमो तस्य रो भवति। सत्तरी।

सप्तति शब्द में त का र होता है। उदा०—सत्तरी।

अतसीसातवाहने लः ॥ २११ ॥

अनयोस्तस्य लो भवति। अलसी। सालाहणो सालवाहणो। सालाहणी[1] भासा।

अतसी और सातवाहन इन दो शब्दों में, त का ल होता है। उदा०—अलसी··· भासा।

पलिते वा ॥ २१२ ॥

पलिते तस्य लो वा भवति। पलिलं पलिअं।

पलित शब्द मे त का ल विकल्प से होता है। उदा०—पलिलं, पलिअं।

पीते वो ले वा ॥ २१३ ॥

पीते तस्य वो वा भवति। स्वार्थलकारे परे। पीवलं पीअलं। ल इति किम्। पीअं।

पीत शब्द में, (पीत के आगे) स्वार्थे लकार (प्रत्यय) होने पर, त का व विकल्प से होता है। उदा०—पीवलं, पीअलं। (स्वार्थे) लकार (आगे होने पर) ऐसा क्यों कहा है? (कारण पीत के आगे स्वार्थ लकार न हो, तो त का व विकल्प से नहीं होता है। उदा०—) पीअं।

वितस्तिवसतिभरतकातरमातुलिङ्गे हः ॥ २१४ ॥

एषु तस्य हो भवति। विहत्थी। वसही। बहुलाधिकारात् क्वचिन्न भवति। वसई। भरहो। काहलो। माहुलिंगं मातुलुंगशब्दस्य तु माउलुंगं।

वितस्ति, वसति, भरत, कातर और मातुलिंग शब्दों में त का ह होता है। उदा०—विहत्थी, वसही; बहुलका अधिकार होने से, क्वचित् (त का ह) नहीं

१. सातवाहनी भाषा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है; उदा०--वसई; भरहो······माहुलिगं। परंतु मातुलुंग शब्द का वर्णान्तर मात्र माउलुंग होता है।

मेथिशिथिरशिथिलप्रथमे थस्य ढः ॥ २१५ ॥

एषु थस्य ढो भवति। हापवादः। मेढी। सिढिलो। सिढिलो। पढमो।

मेथि, शिथिर, शिथिल और प्रथम शब्दों में थ का ढ होता है। (थ का) ह होता है (सूत्र १.१८७) इस नियम का प्रस्तुत नियम अपवाद है। उदा०--मेढी······पढमो।

निशीथ-पृथिव्योर्वा ॥ २१६ ॥

अनयोस्थस्य ढो वा भवति। निसीढो निसीहो। पुढवी पुहवी।

निशीथ और पृथिवी इन दो शब्दों में थ का ढ विकल्प से होता है। उदा०--निसीढो······पुहवी।

दशनदष्टदग्धदोलादण्डदरदाहदम्भदर्भकदनदोहदे दो वा डः ॥२१७॥

एषु दस्य डो वा भवति। डसणं दसणं। डट्ठो दट्ठो। डड्ढो दड्ढो। डोला दोला। डंडो दंडो। डरो दरो। डाहो दाहो। डम्भो दम्भो। डब्भो दब्भो। कडणं कयणं। डोहलो दोहलो। दरशब्दस्य च भयार्थवृत्तेरेव भवति। अन्यत्र [1]दरदलिअ।

दशन, दष्ट, दग्ध, दोला, दण्ड, दर, दाह, दम्भ, दर्भ, कदन, और दोहद शब्दों में द का ड विकल्प से होता है। उदा०--डसणं···दोहलो। दर शब्द भय अर्थ में होने पर ही (द का ड) होता है; (वैसा अर्थ न होने पर) अन्य स्थानों में (दर ऐसा ही वर्णान्तर होता है। उदा०--) दरदलिअ।

दंशदहोः ॥ २१८ ॥

अनयोर्धात्वोर्दस्य डो भवति। डसइ[2]। डहइ।

दंश् और दह् धातुओं में द का ड होता है। उदा०--डसइ, डहइ।

संख्यागद्गदे रः ॥ २१९ ॥

संख्यावाचिनि गद्गदशब्दे च दस्य रो भवति। एआरह[3]। बारह। तेरह। गग्गरं। अनादेरित्येव। ते[4] दस। असंयुक्तस्येत्येव। चउद्दह[5]।

संख्यावाचक शब्दों में और गद्गद शब्द में, द का र होता है। उदा०--

---

१. दरदलित। २. क्रमसे--दशति। दहइ। ३. क्रमसे--एकादश। द्वादश। त्रयोदश। गद्गद। ४. ते दश। ५. चतुर्दश।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एआरह······गग्गरं। अनादि होने पर ही (द का र होता है; द आदि हो, तो ऐसा र नहीं होता है। उदा०—) ते दस। असंयुक्त होने पर ही (दकार होता है; द संयुक्त हो, तो ऐसा र नहीं होता है। उदा०—) चउद्दह।

कदल्यामद्रुमे ॥ २२० ॥

कदलीशब्दे अद्रुमवाचिनि दस्य रो भवति। करली। अद्रुम इति किम्। कयली केली।

कदली शब्द में, उसका पेड अर्थ न होने पर, द का र होता है। उदा०—कदली। (कदली शब्द का अर्थ) पेड न होने पर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण पेड अर्थ होने पर द का र नहीं होता है। उदा०—) कयली, केली।

प्रदीपिदोहदे लः ॥ २२१ ॥

प्रपूर्वे दीप्यतौ धातौ दोहदशब्दे च दस्य लो भवति।[1] पलीवेइ। पलित्तं। दोहलो।

प्र (उपसर्ग) पीछे होने वाले दीप् धातु में और दोहद शब्द में, द का ल होता है। उदा०—पलीवेइ···दोहलो।

कदम्बे वा ॥ २२२ ॥

कदम्बशब्दे दस्य लो वा भवति। कलंबो कयंबो।

कदम्ब शब्द में द का ल विकल्प होता है। उदा०—कलंबो, कयंबो।

दीपौ धो वा ॥ २२३ ॥

दीप्यतौ दस्य धो वा भवति। धिप्पइ दिप्पइ।

दीप्यति (धातु) में द का ध विकल्प से होता है। उदा०—धिप्पइ, दिप्पइ।

कदर्थिते वः ॥ २२४ ॥

कदर्थिते दस्य वो भवति। कवट्टिओ।

कदर्थित शब्द में द का व होता है। उदा०—कवट्टिओ।

ककुदे हः ॥ २२५ ॥

ककुदे दस्य हो भवति। कउहं।

ककुद शब्द में द का ह होता है। उदा०—कउहं।

---

१. क्रमसे——प्रदीपयति। प्रदीप्त। दोहद।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निषधे धो ढः ॥ २२६ ॥

निषधे धस्य ढो भवति । निसढो ।

निषध शब्द में ध का ढ विकल्प से होता है । उदा०—निसढो ।

वौषधे ॥ २२७ ॥

ओषधे धस्य ढो वा भवति । ओसढं ओसहं ।

ओषध शब्द में ध का ढ विकल्प से होता है । उदा०—ओसढं, ओसहं ।

नो णः ॥ २२८ ॥

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेर्नस्य णो भवति । [1]कणयं । मयणो । वयणं । नयणं । माणइ । आर्षे । आरनालं[2] । अनिलो । अनलो । इत्याद्यपि ।

स्वरके आगे होने वाले, असंयुक्त, अनादि (ऐसे) न का ण होता है । उदा०—कणयं···माणइ । आर्ष प्राकृत में, आरनालं···अनलो इत्यादि भी (वर्णान्तर होवे हैं ।)

वादौ ॥ २२९ ॥

असंयुक्तस्यादौ वर्तमानस्य नस्य णो वा भवति । णरो[3] नरो । णई नई । णेइ नेइ । असंयुक्तस्येत्येव । न्यायः नाओ ।

असंयुक्त और आदि होने वाले न का ण विकल्प से होता है । उदा०—णरो··· नेइ । असंयुक्त होने वाले (न का ही ण होता है; यदि न संयुक्त हो, तो विकल्प से ण नहीं होता है । उदा०—) न्यायः नाओ ।

निम्बनापिते लण्हं वा ॥ २३० ॥

अनयो र्नस्य ल ण्ह इत्येतौ वा भवतः । लिम्बो निम्बो । ण्हाविओ नाविओ ।

निम्ब और नापित इन दो शब्दों में, न के ल और ण्ह (विकार) विकल्प से होते हैं । उदा०—लिम्बो···ण्हाविओ ।

पो वः ॥ २३१ ॥

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेः पस्य प्रायो वो भवति । [4]सवहो । सावो ।

---

१. क्रमसे—कनक । मदन । वदन।वचन । नयन । मानयति ।

२. क्रमसे—आरनाल । अनिल । अनल ।

३. क्रमसे—नर । नदी । नयति ।

४. क्रमसे—शपथ । शाप । उपसर्ग । प्रदीप । काश्यप । पाप । उपमा । कपिल । कुणप । कलाप । कपाल । महीपाल । गोपायते । तपति ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

उवसग्गो । पईवो । कासवो । पावं । उवमा । कविलं । कुणवं । कलावो । कवालं । महिवालो । गोवइ । तवइ । स्वरादित्येव । कंपइ[1] । असंयुक्तस्येत्येव । अप्पमत्तो[2] । अनादेरित्येव । सुहेण[3] पढइ । प्राय इत्येव । कई[4] । रिऊ । एतेन पकारस्य प्राप्तयोर्लोपवकारयोर्यस्मिन् कृते श्रुतिसुखमुत्पद्यते स तत्र कार्यः ।

स्वर के आगे होने वाले, असंयुक्त, अनादि प का प्रायः व होता है । उदा०—सवहो ··तवइ । स्वर के आगे होने पर ही (प का व होता है; पीछे अनुस्वार होने पर,प का व नहीं होता है । उदा०—) कंपइ । असंयुक्त होने पर ही (प का व होता है, प संयुक्त हो, तो व नहीं होता है । उदा०—)अप्पमत्तो । अनादि होने पर ही (प का व होता है; प आदि होने पर व नहीं होता है । उदा०—) सुहेण पढइ । प्रायः ही (प का व होता है; इसलिए कभी प का व होता भी नही है । उदा०—) कई, रिऊ । तस्मात् पकार के बारे में प्राप्त होने वाले लोप और वकार इनमें जो (विकार) किए जाने पर श्रुति को (=सुनने को) मधुर लगेगा, वही वहाँ करे ।

पाटिपरुषपरिघपरिखापनसपारिभद्रे फः ॥ २३२ ॥

ण्यन्ते पटिधातौ परुषादिषु च पस्य फो भवति । फालेइ फाडेइ । फरुसो । फलिहो । फलिहा । फणसो । फालिहद्दो ।

प्रयोजक प्रत्ययान्त पट्धातु में और परुष इत्यादि—परुष, परिध, परिखा, पनस, पारिभद्र—शब्दों में प का फ होता है । उदा०—फालेइ···फालिहद्दो ।

प्रभूते वः ॥ २३३ ॥

प्रभूते पस्य वो भवति । वहुत्तं ।

प्रभूत शब्द में प का व होता है । उदा०—वहुत्तं ।

नीपापीडे मो वा ॥ २३४ ॥

अनयोः पस्य मो वा भवति । नीमो नीवो । आमेलो आमेडो ।

नीप और आपीड शब्दों में, प का म विकल्प से होता है । उदा०—नीमो··· आमेडो ।

पापद्धौं रः ॥ २३५ ॥

पापर्द्धावपदादौ पकारस्य रो भवति । पारद्धो ।

---

१. कम्पते ।
२. अप्रमत्त ।
३. सुखेन पठति ।
४. क्रमसे—कपि । रिपु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पार्पद्धि शब्द में पद के आदि न होने वाले पकारका र होता है। उदा०—पारद्धी।

फो भहौ ॥ २३६ ॥

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेः फस्य भहौ भवतः। क्वचिद् भः। रेफः रेभो। शिफा सिभा। क्वचित्तु हः। [1]मुत्ताहलं। क्वचिदुभावपि। सभलं[2] सहलं। सेभालिआ सेहालिआ। सभरी सहरी। गुभइ गुहइ। स्वरादित्येव। गुंफइ[3]। असंयुक्तस्येत्येव। पुप्फं[4]। अनादेरित्येव। चिट्ठइ[5] फणी। प्राय इत्येव। कसण[6] फणी।

स्वर के आगे होने वाले, असंयुक्त, अनादि फ के भ और ह होते हैं। क्वचित् (फ का) भ होता है। उदा० – रेफः...सिभा। परन्तु क्वचित् (फ का) ह होता है। उदा०मुत्ताहलं क्वचित् (फ के भ और ह) दोनों भी होते हैं। उदा०–सभलं... गुहइ। स्वर के आगे (फ होने पर ही ये विकार होते हैं, पीछे अनुस्वार होने पर ये विकार नहीं होते हैं। उदा०—) गुंफइ। (फ) असंयुक्त होने पर ही (ये विकार होते हैं; फ संयुक्त होने पर, ये विकार नहीं होते हैं। उदा०—) पुप्फं। (फ) अनादि होने पर ही (ये विकार होते हैं; फ आदि होने पर, ये विकार नहीं होते हैं। उदा०—) चिट्ठइ फणी। प्रायः ही (फ के ये विकार होते हैं; कभी वे होते भी नहीं हैं। उदा०—) कसणफणी।

बो वः ॥ २३७ ॥

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेर्बस्य वो भवति। अलाबू अलावू अलाऊ। शबलः सवलो।

स्वर के आगे होने वाले, असंयुक्त, अनादि ब का व होता है। उदा--अलाबू... सवलो।

बिसिन्यां भः ॥ २३८ ॥

बिसिन्यां बस्य भो भवति। भिसिणी। स्त्रीलिंगनिर्देशादिह न भवति। बिस[7]तन्तुपेलवाणं।

बिसिनी शब्द में ब का भ होता है। उदा०—भिसिणी। (सूत्र में बिसिनी ऐसा) स्त्रीलिंग का यानी स्त्रीलिंगी शब्द का निर्देश होने से, यहाँ (यानी आगे दिए उदाहरण में ब का भ नहीं होता है। उदा०–) बिस... पेलवाणं।

---

१. मुक्ताफल। २. क्रमसे—सफल। शेफालिका। शफरी। गुफति।
३. गुम्फति। ४. पुष्प। ५. तिष्ठति फणी।
६. कृष्णफणी। ७. बिसतन्तुपेलवानाम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कबन्धे मयौ ॥ २३९ ॥

कबन्धे बस्य मयौ भवतः । कमंधो कयंधो ।

कबन्ध शब्द में ब के म और य होते हैं । उदा०—कमंधो, कयंधो ।

कैटभे भो वः ॥ २४० ॥

कैटभे भस्य वो भवति । केढवो ।

कैटभ शब्द में भ का व होता है । उदा०—केढवो ।

विषमे मो ढो वा ॥ २४१ ॥

विषमे मस्य ढो वा भवति । विसढो विसमो ।

विषम शब्दमें, म का ढ विकल्प से होता है । उदा०—विसढो विसमो

मन्मथे वः ॥ २४२ ॥

मन्मथे मस्य वो भवति । वम्महो ।

मन्मथ शब्द में म का व होता है । उदा०—वम्महो ।

वाभिमन्यौ ॥ २४३ ॥

अभिमन्युशब्दे मो वो वा भवति । अहिवन्नू अहिमन्नू ।

अभिमन्यु शब्द में म का व विकल्प से होता है । उदा०—अहिवन्नू, अहिमन्नू ।

भ्रमरे सो वा ॥ २४४ ॥

भ्रमरे मस्य सो वा भवति । भसलो भमरो ।

भ्रमर शब्द में म का स विकल्प से होता है । उदा०— भसलो, भमरो ।

आदेर्यो जः ॥ २४५ ॥

पदादेर्यस्य जो भवति । जसो । जमो । जाइ । [1] आदेरिति किम् । अवयवो [2] । विणओ । बहुलाधिकारात् सोपसर्गस्यानादेरपि । संजमो [3] । संजोगो । अवजसो । क्वचिन्न भवति । [4]पओओ । आर्षे लोपोपि । यथाख्यातम् अहक्खायं । यथाजातम् अहाजायं ।

पद के आदि होने वाले य का ज होता है । उदा०—जसो······जाइ । (पद के) आदि होने वाले (य का ज होता है) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण यदि पद के आदि य न हो, तो उसका ज नहीं होता है । उदा०—अवयवो, विणओ । बहुल का अधिकार होने से, उपसर्ग युक्त और अनादि होने वाले (य का भी ज होता है । उदा० —) संजमो··· अवजसो । क्वचित् (उपसर्गयुक्त और अनादि होने वाले

१. क्रम से—यशस् । यम । याति ।
२. क्रमसे—अवयव । विनय ।
३. क्रमसे—संयम । संयोग । अपयशस् ।
४. प्रयोग ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

य का ज) नहीं होता है । उदा० — पओओ । आर्ष प्राकृत में (आदि य का) लोप भी होता है । उदा०—यथाख्यातम्……अहाजायं ।

युष्मद्यर्थपरे तः ॥ २४६ ॥

युष्मच्छब्देर्थंपरे यस्य तो भवति । [1]तुम्हारिसो । तुम्हकेरो । अर्थपर इति किम् । जुम्हदम्ह[2]पयरणं ।

(द्वितीय पुरुषी तू–तुम) अर्थ होने वाले युष्मद् शब्द में, य का त होता है । उदा०—तुम्हा……केरो । (द्वितीय पुरुषी) अर्थ होने वाले (युष्मद् शब्द में) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण वैसा अर्थ न होने पर, युष्मद् शब्द में से य का त नहीं होता है । उदा०—) जुम्ह……पयरणं ।

यष्ट्यां लः ॥ २४७ ॥

यष्ट्यां यस्य लो भवति । लट्ठी । वेणुलट्ठी[3] । उच्छुलट्ठी । महुलट्ठी ।

यष्टि शब्द में य का ल होता है । उदा०—लट्ठी……लट्ठी ।

वोत्तरीयानीयतीयकृद्ये ज्जः ॥ २४८ ॥

उत्तरीयशब्दे अनीयतीयकृद्यप्रत्ययेषु च यस्य द्विरुक्तो जो वा भवति । उत्तरिज्जं उत्तरीअं । अनीय । [4]करणिज्जं करणीअं । विम्हयणिज्जं विम्हयणीअं । जवणिज्जं जवणीअं । तीय । बिइज्जो[5] बीओ । कृद्य । पेज्जा[6] पेआ ।

उत्तरीय शब्द में और अनीय, तीय तथा कृद्भ प्रत्ययों में, य का द्विरुक्त ज (=ज्ज) विकल्प से होता है । उदा० — उत्तरिज्जं, उत्तरीअं । अनीय (प्रत्यय में):—करणिज्जं ···जवणीअं । तीय (प्रत्यय में):—बिइज्जो, बीओ । कृद्य (प्रत्यय में):—पेज्जा, पेआ ।

छायायां होकान्तौ वा ॥ २४९ ॥

अ-कान्तौ वर्तमाने छायाशब्दे यस्य हो वा भवति । वच्छस्स च्छाही वच्छस्स च्छाया । आतपाभावः । [8]सच्छाहं सच्छायं । अकान्ताविति किम् । [9]मुहच्छाया । कान्तिरित्यर्थः ।

---

१. क्रमसे— युष्मादृश । युष्मदीय (सूत्र २.१४७ देखिए) । २. युष्मदस्मत्प्रकरणम् ।
३. क्रमसे–वेणुयष्टि । इक्षुयष्टि ।मधुयष्टि ।४. क्रमसे- करणीय । विस्मयनीय । यापनीय ।
५. द्वितीय । ६. पेया । ७. वृक्षस्य च्छाया ।
८. सच्छाय । ९. मुखच्छाया ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कान्ति अर्थ न होने वाले छाया शब्द में य का ह विकल्प से होता है। उदा०— वच्छस्स··· :च्छाया; (यहाँ छाया यानी) धूप का अभाव; सच्छाहं, सच्छायं। कांति अर्थ न होने वाले (छाया शब्द में) ऐसा क्यों कहा है? (कारण छाया शब्द का अर्थ कांति हो, तो य का ह नहीं होता है। उदा०–मुहच्छाया (यानी मुहकी) कांति ऐसा अर्थ है।

डाहवौ कतिपये ॥ २५० ॥

कतिपये यस्य डाह व इत्येतौ पर्यायेण भवतः। कइवाहं कइअवं।

कतिपय शब्द में य के आह (डाह) और व ये दो विकार पर्याय से होते हैं। उदा०—कइवाहं, कइअवं।

किरिभेरे रो डः ॥ २५१ ॥

अनयो रस्य डो भवति। किडो। भेडो।

किरि और भेर शब्दों में र का ड होता है। उदा०–किडी, भेडो।

पर्याणे डा वा ॥ २५२ ॥

पर्याणे रस्य डा इत्यादेशो वा भवति। पडायाणं पल्लाणं।

पर्याण शब्द में, र को डा आदेश विकल्प से होता है। उदा०–पडायाणं,पल्लाणं।

करवीरे णः ॥ २५३ ॥

करवीरे प्रथमस्य रस्य णो भवति। कणवीरो।

करवीर शब्द में पहले र का ण होता है। उदा०–कणवीरो।

हरिद्रादौ लः ॥ २५४ ॥

हरिद्रादिषु शब्देषु असंयुक्तस्य रस्य लो भवति। हलिद्दी। दलिद्दाइ। दलिद्दो। दालिद्दं। हलिद्दो। जहुट्ठिलो। सिढिलो। मुहलो। चलणो। वलुणो। कलुणो। इंगालो। सक्कालो। सोमालो। चिलाओ। फलिहा। फलिहो। फालिहद्दो। काहलो। लुक्को। अवद्दालं। भसलो। जढलं। बढलो। निट्ठुलो। बहुलाधिकाराच्चरणशब्दस्य पादार्थवृत्तेरेव। अन्यत्र [1]चरणकरणं। भ्रमरे स-संनियोगे एव। अन्यत्र भमरो। तथा। जढरं। बढरो। निट्ठुरो। इत्याद्यपि। हरिद्रा। दरिद्राति। दरिद्र। दारिद्र्य। हारिद्र। युधिष्ठिर। शिथिर। मुखर। चरण। वरुण। करुण। अंगार। सत्कार। सुकुमार। किरात। परिखा। परिघ। पारिभद्र। कातर। रुग्ण। अपद्वार। भ्रमर। जठर। बठर। निष्ठुर। इत्यादि। आर्षे। [2]दुवालसंगे। इत्याद्यपि।

---

१. चरणकरण (यानी आचारकर्म)। २. द्वादशांग।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हरिद्रा इत्यादि शब्दों में असंयुक्त होने वाले र का ल होता है। उदा०—हलिद्दी······निट्ठुलो। बहुल का अधिकार होने से, चरण शब्द पाव अर्थ में होने पर ही (उसमें से र का ल होता है। चरण का अर्थ पाव न होने पर) अन्य स्थान में (र का ल नहीं होता है। उदा०–) चरणकरणं। भ्रमर शब्द में 'स' के सांनिध्य होने पर ही (र का ल होता है) स के सांनिध्य न होने पर) अन्यत्र (र का ल नहीं होता है। उदा०) भमरो। अपि च (कुछ शब्दों में र का ल न होते) जढरं··· निट्ठुरो, इत्यादि भी (वर्णान्तर) होते हैं। (उपर्युक्त शब्दों के मूल संस्कृत शब्द क्रमसे ऐसे हैं—) हरिद्रा···निष्ठुर, इत्यादि। आर्ष प्राकृत में दुवालसंगे इत्यादि वर्णान्तर भी होता है।

स्थूले लो रः ॥ २५५ ॥

स्थूले लस्य रो भवति। थोरं। कथं थूल भद्दो। स्थूरस्य हरिद्रादिलत्वे भविष्यति।

स्थूल शब्द में ल का र होता है। उदा०—थोरं। (प्रश्नः—) थूलभद्दो (यह वर्णान्तर) कैसे होता है ? (उत्तरः—स्थूरभद्र शब्द में से) स्थूर शब्द में, हरिद्रा इत्यादि शब्दों के समान (र का) ल होकर (सूत्र १.२५४) थूलभद्द वर्णान्तर होगा।

लाहललाङ्गललाङ्गूले वादेर्णः ॥ २५६ ॥

एषु आदेर्लस्य णो वा भवति। णाहलो लाहलो। णंगलं लंगलं। णंगूलं लंगूलं।

लाहल, लांगल, और लांगूल शब्दों में, आदि ल का ण विकल्प से होता है। उदा० —णाहलो··लंगूलं।

ललाटे च ॥ २५७ ॥

ललाटे च आदेर्लस्य णो भवति। चकार आदेरनुवृत्त्यर्थः। णिडालं णडालं।

और ललाट शब्द में आदि ल का ण होता है। (सूत्र १.२५६ में से) आदेः (=पहले के) पद की अनुवृत्ति (प्रस्तुत १.२५७ सूत्र में) होती है, यह दिखाने के लिए (प्रस्तुत सूत्र में) चाकार (=च शब्द) प्रयुक्त है। उदा० —णिडालं, णडालं।

शबरे बो मः ॥ २५८ ॥

शबरे बस्य मो भवति। समरो।

शबर शब्द में ब का म होता है। उदा०—समरो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वप्ननीव्योर्वा ॥ २५९ ॥

अनयोर्वस्य मो वा भवति । सिमिणो सिविणो । नीमी नीवी ।

स्वप्न और नीवी इन दो शब्दों में, व का म विकल्प से होता है। उदा०— सिमिणो……नीवी ।

शषोः सः ॥ २६० ॥

शकारषकारयोः सो भवति । श । [1]सद्दो । कुसो । निसंसो । वंसो । सामा । । सुद्धं । दस । सोहइ । विसइ । ष । [2]सण्डो । निहसो । कसाओ । घोसइ । उभयोरपि । सेसो[3] । विसेसो ।

शकार और षकार इन दोनों का स होता है। उदा०—श (का स):—सद्दो… विसइ । ष (का स)—संडो……घोसइ । (श और ष इन) दोनों का भी (स):— सेसो, विसेसो :

स्नुषायां ण्हो न वा ॥ २६१ ॥

स्नुषाशब्दे षस्य ण्हः णकाराक्रान्तो हो वा भवति । सुण्हा सुसा ।

स्नुषा शब्द में ष का ण्ह (ऐसा) णकार से युक्त ह (= ण्ह) विकल्प से होता है। उदा०—सुण्हा, सुसा ।

दशपाषाणे हः ॥ २६२ ॥

दशन् शब्दे पाषाणशब्दे च शषोर्यथादर्शनं हो वा भवति । दह[4]मुहो दसमुहो । दहबलो दसबलो । दहरहो दसरहो । दह दस । एआरह । बारह । तेरह । पाहाणो पासाणो ।

दशन् शब्द में और पाषाण शब्द में, श और ष इनका, जैसा (साहित्य में) दिखाई देगा वैसा, विकल्प से ह होता है। उदा०—दहमुहो……पासाणो ।

दिवसे सः ॥ २६३ ॥

दिवसे सस्य हो वा भवति । दिवहो दिवसो ।

दिवस शब्द में स का ह विकल्प से होता है। उदा०—दिवहो, दिवसो ।

हो घोनुस्वारात् ॥ २६४ ॥

अनुस्वारात् परस्य हस्य घो वा भवति । सिंघो सीहो । संघारो । संहारो । क्वचिदननुस्वारादपि । दाहः दाघो ।

---

१. क्रम से–शब्द । कुश । नृशंस । वंश । शामा । शुद्ध । दश । शोभते । विशति ।
२. क्रम से–षण्ढ । निकष । कषाय । घोषयति । ३. क्रम से–शेष । विशेष ।
४. क्रम से–दशमुख । दशबल । दशरथ । दश । एकादश । द्वादश । त्रयोदश । पाषाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुस्वार के आगे होने वाले ह का घ विकल्प से होता है। उदा०—सिंघो··· संहारो। क्वचित् (पीछे) अनुस्वार न होने पर ही (ह का घ होता है। उदा०—) दाहः दाघो।

षट्शमीशावसुधासप्तपर्णेष्वादेश्छः ॥ २६५ ॥

एषु आदेर्वर्णस्य छो भवति। [1]छट्ठो। छट्ठी। छप्पओ। छम्मुहो। छमी। छावो। छुहा। छत्तिवण्णो।

षट्, शमी, शाव, सुधा और सप्तपर्ण शब्दों में, आदि वर्ण का छ होता है। उदा—छट्ठो···छत्तिवण्णो।

शिरायां वा ॥ २६६ ॥

शिराशब्दे आदेश्छो वा भवति। छिरा सिरा।

शिरा शब्द में आदि (वर्ण) का छ विकल्प से होता है। उदा०—छिरा, सिरा।

लुग् भाजनदनुजराजकुले जः सस्वरस्य न वा ॥ २६७ ॥

एषु स-स्वर-जकारस्य लुग् वा भवति। भाणं भायणं। दणुवहो[2] दणुअवहो। राउलं रायउलं।

भाजन, दनुज और राजकुल शब्दों में, स्वर सहित जकार का लोप विकल्प से होता है। उदा०—भाणं···रायउलं।

व्याकरणप्राकारागते कगोः ॥ २६८ ॥

एषु को गश्च सस्वरस्य लुग् वा भवति। वारणं वायरणं। पारो पायारो। आओ। आगओ।

व्याकरण, प्राकार, और आगत शब्दों में, स्वरसहित क् और ग् का विकल्प से लोप होता है। उदा०—वारणं···आगओ।

किसलयकालायसहृदये यः ॥ २६९ ॥

एषु सस्वर-यकारस्य लुग् वा भवति। किसलं किसलयं। कालासं कालायसं। महण्ण[3]वसमा सहिआ। [4]जाला ते सहिअएहि घेप्पंति निसम[5]-णुप्पिअहि अस्स हिअयं।

किसलय, कालायस और हृदय शब्दों में स्वर सहित यकार का लोप विकल्प से होता है। उदा०—किसलं···हिअयं।

---

१. क्रमसे—षष्ठ। षष्ठी। षट्पद। षण्मुख। शमी। शाव। सुधा। सप्तपर्ण।

२. दनुजवध।

३. महार्णवसमाः सहृदयाः।

४. यदा ते सहृदयैः गृह्यन्ते।

५. निशमन-अर्पित-हृदयस्य हृदयम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुर्गादेव्युदुम्बरपादपतनपादपीठान्तर्दः ॥ २७० ॥

एषु सस्वरस्य दकारस्य अन्तर्मध्ये वर्तमानस्य लुग् वा भवति। दुग्गा-वी दुग्गा-एवी। उम्बरो उउम्बरो। पावडणं पायवडणं। पावीढं पायवीढं। अन्तरिति किम्। दुर्गादेव्यामादौ मा भूत्।

दुर्गादेवी, उदुम्बर, पादपतन और पादपीठ शब्दों में, अन्तर्‌यानी मध्य में (बीच में) रहने वाले दकार का स्वर के साथ विकल्प से लोप होता है। उदा०—दुग्गावी··· पायवीढं। मध्य में होने वाले (दकार का) ऐसा क्यों कहा है? (कारण दुर्गादेवी शब्द में पहले दकार को यह नियम लागू न पड़े, इसलिए)।

यावत्तावज्जीवितावर्तमानावटप्रावारकदेवकुलैवमेवे वः ॥ २७१ ॥

यावदादिषु सस्वर-वकारस्यान्तर्वर्तमानस्य लुग् वा भवति। जा जाव। ता ताव। जीअं जीविअं। अत्तमाणो आवत्तमाणो। अडो अवडो। पारओ पावारओ। देउलं देवउलं। एमेव एवमेव। अन्तरित्येव। एवमेवेन्त्यस्य न भवति।

इत्याचार्यहेमचंद्रविरचितायां सिद्धहेमचन्द्राभिधानस्वोपज्ञ-
शब्दानुशासनवृत्तौ अष्टमस्याध्यायस्य प्रथमः पादः।

यावत्, तावत्, जीवित, आवर्तमान, अवट, प्रावारक, देवकुल, और एवमेव शब्दों में, मध्य में/बीच में रहने वाले वकार का स्वर के साथ विकल्प से लोप होता है। उदा०—जा·········एवमेव। मध्य में रहने वाले ही वकार का विकल्प से लोप होता है; इसलिए एवमेव शब्द में अन्त्य (वकार) का (विकल्प से लोप) नहीं होता है।

[आठवें अध्याय का पहला पाद समाप्त हुआ।]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वितीयः पादः

संयुक्तस्य ॥ १ ॥

अधिकारोऽयं ज्यायामीत् (२·११५) इति यावत्। यदित ऊर्ध्वमनुक्रमिष्यामस्तत् संयुक्तस्येति वेदितव्यम्।

(सूत्रमें । संयुक्तस्य शब्दका) अधिकार 'ज्यायामीत्' सूत्र तक है। यहाँ से आगे हम क्रमसे जो कहनेवाले हैं, वह संयुक्त व्यंजनके बारेमें होता है ऐसा जाने।

शक्तमुक्तदष्टरुग्णमृदुत्वे को वा ॥ २ ॥

एषु संयुक्तस्य को वा भवति। सक्को सत्तो। मुक्को मुत्तो। डक्को दट्ठो। लुक्को लुग्गो। मा उक्कं मा उत्तणं।

शक्त, मुक्त, दष्ट, रुग्ण और मृदुल शब्दोंमें, संयुक्त व्यंजनका क विकल्पसे होता है। उदा—सक्को··· ··· ···मा उत्तणं।

क्षः खः क्वचित्तु छझौ ॥ ३ ॥

क्षस्य खो भवति। [1]खओ। लक्खणं। क्वचित्तु छझावपि। खीणं[2] छीणं झीणं। झिज्जइ।

क्ष का ख होता है। उदा०—खओ, लक्खणं। परंतु क्वचित् (क्ष के) छ और झ भी होते हैं। उदा०—खीणं···झिज्जइ।

ष्कस्कयोर्नाम्नि ॥ ४ ॥

अनयोर्नाम्नि संज्ञायां खो भवति। ष्क। पोक्खरं[3]। पोक्खरिणी। निक्खं। स्क[4]। खंधो। खंधावारो। अवक्खंदो। नाम्नीति किम्। [5]दुक्करं। निक्कम्पं। निक्कओ। नमोक्कारो। सक्कयं। सक्कारो। तक्करो।

ष्क और स्क (ये संयुक्त व्यंजन) संज्ञामें यानी संज्ञावाचक शब्दोंमें होनेपर, उनका क्ष होता है। उदा—ष्क (का ख) :—पोक्खरं··· ···निक्खं।

---

१. क्रमसे:-क्षय/लक्षण। २. क्रमसे :-क्षीण/क्षीयते।

३. क्रमसे:-पुष्कर। पुष्करिणी। निष्क। ४. क्रमसे:-स्कन्ध। स्कन्धावार। अवस्कन्द।

५. क्रमसे :-दुष्कर। निष्कम्प। निष्क्रय। नमस्कार। संस्कृत। संस्कार। तस्कर। 'सक्कार' के लिए श्री वैद्यजीने शब्द सूचीमें दिया हुआ 'सत्कार' यह संस्कृत शब्द योग नहीं है; 'संस्कार' ऐसा मूल संस्कृत शब्द आवश्यक है; क्योंकि यहाँ 'स्क' संयुक्त व्यंजन आवश्यक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुष्कस्कन्दे वा ॥ ५ ॥

अनयोः ष्कस्कयोः खो वा भवति । सुक्खं सुक्कं । खन्दो कन्दो ।

शुष्क और स्कन्द इन दोनों शब्दों में ष्क और स्क का विकल्प से ख होता है। उदा०—सुक्खं......कन्दो ।

क्ष्वेटकादौ ॥ ६ ॥

क्ष्वेटकादिषु संयुक्तस्य खो भवति । खेडओ । क्ष्वेटकशब्दो विषपर्यायः । क्ष्वोटकः खोडओ । स्फोटकः खोडओ । स्फेटकः खेडओ । स्फेटिकः खेडिओ ।

क्ष्वेटक इत्यादि शब्दोंमे संयुक्त व्यंजनका ख होता है । उदा०—खेडओ; (यह) क्ष्वेटक शब्द विषशब्दका पर्यायवाचक है; क्ष्वोटकः......खेडिओ ।

स्थाणावहरे ॥ ७ ॥

स्थाणौ संयुक्तस्य खो भवति हरश्चेद् वाच्यो न भवति । खाणू । अहर इति किम् । थाणुणो[1] रेहा ।

स्थाणु शब्दमें संयुक्त व्यंजनका ख होता है । परंतु यदि (स्थाणु शब्दसे भगवान्) शंकर अर्थ अभिप्रेत हो, तो (स्थका ख) नहीं होता हैं । उदा—खाणू । (स्थाणु शब्दका) अर्थ शंकर न होनेपर ऐसा क्यों कहा है ?

(कारण स्थाणु शब्दका अर्थ शंकर हो, तो स्थ का ख नहीं होता है । उदा०—) थाणुणो रेहा ।

स्तम्भे स्तो वा ॥ ८ ॥

स्तम्भशब्दे स्तस्य खो वा भवति । खम्भो थम्भो । काष्ठादिमयः ।

स्तम्भ शब्दमें स्त का ख विकल्प से होता है । उदा०—खम्भो, थम्भो ।

(यह स्तम्भ) काष्ठ इत्यादिका बना हुआ है ।

थठावस्पन्दे ॥ ९ ॥

स्पन्दाभाववृत्तौ स्तम्भे स्तस्य थठौ भवतः । थम्भो । ठम्भो । स्तम्भ्यते थम्भिज्जइ ठम्भिज्जइ ।

स्पंदका (= स्पंदनका, हलचलका) अभाव अर्थमें होनेवाले स्तम्भ शब्दमें स्त के थ और ठ होते हैं । उदा०—थंभो......ठंभिज्जइ ।

---

१. स्थाणोः रेखा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रक्ते गो वा ॥ १० ॥

रक्तशब्दे संयुक्तस्य गो वा भवति। रग्गो रत्तो।

रक्त शब्दमें संयुक्त व्यंजनका विकल्पसे ग होता है। उदा --रग्गो, रत्तो।

शुल्के ङ्गो वा ॥ ११ ॥

शुल्कशब्दे संयुक्तस्य ङ्गो वा भवति। सुङ्गं सुक्कं।

शुल्क शब्दमें संयुक्त व्यंजनका ङ्ग विकल्पसे होता है। उदा०-सुङ्ग, सुक्क।

कृत्तिचत्वरे चः ॥ १२ ॥

अनयोः संयुक्तस्य चो भवति। किच्ची। चच्चरं।

कृत्ति और चत्वर इन दो शब्दोंमें, संयुक्त व्यंजनका च होता हैं। उदा०-किच्ची, चच्चरं।

त्योचैत्ये ॥ १३ ॥

चैत्यवर्जिते त्यस्य चो भवति। [1]सच्चं। पच्चअ। अचैत्य इति किम्। चइत्तं।

चैत्य शब्द छोड़कर, (अन्य शब्दोंमें) त्य का च होता है। उदा-सच्चं,पच्चओ। चैत्य शब्द छोड़कर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण चैत्य शब्दमें, त्य का च नहीं होता है। उदा०--) चइत्तं।

प्रत्यूषे षश्च हो वा ॥१४ ॥

प्रत्यूषे त्यस्य चो भवति तत्संनियोगे च षस्य हो वा भवति। पच्चूहो पच्चूसो।

प्रत्यूष शब्दमें त्य का च होता है, और उसके सांनिध्यमें ष का ह विकल्प से होता है। उदा०--पच्चूहो, पच्चूसो।

त्वथ्वद्ध्वां चछजझाः क्वचित् ॥ १५ ॥

एषां यथासंख्यमेते क्वचिद् भवन्ति। भुक्त्वा भोच्चा। ज्ञात्वा णच्चा। श्रुत्वा सोच्चा। पृथ्वी पिच्छी विद्वान्। विज्जं। बुद्ध्वा बुज्झा।

भोच्चा[2] सयलं पिच्छि विज्जं बुज्झा अणण्णयग्गामि।
चइ ऊण तवं काउं संती पत्तो सिवं परमं ॥

---

१. क्रमसे :--सत्य। प्रत्यय।

२. भुक्त्वा सकलां पृथ्वीं विद्वान् बुध्वा अनन्यकगामि।
त्यक्त्वा तपः कृत्वा शान्तिः प्राप्तः शिवं परमम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्व, थ्व, द्व और ध्व इनके क्वचित् अनुक्रमसे च, छ, ज और झ (ये विकार) होते हैं। उदा—भुक्त्वा……बुज्झा; भोच्चा……परमं।

वृश्चिके श्चेञ्चुर्वा ॥ १६ ॥

वृश्चिके श्चेः सस्वरस्य स्थाने ञ्चुरादेशो वा भवति। छापवादः। विञ्चुओ विंचुओ। पक्षे विञ्छिओ।

वृश्चिक शब्दमें स्वरसहित श्चि के स्थान ञ्चु आदेश विकल्पसे होता है। (श्चका) छ होता है (देखिए सूत्र २:२१) इस नियमका अपवाद प्रस्तुत नियम है।

उदा०—विञ्चुओ, विंचुओ। (विकल्प—) पक्षमें:-विञ्छिओ।

छोक्ष्यादौ ॥ १७ ॥

अक्ष्यादिषु संयुक्तस्य छो भवति। खस्यापवादः। अच्छि। उच्छू। लच्छी। कच्छो। छीअं। छीरं। सरिच्छो। वच्छो। मच्छिआ। छेत्तं। छुहा। दच्छो। कुच्छी। वच्छं। छुण्णो। कच्छा। छारो। कुच्छेअयं। छुरो। उच्छा। छयं। सारिच्छं॥ अक्षि। इक्षु। लक्ष्मी। कक्ष। क्षुत। क्षीर। सदृक्ष। वृक्ष। मक्षिका। क्षेत्र। क्षुध्। दक्ष। कुक्षि। वक्षस्। क्षुण्ण। कक्षा। क्षार। कौक्षेयक। क्षुर। उक्षन्। क्षत। सादृश्य। क्वचित् स्थगितशब्देपि। छइअं। आर्षे। इक्खू। खीरं। सारिक्खमित्याद्यपि दृश्यते।

अक्षि इत्यादि शब्दोंमें संयुक्त व्यंजनका छ होता है। (क्ष का) ख होता है (देखिए सूत्र २·३) इस नियमका अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा—अच्छि…सारिच्छं (इनके मूल संस्कृत शब्द क्रमसे ऐसे:—) अक्षि…सादृक्ष्य। क्वचित् स्थगित शब्दमें भी (स्थ इस संयुक्त व्यंजनका छ होता है। उदा०—)छइअं। आर्ष प्राकृतमें [1]इक्खू, खीरं, सारिक्खं इत्यादि वर्णान्तर भी दिखाई देते हैं।

क्षमायां कौ ॥ १८ ॥

कौ पृथिव्यां वर्तमाने क्षमाशब्दे संयुक्तस्य छो भवति। छमा पृथिवी। लाक्षणिकस्यापि क्ष्मादेशस्य भवति। क्ष्मा छमा। काविति किम्। खमा क्षान्तिः।

कु यानी पृथ्वी इस अर्थमें होनेवाले क्षमा शब्दमें संयुक्त व्यंजनका छ होता है। उदा—छमा (यानी) पृथिवी ऐसा (क्षमा शब्दका) अर्थ है। व्याकरणके नियमानुसार क्ष्मा शब्दके आदेशमें से (संयुक्त व्यंजनका भी छ) होता है। उदा—क्ष्मा छमा। कु (यानी पृथ्वी इस) अर्थमें होनेवाले क्षमा शब्दमें) ऐसा क्यों कहा है? (कारण क्षमा

१. क्रमसे:—इक्षु। क्षीर। सादृश्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शब्दका अर्थ पृथ्वी न हो,तो उसमें से क्ष का छ नहीं होता है । उदा०—)खमा (यानी) क्षांति (=क्षमा) ।

ऋक्षे वा ॥ १९ ॥

ऋक्षशब्दे संयुक्तस्य छो वा भवति । रिच्छं रिक्खं । रिच्छो रिक्खो । कथं छूढं क्षिप्तम् । वृक्षक्षिप्तयो रुक्खछूढो (२·१२७) इति भविष्यति ।

ऋक्ष शब्दमें संयुक्त व्यंजनका छ विकल्पसे होता है । उदा०—रिच्छं···रिक्खो । (प्रश्नः—) क्षिप्तम् शब्दसे छूढं वर्णान्तर कैसे हुआ ? (उत्तरः—) 'वृक्षक्षिप्तयोरुक्ख सूत्रानुसार [आदेश होकर क्षिप्त शब्दसे छूढ वर्णान्तर] होगा ।

क्षण उत्सवे ॥ २० ॥

क्षणशब्दे उत्सवाभिधायिनि संयुक्तस्य छो भवति । छणो । उत्सव इति किम् । खणो ।

उत्सव अर्थ कहनेवाले क्षण शब्दमें संयुक्त व्यंजनका छ होता है । उदा--क्षणो । उत्सव (अर्थ कहनेवाले क्षण शब्दमें) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण उत्सव अर्थ न होने-पर, छ नहीं होता है । उदा--खणो (कालमापनमें) ।

ह्रस्वात् थ्यश्चत्सप्सामनिश्चले ॥ २१ ॥

ह्रस्वात् परेषां थ्यश्चत्सप्सां छो भवति निश्चले तु न भवति । थ्य । [1]पच्छं । पच्छा । मिच्छा । श्च । [2]पच्छिमं । अच्छेरं । पच्छा । त्स । उच्छाहो[3] । मच्छलो । मच्छरो । संवच्छलो संवच्छरो । चिइच्छइ । प्स । लिच्छइ[4] । जुगुच्छइ । अच्छरा । ह्रस्वादिति किम् । [5]ऊसारिओ । अनिश्चल इति किम् । निच्चलो । आर्षे तथ्ये चोपि । तच्चं ।

ह्रस्व स्वर के आगे होने वाले थ्य, श्च, त्स और प्स इनका छ होता है; परन्तु निश्चल शब्द में मात्र (श्च का छ) नहीं होता है । उदा०—थ्य (का छ):—पच्छं ···मिच्छा । श्च (का छ):—पच्छिमं···पच्छा । त्स (का छ :—उच्छाहो······ चिइच्छइ । प्स (का छ):—लिच्छइ···अच्छरा । ह्रस्व स्वर के आगे होने वाले ऐसा क्यों कहा है ? (कारण पीछे स्वर ह्रस्व न हो, तो छ नहीं होता है । उदा०—) ऊसारिओ । निश्चल शब्द में (श्च का छ) नहीं होता है ऐसा क्यों कहा है ? (कारण निश्चल शब्द में श्च का च होता है । उदा०—निच्चलो । आर्ष प्राकृत में, तथ्य शब्द में से (थ्य का) च भी होता है । उदा०— तच्चं ।

---

१. क्रमसे:-पथ्य । पथ्या । मिथ्या । २. क्रमसे :-पश्चिम । आश्चर्य । पश्चात् ।
३. क्रमसे:-उत्साह । मत्सर । संवत्सर । चिकित्सति ।
४. क्रमसे:-लिप्सति । जुगुप्सति । अप्सरस् । ५. उत्सारित ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सामर्थ्योत्सुकोत्सवे वा ॥ २२ ॥

एषु संयुक्तस्य छो वा भवति। सामच्छं सामत्थं। उच्छुओ ऊसुओ। उच्छवो ऊसवो।

सामर्थ्य, उत्सुक और उत्सव शब्दों में, संयुक्त व्यञ्जन का छ विकल्प से होता है। उदा०—सामच्छं······ऊसवो।

स्पृहायाम् ॥ २३ ॥

स्पृहाशब्दे संयुक्तस्य छो भवति। फस्यापवादः। छिहा। बहुलाधिकारात् क्वचिदन्यदपि। [1]निप्पिहो।

स्पृहा शब्द में संयुक्त व्यञ्जन का छ होता है। (स्प का) फ होता है (सूत्र २·५३) नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—छिहा। बहुल का अधिकार होने से, क्वचित् (स्पृहा शब्द में छ न होते) निरालाभी (वर्णान्तर) होता है। उदा०—निप्पिहो।

द्यय्यर्यां जः ॥ २४ ॥

एषां संयुक्तानां जो भवति। द्य। [2]मज्जं। अवज्जं। वेज्जो। जुई। जोओ। य्य। [3]जज्जो। सेज्जा। र्य। भज्जा[4]। चौर्यसमत्वात् भारिआ। [5]कज्जं। वज्जं। पज्जाओ। पज्जत्तं। मज्जाया।

द्य, य्य, और र्य इन संयुक्त व्यञ्जनों का ज होता है। उदा०—द्य (का ज):—मज्जं···जोओ। य्य (का ज):—जज्जो, सेज्जा। र्य (का ज):—भज्जा, (यह भार्याशब्द) चौर्यादि शब्दों के समान होने से, (उसमें स्वरभक्ति होकर) भारिआ (ऐसा भी वर्णान्तर होता है); कज्जं···मज्जायां।

अभिमन्यौ जञ्जौ वा ॥ २५ ॥

अभिमन्यौ संयुक्तस्य जो ञ्जश्च वा भवति। अहिमज्जू अहिमञ्जू। पक्षे। अहिमन्नू। अभिग्रहणादिह न भवति।

अभिमन्यु शब्द में संयुक्त व्यञ्जन के ज (यानी ज्ज) और ञ्ज विकल्प से होते हैं। उदा०—अहि···मञ्जू। (विकल्प—) पक्ष में:—अहिमन्नू। (अभिमन्यु शब्द में, मन्यु शब्द के पीछे) अभि शब्द का निर्देश होने से, (अभि शब्द पीछे न होने वाले) यहाँ (यानी आगे दिए केवल मन्यु शब्द में ज और ञ्ज) नहीं होते हैं। उदा०—मन्नू।

---

१. निःस्पृह।
२. क्रमसे—मद्य। अवद्य। वैद्य। द्युति। द्योत।
३. क्रमसे—जय्य। शय्या।
४. भार्या।
५. क्रमसे—कार्य। वर्य। पर्याय। पर्याप्त। मर्यादा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साध्वसध्यह्यां झः ॥ २६ ॥

साध्वसे संयुक्तस्य ध्यह्ययोश्च झो भवति। सज्झसं। ध्य। बज्झए[1]। झाणं। उवज्झाओ। सज्झाओ। सज्झं। विञ्झो। ह्य। [2]सज्झो। मज्झं। गुज्झं। णज्झइ।

साध्वस शब्द में से संयुक्त व्यञ्जन का, और ध्य तथा ह्य इन संयुक्त व्यञ्जनों का झ होता है। उदा०—सज्झसं। ध्य (का झ):—बज्झए…विञ्झो। ह्य (का झ):—सज्झो…णज्झइ।

ध्वजे वा ॥ २७ ॥

ध्वजशब्दे संयुक्तस्य झो वा भवति। झओ धओ।

ध्वज शब्द में संयुक्त व्यञ्जन का झ विकल्प से होता है। उदा०—झओ, धओ।

इन्धौ झा ॥ २८ ॥

इन्धौ धातौ संयुक्तस्य झा इत्यादेशो भवति। समिज्झाइ[3]। विज्झाइ।

इन्ध् धातु में संयुक्त व्यञ्जन को झा आदेश होता है। उदा०—समिज्झाइ, विज्झाइ।

वृत्तप्रवृत्तमृत्तिकापत्तनकदर्थिते टः ॥ २९ ॥

एषु संयुक्तस्य टो भवति। वट्टो। पयट्टो। मट्टिआ। पट्टणं। कवट्टिओ।

वृत्त, प्रवृत्त, मृत्तिका, पत्तन और कदर्थित शब्दों में, संयुक्त व्यञ्जन का ट होता है। उदा०—वट्टो…कवट्टिओ।

र्तस्याधूर्तादौ ॥ ३० ॥

र्तस्य टो भवति। धूर्तादीन् वर्जयित्वा। [4]केवट्टो। वट्टी। जट्टो। पयट्टइ। वट्टुलं। रायवट्टयं। नट्टई। संवट्टिअं। अधूर्तादाविति किम्। धुत्तो। कित्ती। वत्ता। आवत्तणं। निवत्तणं। पवत्तणं। संवत्तणं। आवत्तओ। निवत्तओ। निव्वत्तओ। पवत्तओ। संवत्तओ। वत्तिआ। वत्तिओ। कत्तिओ। उक्कत्तिओ। कत्तरी। मुत्ती। मुत्तो। मुहुत्तो। बहुलाधिकाराद्

---

१. क्रमसे—बध्यते। ध्यान। उपाध्याय। स्वाध्याय। साध्य। विन्ध्य।

२. क्रमसे—सह्य। मह्यम्। गुह्य। नह्यते।

३. क्रमसे—√सम् + इन्ध्। √वि + इन्ध्।

४. क्रमसे:—कैवर्त। वर्तिका। जर्त। प्रवर्तते। वर्तुल। राजवार्तिका। नर्तकी। संवर्तित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वट्टा। धूर्त। कीर्ति। वार्ता। आवर्त्तन। निवर्तन। प्रवर्तन। संवर्तन। आवर्तक। निवर्तक। निर्वर्तक। प्रवर्तक। संवर्तक। वर्तिका। वार्तिक। कार्त्तिक। उत्कर्तित। कर्तरि। मूर्ति। मूर्त। मुहूर्त। इत्यादि।

धूर्त इत्यादि शब्द छोड़कर, (अन्य शब्दोंमें) र्त का ट होता है उदा—केवट्टो... संवट्टिअं। धूर्त इत्यादि शब्द छोड़कर ऐसा क्यों कहा है? (कारण धूर्त इत्यादि शब्दोंमे र्त का ट न होते, त्त होता है। उदा—) धुत्तो...मुहुत्तो। बहुलका अधिकार होनेसे (धूर्तादि शब्दोंमें से वार्ता शब्दका वर्णान्तर) वट्टा (ऐसा भी होता है)। (धूर्तादि शब्दोंके मूल संस्कृत शब्द क्रमसे ऐसे हैं :—) धूर्त...मुहूर्त, इत्यादि।

वृन्ते ण्टः ॥ ३१ ॥

वृन्ते संयुक्तस्य ण्टो भवति। वेण्टं। [1]तालवेण्टं।

वृन्त शब्दमें संयुक्त व्यंजनका ण्ट होता है। उदा—वेण्टं, तालवेण्टं।

ठोऽस्थिविसंस्थुले ॥ ३२ ॥

अनयोः संयुक्तस्य ठो भवति। अट्ठी। विसंठुलं।

अस्थि और विसंस्थुल इन दो शब्दोंमें संयुक्त व्यंजनका ठ होता है। उदा०—अट्ठी, विसंठुलं।

स्त्यानचतुर्थार्थे वा ॥ ३३ ॥

एषु संयुक्तस्य ठो वा भवति। ठीणं थीणं। चउट्ठो चउत्थो। अट्ठो प्रयोजनम्। अत्थो धनम्।

स्त्यान, चतुर्थ, और अर्थ इन शब्दोंमें संयुक्त व्यंजनका विकल्पसे ठ होता है। उदा०—ठीणं...च उत्थो; अट्ठो (यानी) प्रयोजन, (और) अत्थो (यानी) धन।

ष्टस्यानुष्ट्रेष्टासंदष्टे ॥ ३४ ॥

उष्ट्रादिवर्जिते ष्टस्य ठो भवति। [2]लट्ठी। मुट्ठी। दिट्ठी। सिट्ठी। पुट्ठो। कट्ठं। सुरट्ठा। इट्ठो। अणिट्ठं। अनुष्ट्रेष्टासंदष्ट इति किम्। उट्टो। [3]इट्टाचुण्णं व। संदट्टो।

उष्ट्र इत्यादि—उष्ट्र, इष्टा, संदष्ट-शब्द छोड़कर, (अन्य शब्दोंमे) ष्ट का ठ होता है। उदा०—लट्ठी...अणिट्ठं। उष्ट्र इष्टा, संदष्ट शब्द छोड़कर ऐसा क्यों कहा है? (कारण इन शब्दोंमें ष्ट का ठ नहीं होता है; उसका ट्ट होता है। उदा०—) उट्टो... संदट्टो।

---

१. तालवृन्त।

२. क्रमसे :—यष्टि। मुष्टि। दृष्टि। सृष्टि। पृष्ट। कष्ट। सुराष्ट्र। इष्ट। अनिष्ट।

३. इष्टाचूर्ण इव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गर्ते डः ॥ ३५ ॥

गर्तशब्दे संयुक्तस्य डो भवति । टापवादः । गड्डो । गड्डा ।

गर्त शब्दमें संयुक्त व्यंजनका ड होता है । (र्त का) ट होता है (सूत्र २·३० देखिए नियमका अपवाद प्रस्तुत नियम है । उदा०—गड्डो, गड्डा ।

संमर्दवितर्दिविच्छर्दच्छर्दिकपर्दमर्दिते र्दस्य ॥ ३६ ॥

एषु र्दस्य डत्वं भवति । संमड्डो । विअड्डी । विच्छड्डो । छड्डइ[1] । छड्डी । कवड्डो । मड्डिओ । [2]संमड्डिओ ।

संमर्द, वितर्दि, विच्छर्द, छर्दि, कपर्द, और मर्दित शब्दोंमें र्द का ड होता है । उदा०—संमड्डो···संमड्डिओ ।

गर्दभे वा ॥ ३७ ॥

गर्दभे र्दस्य डो वा भवति । गड्डहो गद्दहो ।

गर्दभ शब्दमें र्द का ड विकल्प से होता हैं । उदा०—गड्डहो गद्दहो ।

कन्दरिकाभिन्दिपाले ण्डः ॥ ३८ ॥

अनयोः संयुक्तस्य ण्डो भवति : कण्डलिआ । भिण्डिवालो ।

कन्दरिका और भिन्दिपाल इन दो शब्दोंमें, संयुक्त व्यंजनका ण्ड होता हैं । उदा०—कण्डलिआ, भिण्डिवालो ।

स्तब्धे ठढौ ॥ ३९ ॥

स्तब्धे संयुक्तयोर्यथाक्रमं ठढौ भवतः । ठड्ढो ।

स्तब्ध शब्द में संयुक्त व्यञ्जनों के यथाक्रम ठ और ढ होते हैं । उदा०—ठड्ढो ।

दग्धविदग्धवृद्धिवृद्धे ढः ॥ ४० ॥

एषु संयुक्तस्य ढो भवति । दड्ढो । विअड्ढो । वुड्ढी । वुड्ढो । क्वचिन्न भवति । [3]विद्धकइनिरूविअं ।

दग्ध, विदग्ध, वृद्धि, और वृद्ध शब्दो में संयुक्त व्यंजन का ढ होता है । उदा०—दड्ढो···बुड्ढो । क्वचित् (ऐसा ढ) नहीं होता है । उदा०—विद्ध···विअं ।

श्रद्धर्द्धिमूर्धार्धेन्ते वा ॥ ४१ ॥

एषु अन्ते वर्तमानस्य संयुक्तस्य ढो वा भवति । सड्ढा सद्धा । इड्ढी रिद्धी । मुण्ढा मुद्धा । अड्ढं अद्धं ।

---

१. छड्डुधातु मुच् धातुका आदेश हैं (सूत्र ४·९१ देखिए) ।

२. संमर्दित ।

३. वृद्ध—कवि (पि)—निरूपितम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रद्धा, ऋद्धि, मूर्धन्, और अर्ध शब्दों में अन्त में रहने वाले संयुक्त व्यंजन का ढ विकल्प से होता है। उदा०—सड्ढा··· ···अद्धं।

म्नज्ञोर्णः ॥ ४२ ॥

अनयोर्णो भवति। म्न। [1]निण्णं। पज्जुण्णो। ज्ञ। णाणं[2]। सण्णा। पण्णा। विण्णाणं।

म्न और ज्ञ इन दोनों का ण होता है। उदा०—म्न (का ण):—निण्णं, पज्जुण्णो। ज्ञ (का ण):—णाणं··· ···विण्णाणं।

पञ्चाशत्-पञ्चदश-दत्ते ॥ ४३ ॥

एषु संयुक्तस्य णो भवति। पण्णासा। पण्णरह। दिण्णं।

पञ्चाशत्, पञ्चदश, और दत्त इन शब्दों में संयुक्त व्यंजन का ण होता है। उदा०—पण्णासा··· ···दिण्णं।

मन्यौ न्तो वा ॥ ४४ ॥

मन्यु शब्दे संयुक्तस्य न्तो वा भवति। मन्तू मन्नू।

मन्यु शब्द में व्यंजन का न्त विकल्प से होता है। उदा०—मन्तू, मन्नू।

स्तस्य थोसमस्तस्तम्बे ॥ ४५ ॥

समस्तस्तम्बवर्जिते स्तस्य थो भवति। [3]हत्थो। थुई। थोत्तं। थोअं। पत्थरो। पसत्थो। अत्थि। सत्थि। असमस्तस्तस्तम्ब इति किम्। समत्तो। तम्बो।

समस्त और स्तम्ब शब्द छोड़कर, (अन्य शब्दों में) स्त का थ होता है। उदा०—हत्थो··· ···सत्थि। समस्त और स्तम्ब शब्द छोड़ कर ऐसा क्यों कहा है? (कारण उन शब्दों में स्त का थ न होते, त होता है। उदा०—) समत्तो, तम्बो।

स्तवे वा ॥ ४६ ॥

स्तवशब्दे स्तस्य थो वा भवति। थवो तवो।

स्तव शब्द में स्त का थ विकल्प होता है। उदा०—थवो, तवो।

पर्यस्ते थटौ ॥४७॥

पर्यस्ते स्तस्य पर्यायेण थटौ भवतः। पल्लत्थो पल्लट्टो।

---

१. क्रम से:—निम्न। प्रद्युम्न। २. क्रम से:—ज्ञान। संज्ञा। प्रज्ञा। विज्ञान।

३. क्रम से:—हस्त। स्तुति। स्तोत्र। स्तोक। प्रस्तर। प्रशस्त। अस्ति। स्वस्ति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्यस्त शब्द में, स्त के पर्याय से थ और ट होते हैं। उदा०—पल्लत्थो, पल्लट्टो।

वोत्साहे थो हश्च रः ॥ ४८ ॥

उत्साहशब्दे संयुक्तस्य थो वा भवति तत्संनियोगे च हस्य रः। उत्थारो उच्छाहो।

उत्साह शब्द में संयुक्त व्यञ्जन का थ विकल्प से होता है और उसके सांनिध्य में ह का र होता है। उदा०—उत्थारो; उच्छाहो।

आश्लिष्टे लधौ ॥ ४९ ॥

आश्लिष्टे संयुक्तयोर्यथासंख्यं ल ध इत्येतौ भवतः। आलिद्धो।

आश्लिष्ट शब्द में संयुक्त व्यञ्जनों के क्रम से ल और ध ऐसे ये (विकार) होते हैं। उदा०—आलिद्धो।

चिह्ने न्धो वा ॥ ५० ॥

चिह्ने संयुक्तस्य न्धो वा भवति। ण्हापवादः। पक्षे सोऽपि। चिन्धं इन्धं चिण्हं।

चिह्न शब्द में संयुक्त व्यञ्जन का न्ध विकल्प से होता है। (ह्न का) ण्ह होता है। (सूत्र २·७५) नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। (विकल्प—) पक्ष में वह भी नियम लगता है। उदा०—चिन्धं···चिण्हं।

भस्मात्मनोः पो वा ॥ ५१ ॥

अनयोः संयुक्तस्य पो वा भवति। भप्पो भस्सो। अप्पा अप्पाणो। पक्षे अत्ता।

भस्मन् और आत्मन् इन दो शब्दों में संयुक्त व्यञ्जन का विकल्प से प होता है। उदा०—भप्पो···अप्पाणो। (विकल्प—) पक्ष में अत्ता (ऐसा आत्मन् शब्द का वर्णान्तर होता है)।

ड्मक्मोः ॥ ५२ ॥

ड्मक्मोः पो भवति। कुड्मलम् कुम्पलं। रुक्मिणी रुप्पिणी। क्वचित् च्मोऽपि। रुच्मी रुप्पी।

ड्म और क्म का प होता है। उदा०—कुड्मलं···रुप्पिणी। क्वचित् (क्म का) च्म भी (होता है। उदा०—) रुच्मी, रुप्पी।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

ष्पस्पयोः फः ॥ ५३ ॥

ष्पस्पयोः फो भवति । पुष्पम् पुप्फं । शष्पम् सप्फं । निष्पेषः निप्फेसो । निष्पावः निप्फावो । स्पन्दनम् फंदणं । प्रतिस्पर्धिन् पाडिप्फद्धी । बहुलाधिकारात् क्वचिद् विकल्पः । [1]बुहप्फई बुहप्पई । क्वचिन्न भवति । [2]निप्पहो । निप्पुंसणं । परोप्परं ।

ष्प और स्प का फ होता है । उदा०—(ष्प का फ):—पुष्पम्…निप्फावो । (स्प का फ):—स्पन्दनम्…पाडिप्फद्धी । बहुल का अधिकार होने से क्वचित् विकल्प से होता है । उदा० —बुहप्फई, बुहप्पई । क्वचित् (ष्प और स्प का फ) नहीं होता है । उदा०—निप्पहो …परोप्परं ।

भीष्मे ष्मः ॥ ५४ ॥

भीष्मे ष्मस्य फो भवति । भिप्फो ।

भीष्म शब्द में ष्म का फ होता है । उदा०—भिप्फो ।

श्लेष्मणि वा ५५ ॥

श्लेष्मशब्दे ष्मस्य फो वा भवति । सेफो सिलिम्हो ।

श्लेष्मन् शब्द में ष्म का फ विकल्प से होता है । उदा०—सेफो, सिलिम्हो ।

ताम्राम्रे म्बः ॥ ५६ ॥

अनयोः संयुक्तस्य मयुक्तो बो भवति । तम्बं अम्बं । अम्बिर तम्बिर इति देश्यौ ।

ताम्र और आम्र इन दो शब्दों में संयुक्त व्यञ्जन का मकार से युक्त ब (= म्ब) होता है । उदा —तम्बं, अम्बं । अम्बिर, तम्बिर शब्द (मात्र) देश्य शब्द होते हैं ।

ह्वो भो वा ॥ ५७ ॥

ह्वस्य भो वा भवति । जिब्भा जीहा ।

ह्व का भ विकल्प से होता है । उदा०—जिब्भा, जीहा ।

वा विह्वले वौ वश्च ॥ ५८ ॥

विह्वले ह्वस्य भो वा भवति तत्संनियोगे च विशब्दे वस्य वा भो भवति । भिब्भलो विब्भलो विब्भलो विहलो ।

विह्वल शब्द में ह्व का भ विकल्प होता है और उसके सानिध्य में 'वि' इस शब्द में से व् का भ् विकल्प से होता है । उदा०—भिब्भलो…विहलो ।

१. बृहस्पति । २. क्रमसे —निष्प्रभ । निस्पर्शन । परस्पर ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वोर्ध्वे ॥ ५९ ॥

ऊर्ध्वशब्दे संयुक्तस्य भो वा भवति। उब्भं उद्धं।

ऊर्ध्व शब्द में संयुक्त व्यञ्जन का भ विकल्प से होता है। उदा०—उब्भं,उद्धं।

कश्मीरे म्भो वा ॥ ६० ॥

कश्मीरशब्दे संयुक्तस्य म्भो वा भवति। कम्भारा कम्हारा।

कश्मीर शब्द में संयुक्त व्यञ्जन का म्भ विकल्प से होता है। उदा०—कम्भारा; कम्हारा।

न्मो मः ॥ ६१ ॥

न्मस्य मो भवति। अधोलोपापवादः। [1]जम्मो। वम्महो। मम्मणं।

न्म का म होता है। (संयुक्त व्यञ्जन में) अनंतर (यानी द्वितीय अवयव होनेवाले म का) लोप होता है (सूत्र २·७८) नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—जम्भो···मम्मणं।

ग्मो वा ॥ ६२ ॥

ग्मस्य मो वा भवति। युग्मम्। जुम्मं जुग्गं। तिग्मम्। तिम्मं तिग्गं।

ग्म का म विकल्प से होता है। उदा०—युग्मम्···तिग्गं।

ब्रह्मचर्यतूर्यसौन्दर्यशौण्डीर्ये र्यो रः ॥ ६३ ॥

एषु र्यस्य रो भवति। जापवादः। बम्हचेरं। चौर्यसमत्वात् बम्हचरिअं। तूरं। सुंदेरं। सोण्डीरं।

ब्रह्मचर्य, तूर्य, सौन्दर्य और शौण्डीर्य शब्दों में र्य का र होता है। (र्य का) ज होता है (सूत्र २·२४) नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—बम्हचेरं; (ब्रह्मचर्य शब्द) चौर्य शब्द के समान होने से (उसमें स्वरभक्ति होकर) बम्हचरिअं (ऐसा भी वर्णान्तर होता है); तूरं···सोंडीरं।

धैर्ये वा ॥ ६४ ॥

धैर्ये र्यस्य रो वा भवति। धीरं धिज्जं। सूरो सुज्जो इति तु सूर-सूर्य-प्रकृतिभेदात्।

धैर्य शब्द में र्य का र विकल्प से होता है। उदा०—धीरं, धिज्जं। सूरो और सुज्जो शब्द मात्र सूर और सूर्य इन दो मूल भिन्न (संस्कृत) शब्द से सिद्ध हुए हैं।

१. क्रमसे:—जन्मन्। मन्मथ। मन्मनस्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एतः पर्यन्ते ॥ ६५ ॥

पर्यन्ते एकारात् परस्य र्यस्य रो भवति। पेरन्तो। एत इति किम्। पज्जन्तो।

पर्यन्त शब्द में (प में से अ का ए होकर, उस) एकार के आगे होनेवाले र्य का र होता है। उदा०—पेरन्तो। एकार के आगे होनेवाले (र्य का) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण एकार के आगे र्य न हो, तो उसका र् न होते, ज्ज होता है। उदा०—) पज्जन्तो।

आश्चर्ये ॥ ६६ ॥

आश्चर्ये एतः परस्य र्यस्य रो भवति। अच्छेरं। एत इत्येव। अच्छरिअं।

आश्चर्य शब्द में (श्च में से अ का ए होकर, उस) एकार के आगे होनेवाले र्य का र होता है। उदा —अच्छेरं। ए के आगे (र्य) होने पर ही (उसका र होता है; वैसा न होने पर र नहीं होता है। उदा•—) अच्छरिअं।

अतो रिआररिज्जरीअं ॥ ६७ ॥

आश्चर्ये अकारात् परस्य र्यस्य रिअ, अर, रिज्ज, रीअ इत्येते आदेशा भवन्ति। अच्छरिअं अच्छअरं अच्छरिज्जं अच्छरीअं। अत इति किम्। अच्छेरं।

आश्चर्य शब्द में (श्च में से) अकार के आगे होनेवाले र्य को रिअ, अर, रिज्ज और रीअ ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा०—अच्छरिअं ... अच्छरीअं। अकार के आगे होनेवाले (र्य को) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण श्च में से अ का ए यदि न हो, तो ये आदेश न होते, सूत्र २·६६ के अनुसार) अच्छेरं (ऐसा वर्णान्तर होता है)।

पर्यस्तपर्याणसौकुमार्ये ल्लः ॥ ६८ ॥

एषु र्यस्य ल्लो भवति। पर्यस्तं पल्लट्टं पल्लत्थं। पल्लाणं। सोअमल्लं। पल्लंको इति च पल्यङ्कशब्दस्य यलोपे द्वित्वे च। पलिअंको इत्यपि चौर्यसमत्वात्।

पर्यस्त, पर्याण और सौकुमार्य शब्दों में र्य का ल्ल होता है। उदा•—पर्यस्तम् ... सोअमल्लं। पल्लंक शब्द पल्यङ्क शब्द में से य् का लोप होकर और ल् का द्वित्व होकर सिद्ध हुआ है। (पल्यङ्क शब्द का) पलिअंको ऐसा भी (वर्णान्तर होता है); कारण वह शब्द चौर्यसम शब्द है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बृहस्पतिवनस्पत्योः सो वा ॥ ६९ ॥

अनयोः संयुक्तस्य सो वा भवति। बहस्सई बहप्फई भयस्सई भयप्फई। वणस्सई। वणप्फई।

बृहस्पति और वनस्पति शब्दों में संयुक्त व्यञ्जन का स विकल्प से होता है। उदा०—बहस्सई···वणप्फई।

बाष्पे होऽश्रुणि ॥ ७० ॥

बाष्पशब्दे संयुक्तस्य हो भवति अश्रुण्यभिधेये। बाहो नेत्रजलम्। अश्रुणीति किम्। बप्फो ऊष्मा।

(बाष्प शब्द से) अश्रु अर्थ के अभिप्रेत होने पर, बाष्प शब्द में संयुक्त व्यञ्जन का ह होता है। उदा०—बाहो (यानी) नयनों का नीर, अश्रु। अश्रु अर्थ कहने का अभिप्राय होने पर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण बाष्प शब्द का अर्थ अश्रु न हो, तो ष्प का ह नहीं होता है। उदा०—) बप्फो (यानी) ऊष्मा (=उष्णता)।

कार्षापणे ॥ ७१ ॥

कार्षापणे संयुक्तस्य हो भवति। काहावणो। कथं कहावणो। ह्रस्वः संयोगे (१.८४) इति पूर्वमेव ह्रस्वत्वे पश्चादादेशे। कर्षापणशब्दस्य वा भविष्यति।

कार्षापण शब्द में संयुक्त व्यञ्जन का ह होता है। उदा०—काहावणो। (प्रश्नः—) कहावणो (यह वर्णान्तर) कैसे होता है ? (उत्तरः—कार्षापण शब्द में) 'ह्रस्वः संयोगे' सूत्रानुसार पहले ही (का में से आ) ह्रस्व (= अ) हुआ और फिर (प्रस्तुत सूत्र के अनुसार र्ष को ह) आदेश हुआ। अथवा (कहावणो यह वर्णान्तर) कर्षापण शब्द का होगा।

दुःखदक्षिणतीर्थे वा ॥ ७२ ॥

एषु संयुक्तस्य हो वा भवति। दुहं दुक्खं। पर[1] दुक्खे दुक्खिआ विरला। दाहिणो दक्खिणो। तूहं तित्थं।

दुःख, दक्षिण और तीर्थ शब्दों में संयुक्त व्यञ्जन का ह विकल्प से होता है। उदा०—दुहं···तित्थं।

---

१. परदुःखे दुःखिता विरलाः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कूष्माण्ड्यां ष्मो लस्तु ण्डो वा ॥ ७३ ॥

कूष्माण्ड्यां ष्मा इत्येतस्य हो भवति ण्ड इत्यस्य तु वा लो भवति। कोहली कोहण्डी।

कूष्माण्डी शब्द में ष्मा (इस संयुक्त व्यञ्जन) का ह होता है, परन्तु ण्ड का ल मात्र विकल्प से होता है। उदा०—कोहली, कोहण्डी।

पक्ष्मश्मष्मस्मह्मां म्हः ॥ ७४ ॥

पक्ष्मशब्दसंबंधिनः संयुक्तस्य श्मष्मस्मह्मां च मकाराक्रान्तो हकार आदेशो भवति। पक्ष्मन् पम्हाइं। पम्हल[1] लोअणा। श्म। कुश्मानः कुम्हाणो। कश्मीराः कम्हारा। ष्म। ग्रीष्मः गिम्हो। ऊष्मा उम्हा। स्म। अस्मादृशः अम्हारिसो। विस्मयः विम्हओ। ह्म। ब्रह्मा बम्हा। सुह्माः सुम्हा। [2]बम्हणो। बह्मचेरं। क्वचित् म्भापि दृश्यते। बम्भणो। बम्भचेरं। सिम्भो। क्वचिन्न भवति। रश्मिः रस्सी। स्मरः सरो।

पक्ष्मन् शब्द से सम्बन्धित रहनेवाले (क्ष्म इस) संयुक्त व्यञ्जन को और श्म, ष्म, स्म और ह्म इन (संयुक्त व्यञ्जनों) को मकार से युक्त हकार (यानी म्ह) आदेश होता है। उदा०—पक्ष्मन्…लोअणा। श्म (का ण्ह):—कुम्हाणो…कम्हारा। ष्म (का म्ह):—ग्रीष्म…उम्हा। स्म (का म्ह):—अस्मादृशः…विम्हओ। ह्म (का म्ह):—ब्रह्मा…बम्हचेरं। क्वचित् (म्ह के बदले) म्भ भी दिखाई देता है। उदा०—बंभणो…सिम्भो। क्वचित् (ऐसा म्ह) नहीं होता है। उदा०—रश्मिः… सरो।

सूक्ष्मश्नष्णस्नह्नह्णक्ष्णां ण्हः ॥ ७५ ॥

सूक्ष्मशब्दसंबंधिनः संयुक्तस्य श्नष्णस्नह्नह्लक्ष्णां च णकाराक्रान्तो हकार आदेशो भवति। सूक्ष्मम्। सण्हं। श्न। [3]पण्हो। सिण्हो। ष्ण। विण्हू[4]। जिण्हू। कण्हो। उण्हीसं। स्न। जोण्हा[5]। ण्हाओ। पण्हुओ। ह्न। [6]वण्ही। जण्हू। ह्ल। [7]पुव्वण्हो अवरण्हो। क्ष्ण। [8]सण्हं। तिण्हं। विप्रकर्षे तु कृष्णकृत्स्नशब्दयोः कसणो कसिणो।

सूक्ष्म शब्द से सम्बन्धित रहनेवाले (क्ष्म इस) संयुक्त व्यञ्जन को तथा श्न, ष्ण, स्न; ह्न, ह्ल और क्ष्ण इन (संयुक्त व्यञ्जनों) को णकार से युक्त हकार (यानी ण्ह)

---

1. पक्ष्मललोचना। 2. क्रमसे:—ब्राह्मण। ब्रह्मचर्य।
3. क्रमसे:—प्रश्न। शिश्न। 4. क्रमसे:—विष्णु। जिष्णु। कृष्ण। उष्णषि।
5. क्रमसे:—ज्योत्स्ना। स्नात। प्रस्नुत। 6. क्रमसे:—वह्नि। जह्नु।
7. क्रमसे:—पूर्वाह्ण। अपराह्ण। 8. क्रमसे:—श्लक्ष्ण। तीक्ष्ण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदेश होता है। उदा०—सूक्ष्मम् सण्हं। श्न (का ण्ह):—पण्हो, सिण्हो। ष्ण (का ण्ह):—विण्हू…उण्हीसं। स्न (का ण्ह):—जोण्हा…पण्हुओ। ह्न (का ण्ह):—वण्ही, जण्हू। ह्ण (का ण्ह):—पुव्वण्हो, अवरण्हो। क्ष्ण (का ण्ह):—सण्हं, तिण्हं। तथापि स्वर भक्ति होने पर, कृष्ण और कृत्स्न शब्दों के कसणो और कसिणो (ऐसे वर्णान्तर) होते हैं।

ह्लो ल्हः ॥ ७६ ॥

ह्लः स्थाने लकाराक्रान्तो हकारो भवति। [1]कल्हारं। पल्हाओ।

ह्ल के स्थान पर लकार से युक्त हकार (यानी ल्ह) होता है। उदा०—कल्हारं, पल्हाओ।

कगटडतदपशषस≍क≍पामूर्ध्वं लुक् ॥ ७७ ॥

एषां संयुक्तवर्णसंबंधिनामूर्ध्वस्थितानां लुग् भवति। क। [2]भुत्तं। सित्थं। ग। [3]दुद्धं। मुद्धं। ट। षट्पदः। छप्पओ। कट्फलम् कप्फलं। ड। खड्गः खग्गो। षड्जः सज्जो। त। उप्पलं[4]। उप्पाओ। द। मद्गुः मग्गू। मोग्गरो[5]। प। [6]सुत्तो। गुत्तो। श। [7]लण्हं। णिच्चलो। चुअइ। ष। गोट्ठी[8]। छट्ठो। निट्ठुरो। स। [9]खलिओ। नेहो। ≍क। दु≍खम् दुक्खं। ≍प। अंत≍पातः। अंतप्पाओ।

संयुक्त वर्ण से सम्बन्धित (यानी संयुक्त व्यञ्जन में होनेवाले) और प्रथम अवयव होनेवाले क्, ग्, ट्, ड्, त्, द्, प्, श्, ष्, स्, ≍क और ≍प इन (व्यञ्जनों) का लोप होता है। उदा०—क् (का लोप):—भुत्तं, सित्थं। ग् (का लोप):—दुद्धं, मुद्धं। ट् (का लोप):—षट्पदः… कप्फलं। ड् (का लोप)—खड्ग…सज्जो। त् (का लोप):—सुत्तो, गुत्तो। श् (का लोप):—लण्हं…चुअइ। ष् (का लोप):—गोट्ठी…निट्ठुरो। स् (का लोप):—खलिओ, नेहो। ≍क् (का लोप):—दुःखम् दुक्खं। ≍प् (का लोप):—अंत≍पातः अंतप्पाओ।

अधो मनयाम् ॥ ७८ ॥

मनयां संयुक्तस्याधो वर्तमानानां लुग् भवति। म। जुग्गं[10]। रस्सी। सरो। सेरं। न। नग्[11]गो। लग्गो। य। [12]सामा। कुड्डं। वाहो।

---

१. क्रमसे:—कह्लार। प्रह्लाद। २. क्रमसे:—भुक्त। सिक्थ।

३. क्रमसे:—दुग्ध। मुग्ध। ४. क्रमसे:—उत्पल। उत्पाद। उत्पात।

५. मुद्गर। ६. क्रमसे:—सुप्त। गुप्त। ७. क्रमसे:—श्लक्ष्ण। निश्चल। श्चोतते

८. क्रमसे:—गोष्ठी। षष्ठ। निष्ठुर। ९. क्रमसे:—स्खलित। स्नेह।

१०. क्रमसे:—युग्म। रश्मि। स्मर। स्मरे। ११. क्रमसे:—नग्न। लग्न।

१२. क्रमसे:—श्यामा। कुड्य। व्याध। बाह्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयुक्त व्यञ्जन में अनन्तर (यानी द्वितीय अवयव) होनेवाले म्, न् और य् इनका लोप होता है। उदा०—म् (का लोप):—जुग्गं··· सेरं। न् (का लोप):—नग्गो, लग्गो। य् (का लोप):—सामा···बाहो।

सर्वत्र लवरामवन्द्रे ॥ ७९ ॥

वन्द्रशब्दादन्यत्र लबरां सर्वत्र संयुक्तस्योर्ध्वमधश्च स्थितानां लुग् भवति। ऊर्ध्वम्। ल। उल्का उक्का। वल्कलम् वक्कलं। ब। शब्दः सद्दो। अब्दः अद्दो। लुब्धकः लोद्धओ। र। अर्कः अक्को। वर्गः वग्गो। अधः। श्लक्ष्णम् सण्हं। विक्लवः विक्कवो। पक्वम्। पक्कं पिक्कं। ध्वस्तः। धत्थो। चक्रम् चक्कं। ग्रहः गहो। रात्रिः रत्ती। अत्र द्व इत्यादि संयुक्तानामुभयप्राप्तौ यथा दर्शनं लोपः। क्वचिदूर्ध्वम्। उद्विग्नः उव्विग्गो। द्विगुणः बिउणो। द्वितीयः बीओ। कल्मषम् कम्मसं। सर्वम् सव्वं। शुल्बम् सुब्बं। क्वचित्त्वधः। काव्यम् कव्वं। कुल्या कुल्ला। माल्यम् मल्लं। द्विपः दिओ। द्विजातिः दुआई। क्वचित् पर्यायेण। द्वारम् बारं दारं। उद्विग्नः उव्विग्गो उव्विणो। अवन्द्र इति किम्। वन्द्रं। संस्कृतसमोयं प्राकृतशब्दः। अत्रोत्तरेण विकल्पोपि न भवति निषेधसामर्थ्यात्।

वन्द्र शब्द छोड़कर, अन्यत्र (यानी अन्य शब्दों में) संयुक्त व्यञ्जन में पहले अथवा अनन्तर (यानी प्रथम कि वा द्वितीय अवयव) होने वाले ल, ब और र इनका सर्वत्र लोप होता है उदा०—प्रथम (अवयव) होने पर:—ल (का लोप):—उल्का···वक्कलं। ब (का लोप):—शब्दः—लोद्धओ। र (का लोप):—अर्कः··· वग्गो। अनन्तर (यानी द्वितीय अवयव) होने पर:—(ल का लोप):—श्लक्ष्णम्··· विक्कवो। (व का लोप):—पक्वम्···धत्थो। (र का लोप):—चक्रम्···रत्ती। यहाँ द्व इत्यादि संयुक्त व्यञ्जनों में (एकही समय पहला और दूसरा अवयव इनका लोप ऐसी) दो वर्णान्तरों की प्राप्ति होने पर, (साहित्य में) जैसा दिखाई देगा वैसा (किसी भी एक अवयव का) लोप करे। (इसलिए) क्वचित् प्रथम होनेवाले अवयव का (लोप होता है। उदा०—) उद्विग्नः···सुब्बं। (तो कभी) अनन्तर होनेवाले (अवयव) का (लोप होता है। उदा०—) काव्यम्···दुआई। क्वचित् पर्याय से (पहले और दूसरे अवयव का लोप होता है। उदा०—):—द्वारम्··· उव्विणो। वन्द्र शब्द छोड़कर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण प्राकृत में) वन्द्र (शब्द वैसा ही रहता है)। यह प्राकृत शब्द वन्द्र संस्कृत सम है। इस (वन्द्र शब्द) के बारे में, (प्रस्तुत सूत्र में से) निषेध के सामर्थ्य से, अगले (२·८०) सूत्र में कहा हुआ विकल्प भी नहीं होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रे रो न वा ॥ ८० ॥

द्रशब्दे रेफस्य वा लुग् भवति । [1]चंदो चंद्रो । रुद्दो रुद्रो । भद्दं भद्रं । समुद्दो समुद्रो । ह्रदशब्दस्य स्थितिपरिवृत्तौ द्रह इति रूपम् । तत्र द्रहो दहो । केचिद् रलोपं नेच्छन्ति । द्रहशब्दमपि कश्चित् संस्कृतं मन्यते । वोद्रहादयस्तु तरुणपुरुषादिवाचका नित्यं रेफसंयुक्ता देश्या एव । सिक्खन्तु[2] वोद्रहीओ । [3]वोद्रहद्रहम्मि पडिआ ।

'द्र' शब्द में रेफ का विकल्प से होता है । उदा०—चंदो⋯समुद्दो । ह्रद शब्द में स्थिति परिवृत्ति (= वर्णव्यत्यास) होने पर, द्रहरूप सिद्ध होता है । वहाँ (यानी द्रह शब्द के बारे में) द्रहो, दहो (ऐसे रूप होते हैं ।) कुछ वैयाकरणों के मतानुसार, रेफ का लोप नहीं होता है । द्रह शब्द भी संस्कृत शब्द है ऐसा कोइ एक (प्राकृत वैयाकरण) मानता है । तरुण पुरुष इत्यादि अर्थ होनेवाले वो द्रह इत्यादि शब्द नित्य रेफ से युक्त होते हैं और वे देश्य शब्द ही होते हैं । उदा०—सिक्खंतु⋯पडिआ ।

धात्र्याम् ॥ ८१ ॥

धात्रीशब्दे रस्य लुग् वा भवति । धत्ती । ह्रस्वात् प्रागेव रलोपे धाई । पक्षे धारी ।

धात्री शब्द में र का लोप विकल्प से होता है । उदा०—धत्ती । र का लोप होने के पहले ही ह्रस्व से (दीर्घ होकर) धाई (रूप सिद्ध होता है) । (विकल्प—) पक्ष में:—धारी ।

तीक्ष्णे णः ॥ ८२ ॥

तीक्ष्णशब्दे णस्य लुग् वा भवति । तिक्खं तिण्हं ।

तीक्ष्ण शब्द में ण का लोप विकल्प से होता है । उदा०—तिक्खं, तिण्हं ।

ज्ञो ञः ॥ ८३ ॥

ज्ञः संबंधिनो ञस्य लुग् वा भवति । जाणं [4]णाणं । सव्वज्जो सव्वण्णू । अप्पज्जो अप्पण्णू । दइवज्जो दइवण्णू । इंगिअज्जो इंगिअण्णू । मणोज्जं मणोण्णं । अहिज्जो अहिण्णू । पज्जा पण्णा । अज्जा आणा । संजा सण्णा । क्वचित् न भवति । [5]विण्णाणं ।

---

१. क्रमसे:—चन्द्र । रुद्र । भद्र । समुद्र । २. शिक्षन्तां तरुण्यः ।

३. तरुणह्रदे पतिता ।

४. क्रमसे:—ज्ञान । सर्वज्ञ । आत्मज्ञ । अल्पज्ञ । दैवज्ञ । इंगितज्ञ । मनोज्ञ । अभिज्ञ । प्रज्ञा । आज्ञा । संज्ञा । ५. विज्ञान ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञ (इस संयुक्त व्यञ्जन) से सम्बन्धित होनेवाले ञ का लोप विकल्प से होता है। उदा०—जाणं···सण्णा। क्वचित् (ञ का लोप) नहीं होता है। उदा०—विण्णाणं।

मध्याह्ने हः ॥ ८४ ॥

मध्याह्ने हस्य लुग् वा भवति। मज्झन्नो मज्झण्हो।

मध्याह्न शब्द में ह का लोप विकल्प से होता है। उदा०—मज्झन्नो, मज्झण्हो।

दशार्हे ॥ ८५ ॥

पृथग्योगाद् वेति निवृत्तम्। दशार्हे हस्य लुग् भवति। दसारो।

यह सूत्र पृथक् कहा है इसलिए (सूत्र २·८० में से अनुवृत्ति से आने वाले) वा शब्द की निवृत्ति होती है। दशार्ह शब्द में ह का लोप होता है। उदा०—दसारो।

आदेः श्मश्रुश्मशाने ॥ ८६ ॥

अनयोरादेर्लुग् भवति। मासू मंसू मस्सू। मसाणं। आर्षे श्मशानशब्दस्य सीआणं सुसाणमित्यपि भवति।

श्मश्रु और श्मशान इन दो शब्दों में, आदि (होनेवाले व्यञ्जन) का लोप होता है। उदा०—मासू···मसाणं। आर्ष प्राकृत में श्मशान शब्द के सीआणं और सुसाणं ऐसे भी (वर्णान्तर रूप) होते हैं।

श्चो हरिश्चन्द्रे ॥ ८७ ॥

हरिश्चन्द्रशब्दे श्च इत्यस्य लुग् भवति। हरिअंदो।

हरिश्चन्द्र शब्द में श्च् (इस संयुक्त व्यञ्जन, का लोप होता है। उदा०—हरिअंदो।

रात्रौ वा ॥ ८८ ॥

रात्रिशब्दे संयुक्तस्य लुग् वा भवति। राई रत्ती।

रात्रि शब्द में संयुक्त व्यञ्जन का लोप होता है। उदा०—राई, रत्ती।

अनादौ शेषादेशयोर्द्वित्वम् ॥ ८९ ॥

पदस्यानादौ वर्तमानस्य शेषस्यादेशस्य च द्वित्वं भवति। शेष। [1]कप्प-तरू। भुत्तं। दुद्धं। नग्गो। उक्का। अक्को। मुक्खो। आदेश। [2]डक्को। जक्खो। रग्गो। किच्ची। रुप्पी। क्वचिन्न भवति। [3]कसिणो। अनादाविति किम्। [4]खलिअं। थेरो। खम्भो। द्वयोस्तु द्वित्वमस्त्येवेति न भवति। विञ्चुओ[5]। भिण्डिवालो।

---

१. क्रमसे:—कल्पतरु। भुक्त। दुग्ध। नग्न। उल्का। अर्क। मूर्ख।

२. क्रमसे:—दष्ट। यक्ष। रक्त। कृत्ति। रुक्मी। ३. कृत्स्न।

४. क्रमसे:—स्खलित। स्थविर। स्तम्भ। ५. क्रमसे:—वृश्चिक। भिन्दिपाल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पद में अनादि होनेवाले शेष (व्यञ्जन) तथा (कहा हुआ) आदेश, इनका द्वित्व होता है। उदा०—शेष (व्यञ्जन का द्वित्व):—कप्पतरू मुक्खो। आदेश (का द्वित्व):—डक्को रुप्पी। क्वचित् (ऐसा) द्वित्व नहीं होता है (अन्य कुछ वर्णान्तर होता है। उदा०—) कसिणो। (पद में) अनादि होनेवाले ऐसा क्यों कहा है ? (कारण शेष किंवा आदेश अनादि न होने पर (यानी आदि होने पर) उसका द्वित्व नहीं होता है। उदा०—) खलिअं... ...खम्भो। (संयुक्त व्यञ्जन के स्थान पर संयुक्त व्यञ्जन का आदेश यदि कहा हुआ हो, तो वहाँ पहले ही) दो व्यञ्जनों का अस्तित्व होने से वहाँ फिर) द्वित्व नहीं होता है। उदा०—विञ्चुओ, भिण्डिवालो।

द्वितीयतुर्ययोरुपरि पूर्वः ॥ ९० ॥

द्वितीयतुर्ययोर्द्वित्वप्रसंगे उपरि पूर्वौ भवतः। द्वितीयस्योपरि प्रथमश्चतुर्थस्योपरि तृतीय इत्यर्थः। शेष। [1]वक्खाणं। वग्घो। मुच्छा। निज्झरो। कट्ठं। तित्थं। निद्धणो। गुप्फं। निब्भरो। आदेश। जक्खो[2]। घस्य नास्ति। अच्छी[3]। मज्झं। पट्ठी। वुड्ढो। हत्थो। आलिद्धो। पुप्फं। भिब्भलो। तैलादौ (२.९८) द्वित्वे [4]ओक्खलं। सेवादौ (२.९९) [5]नक्खा। नहा। समासे। कइद्धओ[6] कइधओ। द्वित्व इत्येव। [7]खाओ।

(वर्गीय व्यञ्जनों में से) द्वितीय और चतुर्थ व्यञ्जनों के द्वित्व होने का प्रसंग उपस्थित होने पर, उनके पूर्व होनेवाले दो व्यञ्जन (यानी प्रथम और तृतीय व्यञ्जन) पहले के यानी प्रथम अवयव के रूप में आते है। (अभिप्राय यह कि) द्वितीय व्यञ्जन के पूर्व पहला व्यञ्जन और चतुर्थ व्यञ्जन के पूर्व तीसरा व्यञ्जन आता है। उदा०—शेष (व्यञ्जन का द्वित्व होते समय):—वक्खाणं......भिब्भलो। आदेश (व्यञ्जन का द्वित्व होते समय):—जक्खो; घ का द्वित्व (दिखाई) नहीं देता है; अच्छी...भिब्भलो। तैलादौ सूत्र के अनुसार, द्वित्व होते समय:—ओक्खलं। 'सेवादौ' सूत्र के अनुसार (विकल्प से द्वित्व होते समय):—नक्खा, नहा। समास में (द्वित्व होते समय):—कइद्धओ, कइधओ। (द्वितीय और चतुर्थ व्यञ्जनों का) द्वित्व होते समय ही (प्रथम और तृतीय व्यञ्जन पहले आते हैं, द्वित्व न होते समय, वैसा नहीं होता है। उदा०—) खाओ।

---

१. क्रमसे—व्याख्यान। व्याघ्र। मूर्च्छा। निर्झर। कष्ट। तीर्थ। निर्धन। गुल्फ। निर्भर
२. यक्ष। ३. क्रमसे:—अक्षि। मध्य। पृष्ठ। वृद्ध। हस्त। आश्लिष्ट। पुष्प। विह्वल
४. उदूखल।	५. नखाः।
६. कपिध्वज।	७. खात।

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

दीर्घे वा ॥ ९१ ॥

दीर्घशब्दे शेषस्य घस्य उपरि पूर्वो वा भवति । दिग्धो दीहो ।

दीर्घ शब्द में (र् का लोप होने के अनन्तर) शेष होनेवाले ध के पीछे पूर्व (यानी तीसरा व्यञ्जन) विकल्प से आता है । उदा०—दिग्धो, दीहो ।

न दीर्घानुस्वारात् ॥ ९२ ॥

दीर्घानुस्वाराभ्यां लाक्षणिकाभ्यामलाक्षणिकाभ्यां च परयोः शेषादेशयोर्द्वित्वं न भवति । [1]छूढो । नीसासो । फासो । अलाक्षणिक । पार्श्वम् पासं । शीर्षम । सीसं । ईश्वरः । ईसरो । द्वेष्यः । वेसो । लास्यम् लासं । आस्यम् आसं । प्रेष्यः पेसो । अवमाल्यम् ओमालं । आज्ञा आणा । आज्ञप्तिः आणत्ती । आज्ञापनम् । आणवणं । अनुस्वारात् । त्र्यस्रम् तंसं । अलाक्षणिक । संझा[2] । विंझो । कंसालो ।

लाक्षणिक तथा अलाक्षणिक दीर्घ स्वर और अनुस्वार (इन) के आगे शेष व्यञ्जन और आदेश व्यञ्जन (इन) का द्वित्व नहीं होता है । उदा०—छूढो······फासो । अलाक्षणिक (दीर्घ स्वर के आगे):—पार्श्वम्··· ··आणवणं । (लाक्षणिक) अनुस्वार के आगे—त्र्यस्रम् तंसं । अलाक्षणिक (अनुस्वार के आगे)—संझा···कंसालो ।

रहोः ॥ ९३ ॥

रेफहकारयोर्द्वित्वं न भवति । रेफः शेषो नास्ति । आदेश । [3]सुंदेरं । बम्हचेरं । पेरन्तं । शेषस्य हस्य । [4]विहलो । आदेशस्य । [5]कहावणो ।

रेफ और हकार का द्वित्व नहीं होता है । रेफ (= र् व्यञ्जन) शेष व्यञ्जन (कभी भी) नहीं होता है । (रेफ) आदेश होने पर:—सुंदेरं······पेरन्तं । शेष ह् (का द्वित्व नहीं होता है । उदा०—) विहलो । आदेश होनेवाले (ह् का द्वित्व नहीं होता है । उदा०—) कहावणो ।

धृष्टद्युम्ने णः ॥ ९४ ॥

धृष्टद्युम्नशब्दे आदेशस्य णस्य द्वित्वं न भवति । धट्ठज्जुणो ।

धृष्टद्युम्न शब्द में आदेश के रूप में आनेवाले ण का द्वित्व नहीं होता है । उदा०-धट्ठज्जुणो ।

---

१. क्रमसेः—क्षिप्त । निःश्वास । स्पर्श । २. क्रमसेः—संध्या । विन्ध्य । कांस्ययुक्त ।
३. क्रमसेः—सौंदर्य । ब्रह्मचर्य । पर्यन्त । ४. विह्वल । ५. कार्षापण ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्णिकारे वा ॥ ९५ ॥

कर्णिकारशब्दे शेषस्य णस्य द्वित्वं वा न भवति। कणिआरो कण्णि-आरो।

कर्णिकार शब्द में शेष होने वाले ण का द्वित्व विकल्प से नहीं होता है। उदा०—कणिआरो, कण्णिआरो।

दृप्ते ॥ ९६ ॥

दृप्तशब्दे शेषस्य द्वित्वं न भवति। [1]दरिअ–सीहेण।

दृप्त शब्द में शेष व्यञ्जन का द्वित्व नहीं होता है। उदा०—दरिअसीहेण।

समासे वा ॥ ९७ ॥

शेषादेशयोः समासे द्वित्वं वा भवति। न[2]इग्गामो नइगामो। कुसुमप्पयरो कुसुमपयरो। देवत्थुई देवथुई। हरक्खन्दा हरखन्दा। आणालक्खम्भो आणालखम्भो। बहुलाधिकारादशेषादेशयोरपि। सप्पिवासो [3]सपिवासो। बद्धफलो बद्धफलो। मलयसिहरक्खंडं मलयसिहरखंडं। पम्मुक्कं पमुक्कं अद्दंसणं। अदंसणं। पडिक्कूलं पडिकूलं। तेल्लोक्कं तेलोक्कं। इत्यादि।

शेष और आदेश व्यंजन का द्वित्व समास में विकल्प से होता है। उदा०—नइग्गामो··· ···खम्भो। बहुल का अधिकार होने से, शेष और आदेश न होने वाले व्यंजनों का भी (समास में द्वित्व विकल्प से दिखाई देता है। उदा०—) सप्पि-वासो··· ···तेलोक्कं; इत्यादि।

तैलादौ ॥ ९८ ॥

तैलादिषु अनादौ यथादर्शनमन्त्यस्यानन्त्यस्य च व्यंजनस्य द्वित्वं भवति। तेल्लं। मण्डुक्को। वेइल्लं। उज्जू। विड्डा। वहुत्तं। अनन्त्यस्य। सोत्तं। पेम्मं। जुव्वणं। आर्षे। [4]पडिसोओ। विस्सोअसिआ। तैल। मण्डूक। विचकिल। ऋजु। व्रीडा प्रभूत। स्रोतस्। प्रेमन्। यौवन। इत्यादि।

तैल इत्यादि शब्दों में, जैसा साहित्य में दिखाई देगा वैसा, अनादि स्थान पर अन्त्य और अनन्त्य व्यंजनों का द्वित्व होता है। उदा०—तेल्लं··· ···बहुत्तं। अनन्त्य व्यंजनों का (द्वित्व) सोत्तं··· ···जुव्वणं। आर्ष प्राकृत में (कभी ऐसा द्वित्व नहीं

---

१. दृप्त-सिंहेन। २. क्रमसे—नदीग्राम। कुसुमप्रकर। देवस्तुति। हरस्कन्दौ। आलानस्तम्भ।
३. क्रम से :—स–पिपास। बद्ध–फल। मलय–शिखर–खण्ड। प्रमुक्त। अदर्शन। प्रतिकूल। त्रैलोक्य।
४. क्रम से :—प्रतिस्रोतस्। विस्रोतसिका।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है तो कभी होता भी है। उदा०—) पडिसोओ, विस्सो असिआ। (अनुक्रम से मूल संस्कृत शब्द ऐसे होते हैं :—) तैल ... ...यौवन। इत्यादि।

सेवादौ वा ॥ ९९ ॥

सेवादिषु अनादौ यथादर्शनमन्त्यस्यानन्त्यस्य च द्वित्वं वा भवति। सेव्वा सेवा। नेड्डं नीडं। नक्खा नहा। निहित्तो निहिओ। वाहित्तो। वाहिओ। माउक्कं माउअं। एक्को एओ। कोउहल्लं कोउहलं। वाउल्लो वाउलो। थुल्लो थोरो। हुत्तं हूअं। दइव्वं दइवं। तुण्हिक्को तुण्हिओ। मुक्को मूओ। खण्णू। खाणू। थिण्णं थीणं। अनन्त्यस्य। अम्हक्केरं अम्हकेरं। तं च्चेअं[1] तं चेअ। सो च्चिअ सो चिअ। सेवा। नीड। नख। निहित। व्याहृत। मृदुक। एक। कुतूहल। व्याकुल। स्थूल। हूत। दैव। तूष्णीक। मूक। स्थाणु। स्त्यान। अस्मदीय। चेअ। चिअ। इत्यादि।

सेवा इत्यादि शब्दों में, जैसा वाङ्मय में दिखाई देगा वैसा, अनादि स्थान पर, अन्त्य तथा अनन्त्य व्यञ्जनों का द्वित्व विकल्प से होता है। उदा०—सेव्वा...थीणं। अनन्त्य व्यञ्जनों का (द्वित्व) : अम्हक्केरं...चिअ। (इनके मूल संस्कृत शब्द क्रमसे ऐसे हैं—) सेवा...अस्मदीय; चेअ, चिअ, इत्यादि।

शार्ङ्गे ङात्पूर्वोत् ॥ १०० ॥

शार्ङ्गे ङात् पूर्वोऽकारो भवति। सारङ्गं।

शार्ङ्ग शब्द में, (र् के अनन्तर और) ङ् के पहले अकार आता है। उदा०— सारङ्गं।

क्ष्माश्लाघारत्नेन्त्यव्यञ्जनात् ॥ १०१ ॥

एषु संयुक्तस्य यदन्त्यव्यञ्जनं तस्माद् पूर्वोद् भवति। छमा। सलाहा। रयणं। आर्षे सूक्ष्मेऽपि। सुहमं।

क्ष्मा, श्लाघा और रत्न शब्दों में, संयुक्त व्यञ्जन में से जो अन्त्य व्यञ्जन है उसके पूर्व अ आता है। उदा०—छमा... ...रयणं। आर्ष प्राकृत में सूक्ष्म शब्द में भी (ऐसा अकार आता है। उदा०—) सुहमं।

---

१. चेअ और चिअ ये दो अव्यय 'अवधारण' अर्थ दिखाते हैं (सूत्र २·१८४ देखिए)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्नेहाग्न्योर्वा ॥ १०२ ॥

अनयोः संयुक्तस्यान्त्यव्यञ्जनात् पूर्वोकारो वा भवति । सणेहो नेहो । अगणी अग्गी ।

स्नेह और अग्नि इन शब्दों में, संयुक्त व्यञ्जन में अन्त्य व्यञ्जन में पूर्व विकल्प से अकार आता है । उदा०—सणेहो··· ···अग्गी ।

प्लक्षे लात् ॥ १०३ ॥

प्लक्षशब्दे संयुक्तस्यान्त्यव्यञ्जनाल्लात् पूर्वोद् भवति । पलक्खो ।

प्लक्ष शब्द में, संयुक्त व्यञ्जन में से अन्त्य ल् व्यञ्जन के पूर्व अ आता है । उदा०—पलक्खो ।

र्हश्रीह्रीकृत्स्नक्रियादिष्ट्यास्वित् ॥ १०४ ॥

एषु संयुक्तस्यान्त्यव्यञ्जनात् पूर्व इकारो भवति । र्ह । [1]अरिहइ । अरिहा । गरिहा । बरिहो । श्री सिरी ह्री । हिरी । ह्रीतः हिरीओ । अह्रीकः अहिरीओ । कृत्स्नः कसिणो । क्रिया किरिआ । आर्षे तु हयं[2] नाणं किया-हीणं । दिष्ट्या दिट्ठिआ ।

र्ह, श्री, ह्री, कृत्स्न, क्रिया और दिष्ट्या शब्दों में, संयुक्त व्यञ्जन में से अन्त्य व्यञ्जन के पूर्व इकार आता है । उदा०—र्ह (में) :—अरिहइ··· ···बरिहो । श्री··· ···किरिआ । आर्ष प्राकृत में मात्र (क्रिया शब्द में स्वर भक्ति से इकार नहीं आता है । उदा०—) हयं··· ···कियाहीणं । दिष्ट्या दिट्ठिआ ।

र्शर्षतप्तवज्रे वा ॥ १०५ ॥

र्शर्षयोस्तप्तवज्रयोश्च संयुक्तस्यान्त्यव्यंजनात् पूर्व इकारो वा भवति । र्श । [3]आयरिसो आयंसो । सुदरिसणो सुदंसणो । दरिसणं दंसणं । र्ष । [4]वरिसं वासं । वरिसा वासा । वरिससयं वाससयं । व्यवस्थितविभाषया क्वचिन्नित्यम् । [5]परामरिसो । हरिसो । अमरिसो । तप्तः तविओ तत्तो । वज्रम् वइरं वज्जं ।

र्श और र्ष इन संयुक्त व्यञ्जनों में तथा तप्त और वज्र शब्दों में संयुक्त व्यञ्जन में से से अन्त्य व्यञ्जन के पूर्व इकार विकल्प से आता है । उदा०—र्श (में) :—

---

१. क्रम से:—अर्हति । अर्हन् । गर्हा । बर्ह । २. हृतं ज्ञानं क्रियाहीनम् ।

३. क्रम से:—आदर्श । सुदर्शन । दर्शन ।

४. क्रम से:—वर्ष । वर्षा । वर्षशत । ५. क्रम से:—परामर्श । हर्ष । अमर्ष ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयरिसो··· ···दंसणं । र्ष में) वरिसं··· ···वाससयं । व्यवस्थित विभाषा से क्वचित् (कुछ शब्दों में ऐसा इकार) नित्य आता है। उदा०—परा मरिसो··· ··· अमरिसो । तत्त··· ···वज्जं ।

लात् ॥ १०६ ॥

संयुक्तस्यान्त्यव्यञ्जनाल्लात् पूर्वं इद् भवति । किलिन्नं । [1]किलिट्ठं । सिलिट्ठं । पिलुट्ठं । पिलोसो । सिलिम्हो । सिलेसो । सुक्किलं । सुइलं । सिलोओ । किलेसो । अम्बिलं । गिलाइ । गिलाणं । मिलाइ । मिलाणं । किलम्मइ । किलन्तं । क्वचिन्न भवति । [2]कमो । पवो । विप्पवो । सुक्कपक्खो । उत्प्लावयति उप्पावेइ ।

संयुक्त व्यञ्जन में से अन्त्य ल् व्यञ्जन के पूर्व इ आता है। उदा०—किलिन्नं··· ···किलन्तं । क्वचित् ऐसा नहीं आता है। उदा०—कमो··· ···उप्पावेइ ।

स्याद्भव्यचैत्यचौर्यसमेषु यात् ॥ १०७ ॥

स्यादादिषु चौर्यशब्देन समेषु च संयुक्तस्य यात् पूर्वं इद् भवति । सिआ[3] । सिआवाओ । भविओ । चेइअं । चौर्यसम । [4]चोरिअं । थेरिअं । भारिआ । गंभीरिअं । गहीरिअं । आयरिओ । सुंदरिअं । सोरिअं । वीरिअं । वरिअं । सूरिओ । धीरिअं बम्हचरिअं ।

स्याद् इत्यादि यानी स्याद्, भव्य और चैत्य शब्दों में से तथा चौर्य शब्द के समान शब्दों में, संयुक्त व्यञ्जन में से य् के पूर्व इ आता है। उदा —सिआ··· ··· चेइअं । चौर्य सम (शब्दों में) :—चोरिअं··· ···बम्हचरिअं ।

स्वप्ने नात् ॥ १०८ ॥

स्वप्नशब्दे नकारात् पूर्वं इद् भवति । सिविणो ।

स्वप्न शब्द में नकार के पूर्व इ आता है। उदा०—सिविणो ।

---

१. क्रम से :—क्लिन्न । क्लिष्ट । श्लिष्ट । प्लुष्ट । प्लोष । श्लेष्मन् । श्लेष । शुक्ल । श्लोक । क्लेश । अम्ल । ग्लायति । ग्लान । म्लायति । म्लान । क्लाम्यति । क्लान्त ।

२. क्रम से :—क्लम । प्लव । विप्लव । शुक्लपक्ष ।

३. क्रम से :—स्यात् । स्याद् वाद । भव्य । चैत्य ।

४. क्रम से :—चौर्य । स्थैर्य । भार्या । गाम्भीर्य । आचार्य । सौन्दर्य । शौर्य । वीर्य । वर्य । सूर्य । धैर्य । ब्रह्मचर्य ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्निग्धे वादितौ ॥ १०९ ॥

स्निग्धे संयुक्तस्य नात् पूर्वौ अदितौ वा भवतः। सणिद्धं सिणिद्धं। पक्षे। निद्धं।

स्निग्ध शब्द में संयुक्त व्यञ्जन से न के पूर्व अ और इ विकल्प से आते हैं। उदा०—सणिद्धं, सिणिद्धं। (विकल्प—) पक्ष में:—निद्धं।

कृष्णे वर्णे वा ॥ ११० ॥

कृष्णे वर्णवाचिनि संयुक्तस्यान्त्यव्यञ्जनात् पूर्वौ अदितौ वा भवतः। कसणो कसिणो कण्हो। वर्ण इति किम्। विष्णौ कण्हो।

वर्ण (= रंग) वाचक कृष्ण शब्द में, संयुक्त व्यंजन में से अन्त्य व्यञ्जन के पूर्व अ और इ विकल्प से आते हैं। उदा०—कसणो··· ···कण्हो। वर्णवाचक (कृष्ण शब्द में) ऐसा क्यों कहा है? (कारण कृष्ण शब्द वर्णवाचक न होते) विष्णु अर्थ हो, तो कण्हो (ऐसा ही वर्णान्तर होता है)।

उच्चार्हति ॥ १११ ॥

अर्हत्-शब्दे संयुक्तस्यान्त्यव्यञ्जनात् पूर्वौ उत् अदितौ च भवतः। [1]अरुहो अरहो अरिहो। अरुहन्तो[1] अरहन्तो अरिहन्तो।

अर्हत् शब्द में संयुक्त व्यञ्जन में से अन्त्य व्यञ्जन के पूर्व उ तथा अ और इ आते हैं। उदा०—अरुहो··· ···अरिहन्तो।

पद्मछद्ममूर्खद्वारे वा ॥ ११२ ॥

एषु संयुक्तस्यान्त्यव्यञ्जनात् पूर्व उद् वा भवति। पउमं पोम्मं। छउमं छम्मं। मुरुक्खो मुक्खो। दुवारं। पक्षे। वारं देरं दारं।

पद्म, छद्म, मूर्ख और द्वार शब्दों में, संयुक्त व्यञ्जन में से अन्त्य व्यञ्जन के पूर्व उ विकल्प से आता है। उदा०—पउमं··· ···मुक्खो; दुवारं; (विकल्प—) पक्ष में:—वारं··· ···दारं।

तन्वीतुल्येषु ॥ ११३ ॥

उकारान्ता ङीप्रत्ययान्तास्तन्वीतुल्याः। तेषु संयुक्तस्यात्न्यव्यञ्जनात् पूर्व उकारो भवति[2]। तणुवी। लहुवी। गरुवी। बहुवी। पुहुवी। मउवी। क्वचिदन्यत्रापि। स्रुघ्नम्। सुरुग्घं। आर्षे। सूक्ष्मम्। सुहुमं।

---

१. क्रम से :—अर्हत्। अर्हन्।

२. क्रम मे :—तन्वी। लघ्वी। गुर्वी। बह्वी। पृथ्वी। मृद्वी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(संस्कृत में मूलतः) उकारान्त होकर जिनको (स्त्रीलिंगी बनाने का) ङी प्रत्यय लगा हुआ है, ऐसे शब्द तन्वीतुल्य शब्द होते हैं। उन शब्दों में संयुक्त व्यञ्जन में से अन्त्य व्यञ्जन के पूर्व उकार आता है। उदा०—तणुवी··· ···मउवी। क्वचित् अन्य शब्दों में भी (संयुक्त व्यञ्जन में से अन्त्य व्यञ्जन के पूर्व उकार आता है। उदा०—) स्रुघ्नम् सुरुग्घं। आर्ष प्राकृत में :—सूक्ष्मम् सुहुमं।

एकस्वरे श्वःस्वे ॥ ११४ ॥

एकस्वरे पदे यौ श्वस् स्व इत्येतौ तयोरन्त्यव्यञ्जनात् पूर्वं उद् भवति। श्वः कृतम्। सुवे कयं। स्वे जनाः। सुवे जणा। एकस्वर इति किम्। स्वजनः सयणो।

एक स्वर होने वाले श्वस् (=श्वः) और स्व ये दो (शब्द) हैं, उनमें अन्त्य व्यंजन के पूर्व उ आता है। उदा०—श्वः··· ···जणा। एक स्वर होने वाले (पद में) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण यदि पद एक स्वर न हो, तो यहाँ कहा हुआ वर्णान्तर नहीं होता है। उदा०—) स्वजनः सयणो।

ज्यायामीत् ॥ ११५ ॥

ज्याशब्दे अन्त्यव्यञ्जनात् पूर्वं ईद् भवति। जीआ।

ज्या शब्द में अन्त्य व्यंजन के पूर्व ई आता है। उदा०—जीआ।

करेणूवाराणस्यो रणोर्व्यत्ययः ॥ ११६ ॥

अनयो रेफणकारयोर्व्यत्ययः स्थितिपरिवृत्तिर्भवति। कणेरू। वाणारसी। स्त्रीलिंगनिर्देशात्। पुंसि न भवति। ए सो करेणू।[1]

करेणू और वाराणसी शब्दों में रेफ और णकार का व्यत्यय यानी स्थिति-परिवृत्ति (= स्थान में बदल) होती है। उदा०—कणेरू, वाणारसी। (सूत्र में करेणू शब्द में) स्त्रीलिंग का निर्देश होने से, (करेणु शब्द) पुंल्लिंग में होने पर (स्थिति परिवृत्ति) नहीं होती है। उदा०—एसो करेणू।

आलाने लनोः ॥ ११७ ॥

आलानशब्दे लनोर्व्यत्ययो भवति। आणालो। आणालक्खम्भो।[2]

आलान शब्द में ल और न का व्यत्यय होता है। उदा०—आणालो··· ···क्खंभो।

अचलपुरे चलोः ॥ ११८ ॥

अचलपुरशब्दे चकारलकारयोर्व्यत्ययो भवति। अलचपुरं।

---

1. एषः करेणुः। 2. आलान स्तम्भ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अचलपुर शब्द में चकार और लकार का व्यत्यय होता है । उदा०—**अलचपुरं** ।

महाराष्ट्रे हरोः ॥ ११९ ॥

महाराष्ट्रशब्दे हरोर्व्यंत्ययो भवति । मरहट्ठं ।

महाराष्ट्र शब्द में ह और र का व्यत्यय होता है । उदा०—मरहट्ठं ।

ह्रदे हदोः ॥ १२० ॥

ह्रदशब्दे हकारदकारयोर्व्यंत्ययो भवति । द्रहो । आर्षे । हरए[1] महपुण्डरिए ।

ह्रद शब्द में हकार और दकार का व्यत्यय होता है । उदा०—द्रहो । आर्ष प्राकृत में (द्रह शब्द में स्वर भक्ति होती है । उदा०—) हरए महपुण्डरीए ।

हरिताले रलोर्न वा ॥ १२१ ॥

हरितालशब्दे रकारलकारयोर्व्यंत्ययो वा भवति । हलिआरो । हरिआलो ।

हरिताल शब्द में रकार और लकार का व्यत्यय विकल्प से होता है । उदा०—**हलिआरो**, हरिआलो ।

लघुके लहोः ॥ १२२ ॥

लघुकशब्दे घस्य हत्वे कृते लहोर्व्यंत्ययो वा भवति । हलुअं लहुअं । घस्य व्यत्यये कृते पदादित्वात् हो न प्राप्नोतीति हकरणम् ।

लघुक शब्द में, घ का ह करने पर, ल और ह का व्यत्यय विकल्प से होता है । उदा०—हलुअं, लहुअं । घ का व्यत्यय किए जाने पर, घ पद आदि (स्थान में) होता है, इसलिए उसका ह नहीं होता है; (अतः पहले ही घ का) ह करना है ।

ललाटे लडोः ॥ १२३ ॥

ललाटशब्दे लकारडकारयोर्व्यंत्ययो भवति वा । णडालं णलाडं । ललाटे च (१.२५७) इति आदेर्लस्य णविधानादिह द्वितीयो लः स्थानी ।

ललाट शब्द में लकार और डकार का व्यत्यय विकल्प से होता है । उदा०—णडालं, णलाडं । 'ललाटे च' सूत्रानुसार आदि ल का ण होने के कारण यहाँ द्वितीय ल स्थानी है (अतः द्वितीय ल और ड का व्यत्यय विकल्प से होता है) ।

---

१. ह्रदे महापुण्डरीके ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ह्ये ह्योः ॥ १२४ ॥

ह्यशब्दे हकारयकारयोर्व्यत्ययो वा भवति। गुह्यम् गुय्हं गुज्झं। सह्यः सय्हो सज्झो।

ह् य शब्द में हकार और यकार का व्यत्यय विकल्प से होता है। उदा०—गुह् यम्··· ···सज्झो।

स्तोकस्य थोक्कथोवथेवाः ॥ १२५ ॥

स्तोकशब्दस्य एते त्रय आदेशा भवन्ति वा। थोक्कं थोवं थेवं। पक्षे। थोअं।

स्तोक शब्द को थोक्क, थोव, और थेव ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—थोक्कं··· ···थेवं। (विकल्प—) पक्ष में:—थोअं।

दुहितृभगिन्योर्धूआ बहिण्यौ ॥ १२६ ॥

अनयोरेतावादेशौ वा भवतः। धूआ दुहिआ। बहिणी भइणी।

दुहितृ और भगिनी शब्दों को धूआ और (बहिणी ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—धूआ··· ···भइणी।

वृक्षक्षिप्तयो रुक्खछूढो ॥ १२७ ॥

वृक्षक्षिप्तयोर्यथासंख्यं रुक्ख छूढ इत्यादेशौ वा भवतः। रुक्खो वच्छो। छूढं खित्तं। उच्छूढं [1]उक्खित्तं।

वृक्ष और क्षिप्त इन शब्दों का अनुक्रम से रुक्ख और छूढ ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा—रुक्खो··· ···उक्खित्तं।

वनिताया विलया ॥ १२८ ॥

वनिता शब्दस्य विलया इत्यादेशो वा भवति। विलया वणिआ। विलयेति संस्कृतेपि इति केचित्।

वनिता शब्द को विलया ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—विलया, वणिआ। कुछ के मतानुसार विलया ऐसा शब्द संस्कृत में भी है।

गौणस्येषत कूरः ॥ १२९ ॥

ईषच्छब्दस्य गौणस्य कूर इत्यादेशो वा भवति। चिंच[2] व्व कूरपिक्का। पक्षे। ईसि।

---

१. उत्क्षिप्त। २. चिञ्चा इव ईषत्पक्वा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(समास में) गौण (पद) होने वाले ईषत् शब्द को कूर ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—चिच व्व··· ···पिक्का (विकल्प से—) पक्ष में :—ईसि।

स्त्रिया इत्थी ॥ १३० ॥

स्त्रीशब्दस्य इत्थी इत्यादेशो वा भवति। इत्थी थी।

स्त्री शब्द को इत्थी ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—इत्थी, थी।

धृतेर्दिहिः ॥ १३१ ॥

धृतिशब्दस्य दिहिरित्यादेशो वा भवति। दिही धिई।

धृति शब्द को दिहि ऐसा आदेश विकल्प से होता हैं। उदा०—दिही, धिई।

मार्जारस्य मञ्जरवञ्जरौ ॥ १३२ ॥

मार्जारशब्दस्य मञ्जर वञ्जर इत्यादेशौ वा भवतः। मञ्जरो वञ्जरो। पक्षे। मज्जारो।

मार्जार शब्द को मञ्जर और वञ्जर ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—मञ्जरो, वञ्जरो। (विकल्प—) पक्ष में:—मज्जारो।

वैडूर्यस्य वेरुलिअं ॥ १३३ ॥

वैडूर्यशब्दस्य वेरुलिअं इत्यादेशो वा भवति। वेरुलिअं वेडुज्जं।

वैडूर्य शब्द को वेरुलिअं ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—वेरुलिअं वेडुज्जं।

एण्हि एत्ताहे इदानीमः ॥ १३४ ॥

अस्य एतावादेशौ वा भवतः। एण्हि एत्ताहे इआणिं।

इदानीम् शब्द को एण्हि और एत्ताहे ये दो आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—एण्हि··· ···इआणिं।

पूर्वस्य पुरिमः ॥ १३५ ॥

पूर्वस्य स्थाने पुरिम इत्यादेशो वा भवति। पुरिमं पुव्वं।

पूर्व शब्द के स्थान पर पुरिम ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—पुरिमं, पुव्व।

त्रस्तस्य हित्थतट्ठौ ॥ १३६ ॥

त्रस्तशब्दस्य हित्थ तट्ठ इत्यादेशौ वा भवतः। हित्थं तट्ठं तत्थं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रस्त शब्द को हित्थ और तट्ठ ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—हित्थं ··· ···तत्थं।

बृहस्पतौ बहो भयः ॥ १३७ ॥

बृहस्पतिशब्दे बह इत्यस्यावयवस्य भय इत्यादेशो वा भवति। भयस्सई भयप्फई भयप्पई। पक्षे। बहस्सई बहप्फई बहप्पई। वा बृहस्पतौ (१.१३८) इति इकारे उकारे च। बिहस्सई बिहप्फई बिहप्पई। बुहस्सई बुहप्फई बुहप्पई।

बृहस्पति शब्द में बह इस अवयव को भय ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—भयस्सई··· ···भयप्पई (विकल्प—) पक्ष में:—बहस्सई··· ···बहप्पई। 'वा बृहस्पतौ' सूत्र के अनुसार (ह्रस्वर के) इकार और उकार होने पर:—बिहस्सई बुहप्पई (ऐसे वर्णान्तर होंगे)।

मलिनोभय-शुक्ति-छुप्तारब्ध-पदातेर्मइलावह-सिप्पि-छिक्काढत्तपाइक्कं ॥ १३८ ॥

मलिनादीनां यथासंख्यं मइलादय आदेशा वा भवन्ति। मलिनं। मइलं मलिणं। उभयम् अवहं। उवहमित्यपि केचित्। अवहोआसं[1]। उभयबलं। आर्षे। उभयोकालं[2]। शुक्ति। सिप्पी सुत्ती। छुप्त। छिक्को छुत्तो। आरब्धं। आढत्तो आरद्धो। पदाति। पाइक्को पयाई।

मलिन इत्यादि यानी मलिन, उभय, शुक्ति, छुप्त, आरब्ध और पदाति इन शब्दों को अनुक्रम से मइल इत्यादि यानी मइल, अवह, सिप्पि, छिक्क आढत्त, और पाइक्क ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—मलिन··· ···अवहं; कुछ के मतानुसार, (उभय को) उवह ऐसा भी (आदेश होता है); अवहोआसं··· ···बलं। आर्ष प्राकृत में उभयोकालं (ऐसा दिखाई देता है); शुक्ति··· ···पयाई।

दंष्ट्राया दाढा ॥ १३९ ॥

पृथग् योगाद् वेति निवृत्तम्। दंष्ट्राशब्दस्य दाढा इत्यादेशो भवति। दाढा। अयं संस्कृतेपि।

(यह सूत्र) अलग रूप से कहे जाने के कारण, (सूत्र २.१२१ में से अनुवृत्ति से आने वाले) वा शब्द की निवृत्ति (इस सूत्र में) होती है। दंष्ट्रा शब्द को दाढा ऐसा आदेश होता है। उदा०—दाढा। यह (दाढा शब्द) संस्कृत में भी है।

बहिसो बाहिं बाहिरौ ॥ १४० ॥

बहिःशब्दस्य बाहिं बाहिर इत्यादेशौ भवतः। बाहिं बाहिरं।

---

१. उभयबल। २. उभयकाल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहिः शब्द को बाहिं और बाहिर ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—बाहिं बाहिरं।

अधसो हेट्ठं ॥ १४१ ॥

अधस् शब्दस्य हेट्ठ इत्ययमादेशो भवति। हेट्ठं।

अधस् शब्द को हेट्ठ ऐसा यह आदेश होता है। उदा०—हेट्ठं।

मातृपितुः स्वसुः सिआछौ ॥ १४२ ॥

मातृपितृभ्यां परस्य स्वसृशब्दस्य सिआ छा इत्यादेशौ भवतः। माउसिआ माउच्छा। पिउसिआ पिउच्छा।

मातृ और पितृ शब्दों के आगे आने वाले स्वसृ शब्द को सिआ और छा ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—माउसिआ··· ···पिउच्छा।

तिर्यचस्तिरिच्छिः ॥ १४३ ॥

तिर्यच् शब्दस्य तिरिच्छिरित्यादेशो भवति। तिरिच्छि पेच्छइ[1]। आर्षे तिरिआ इत्यादेशोपि। तिरिआ।

तिर्यच् शब्द को तिरिच्छि ऐसा आदेश होता है। उदा०—तिरिच्छि पेच्छइ। आर्ष प्राकृत में तिरिआ ऐसा भी आदेश होता है। उदा०—तिरिआ।

गृहस्य घरोपतौ ॥ १४४ ॥

गृहशब्दस्य घर इत्यादेशो भवति पतिशब्दश्चेत् परो न भवति। घरो। घर[2]-सामी। राय[3]-हरं। अपताविति किम्। [4]गहवई।

गृह शब्द को घर ऐसा आदेश होता है। परन्तु (गृह शब्द के) आगे पति शब्द यदि हो, तो (घर ऐसा आदेश) नहीं होता है। उदा०—घरो··· ···हरं। (गृह के के आगे) पति शब्द न हो ऐसा क्यों कहा है ? (कारण पति शब्द आगे होने पर, गृह शब्द को घर ऐसा आदेश नहीं होता है। उदा०—) गहवई।

शीलाद्यर्थस्येरः ॥ १४५ ॥

शीलधर्मसाध्वर्थे विहितस्य प्रत्ययस्य इर इत्यादेशो भवति। हसनशीलः हसिरो। [5]रोविरो। लज्जिरो। जंपिरो। वेविरो भमिरो। ऊससिरो। केचित् तृन एव इरमाहुस्तेषां नमिरगमिरादयो न सिध्यन्ति। तृनोत्र रादिना बाधितत्वात्।

---

१. तिर्यक् प्रेक्षते। २. गृहस्वामी। ३. राजगृह। ४. गृहपति।
५. क्रम सेः—रोदनशील। लज्जावान्। जल्पनशील। वेपनशील। भ्रमणशील। उच्छ्वसनशील।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शील, धर्म, और साधु इन अर्थों में कहे हुए प्रत्यय को इर ऐसा आदेश होता है। उदा०—हसनशीलः हसिरो। (इसी प्रकार:—) रोविरो··· ···ऊससिरो। कुछ लोग कहते हैं कि 'तृन्' इस प्रत्यय को ही इर आदेश होता है; परन्तु उनके मतानुसार नमिर, गमिर इत्यादि शब्द सिद्ध नहीं होते हैं; कारण यहाँ तृन् (प्रत्यय) का र इत्यादि से बाध होता है।

क्त्वस्तुमत्तूणतुआणाः ॥१४६॥

क्त्वाप्रत्ययस्य तुम् अत् तूण तुआण इत्येते आदेशा भवन्ति। तुम्। [1]दट्ठुं। मोत्तुं। अत्। भमिअ[2]। रमिअ। तूण। घेत्तूण[3]। काऊण। तुआण। भेत्तुआण[4]। सोउआण। वन्दित्तु[5] इत्यनुस्वारलोपात्। वन्दित्ता इति सिद्धसंस्कृतस्यैव वलोपेन। कट्टु[6] इति तु आर्षे।

क्त्वा को तुम्, अत् तूण और तुआण ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा०—तुम् :— दट्ठुं, मोत्तुं। अत् :—भमिअ, रमिअ। तूण :—घेत्तूण, काऊण। तुआण—भेत्तुआण, सोउआण। वंदित्तु यह रूप अनुस्वार का लोप होकर हुआ है। वंदित्ता यह रूप संस्कृत में से (वन्दित्वा इस) सिद्ध शब्द में से व् का लोप होकर बना है। आर्ष प्राकृत में (कृ धातु का) कट्टु ऐसा रूप होता है।

इदमर्थस्य केरः ॥ १४७ ॥

इदमर्थस्य प्रत्ययस्य केर इत्यादेशो भवति। युष्मदीयः तुम्हकेरो। अस्मदीयः। अम्हकेरो। न च भवति। मईअ-[7]पक्खे पाणिणीआ।

'(उसका अथवा अमुकका) यह होता है' इस अर्थ में होनेवाले प्रत्ययको केर ऐसा आदेश होता है। उदा०—युष्मदीय···अमृकेरो। (कभी ऐसा आदेश) होता भी नहीं है। उदा०—मईअपक्खे, पाणिणीआ।

परराजभ्यां क्कडिक्कौ च ॥ १४८ ॥

पर राजन् इत्येताभ्यां परस्येदमर्थस्य प्रत्ययस्य यथासंख्यं संयुक्तौ क्को डित् इक्कश्चादेशौ भवतः। चकारात् केरश्च। परकीयं पारक्कं परक्कं पारकेरं। राजकीयम् राइक्कं रायकेरं।

पर और राजन् शब्दों के आगे आनेवाले (उसका किंवा अमुकका) यह (है)

---

१. क्रम से:—√दृश्। √मुच्। २. क्रम से:—√भ्रम्। √रम्।
३. क्रम से :—√ग्रह्। √कृ। ४. क्रम।—√भिद्। √श्रु।
५. √वन्द्। ६. √कृ।
७. क्रमसे :—मदीयपक्षे। पाणिनीयाः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस अर्थ में होनेवाले प्रत्ययको अनुक्रम से संयुक्त व्यञ्जनयुक्त ऐसा क्क और डित् इक्क ऐसे आदेश होते हैं। और (सूत्र में) चकार प्रयुक्त होने से, (इस इदमर्थी प्रत्यय को) केर ऐसा भी आदेश होता है। उदा०—परकीयम्...रायकेरं।

युष्मदस्मदोञ एच्चयः ॥ १४९ ॥

आभ्यां परस्येदमर्थस्याञ एच्चय इत्यादेशो भवति। युष्माकमिदं यौष्माकम्, तुम्हेच्चयं। एवं अम्हेच्चयं।

युष्मद् और अस्मद् के आगे आनेवाले, इदमर्थ में होनेवाले, अञ् प्रत्ययको एच्चय ऐसा आदेश होता है। उदा०—तुम्हारा यह (युष्माकं इदम्) इस अर्थ में बने हुए यौष्माकम् के अर्थ में तुम्हेच्चयं (ऐसा रूप होता है)। इसीतरह अम्हेच्चयं रूप होता है)।

वतेर्व्वः ॥ १५० ॥

वतेः प्रत्ययस्य द्विरुक्तो वो भवति। महुरव्व[1] पाडलिउत्ते पासाया।

वत् प्रत्ययका द्वित्वयुक्त व (यानी व्व) होता है। उदा०—महुरव्व...पासाया।

सर्वाङ्गादीनस्येकः ॥ १५१ ॥

सर्वाङ्गात् सर्वादेः पथ्यङ्ग (हे० ७.१) इत्यादिना विहितस्येनस्य स्थाने इक इत्यादेशो भवति। सर्वाङ्गीणः सव्वंगिओ।

'सर्वाङ्गात् सेर्वादेः पथ्यङ्गं इत्यादि सूत्र में कहे हुए इन इस प्रत्यय के स्थान पर इक (इअ) ऐसा आदेश होता है। उदा०—सर्वाङ्गीणः सव्वंगिओ।

पथो णस्येकट् ॥ १५२ ॥

नित्यं णः पन्थश्च (हे० ६.४) इति यः पथो णो विहितस्तस्य इकट् भवति। पान्थः पहिओ।

'नित्यं णः पन्थश्च' सूत्र में पथिन् शब्द के बारे में ण कहा है; उसका इकट् (इअ) होता है। उदा०—पान्थः पहिओ।

ईयस्यात्मनो णयः ॥ १५३ ॥

आत्मनः परस्य ईयस्य णय इत्यादेशो भवति। आत्मीयम् अप्पणयं।

आत्मन् शब्द के आगे आनेवाले ईय प्रत्यय को णय ऐसा आदेश होता है। उदा०—आत्मीयम् अप्पणयं।

---

१. मथुरावत् पाटलिपुत्रे प्रासादाः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्वस्य डिमात्तणौ वा ॥ १५४ ॥

त्वप्रत्ययस्य डिमा त्तण इत्यादेशौ वा भवतः । पीणिमा[1] । पुप्फिमा[2] । पीणत्तणं[1] । पुप्फत्तणं । पक्षे । पणित्तं । पुप्फत्तं[2] । इम्नः पृथ्वादिषु नियतत्वात् तदन्यप्रत्ययान्तेषु अस्य विधिः । पीनता इत्यस्य प्राकृते पीणया इति भवति । पीणदा इति तु भाषान्तरे । तेनेह तलो दा न क्रियते ।

त्व प्रत्ययको डिमा (इमा) और त्तण ऐसे आदेश विकल्प से होते है । उदा०—पीणिमा······पुप्फत्तणं । (विकल्प—) पक्ष में—पीणत्तं,पुप्फत्तं । इमन् प्रत्यय पृथु इत्यादि शब्दों के बारे में नित्य लगता है; इसलिय वह प्रत्यय छोड़कर अन्य प्रत्ययों से अन्त होनेवाले शब्दों के बारे में यह प्रत्यय लगता है ऐसा नियम (इस सूत्र में कहा है) । पीनता शब्द का प्राकृत में पीणया ऐसा वर्णान्तर होता है । पीणदा (यह वर्णान्तर) मात्र दूसरी (यानी शौरसेनी) भाषा में होता है । इसलिए यहाँ तल [प्रत्यय) का दा नहीं किया है ।

अनङ्कोठात् तैलस्य डेल्लः ॥ १५५ ॥

अङ्कोठवर्जिताच्छब्दात् परस्य तैलप्रत्ययस्य डेल्ल इत्यादेशो भवति । [3]सुरहिजलेण कडुएल्लं । अनङ्कोठादिति किम् । [4]अङ्कोल्लतेल्लं ।

अङ्कोठ शब्द छोड़कर अन्य शब्दों के आगे आनेवाले तैल प्रत्यय को डेल्ल (एल्ल) ऐसा आदेश होता है । उदा०—सुरहि······एल्लं । अंकोठ शब्द छोड़कर ऐसा क्यों कहा है । (कारण अंकोठ शब्द के आगे तैल प्रत्यय को डेल्ल ऐसा आदेश नहीं होता है । उदा०—अंकोल्लतेल्लं ।

यत्तदेतदोतोरित्तिअ एतल्लुक् च ॥ १५६ ॥

एभ्यः परस्य डावादेरतोः परिमाणार्थस्य इत्तिअ इत्यादेशो भवति एतदो लुक् च । यावत् जित्तिअं । तावत् तित्तिअं । एतावत् । इत्तिअं ।

यद, तद और एतद् इनके आगे परिमाण अर्थ में आनेवाले डावादि अतु प्रत्यय को एत्तिअ ऐसा आदेश होता है और एतद् का लोप होता है । उदा०—यावत्······इत्तिअं ।

इदंकिमश्च डेत्तिअडेत्तिलडेद्दहाः ॥ १५७ ॥

इदंकिभ्यां यत्तदेतद्भ्यश्च परस्यातोर्डावतोर्वा डित् एत्तिअ एत्तिल एद्दह इत्यादेशा भवन्ति एतल्लुक् च । इयत् एत्तिअं एत्तिलं एद्दहं । कियत् केत्तिअं

---

१. पीवत्व । २. पुष्पत्व ।
३. सुरभिजलेन कटुतैलम् । ४. अङ्कोठतैलम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केत्तिलं केद्दहं। यावत्। जेत्तिअं जेत्तिलं जेद्दहं। तावत् तेत्तिअं तेत्तिलं तेद्दहं। एतावत् एत्तिअं एत्तिलं एद्दहं।

इदम् और किम् तथा यद्, तद् और एतद् [सर्वनामों के आगे आनेवाले अतु किंवा डावत् (इन) प्रत्ययों को डित् होनेवाले एत्तिअ, एत्तिल और एद्दह ऐसे आदेश होते हैं और एतद् का लोप होता है। उदा०—इयत्......एद्दहं।

कृत्वसो हुत्तं ॥ १५८ ॥

वारे कृत्वस् (हे० ७.२) इति यः कृत्वस् विहितस्तस्य हुत्तमित्यादेशो भवति। सयहुत्तं[1]। सहस्सहुत्तं। कथं प्रियाभिमुखं पियहुत्तं। अभिमुखार्थेन हुत्तशब्देन भविष्यति।

'वारे कृत्वस्' सूत्रानुसार जो कृत्वस् प्रत्यय कहा हुआ है उसको हुत्तं ऐसा आदेश होता है। उदा०—सयहुत्तं, सहस्सहुत्तं। (प्रश्नः—) प्रियाभिमुखं (शब्द) का वर्णान्तर पियहुत्तं ऐसा कैसे होता है? (उत्तरः—) अभिमुख (इस) अर्थ में होनेवाले हुत्त शब्द के कारण (वह वर्णान्तर) होगा।

आल्विल्लोल्लालवन्तमन्तेत्तेरमणा मतोः ॥ १५९ ॥

आलु इत्यादयो नव आदेशाः मतोः स्थाने यथाप्रयोगं भवन्ति। आलु। नेहालू[2]। दयालू। ईसालू। लज्जालुआ। इल्ल। सोहिल्लो[3]। छाइल्लो। जामइल्लो। उल्ल। विआरुल्लो[4]। मंसुल्लो। दप्पुल्लो। आल। सद्दालो[5]। जडालो। फडालो। रसालो। [6]जोण्हालो। वन्त। धणवन्तो[7]। भत्तिवन्तो। मन्त। [8]हणुमन्तो। सिरिमन्तो। पुण्णमन्तो। इत्त। कव्व[9]इत्तो। माणइत्तो। इर। [10]गव्विरो। रेहिरो। मण। धणमणो[11]। केचिन्मादेशमपीच्छन्ति। [12]हणुमा। मतोरिति किम्। [13]धणी। अत्थिओ।

आलु इत्यादि यानी आलु, इल्ल, उल्ल, आल, वन्त, मन्त, इत्त, इर और मण ऐसे नौ आदेश मत् प्रत्यय के स्थान पर, साहित्य में जैसा प्रयोग होगा उसी तरह होते हैं। उदा०—आलु:—नेहालू...लज्जालुआ। इल्ल:—सोहिल्लो......जामइल्लो।

---

१. क्रमसे—शतकृत्वः। सहस्रकृत्वः। २. क्रमसे—स्नेहालु। दयालु। ईर्ष्यालु। लज्जावती
३. क्रमसे—√शोभ। √छाया। √याम। ४. क्रमसे—√विकार। विचार। √मांस। √दर्प। ५. क्रमसे—√शब्द। √जटा। √फटा। √रस।
६. ज्योत्स्ना। ७. क्रमसे—√धन। √भक्ति।
८. क्रमसे—हनुमत्। श्रीमत्। पुण्यमत्। ९. क्रमसे—√काव्य। √मान।
१०. क्रमसे—√गर्व। शोभावत्। ११. √धन।
१२. हनुमत्। १३. क्रमसे—धनिन्। अर्थिक।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उल्ल:—विआरुल्लो…दप्पुल्लो । आल:—सद्दालो……जोण्हालो । वंत:—धणवंतो, भत्तिवंतो । मंत:—हणुमंतो…पुण्णमंतो । इत्त:—कव्वइत्तो, माणइत्तो । इर—गव्विरो, रेहिरो । मण:—धणमणो । (मत् प्रत्यय को) मा ऐसा भी आदेश होता है ऐसा कुछ (वैयाकरण) कहते हैं । उदा०—हणुमा । मत् (प्रत्यय) के (स्थान पर ये आदेश होते हैं) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण अन्यमत्वर्थी प्रत्ययों को ऐसे आदेश नहीं होते हैं । उदा०—) धणी, अत्थिओ ।

त्तो दो तसो वा ॥ १६० ॥

तस: प्रत्ययस्य स्थाने त्तो दो इत्यादेशौ वा भवत: । [1]सव्वत्तो सव्वदो । एकत्तो एकदो । अन्नत्तो अन्नदो । कत्तो कदो । जत्तो जदो । तत्तो तदो । इत्तो इदो । पक्षे । [2]सव्वओ । इत्यादि ।

तस् प्रत्यय के स्थान पर त्तो और दो ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—सव्वत्तो…इदो । (विकल्प—) पक्षमें—सव्वओ. इत्यादि ।

त्रपो हिहत्था: ॥ १६१ ॥

त्रप् प्रत्ययस्य एते भवन्ति । यत्र जहि जह जत्थ । तत्र तहि तह तत्थ । कुत्र कहि कह कत्थ । अन्यत्र अन्नहि अन्नह अन्नत्थ ।

त्रप् प्रत्यय को हि, ह और त्थ ये आदेश होते हैं । उदा०—यत्र…अन्नत्थ ।

वैकाद्द: सि सिअं इआ ॥ १६२ ॥

एकशब्दात् परस्य दा-प्रत्ययस्य सि सिअं इआ इत्यादेशा वा भवन्ति । एकदा एक्कसि एक्कसिअं एक्कइआ । पक्षे । [3]एगया ।

एक शब्द के आगे आनेवाले दा प्रत्यय को सि, सिअं और इआ ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—एकदा…एक्कइआ । (विकल्प—) पक्षमें—एगआ ।

ढिल्लडुल्लौ भवे ॥ १६३ ॥

भवेर्थे नाम्न: परौ इल्ल उल्ल इत्येतौ डितौ प्रत्ययौ भवत: । [4]गामिल्लिआ । पुरिल्लं । हेट्ठिल्लं । उवरिल्लं । अप्पुल्लं आल्वालावपीच्छन्त्यन्ये ।

(अमुक स्थान पर) हुआ (=उत्पन्न) इस अर्थ में. संज्ञा के आगे इल्ल ओर उल्ल ऐसे ये दो डित् प्रत्यय आते हैं । उदा०—गामिल्लिआ…अप्पुल्लं । इस 'भव' के अर्थ में, अलु और आल ऐसे प्रत्यय भी आते हैं, ऐसा कुछ वैयाकरणों का मत है ।

---

१. क्रमसे—सर्वत: । एकत: । अन्यत: । कुत: । यत: । तत: । इत: । २. सर्वत: । ३. एकदा । ४. क्रमसे—√ग्राम । √पुर: (सूत्र २·१६४ देखिए) । √हेट्ठ (सूत्र २·१४१ देखिए) । √उपरि । √अप्प (सूत्र २·५१ देखिए) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वार्थे कश्च वा ॥ १६४ ॥

स्वार्थे कश्चकारादिल्लोल्लौ डितौ प्रत्ययौ वा भवतः । क । कुंकुम[1]-पिंजरयं । चंदओ । गयणयम्मि । धरणीहर-पक्खुब्भन्तयं । दुहिअए रामहिअयए । इहयं । आलेट्ठुअं आश्लेष्टुम् इत्यर्थः । द्विरपि भवति । बहु[2]अयं । ककारोच्चारणं पैशाचिक-भाषार्थम् । यथा । वतनके[3] वतनकं समप्पेत्तून । इल्ल । निज्जिआसोअ-[4]पल्लविल्लेण । पुरिल्लो पुरो पुरा वा । उल्ल । मह[5] पिउल्लओ । मुहुल्लं[6] । हत्थुल्ला । पक्षे । चन्दो । गयणं । इह । आलेट्ठुं । बहुं । बहुअं । मुहं । हत्था । कुत्सादिविशिष्टे तु संस्कृतवदेव कप् सिद्धः । यावादि लक्षणः कः प्रतिनियतविषय एवेति वचनम् ।

क और (सूत्रमें से) चकार के कारण इल्ल और उल्ल ये दो डित् प्रत्यय विकल्पसे स्वार्थे (=अपने आप इस अर्थ में) प्रत्यय होते हैं । उदा०—(स्वार्थे) क (प्रत्यय)—कुंकुम…इहयं । आलेट्ठुअं (यानी) आश्लेष्टुम् ऐसा अर्थ है । (यह स्वार्थे क प्रत्यय एकही शब्दको) दो बार भी लगता है । उदा०—बहुअयं । (सूत्रमें) क का उच्चारण पैशाचिक (=पैशाची) भाषा के लिए है । उदा०—वतनके……प्पेत्तून । (स्वार्थे) इल्ल (प्रत्यय)—निज्जिआसोअ—पल्लविल्लेण । पुरिल्लो (यह शब्द) पुरः अथवा पुरा (इन शब्दों से बना है) । (स्वार्थे) उल्ल (प्रत्यय)—मह……हत्थुल्ला । (विकल्प–) पक्ष में—चंदो…… हत्था । परंतु कुत्सा इत्यादि विशिष्ट अर्थ में कहना हो, तो संस्कृत के समान कप् प्रत्यय सिद्ध होता है । यावादि-लक्षण (ऐसा क प्रत्यय) विशिष्ट शब्दों को निश्चित रूप से लगता है ऐसा वचन है ?

ल्लो नवैकाद्वा ॥ १६५ ॥

आभ्यां स्वार्थे संयुक्तो लो वा भवति । नवल्लो । एकल्लो । सेवादित्वात् कस्य द्वित्वे एक्कल्लो पक्षे । नवो । एक्को एओ ।

नव और एक इन शब्दो के आगे संयुक्त ल (=ल्ल) ऐसा स्वार्थे प्रत्यय विकल्पसे आता हैं । उदा०—नवल्लो, एकल्लो । (एक शब्द) सेवादि शब्दोंके गणमें होने के कारण (सूत्र २·९९ देखिए), क का द्वित्व होने पर—एक्कलो (रूप होता है) । विकल्प—पक्षमें—नवो……एओ ।

उपरेः संव्याने ॥ १६६ ॥

संव्यानेर्थे वर्तमानादुपरिशब्दात् स्वार्थे ल्लो भवति । अवरिल्लो । संव्यान इति किम् । अवरिं ।

---

१. क्रमसे—कुंकुम-पिञ्जरकम् । चन्द्रक । √गगन । धरणीधर–पक्ष उद्भ्रान्तकम् । दुःखित के रामहृदयके । √इह । √आश्लेष्टुम् । २. √बहुक ।

३. वदनके वदनकं समर्प्य । ४. निर्जित-अशोक-पल्लवकेन ।

५. मम पितृकः । ६. क्रमसे—√मुख । हस्त ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संव्यान (= ढक्कन, वस्त्र) इस अर्थ में होनेवाले 'उपरि' शब्द के आगे ल्ल प्रत्यय स्वार्थे आता है। उदा०–अवरिल्लो। संव्यान अर्थ में होनेवाले ऐसा क्यों कहा है? (कारण वह अर्थ न होने पर; स्वार्थे ल्ल प्रत्यय नहीं लगता है। उदा०–)अवरिं।

भ्रुवो मया डमाया ॥ १६७ ॥

भ्रूशब्दात् स्वार्थे मया डमया इत्येतौ प्रत्ययौ भवतः। भुमया। भमया।

भ्रू शब्द के आगे मया और डमया (= अमया) ऐसे ये प्रत्यय स्वार्थे आते हैं। उदा०—भुमया, भमया।

शनैसो डिअं ॥ १६८ ॥

शनैस् शब्दात् स्वार्थे डिअम् भवति। सणि [1]अमवगूढो।

शनैः शब्द के आगे डिअं (इअं) ऐसा स्वार्थे प्रत्यय आता है। उदा०—सणि... गूढो।

मनाको न या डयं च ॥ १६९ ॥

मनाक् शब्दात् स्वार्थे डयं डिअं च प्रत्ययो वा भवति। मणयं मणियं। पक्षे। मणा।

मनाक् शब्दके आगे अयं (डयं) और इअं (डिअं) ऐसे स्वार्थे प्रत्यय विकल्पसे आते हैं। उदा०–मणयं, मणियं। (विकल्प–) पक्षमें–मणा।

मिश्राड्डालिअः ॥ १७० ॥

मिश्रशब्दात् स्वार्थे डालिअः प्रत्ययो वा भवति। मीसालिअं। पक्षे। मीसं।

मिश्र शब्दके आगे डालिअ (आलिअ) ऐसा स्वार्थे प्रत्यय विकल्प से आता है। मीसालिअं। (विकल्प–) पक्षमें–मीसं।

रो दीर्घात् ॥ १७१ ॥

दीर्घशब्दात् परः स्वार्थे रो वा भवति। दीहरं। दीहं।

दीर्घ शब्दके आगे र ऐसा स्वार्थे प्रत्यय विकल्प से आता है। उदा०–दीहरं,दीहं।

त्वादेः सः ॥ १७२ ॥

भावे त्वतल् (हे० ७.१) इत्यादिना विहितात् त्वादेः परः स्वार्थे स एव त्वादिर्वा भवति। मृदुकत्वेन मउअत्तयाइ। आतिशायिकात् त्वातिशायिकः

1. शनैः अवगूढः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संस्कृतवदेव सिद्धः । जेट्ठ[1]यरो । कणिट्ठयरो ।

'भावे त्वतल्' इत्यादि सूत्र से कहे हुए त्व इत्यादि (प्रत्ययों) के आगे वही त्व इत्यादि प्रत्यय विकल्पसे स्वार्थे प्रत्यय इस स्वरूप में आते हैं । उदा०–मृदुकत्वेन मउअत्तयाइ । आतिशयित्व का आतिशयिकत्व दिखानेवाला प्रत्यय संस्कृत के समान ही सिद्ध होता है । उदा०...जेट्ठयरो, कणिट्ठयरो ।

विद्युत्पत्रपीतान्धाल्लः ॥ १७३ ॥

एभ्यः स्वार्थे लो वा भवति । विज्जुला । पत्तलं । पीवलं पीअलं अंधलो । पक्षे । विज्जू । पत्तं । पीअं । अंधो । कथं जमलं । यमलमिति संस्कृतशब्दाद् भविष्यति ।

विद्युत्, पत्र, पीत और अन्ध शब्दों के आगे ल ऐसा स्वार्थे प्रत्यय विकल्प से आता है । उदा०...विज्जुला .....अंधलो । (विकल्प...) पक्षमें...विज्जू ..अंधो । (प्रश्न...) जमल रूप कैसे होता है ? (उत्तर...) वह रूप संस्कृत यमल शब्दसे होगा ।

गोणादयः ॥ १७४ ॥

गोणादयः शब्दाः अनुक्तप्रकृतिप्रत्ययलोपागमवर्णविकारा बहुलं निपात्यन्ते । गौः गोणो गावी । गावः गावीओ । बलीवर्दः बइल्लो । आपः । आऊ । पञ्चपञ्चाशत् पञ्चावण्णा पणपन्ना । त्रिपञ्चाशत् तेवण्णा । त्रिचत्वारिंशत् तेआलीसा । व्युत्सर्गः वि उसग्गो । व्युत्सर्जनम् वोसिरणं । बहिर्मैथुनं वा बहिद्धा । कार्यम् णमुक्कसिअं । क्वचित् कत्थइ । उद्वहति मुव्वहइ । अपस्मारः वम्हलो । उत्पलं कन्दुट्टं । धिक् धिक् छि छि धिद्धि । धिगस्तु धिरत्थु । प्रतिस्पर्धा पडिसिद्धी पाडिसिद्धी । स्थासकः । चंचिकं । निलयः निहेलणं । मघवान् मघोणो । साक्षी सक्खिणो । जन्म जम्मणं । महान् महन्तो । भवान् भवन्तो । आशीः आसीसा । क्वचित् हस्य डुभौ । बृहत्तरम् वड्डयरं । हिमोरः भिमोरो । ल्लस्य ड्डः । क्षुल्लकः खुड्डुओ । घोषाणामग्रे तनो गायनः घायणो । वढः वढो । ककुदम् ककुधं । अकाण्डम् अत्थक्कं । लज्जावती लज्जालुइणी । कुतूहलम् कुड्डं । चूतः मायंदो । माकन्द शब्दः संस्कृतेपीत्यन्ये । विष्णुः भट्टिओ । श्मशानम् करसी । असुराः अगया । खेलम् खेड्डं । पौष्पं रजः तिगिच्छि । दिनम् अल्लं । समर्थः पक्कलो । पण्डकः णेलच्छो । कर्पासः पलही । बली उज्जल्लो । ताम्बूलम् झसुरं । पुंश्चली छिछई । शाखा साहुली । इत्यादि । वाधिकारात् पक्षे यथादर्शनं गउओ इत्याद्यपि भवति । गोला

---

१. क्रमसे √ ज्येष्ठतरः । कनिष्ठतरः ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

गोआवरी इति तु गोदा-गोदावरीभ्यां सिद्धम्। भाषाशब्दाश्च। आहित्य[1] लल्लक्क विड्डिर पच्चड्डिअ उप्पेहड मडप्फर पड्डिच्छिर अट्टमट्ट विहडप्फड उज्जल्ल हल्लप्फल्ल इत्यादयो महाराष्ट्रविदर्भादिदेशप्रसिद्धा लोकतोऽवगन्तव्याः। क्रियाशब्दाश्च। [2]अवयासइ फुम्फुल्लइ उप्फालेइ इत्यादयः। अतएव च कृष्ट–घृष्ट–वाक्य–विद्वस्–वाचस्पति–विष्टरश्रवस्–प्रचेतस्–प्रोक्त–प्रोतादीनां क्विबादिप्रत्ययान्तानां च अग्निचित्–सोमसुत्–सुग्ल–सुम्लेत्यादीनां पूर्वैः कविभिरप्रयुक्तानां प्रतीति वैषम्यपरः प्रयोगो न कर्तव्यः। शब्दान्तरैरेव तु तदर्थोऽभिधेयः। यथा। कृष्टः, कुशलः। वाचस्पतिः गुरुः। विष्टरश्रवा हरिः। इत्यादि। घृष्टशब्दस्य तु सोपसर्गस्य प्रयोग इष्यते एव। [3]मन्दरयडपरिघट्टं। तद्दिअसनिहट्ठाणंग। इत्यादि। आर्षे तु तु यथादर्शनं सर्वमविरुद्धम्। यथा। [4]घट्ठा। मट्ठा। विउसा। सुअलक्खणाणुसारेण।वक्कन्तरेसु अपुणो, इत्यादि।

(अब जिन शब्दों के बारे में) प्रकृति, प्रत्यय लोप, आगम (किंवा अन्य) वर्णविकार नहीं कहे हैं, ऐसे गोण इत्यादि शब्द प्राय: निपातके स्वरूप में आते हैं। उदा०—गौः गोणो······आसीसा। क्वचित् (मूल संस्कृत शब्द में से) ह के ड्ड और भ होते हैं। उदा०—बृहत्तरम्······भिमोरो। (कभी) ल्ल का ड्ड होता है। उदा०—क्षुल्लकः खुड्डओ। घोषाणामग्रेतनो······मायंदो। माकन्द शब्द संस्कृत में भी है ऐसा अन्य लोग कहते हैं। विष्णुः भट्टिओ······साहुली, इत्यादि। (इस सूत्र में भी सूत्र २.१६५ में से) वा (= विकल्प) शब्द का अधिकार होने के कारण, विकल्प पक्ष में (ऊपर दिए हुए शब्दों के रूप वाङ्मय में) जैसा दिखाई देगा वैसा, गउओ इत्यादि भी होते हैं। गोला और गोआवरी ये रूप मात्र गोदा और गोदावरी इन (संस्कृत) शब्दों से सिद्ध होते हैं। और उस देश की भाषाओं में से (विशिष्ट ऐसे) आहित्य (आहित्थ)······हुल्लफल्ल इत्यादि शब्द महाराष्ट्र, विदर्भ इत्यादि देशों में प्रसिद्ध हैं और वे लोगों से ही जानते हैं। (इसीतरह) क्रियावाचक शब्द भी (= क्रियापद भी) (दिखाई देते हैं। उदा०—) अवयासइ···उप्फालेइ, इत्यादि। और इसीलिए ही कृष्ट······प्रोत, इत्यादि शब्द तथा क्विप् इत्यादि प्रत्ययों से अन्त होनेवाले अग्निचित्··· सुम्ल, इत्यादि शब्दों का जो पूर्व कवियों ने नहीं प्रयुक्त किए हैं, (उनके बारे में) अर्थ समझने में प्रत्यवाय हो ऐसा प्रयोग न करे,

---

१. क्रमसे—क्रुद्ध। भयंकर। क्षरित। आडम्बरयुक्त। गर्व। सदृश। अशुभसंकल्प। व्याकुल। बलिष्ठ। त्वरा।

२. क्रमसे—श्लिष्यति। (प्र+फुल्ल) ?: (उद्+स्फाय्) ?।

३. क्रमसे—मन्दरतटपरिघृष्टम्। तद्दिवसनिघृष्टानङ्ग।

४. क्रमसे—घृष्ट। मृष्ट। विद्वस्। श्रुतलक्षणानुसारेण। वाक्यान्तरेषु च पुनः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उनका अर्थ (उनके) अन्य समानार्थक शब्दों के द्वारा कहे । उदा० — कृष्ट (के बदले) कुशल, वाचस्पति (के बदले) गुरु, विष्टरश्रवा: (के बदले) हरि, इत्यादि । तथापि पीछे उपसर्ग होनेवाले धृष्ट शब्द के प्रयोग की अनुज्ञा है । उदा० — मन्दरयड······ ट्ठाणंग, इत्यादि । आर्ष प्राकृत में, (साहित्य में) जैसा दिखाई देगा वैसा, सर्व ही प्रयोग ठीक (= अविरुद्ध) होते हैं । उदा — घट्ठा···अपुणो, इत्यादि ।

अव्ययम् ॥ १७५ ॥

अधिकारोऽयम् । इतः परं ये वक्ष्यन्ते आ पाद समाप्तेस्तेऽव्ययसंज्ञा ज्ञातव्याः ।

(सूत्र में से अव्यय शब्द का) अधिकार है । इस पाद के अन्त तक यहाँ से आगे जो (शब्द) कहे जाएँगे, उनको अव्यय संज्ञा है ऐसा जाने ।

तं वाक्योपन्यासे ॥ १७६ ॥

तमिति वाक्योपन्यासे प्रयोक्तव्यम् । तं ति[1]असबंदि मोक्खं ।

तं (अव्यय) वाक्य का प्रारंभ करते समय प्रयुक्त करे । उदा० — तं तिअस··· मोक्खं ।

आम अभ्युपगमे ॥ १७७ ॥

आमेत्यभ्युपगमे प्रयोक्तव्यम् । आम [2]बहुला वणोली ।

आम (अव्यय) अभ्युपगम (= स्वीकार, संमति) करते समय प्रयुक्त करे । उदा० — आम······वणोली ।

णवि वैपरीत्ये ॥ १७८ ॥

णवीति वैपरीत्ये प्रयोक्तव्यम् । णवि हा[3] वणे ।

णवि (अव्यय) वैपरीत्य (= विपरीतपन, उलटेपन) दिखाने के लिए प्रयुक्त करे । उदा० — णवि······वणे ।

पुणरुत्तं कृतकरणे ॥ १७९ ॥

पुणरुत्तमिति कृतकरणे प्रयोक्तव्यम् । अइ सुप्पइ[4] पंसुलि णीसहेहिँ अंगेहिँ पुणरुत्तं ।

---

१. त्रिदशबन्दिमोक्ष । २. बहुलावनाली ।

३. हा वने । (हा अव्यय) खेद सूचक है ।)

४. अयि (अति) स्वपिति पांसुला निःसहैः अंगैः (पुणरुत्तं) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृतकरण (=किया हुआ पुनः करना) अर्थ में पुणरुत्तं (अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा०—अइ······पुणरुत्तं।

हन्दि विषादविकल्पपश्चात्तापनिश्चयसत्ये ॥१८०॥

हन्दि इति विषादादिषु प्रयोक्तव्यम्।

हन्दि[1] चलणे णओ सो ण माणिओ हन्दि हुज्ज एत्ताहे।
हन्दि न होही भणिरी सा सिज्जइ हन्दि तुह कज्जे ॥ १ ॥
हन्दि। सत्यमित्यर्थः।

विषाद इत्यादि यानी विषाद, विकल्प, पश्चात्ताप, निश्चय और सत्य ये अर्थ दिखाने के लिए हंदि अव्यय प्रयुक्त करे। उदा०—हंदि चलणे······कज्जे। हन्दि। (यानी) सत्य ऐसा अर्थ है।

हन्द च गृहाणार्थे ॥ १८१ ॥

हन्द हन्दि च गृहाणार्थे प्रयोक्तव्यम्। [2]हन्द पलोएसु इमं। हन्दि। गृहाणेत्यर्थः।

गृहाण (= ले) इस अर्थ में हन्द तथा हन्दि (ये अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा०—हन्द ····इमं। हन्दि। यानी गृहाण (= ले) ऐसा अर्थ है।

मिव पिव विव व्व व विअ इवार्थे वा ॥ १८२ ॥

एते इवार्थे अव्ययसंज्ञकाः प्राकृते वा प्रयुज्यन्ते। [3]कुमुअं मिव। चन्दणं पिव। हंसो विव। साअरो व्व। [4]खीरोओ सेसस्स व निम्मोओ। कमलं विअ। पक्षे। नीलु[5]प्पलमाला इव।

मिव, पिव, विव, व्व, व, विअ ये अव्यय—संज्ञक शब्द प्राकृत में इव (= जैसा, समान) इस शब्द के अर्थ में विकल्प से प्रयुक्त किए जाते हैं। उदा०—कुमुअंमिव··· कमलंविअ। (विकल्प-) पक्ष में—नीलु ····इव।

जेण तेण लक्षणे ॥ १८३ ॥

जेण तेण इत्येतौ लक्षणे प्रयोक्तव्यौ। भमररुअं[6] जेण कमलवणं। भमर-

---

१. (हन्दि) चरणे नतः सः न मानितः (हन्दि) भविष्यति इदानीम्। (हन्दि) न भविष्यति भणनशीला सा स्विद्यति (हन्दि) तव कार्ये।

२. प्रलोकयस्व इदम्।

३. क्रमसे—कुमुदं (इव)। चन्दनं (इव)। हंसः (इव)। सागरः (इव)।

४. क्रमसे—क्षीरोदः शेषस्य (इव) निर्मोकः। कमलं (इव)।

५. नीलोत्पलमाला इव।

६. क्रमसे—भ्रमररुतं येन कमलवनम्। भ्रमररुतं तेन कमलवनम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लक्खं तेण कमलवणं ।

लक्षण (= चिह्न) दिखाने के लिए जेण और तेण (ये दो) अव्यय प्रयुक्त करे। उदा० — भमररुअं ······ वणं ।

णइ चेअ चिअ च्च अवधारणे ॥ १८४ ॥

एतेवधारणे प्रयोक्तव्याः । गईए[1] णइ । जं चेअ मउलणं लोअणाणं। अणुबद्धं तं चिअ कामिणीणं । सेवादित्वाद् द्वित्वमपि । ते च्चिअ[2]-धन्ना । ते च्चेअ सुपुरिसा । च्च । स[3] च्च य रूवेण । स च्च सीलेण ।

णइ, चेअ. चिअ, और च्च ये शब्द अवधारण दिखाने के लिए प्रयुक्त करे। उदा० — गईए······कामिणीणं । (चेअ ओर चिअ शब्द) सेवादि-गणमें (सूत्र २.९९ देखिए) अंतर्भूत होने के कारण, (उन शब्दों में) द्वित्व भी होता है। उदा० — तेच्चिअ······सुपुरिसा । च्च (का प्रयोग)—सच्च······सीलेण ।

बले निर्धारणनिश्चययोः ॥ १८५ ॥

बले इति निर्धारणे निश्चये च प्रयोक्तव्यम् । निर्धारणे । बले [4]पुरिसो धणंजओ खत्तिआणं । निश्चये । बले सीहो । सिंह एवायम् ।

निर्धारण और निश्चय दिखाने के लिए बले (अव्यय) प्रयुक्त करे। निर्धारण (दिखाने के लिए)—बले······खत्तिआणं । निश्चय (दिखाने के लिए)— बले सीहो (यानी) यह सिंहही है (ऐसा अर्थ होता है) ।

किरेर हिर किलार्थे वा ॥ १८६ ॥

किर इर हिर इत्येते किलार्थे वा प्रयोक्तव्याः। कल्लं किर[5] खरहिअओ। तस्स इर । पिअवयंसो हिर । पक्षे। एवं किल[6] तेण सिविणए भणिआ।

किर, इर, और हिर ऐसे ये शब्द किल (= सचमुच, इत्यादि) शब्द के अर्थ में प्रयुक्त करे । उदा० —कल्लं······हिर । (विकल्प—) पक्ष में—एवं··· भणिआ ।

---

१. क्रमसे–गत्या (एव) यद् (एव)मुकुलनं लोचनयोः । अनुबद्धं तद् (एव) कामिनीनाम्

२. ते (एव) धन्याः । ते (एव) सुपुरुषाः ।

३. क्रमसे—सः (एव) च रूपेण । सः (एव) शीलेन ।

४. (बले) पुरुषः धनंजयः क्षत्रियाणाम् ।

५. क्रमसे— कल्यं (किर) खरहृदयः । तस्य (इर) प्रियवयस्यः (हिर) ।

६. एवं किल तेन स्वप्न के भणिता ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णवरं केवले ॥ १८७ ॥

केवलार्थे णवर इति प्रयोक्तव्यम् । णवर[1] पिआइं चिअ णिव्वडन्ति ।

'केवल' इस अर्थ में णवर (अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा०—णवर... ...णिव्वडन्ति ।

आनन्तर्ये णवरि ॥ १८८ ॥

आनन्तर्ये णवरीति प्रयोक्तव्यम् । [2]णवरि अ से रहु वइणा । केचित्तु केवलानन्तर्यार्थयोर्णवरणवरि इत्येकमेव सूत्रं कुर्वते तन्मते उभावप्युभयार्थौ ।

आनन्तर्य (= अनन्तर, बाद में) दिखाने के लिए णवरि (ऐसा अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा०—णवरि... ...वइणा। परन्तु कुछ वैयाकरण 'केवलानन्तर्यार्थयोर्णवरणवरि' ऐसा एक ही सूत्र करते हैं; उनके मतानुसार, (णवर और णवरि ये) दोनों भी अव्यय (केवल और आनन्तर्य इन) दो अर्थों में होते हैं।

अलाहि निवारणे ॥ १८९ ॥

अलाहीति निवारणे प्रयोक्तव्यम् । अलाहि किं वाइ[3]एण लेहेण ।

अलाहि अव्यय निवारण दिखाते समय प्रयुक्त करे। उदा०—अलाहि... ...लेहेण ।

अण णाइं नञर्थे ॥ १९० ॥

अण णाइं इत्येतौ नञोर्थे प्रयोक्तव्यौ। अण[4]चिन्तिअममुणन्ती । णाइं करेमि रोसम् ।

अण और णाइं ये दो शब्द नञ् (न, नहीं) के अर्थ में प्रयुक्त करे। उदा०—अणचिंतिअ... ...रोसं ।

माइं मार्थे ॥ १९१ ॥

माइं इति मार्थे प्रयोक्तव्यम् । माइं काहीअ रोसं । मा कार्षीद् रोषम् ।

---

१. (णवर) पियाइं (चिअ) पृथक् । स्पष्टं भवन्ति। (णिव्वड के लिए सूत्र ४.६२ देखिए) ।

२. (णवरि) च तस्य रघुपतिना ।

३. (अलाहि) किं वाचितेन लेखेन ।

४. क्रम से :—(न) चिन्तितं अजानती । (न) न करोमि रोषम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माइं (अव्यय) मा (= मत) के अर्थ में प्रयुक्त करे। उदा०—माइं... ...रोसं (यानी वह) रोष न करे (ऐसा अर्थ है)।

हद्धी निर्वेदे ॥ १९२ ॥

हद्धी इत्यव्ययमत एव निर्देशात् हा धिक् शब्दादेशो वा निर्वेदे प्रयोक्तव्यम्। हद्धी हद्धी। हा धाह धाह।

हद्धी (यह) अव्यय अथवा, निर्देश होने के कारण 'हा धिक्' इन शब्दों का (होने वाला धाह ऐसा) आदेश (ये) निर्वेद (= खेद, शोक, वैराग्य) दिखाने के लिए प्रयुक्त करें। उदा०—हद्धी... ...धाह।

वेव्वे भयवारणविषादे ॥ १९३ ॥

भयवारणविषादेषु वेव्वे इति प्रयोक्तव्यम्।

वेव्वे त्ति[1] भये वेव्वे त्ति वारणे जूरणे अ वेव्वेत्ति।
उल्लाविरीइ वि तुहं वेव्वेत्ति मयच्छि किं णेअं ॥ १ ॥
किं[2] उल्लावेंतीए उअ जूरंतीएँ किं तु भीआए।
उव्वाडिरीएँ वेव्वे त्ति तीएँ भणिअं न विम्हरिमो ॥ २ ॥

भय, वारण (= निवारण) और विषाद (इन) अर्थों में वेव्वे (अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा—वेव्वे त्ति... ...विम्हरिमो ॥ २ ॥

वेव्व च आमन्त्रणे ॥ १९४ ॥

वेव्व वेव्वे च आमन्त्रणे प्रयोक्तव्ये [3]वेव्व गोले। वेव्वे मुरन्दले वहसि पाणिअं।

वेव्व और वेव्वे (ये दो अव्यय) आमन्त्रण करते समय प्रयुक्त करे। उदा०—वेव्व... ...पाणिअं।

मामि हला हले सख्या वा ॥ १९५ ॥

एते सख्या आमन्त्रणे वा प्रयोक्तव्याः। मामि सरिसक्ख[4]राण वि। पणवह माणस्स हला। हले हयासस्स। पक्षे। सहि[5] एरिसि च्चिअ गई।

---

1. (वेव्वे) इति भये (वेव्वे) इति वारणे जूरणे च (वेव्वे) इति।
   उल्लापनशीलायाः अपि तव (वेव्वे) इति मृगाक्षि किं ज्ञेयम् ॥
2. किं उल्लापयन्त्या उत जूरन्त्या किं तु भीतया।
   उद्विग्नया (वेव्वे) इति तया भणितं न विस्मरामः ॥
3. क्रम से :—(वेव्व) गोले। (वेव्वे) मुरन्दले वहसि पानीयम्।
4. क्रम से :— मामि) सादृशाक्षराणां अपि। प्रणमत मानस्य (हला)। हले हताशस्य।
5. सखि ईदृशी (च्चिअ) गतिः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दे संमुखीकरणे च ॥ १९६ ॥

सम्मुखीकरणे सख्या आमन्त्रणे च दे इति प्रयोक्तव्यम्। दे [1]पसिअ ताव सुंदरि। दे आ पसिअ निअत्तसु।

(एकाध का) ध्यान आकृष्ट करने के लिए तथा सखी को बुलाने के लिए दे (ऐसा अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा०—दे पसिअ⋯ ⋯निअत्तसु।

हुं दानपृच्छानिवारणे ॥ १९७ ॥

हुं इति दानादिषु प्रयुज्यते। दाने। हुं गेण्ह[2] अप्पणो च्चिअ। पृच्छायाम्। हुं साहसु[3] सब्भावं। निवारणे। हुं निल्लज्ज [4]समोसर।

हुं (यह अव्यय) दान इत्यादि यानी दान, पृच्छा और निवारण करने के प्रसंग में प्रयुक्त किया जाता है। उदा०—दान (प्रसंग) में :—हुं गेण्ह⋯ ⋯च्चिअ। पृच्छा करते समय :—हुं⋯ ⋯सब्भावं। निवारण करते समय :—हुं⋯ ⋯समोसर।

हु खु निश्चयवितर्कसंभावनविस्मये ॥ १९८ ॥

हु खु इत्येतौ निश्चयादिषु प्रयोक्तव्यौ। निश्चये। तंपि हु [5]अच्छिन्नसिरी। तं खु सिरीएँ रहस्सं। वितर्कः ऊहः संशयो वा। ऊहे। [6]न हु णवरं संगहिआ। एअं खु हसइ। संशये। [7]जलहरो खु धूमवडलो खु। सम्भावने। [8]तरीउं ण हु णवर इमं। एअं खु हसइ। विस्मये। को [9]खु एसो सहस्स-सिरो। बहुलाधिकारादनुस्वारात् परो हुर्न प्रयोक्तव्यः।

निश्चय इत्यादि यानी निश्चय, वितर्क, सम्भावन और विस्मय दिखाते समय, हु और खु ये दो (अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा०—निश्चय दिखाते समयः—तं पि⋯ ⋯रहस्सं। वितर्क यानी ऊह (= विचार) अथवा संशय (ऐसा अर्थ है)। ऊह दिखाते समय :—न हु⋯ ⋯हसइ। संशय दिखाते समय :—जलहरो⋯ ⋯खु।

---

१. क्रम से :—(दे) प्रसीद तावत् सुन्दरि। (दे) आ प्रसीद निवर्तस्व।
२. (हुं) गृहाण स्वयं (च्चिअ)।
३. (हुं) कथय सद्भावम्।
४. (हुं) निर्लज्ज समपसर।
५. क्रम से:—त्वं अपि (हु) अच्छिन्नश्रीः। त्वं। तद् (खु) श्रियः रहस्यम्।
६. क्रम से :—न (हुणवरं) संगृहीता। एतद् (खु) हसति।
७. जलधरः (खु) धूमपटलः (खु)।
८. क्रम से :—तरीतुं न (हु णवर) इदम्। एतद् (खु) हसति।
९. कः (खु) एषः सहस्रशिराः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्भावन दिखाते समय :—तरीउं··· ···हसइ । विस्मय दिखाते समय :—को··· ···सिरो । बहुल का अधिकार होने के कारण, अनुस्वार के आगे हु (यह अव्यय) न प्रयुक्त करे ।

ऊ गर्हाक्षेपविस्मयसूचने ॥ १९९ ॥

ऊ इति गर्हादिषु प्रयोक्तव्यम् । गर्हा । [1]ऊ णिल्लज्ज । प्रक्रान्तस्य वाक्यस्य विपर्यासाशंकाया विनिवर्तनलक्षणः आक्षेपः । ऊ किं भए[2] भणिअं । विस्मये । ऊ[3] कह मुणिआ अहयं । सूचने । ऊ[4] केण न विण्णायं ।

गर्हा इत्यादि यानी गर्हा, आक्षेप, विस्मय और सूचन दिखाते समय, ऊ (यह अव्यय) प्रयुक्त करे । उदा०—गर्हा (= निंदा) दिखाते समय :—ऊ णिल्लज्ज । (बोलने में) शुरु किए वाक्य का विपर्यास होगा इस आशंका से पूर्व—कथितसे संबंधित ऐसा आक्षेप होता है । (यह आक्षेप दिखाते समय) : ऊ··· ···भणिअं । विस्मय (दिखाते समय) :—ऊ कह··· ···अहयं । सूचन करते वक्त :—ऊ··· ···विण्णायं ।

थू कुत्सायाम् ॥ २०० ॥

थू इति कुत्सायां प्रयोक्तव्यम् । थू निल्लज्जो[5] लोओ ।

थू (अव्यय) कुत्सा दिखाने के लिए प्रयुक्त करे । उदा०—थू··· ···लोओ ।

रे अरे संभाषणरतिकलहे ॥ २०१ ॥

अनयोरर्थयोर्यथासंख्यमेतौ प्रयोक्तव्यौ । रे सम्भाषणे । रे हिअय[6] मडहसरिआ । अरे रतिकलहे । अरे [7]मए समं मा करेसु उवहासं ।

सम्भाषण और रति कलह इन अर्थों में अनुक्रम से रे और अरे ये अव्यय प्रयुक्त करे । उदा०—सम्भाषण अर्थ में रे :—रे··· ···सरिआ । रतिकलह अर्थ में :—अरे··· ···उवहासं ।

हरे क्षेपे च ॥ २०२ ॥

क्षेपे सम्भाषणरतिकलहयोश्च हरे इति प्रयोक्तव्यम् । क्षेपे । हरे णि-[8]ल्लज्ज । सम्भाषणे । हरे पुरिसा[9] । रतिकलहे । हरे [10]बहुवल्लह ।

---

१. (ऊ) निर्लज्ज ।
२. (ऊ) किं मया भणितम् ।
३. (ऊ) कथं ज्ञाता अहम् ।
४. (ऊ) केन न विज्ञातम् ।
५. (थू) निर्लज्जः लोकः ।
६. रे हृदय अल्पसरित् ।
७. अरे मया समं मा कुरु उपहासम् ।
८. (हरे) निर्लज्ज ।
९. (हरे) पुरुष ।
१०. (हरे) बहुवल्लभ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षेप तथा सम्भाषण और रतिकलह इन अर्थों में हरे ऐसा अव्यय प्रयुक्त करे। उदा०—क्षेप अर्थ में :—हरे णिल्लज्ज। सम्भाषण में :—हरे पुरिसा।

रतिकलह में :—हरे बहुवल्लह।

ओ सूचनापश्चात्तापे ॥ २०३ ॥

ओ इति सूचनापश्चात्तापयोः प्रयोक्तव्यम्। सूचनायाम्। ओ [1]अविणयतत्तिल्ले। पश्चात्तापे। ओ न [2]मए छाया इत्तिआए। विकल्पे तु उतादेशेनैवौकारेण सिद्धम्। ओ [3]विरएमि नहयले।

ओ (यह अव्यय) सूचना और पश्चात्ताप दिखाने के लिए प्रयुक्त करे। उदा०—सूचना : ओ··· ···तत्तिल्ले। पश्चात्ताप दिखाते समय :—ओ न··· ··· इत्ति आए। विकल्प दिखाते समय मात्र उत (अव्यय) का आदेश इस स्वरूप में ओ (ऐसा अव्यय) सिद्ध होता है। उदा०—ओ··· ···यले।

अव्वो सूचना-दुःख-संभाषणापराध-विस्मयानन्दादर-भय-खेद-विषाद-पश्चात्तापे ॥ २०४ ॥

अव्वो इति सूचनादिषु प्रयोक्तव्यम्। सूचनायाम्। अव्वो दुक्कर[4]-कारय। दुःखे। अव्वो दलन्ति[5] हिययं। सम्भाषणे किमिणं[6] किमिणं। अपराधविस्मययोः।

अव्वो हरन्ति हिअयं तह[7] वि न वेसा हवन्ति जुवईण।
अव्वो किं पि रहस्सं मुणन्ति धुत्ता जणब्भहिआ ॥ १ ॥

आनन्दादर-भयेषु।

अव्वो [8]सुपहाय मिणं अव्वो अज्जम्ह सप्फलं जीअं।
अव्वो अइ अम्मि तुमे नवरं जइ सा न जूरिहिइ ॥ २ ॥

खेदे। अव्वो न[9] जामि छेत्तं।

विषादे।

---

१. (ओ) अविनयतत्परे। २. (ओ) न मया छाया एतावत्याम्।
३. (ओ) विरचयामि नभस्तले। ४. (अव्वो) दुष्करकारक।
५. (अव्वो) दलन्ति हृदयम्। ६. (अव्वो) किमिदं किमिदं।
७. (अव्वो) हरन्ति हृदयं तथा अपि न द्वेष्या भवन्ति युवतीनाम्।
(अव्वो) किं अपि रहस्यं जानन्ति धूर्ता जनाभ्यधिकाः॥
८. (अव्वो) सुप्रभातमिदं (अव्वो) अद्यास्माकं (अद्य मम) सफलं जीवितम्।
(अव्वो) अतीते त्वयि (नवरं) यदि सा न खेत्स्यति।
९. (अव्वो) न यामि क्षेत्रम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अव्वो नासेन्ति[1] दिहिं पुलयं वड्ढेन्ति देन्ति रणरणयं ।
एण्हि तस्सेअ गुणा ते च्चिअ अव्वो कह णु एअं ।। ३ ।।
पश्चात्तापे ।
अव्वो तह तेण कया[2] अहयं जह कस्स साहेमि ।। ४ ।।

अव्वो (ऐसा यह अव्यय) सूचना इत्यादि यानी सूचना, दुःख, संभाषण, अपराध, विस्मय, आनन्द, आदर, भय, खेद, विषाद और पश्चात्ताप दिखाने के लिए प्रयुक्त करे । उदा०— सूचना दिखाने के लिएः—अव्वो दुक्करकारय । दुःख के बारे मेंः—अव्वो······हिययं । संभाषण मेंः—अव्वो······किमिणं । अपराध और विस्मय दिखाते वक्तः—अव्वो हरन्ति······अभहिया ।। १ ।। आनंद, आदर और भय इनके बारे मेंः—अव्वो सुपहाय······जूरिहिइ ।। २ ।। खेद दिखाते समयः—अव्वो ······छेत्तं । विषाद दिखाते समयः—अव्वो नासेन्ति······एअं ।। ३ ।। पश्चात्ताप मेंः—अव्वो तह······साहेमि ।। ४ ।।

अइ संभावने ।। २०५ ।।

संभावने अइ इति प्रयोक्तव्यम् । अइ[3] दिअर किं न पेच्छसि ।

संभावन दिखाने के लिए अइ ऐसा अव्यय प्रयुक्त करे । उदा०—अइ···पेच्छसि ।

वणे निश्चयविकल्पानुकम्प्ये च ।। २०६ ।।

वणे इति निश्चयादौ सम्भावने च प्रयोक्तव्यम् । वणे देमि । निश्चयं ददामि । विकल्पे । होइ वणे न होइ । भवति वा न भवति । अनुकम्प्ये । दासो वणे न मुच्चइ । दासो न त्यज्यते । सम्भावने । नत्थि [4]वणे जं न देइ विहिपरिणामो । सम्भाव्यते एतदित्यर्थः ।

निश्चय इत्यादि यानी निश्चय, विकल्प और अनुकम्प्य ये अर्थ दिखाने के लिए तथा संभावन अर्थ में, वणे (ऐसा अव्यय) प्रयुक्त करे । उदा०—वणे देमि यानी मैं निश्चित रूप से देता हूँ । विकल्प दिखाते समयः—होइ······होइ यानी होता है अथवा नहीं होता है । अनुकम्प्य अर्थ मेंः—दासो·· ···मुच्चइ यानी अनुकंपनीय ऐसे दास का त्याग नहीं किया जाता है । संभावन अर्थ मेंः—नत्थि······परिणामो यानी यह संभवनीय है, ऐसा अर्थ है ।

---

१. (अव्वो नाशयन्ति धृतिं पुलकं वर्धयन्ति ददति रणरणकम् ।
इदानीं तस्यैव गुणाः ते (च्चिअ अव्वो) कथं नु एतत् ।।
२. (अव्वो) तथा तेन कृता अहं यथा कस्य कथयामि ।
३. (अइ) देवर किं न प्रेक्षसे ।
४. नास्ति (वणे) यद् न ददाति विधिपरिणामः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणे विमर्शे ॥ २०७ ॥

मणे इति विमर्शे प्रयोक्तव्यम्। मणे सूरो। किं स्वित् सूर्यः। अन्ये मन्ये इत्यर्थमपिच्छन्ति।

मणे ऐसा अव्यय विमर्श अर्थ में प्रयुक्त करे। उदा०—मणे सूरो (यानी) क्या यह सूर्य है? (मणे अव्यय का) मन्ये (=मैं मानता हूँ) ऐसा भी अर्थ है, ऐसा अन्य (वैयाकरण) मानते हैं।

अम्मो आश्चर्ये ॥ २०८ ॥

अम्मो इत्याश्चर्ये प्रयोक्तव्यम्। अम्मो कह[1] पारिज्जइ।

अम्मो (अव्यय) आश्चर्य दिखाने के लिए प्रयुक्त करे। उदा०—अम्मो···पारिज्जइ।

स्वयमोर्थे अप्पणो न वा ॥ २०९ ॥

स्वयमित्यस्यार्थे अप्पणो वा प्रयोक्तव्यम्। विसयं [2]विअसन्ति अप्पणो कमलसरा। पक्षे। सयं चेअ [3]मुणसि करणिज्जं।

स्वयं (शब्द) के अर्थ में अप्पणो (शब्द) विकल्प से प्रयुक्त करे। उदा०—विसयं···सरा। (विकल्प–) पक्ष में:—सयं······करणिज्जं।

प्रत्येकमः पाडिक्कं पाडिएक्कं ॥ २१० ॥

प्रत्येकमित्यस्यार्थे पाडिक्कं पाडिएक्कं इति च प्रयोक्तव्यं वा। पाडिक्कं पाडिएक्कं। पक्षे। पत्तेअं।

प्रत्येकम् (शब्द) के अर्थ में पाडिक्कं और पाडिएक्कं (ये शब्द) विकल्प से प्रयुक्त करे। उदा०—पाडिक्कं, पाडिएक्कं। (विकल्प–) पक्ष में:—पत्तेअं।

उअ पश्य ॥ २११ ॥

उअ इति पश्येत्यस्यार्थे प्रयोक्तव्यं वा।

उअ निच्चल[4]निप्फंदा भिसिणी पत्तंमि रेहइ बलाआ।
निम्मल मरगय मायण परिट्ठिआ संखसुत्ति व्व ॥ १ ॥

पक्षे पुलआदयः।

---

१. (अम्मो) कथं शक्यते।

२. विशदं विकसन्ति स्वयं (अप्पणो) कमल सरांसि।

३. स्वयं (चेअ) जानासि करणीयम्।

४. पश्य निश्चल निष्पंदाबिसिनीपत्रे राजते बलाका।
निर्मल-मरकत-भाजन-परिस्थिता शंखशुक्तिः इव ॥

पश्य (= देखो) इस (शब्द) के अर्थ में उअ ऐसा (अव्यय) विकल्प से प्रयुक्त करे। उदा०—उअ······सुत्तित्व। (विकल्प—) पक्ष में:—पुलअ इत्यादि (शब्द प्रयुक्त करे)।

इहरा इतरथा ॥ २१२ ॥

इहरा इति इतरथार्थे प्रयोक्तव्यं वा। इहरा[1] नी सामन्नेहिँ। पक्षे। इअरहा।

इतरथा (= नहीं तो) अर्थ में इहरा ऐसा शब्द विकल्प से प्रयुक्त करे। उदा०—इहरा नीसामन्नेहिँ। (विकल्प—) पक्ष में:—इअरहा।

एक्कसरिअं झगिति संप्रति ॥ २१३ ॥

एक्कसरिअं झगित्यर्थे सम्प्रत्यर्थे च प्रयोक्तव्यम्। एक्कसरिअं। झगिति सांप्रतं वा।

झगिति (=एकदम, सहसा) अर्थ में तथा संप्रति (=अब) अर्थ में एक्कसरिअं (अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा०—एक्कसरिअं (यानी) अचानक-सहसा अथवा सांप्रत ऐसा अर्थ है।

मोरउल्ला मुधा ॥ २१४ ॥

मोरउल्ला इति मुधार्थे प्रयोक्तव्यम्। मोरउल्ला। मुधेत्यर्थः।

मोरउल्ला (अव्यय) मुधा (शब्द) के अर्थ में प्रयुक्त करे। उदा०—मोरउल्ला (यानी) मुधा ऐसा अर्थ है।

दरार्धाल्पे ॥ २१५ ॥

दर इत्यव्ययमर्धार्थे ईषदर्थे च प्रयोक्तव्यम्। दर-विअसिअं। अर्धेनेषद् वा विकसितमित्यर्थः।

दर ऐसा अव्यय अर्ध (=आधा) अर्थ और ईषद् (= अल्प, थोड़ा) इन अर्थों में प्रयुक्त करे। उदा०—दर-विअसिअं (यानी) आधा अथवा अल्प विकसित हुआ, ऐसा अर्थ है।

किणो प्रश्ने ॥ २१६ ॥

किणो इति प्रश्ने प्रयोक्तव्यम्। किणो [2]धुवसि।

प्रश्न पूछते समय किणो (अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा०—किणो धुवसि।

---

१. इतरथा निःसामान्यैः। २. (किणो) धुनोषि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इजेराः पादपूरणे ॥ २१७ ॥

इ जे र इत्येते पादपूरणे प्रयोक्तव्याः । न उणा[1] इ अच्छीइं । अणुकूलं[2] वोत्तुं जे । गेण्हइ[3] र कलमगोवी । अहो । हंहो । हेहो । हा । नाम । अहह । ही सि । अयि अहाह । अरि रि हो इत्यादयस्तु संस्कृतसमत्वेन सिद्धाः ।

इ, जे और र ऐसे (अव्यय पद्य में) पाद पूरण के लिए प्रयुक्त करे । उदा०— न उणा……गोवी । अहो, हंहो, हेहो, हा, नाम, अहह, ही सि, अयि, अहाह, अरि, रि, हो इत्यादि (अव्यय) संस्कृत-समान स्वरूप में ही सिद्ध होते हैं ।

प्यादयः ॥ २१८ ॥

प्यादयो नियतार्थवृत्तयः प्राकृते प्रयोक्तव्याः । पि वि अप्यर्थे ।

(अपने अपने नियत अर्थों में होने वाले पि इत्यादि (अव्यय) प्राकृत में (उस उस अर्थ में) प्रयुक्त करे । उदा०—पि, वि (ये अव्यय) अपि (अव्यय) के अर्थ में (प्रयुक्त करे) ।

इत्याचार्यश्रीहेमचन्द्रसूरिविरचितायां सिद्धहेमचन्द्राभिधानस्वोपज्ञ-शब्दानुशासनवृत्तौ अष्टमस्याध्यायस्य द्वितीयः पादः ॥

(आठवें अध्याय का दूसरा पाद समाप्त हुआ ।)

---

१. न पुनः (इ) अक्षिणी । २. अनुकूलं वक्तुं (जे) । ३. गृह्णाति (र) कलमगोपी ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तृतीयः पादः

वीप्स्यात् स्याद्वींप्स्ये स्वरे मो वा ॥ १ ॥

वीप्सार्थात् पदात् परस्य स्यादेः स्थाने स्वरादौ वीप्सार्थे पदे परे मो वा भवति। एकैकम् एक्कमेक्कं एक्कमेक्केण। अंगे अंगे अंगम्मि। पक्षे। एक्केक्क-मित्यादि।

स्वर से प्रारम्भ होनेवाले वीप्सार्थी पद आगे होने पर, पिछले वीप्सार्थी पद के आगे होनेवाले विभक्ति प्रत्यय के स्थान पर विकल्प से म् आता है। उदा०—एकैकम्……मंगंमि। (विकल्प—) पक्ष में:—एक्केक्कं; इत्यादि।

अतः सेर्डोः ॥ २ ॥

आकारान्तान्नाम्नः परस्य स्यादेः सेः स्थाने डो भवति। वच्छो[1]।

अकारान्त संज्ञा के आगे विभक्त प्रत्ययों में से सि (प्रत्यय) के स्थान पर डित् ओ (डो) आता है। उदा०—वच्छो।

वैतत्तदः ॥ ३ ॥

एतत्तदोकारात् परस्य स्यादेः सेर्डो वा भवति। एसो [2]एस। सो णरो स णरो।

एतद् और तद् इन (सर्वनामों) के अकार के आगे विभक्ति प्रत्ययों में से सि (प्रत्यय) का डो विकल्प से होता है। उदा०—एसो……णरो।

जस्शसोर्लुक् ॥ ४ ॥

अकारान्तान्नाम्नः परयोः स्यादिसम्बन्धिनोर्जस्शसोर्लुग् भवति। वच्छा[3] एए। वच्छे पेच्छ।

अकारान्त संज्ञा के आगे, विभक्ति प्रत्ययों से संबंधित रहनेवाले जस् और शस् इन प्रत्ययों का लोप होता है। उदा० —वच्छा……पेच्छ।

---

१. वृक्ष। २. क्रमसे:—एषः एष;। सः नरः स नरः।
३. क्रमसे:—वृक्षाः एते। वृक्षान् प्रेक्षस्व।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमोस्य ॥ ५ ॥

अतः परस्यामोकारस्य लुग् भवति । वच्छं पेच्छ ।

(शब्दों के अन्त्य) अकार के अगले अम् (प्रत्यय) में से अकार का लोप होता है। उदा०— वच्छं पेच्छ ।

टा-आमोर्णः ॥ ६ ॥

अतः परस्य टा इत्येतस्य षष्ठी बहुवचनस्य च आमो णो भवति। वच्छेण । वच्छाण ।

(शब्द के अन्त्य) अकार के अगले टा (प्रत्यय) का तथा षष्ठी बहुवचन के आम् (प्रत्यय) का ण होता है । उदा०—वच्छेण । वच्छाण ।

भिसो हि हिँ हिं ॥ ७ ॥

अतः परस्य भिसः स्थाने केवलः सानुनासिकः सानुस्वारश्च हिर्भवति । वच्छेहि वच्छेहिँ । [1]वच्छेहिं कया छाही ।

(शब्द के अन्त्य अकार के अगले भिस् (प्रत्यय) के स्थान पर केवल, सानुनासिक और अनुस्वारयुक्त 'हि' आता है । उदा०—वच्छेहि······छाही ।

ङसेस् त्तोःदो-दु-हि-हिन्तो-लुकः ॥ ८ ॥

अतः परस्य ङसेः त्तो दो दु हि हिन्तो लुक् इत्येते षडादेशा भवन्ति । वच्छत्तो । वच्छाओ । वच्छाउ । वच्छाहि । वच्छाहितो । वच्छा । दकारकरणं भाषान्तरार्थम् ।

(शब्द के अन्त्य) अकार के अगले ङसि (प्रत्यय) को त्तो, दो, दु, हि, हिन्तो और लोप ऐसे ये छः आदेश होते हैं । उदा०—वच्छत्तो ···वच्छा । (सूत्र के दो और दु में से) दकार का प्रयोग अन्य (यानी शौरसेनी) भाषा के लिए है ।

भ्यसस् त्तो दो दु हि हिन्तो सुन्तो ॥ ९ ॥

अतः परस्य भ्यसः स्थाने त्तो दो दु हि हिन्तो सुन्तो इत्यादेशा भवन्ति । वृक्षेभ्यः वच्छत्तो वच्छाओ वच्छाउ वच्छाहि वच्छेहि वच्छाहिन्तो वच्छेहिन्तो वच्छासुन्तो वच्छेसुन्तो ।

(शब्द के अन्त्य) अकार के अगले भ्यस् (प्रत्यय) के स्थान पर त्तो, दो, दु, हि, हितो और सुंतो ऐसे आदेश होते हैं । उदा०—वृक्षेभ्यः वच्छत्तो···वच्छे सुंतो ।

---

१. वृक्षैः कृता छाया ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ङसः स्सः ॥ १० ॥

अतः परस्य ङसः संयुक्तः सो भवति। पियस्स[1]। पेम्मस्स। उपकुम्भं शैत्यम् उवकुम्भस्स सीअलत्तणं।

(शब्द के अन्त्य) अकार के अगले ङस् (प्रत्यय) का संयुक्त स (=स्स) होता है। उदा०—पियस्स······सीअलत्तणं।

डे म्मि ङेः ॥ ११ ॥

अतः परस्य ङेर्डित् एकारः संयुक्तो म्मिश्च भवति। वच्छे वच्छम्मि। देवं देवम्मि। तं तम्मि। अत्र द्वितीयातृतीययोः सप्तमी (३.१३५) इत्यमो ङिः।

(शब्द के अन्त्य) अकार के अगले ङि (प्रत्यय) को डित् एकार और संयुक्त मि यानी म्मि (ऐसे आदेश) होते हैं। उदा०—वच्छे······तम्मि। (देवं और तं इन उदाहरणों में) 'द्वितीयातृतीययोः सप्तमी' सूत्रानुसार अम् (प्रत्यय) का ङि है।

जस्शस्ङसित्तोदोद्वामि दीर्घः ॥ १२ ॥

एषु अतो दीर्घो भवति। जसि शसि च। वच्छा। ङसि। वच्छाओ वच्छाउ वच्छाहि वच्छाहिंतो वच्छा। त्तोदोदुषु। वृक्षेभ्यः। वच्छत्तो। ह्रस्वः संयोगे। (१.८४) इति ह्रस्वः। वच्छाओ। वच्छाउ। आमि। वच्छाण। ङसिनैव सिद्धे त्तोदोदुग्रहणं भ्यसि एत्वबाधनार्थम्।

जस्, शस्, ङसि, त्तो, दो, दु और आम् (ये प्रत्यय आगे) होने पर, (उनके पीछले) अकार का दीर्घ (स्वर यानी आकार) होता है। उदा०—जस् और शस् (आगे होने पर) :—वच्छा। ङसि (आगे होने पर) :—वच्छाओ······वच्छा। त्तो, दो और दु (आगे होने पर) :—वृक्षेभ्यः वच्छत्तो, (इस वच्छत्तो रूप में यद्यपि पिछला अ दीर्घ होता है यानी च्छ का च्छा होता है, तथापि) 'ह्रस्वः संयोगे' सूत्रानुसार (वह दीर्घ आ) ह्रस्व हुआ है; वच्छाओ, वच्छाउ। आम् (आगे होने पर) :—वच्छाण। (सच कहे तो) ङसि प्रत्यय के निर्देश से (त्तो; दो और दु प्रत्ययों का ग्रह्य होकर, सूत्र में उनकी) सिद्धि होने पर भी, त्तो, दो और दु ऐसा (स्वतंत्र) निर्देश (सूत्र में) किया है, कारण (३·१५ सूत्र के अनुसार) भ्यस् प्रत्यय आगे होने वक्त होने वाले ए का बाध यहाँ हो, इसलिए।

भ्यसि वा ॥ १३ ॥

भ्यसादेशे परे अतो दीर्घो वा भवति। वच्छाहिन्तो वच्छेहिन्तो। वच्छासुन्तो वच्छेसुन्तो। वच्छाहि वच्छेहि।

1. क्रमसेः – √प्रिय। √प्रेमन्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भ्यस् (प्रत्यय) के आदेश आगे होने पर, (उनके पिछले) अकार का दीर्घ (स्वर यानी आ) विकल्प से होता है। उदा०—वच्छाहिंतो······वच्छेहि।

टाणशस्येत् ॥ १४ ॥

टादेशे णे शसि च परे अस्य एकारो भवति। टा ण। वच्छेण। णेति किम्। अप्पणा[1] अप्पणिआ अप्पणइआ। शस्। [2]बच्छे पेच्छ।

टा (प्रत्यय) का आदेश ण, और शस् (प्रत्यय) आगे होने पर (उनके पिछले) अकार का एकार होता है। उदा०—टा का आदेश ण (आगे होने पर) :—वच्छेण। (टा का आदेश) ण (आगे होने पर) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण टा को ण आदेश न हुआ हो, तो पिछले अ का ए नहीं होता है। उदा०—) अप्पणा···अप्पण इआ। शस् (प्रत्यय आगे होने पर):— वच्छे पेच्छ।

भिस्भ्यस्सुपि ॥ १५ ॥

एषु अत एर्भवति। भिस्। वच्छेहि वच्छेहिँ वच्छेहिं। भ्यस्। वच्छेहि वच्छेहिंतो वच्छेसुंतो। सुप्। वच्छेसु।

भिस्, भ्यस् और सुप् ये प्रत्यय आगे होने पर, (उनके पिछले) अकार का ए होता है। उदा०—भिस् (आगे होने पर) :—वच्छेहि··· ···वच्छेहिं। भ्यस् (आगे होने पर) :—वच्छेहि······वच्छेसुंतो। सुप् (आगे होने पर) :—वच्छेसु।

इदुतो दीर्घः ॥ १६ ॥

इकारस्य उकारस्य च भिस्भ्यस् सुप्सु परेषु दीर्घो भवति। भिस्। [3]गिरीहि बुद्धीहि। दहीहिं। तरूहिं। घेणूहिं। महूहिं [4]कयं। भ्यस्। गिरीओ[3]। बुद्धीओ। दहीओ। तरूओ। घेणूओ। महूओ[5] आगओ। एवम्। गिरीहिंतो गिरी सुंतो आगओ इत्याद्यपि। सुप्। गिरीसु[3]। बुद्धीसु। दहीसु। तरूसु। घेणूसु। महूसु [6]ठिअं। क्वचिन्न भवति। दि [7]अभूमिसु दाणजलोल्लिआइं। इदुत इति किम्। वच्छेहिं। वच्छेसुन्तो वच्छेसु। भिस् भ्यस सुपीत्येव। गिरिं तरुं पेच्छ।

भिस्, भ्यस् और सुप् ये प्रत्यय आगे होने पर, (उनके पिछले) इकार और उकार इनका दीर्घ (स्वर यानी ईकार और ऊकार) होता है। उदा०—भिस् (आगे

१. √आत्मन्। इन रूपों के लिए सूत्र ३·५६-५७ देखिए। २, वृक्षान् प्रेक्षस्व।
३. क्रमसे:—√गिरि। √बुद्धि। √दधि। √तरु। √धेनु। √मधु।
४. √कृत:
५. √आगत।
६. √स्थित।
७. द्विजभूमिषु दान-जल-आर्द्रितानि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होने पर) :—गिरीहिं······कयं। भ्यस् (आगे होने पर) :—गिरीओ···आगओ, इसी प्रकार :—गिरीहिंतो···आगओ, इत्यादि भी होता है। सुप् (आगे होने पर):—गिरीसु······ठिअं। क्वचित् (इन प्रत्ययों के पिछले इ और उ इनका दीर्घ स्वर) नहीं होता है। उदा०—दिअ······ल्लिआइं। इकार और उकार (इनका दीर्घ स्वर होता है) ऐसा क्यों कहा है ? कारण पीछे इ का उ न हो, तो ऐसा दीर्घ स्वर नहीं होता है। उदा०—) वच्छेहिं······वच्छेसु। भिस्, भ्यस् और सुप् ये प्रत्यय आगे होने पर ही (पिछले इ और उ दीर्घ होते हैं, अन्य प्रत्यय आगे होने पर, वे दीर्घ नहीं होवे हैं। उदा०—) गिरिं····· पेच्छ।

चतुरो वा ॥ १७॥

चतुर उदन्तस्य भिस्भ्यस्सुप्सु परेषु दीर्घो वा भवति। चऊहि चउहि। चऊओ चउओ। चऊसु चउसु।

उकारान्त चतुर् (यानी चउ) शब्द के आगे भिस्, भ्यस् और सुप् ये प्रत्यय होने पर (पिछला उकार) विकल्प से दीर्घ (यानी ऊ) होता है। उदा०—चऊहि······चउसु।

लुप्ते शसि ॥ १८ ॥

इदुतोः शसि लुप्ते दीर्घो भवति। गिरी। बुद्धी। तरू। धेणू पेच्छ। लुप्त इति किम्। गिरिणो। तरुणो पेच्छ। इदुत इत्येव। वच्छे पेच्छ। जस्शस् (३.१२) इत्यादिना शसि दीर्घस्य लक्ष्यानुरोधार्थो योगः। लुप्त इति तु णवि प्रतिप्रसवार्थशंकानिवृत्त्यर्थम्।

(आगे आने वाले) शस् (प्रत्यय) का लोप होने पर (उसके पिछले) इ और उ इनका दीर्घ (यानी ई और ऊ) होता है। उदा०—गिरी··· ···पेच्छ। (शस् प्रत्यय का) लोप होने पर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण शस् प्रत्यय का लोप न होते यदि शस् प्रत्यय का आदेश आगे हो,तो पिछले इ और उ दीर्घ नहीं होते हैं। उदा०—गिरिणो······पेच्छ। (शस् प्रत्यय का लोप होने पर, पिछले) इ और उ इनका ही दीर्घ होता है (अन्य स्वरों का नहीं। उदा०—) वच्छे पेच्छ। 'जस्शस्' इत्यादि सूत्रानुसार, शस् प्रत्यय (आगे) होने पर, उदाहरणों के अनुसार (दीर्घ हो) यह बताने के लिए दीर्घ होता है, ऐसा (प्रस्तुत) नियम है। (शस् प्रत्यय का) लोप होने पर ऐसा कहने का कारण तो यह है कि 'णो' प्रत्यय के (सूत्र ३·२२ देखिए) बारे में प्रतिप्रसव है क्या, ऐसी शंका न हो, इसलिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अक्लीबे सौ ॥ १९ ॥

इदुतो क्लीबे नपुंसकादन्यत्र सौ दीर्घो भवति। गिरी। बुद्धी। तरू। धेणू। अक्लीब इति किम्। दहिं महुं। साविति किम्। गिरिं बुद्धिं। तरुं धेणुं। केचित्तु दीर्घत्वं विकल्प्य तदभावपक्षे सेर्मादेशमपीच्छन्ति। अग्गिं[1]। निहिं। वाउं। विहुं।

नपुंसकलिंग न होने पर (यानी) नपुंसकलिंग छोड़कर, अन्यत्र (यानी पुल्लिंग और स्त्रीलिंग होने पर, शब्द के अन्त्य) इ और उ इनके आगे सि (प्रत्यय) होने पर (उसके पिछले इ और उ इनका) दीर्घ (यानी ई और ऊ) होता है। उदा०— गिरी······धेणू। नपुंसकलिंग न होने पर ऐसा क्यों कहा है? (कारण इकारान्त और उकारान्त शब्द नपुंसकलिंग में हो, तो इ और उ इनका दीर्घ नहीं होता है। उदा०—) दहिं, महुं। सि (प्रत्यय) आगे होने पर ऐसा क्यों कहा है? (कारण वैसा न होने पर, इ और उ इनका दीर्घ नहीं होता है। उदा०—) गिरिं···धेणुं। परन्तु कुछ वैयाकरण मानते हैं कि (इ और उ इनका) दीर्घ होना वैकल्पिक है; और (ऐसे दीर्घत्व के) अभाव—पक्ष में, सि (प्रत्यय) को म् ऐसा आदेश होता है। उदा०—अग्गिं······विहुं।

पुंसि जसो डउ डओ वा ॥ २० ॥

इदुत इतीह पञ्चम्यन्तं सम्बध्यते। इदुतः परस्य जसः पुंसि अउ अओ इत्यादेशौ डितौ वा भवतः। [2]अग्गउ अग्गओ। वायउ वायओ चिट्ठन्ति[3]। पक्षे। अग्गिणो[2]। वाउणो। शेषे अदन्तवद्भावाद् अग्गी। वाऊ। पुंसीति किम्। बुद्धीओ। धेणूओ। दहीइं। महूइं। जस इति किम्। अग्गी अग्गिणो वाऊ वाउणो [4]पेच्छइ। इदुत इत्येव। वच्छा।

'इदुतः' यह शब्द यहाँ पञ्चमी-विभक्ति-प्रत्ययान्त लेकर (इस सूत्र के शब्दों से) जोड़कर लेना है। (फिर इस सूत्र का अर्थ ऐसा होता है:—) (शब्द के अन्त्य) इ और उ इनके आगे, पुल्लिग में, जस् (प्रत्यय) को अउ और अओ ऐसे डित् आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—अग्गउ······चिट्ठन्ति (विकल्प—) पक्ष में:— अग्गिणो, वाउणो। (ये शब्द) उर्वरित (रूपों) के बारे में, अकारान्त शब्द के समान होने के कारण, (उनके) अग्गी, वाऊ (ऐसे रूप होते हैं)। पुल्लिग में ऐसा क्यों कहा है? (कारण पुल्लिग न होने पर, जस् को ऐसे आदेश नहीं होते हैं। उदा०—) बुद्धीओ······महूइं। जस् (प्रत्यय) को (आदेश होते हैं) ऐसा क्यों

१. क्रमसे:— √अग्नि। √निधि। √वायु। √विधु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहा है ? (कारण जस् प्रत्यय न होने पर, ऐसे आदेश नहीं होते हैं। उदा०—) अग्गी……पेच्छइ। इ और उ इनके ही आगे (आने वाले जस् को ऐसे आदेश होते हैं; जस् के पीछे अन्य स्वर हो, तो जस् को ऐसे आदेश नहीं होते हैं। उदा०—) वच्छा।

वोतो डवो ॥ २१ ॥

उदन्तात् परस्य जसः पुंसि डित् अवो इत्यादेशो वा भवति। साहवो[1]। पक्षे। साहओ साहउ साहू साहुणो। उत इति किम्। वज्छा। पुंसीत्येव। धेणू। महूइं। जस इत्येव। साहू साहुणो पेच्छ।

उकारान्त शब्द के आगे जस् प्रत्यय को; पुल्लिग में, डित् अवो ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०— साहवो। (विकल्प—) पक्षमें—साहओ…साहुणो। (शब्द के अन्त्य) उ के आगे (यानी उकारान्त शब्द के आगे) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण जस् के पीछे उ छोड़कर अन्य स्वर हो, तो ऐसा आदेश नहीं होता है। उदा०—) वच्छा। पुल्लिग में ही (ऐसा आदेश होता है, पुल्लिग न होने पर, ऐसा आदेश नहीं होता है। उदा०—) धेणू' महूइं। जस् (प्रत्यय) को ही (ऐसा आदेश होता है; अन्य प्रत्ययों को नहीं। उदा०—) साहू…… पेच्छ।

जस्शसोर्णो वा ॥ २२ ॥

इदुतः परयोर्जस्शसोः पुंसि णो इत्यादेशो वा भवति। गिरिणो तरुणो[2] रेहन्ति पेच्छ वा। पक्षे। गिरी तरू। पुंसीत्येव। दहीइं महूइं। जस्-शसोरिति किम्। गिरिं तरुं। इदुत इत्येव। वच्छा। वच्छे। जस्शसोरिति द्वित्वमिदुत इत्यनेन यथासंख्याभावार्थम्। एवमुत्तरसूत्रेपि।

इ और उ इनके आगे जस् और शस् (प्रत्ययों) को पुल्लिग में णो ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—गिरिणो……पेच्छ वा। (विकल्प) पक्षमें:— गिरी, तरू। पुल्लिग होने पर ही (ऐसा आदेश होता है; पुल्लिग न होने पर ऐसा आदेश नहीं होता है। उदा०—) दहीइं, महूइं। जस् और शस् (प्रत्ययों) को आदेश होता है ऐसा क्यों कहा है ? (कारण ये प्रत्यय न होने पर, ऐसा आदेश नहीं होता है। उदा०—) गिरिं, तरुं। इ और उ इनके आगे ही (जस् और शस् प्रत्ययों को ऐसा आदेश होता है, अन्य स्वरों के आगे नहीं। उदा०—) वच्छा, वच्छे। जस् और शस् इन दोनों को (यह आदेश होता है ऐसे कहने का कारण यह है कि)

---

१. √साधु। २. √तरु।

३. राजन्ते। सूत्र ४·१०० अनुसार राज् धातु को रेह ऐसा आदेश होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इ के आगे और उ के आगे ऐसा कहा जाने के कारण (वह आदेश) अनुक्रम से होता है ऐसा अर्थ न लिया करे। इसी तरह (यहाँ से) अगले सूत्रों में ही जाने।

ङसिङसोः पुंक्लीबे वा ॥२३॥

पुंसि क्लीबे च वर्तमानादिदुतः परयोर्ङसिङसोर्णो वा भवति। गिरिणो। तरुणो। दहिणो। महुणो आगओ वि [1]आरो वा। पक्षे ङसेः। गिरीओ गिरीउ गिरीहिंतो। तरूओ तरूउ तरूहिन्तो। हिलुकौ निषेत्स्येते। ङसः। गिरिस्स। तरुस्स। ङसिङसोरिति किम्। गिरिणा तरुणा कयं। पुंक्लीब इति किम्। बुद्धीअ धेणूअ [2]लद्धं [3]समिद्धी वा। इदुत इत्येव। [4]कमलाओ। कमलस्स।

पुल्लिंग में और नपुंसकलिंग में होने वाले (शब्दों के अन्त्य) इ और उ इनके आगे आने वाले ङसि और ङस् (इन प्रत्ययों) का णो विकल्प से होता है। उदा०—गिरिणो······विआरो वा। (विकल्प—) पक्षमें:—ङसि के बारे में:—गिरीओ··· तरूहितो। (इन इकारान्त और उकारान्त पुल्लिंगी और नपुंसकलिंगी संज्ञाओं के संदर्भ में पंचमी एकवचन के) हि और लोप (इन दोनों) का निषेध आगे (सूत्र ३.१२६-१२७ देखिए) किया जायगा। ङस् के बारे में:—गिरिस्स, तरुस्स। ङसि ङस् इन प्रत्ययों का (णो होता है) ऐसा क्यों कहा है? (कारण ये प्रत्यय न होने पर वह णो नहीं होता है) उदा०—गिरिणा······कयं। पुल्लिंग में और नपुंसकलिंग में होने वाले (शब्दों के) ऐसा क्यों कहा है? (कारण स्त्रीलिंगी शब्दों के बारे में ऐसा णो नहीं होता है। उदा०—) बुद्धीअ ····समिद्धी वा। इ और उ इनके ही आगे आने वाले (ङसि और ङस् प्रत्ययों का णो होता है; अन्य स्वरों के आगे आने वाले ङसि और ङस् प्रत्ययों का णो नहीं होता है। उदा०—) कमलाओ, कमलस्स।

टो णा ॥ २४ ॥

पुंक्लीबे वर्तमानादिदुतः परस्य टा इत्यस्य णा भवति। गिरिणा [5]गामणिणा। [6]खलपुणा तरुणा। दहिणा महुणा। ट इति किम्। गिरी तरू दहिं महुं। पुंक्लीब इत्येव बुद्धीअ धेणूअ कयं। इदुत इत्येव। [4]कमलेण।

पुल्लिंग में और नपुंसकलिंग मे होने वाले (शब्दों के अन्त्य) इ और उ इनके आने वाले टा (प्रत्यय) का णा होता है। उदा०—गिरिणा··· ···महुणा। टा (प्रत्यय) का (णा होता है) ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य प्रत्ययों का ऐसा णा नहीं होता है। उदा०— गिरी··· महुं। पुलिंग में और नपुंसकलिंग

---

१. √विकार। २. √लब्ध। ३. √समृद्धि।
४. √कमल। ५. √ग्रामणी। ६. √खलपू।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में (होने वाले इकारान्त और उकारान्त शब्दों के बारे में टा प्रत्यय का णा होता है, स्त्रीलिंगी शब्दों के बारे में नहीं होता है। उदा०—) बुद्धीअ··· ···कयं। इ और उ इनके ही आगे आने वाले (टा का णा होता है; अन्य स्वरों के आगे आने वाले टा का णा नहीं नहीं होता है। उदा०—) कमलेण।

क्लीबे स्वरान्म् सेः ॥ २५ ॥

क्लीबे वर्तमानात् स्वरान्तान्नाम्नः सेः स्थाने म् भवति। वणं[1]। पेम्मं[1]। दहिं। महुं। दहि महु इति तु सिद्धापेक्षया। केचिदनुनासिकमपीच्छन्ति। दहिँ महुँ। क्लीब इति किम्। [2]बालो। [3]बाला। स्वरादिति इदुतो निवृत्त्यर्थम्।

नपुंसकलिंग में होने वाली स्वरान्त संज्ञा के आगे सि (प्रत्यय) के स्थान पर म् होता है। उदा०—वणं··· ···महुं। दहि और महु (ये रूप) मात्र (संस्कृत में से) सिद्ध रूपों से बने हुए हैं। कुछ (वैयाकरण सि के स्थान पर) अनुनासिक भी मानते हैं। उदा०—दहिँ, महुँ। नपुंसकलिंग में होने वाले (स्वरान्त संज्ञा के आगे) ऐसा क्यों कहा है? (कारण नपुंसकलिंग न होने पर सि प्रत्यय का म् नहीं होता है। उदा०—) बालो, बाला। इदुतः (= यानी इ और उ इनके आगे) शब्द की निवृत्ति करने के लिए (प्रस्तुत सूत्र में) स्वरात् (= स्वर के आगे) शब्द प्रयुक्त किया है।

जस्‌शस इँ-इं-णयः सप्राग्दीर्घाः ॥ २६ ॥

क्लीबे वर्तमानान्नाम्नः परयोर्जस्‌शसोः स्थाने सानुनासिकसानुस्वारा-विकारौ णिश्चादेशा भवन्ति सप्राग्दीर्घाः। एषु सत्सु पूर्वस्वरस्य दीर्घत्वं विधीयते इत्यर्थः। इँ। जाइँ [4]वयणाइँ अम्हे। इं। [5]उम्मीलन्ति पंकयाइं[6] चिट्ठन्ति पेच्छ वा। दहीइं [7]हुन्ति जेम[8] वा। महूइं मुञ्च[9] वा। णि। [10]फुल्लन्ति पंकयाणि गेण्ह[11] वा। हुन्ति दहीणि जेम वा। एवं महूणि। क्लीब इत्येव। वच्छा। वच्छे। जस्‌शस इति किम्। [12]सुहं।

नपुंसकलिंग में होनेवाली संज्ञा के अगले जस् और शस् (प्रत्ययों) के स्थान पर सानुनासिक और सानुस्वार इकार और णि ऐसे आदेश होते हैं। और (उस

---

१. वन। प्रेमन्। २. बाल। ३. बाला।
४. यानि वचनानि अस्माकम्। ५. √उन्मील्। ६. पंकज।
७. भवन्ति। ८. √भुज् धातु का आदेश जेम है (सूत्र ४.११० देखिए)।
९. √मुच्। १०. √फुल्ल्। ११. गृहाण।
१२. सुख।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समय) उनके पिछले स्वर दीर्घ होते हैं (यानी) ये आदेश आगे होने पर, उनके पूर्व (यानी पीछे) होने वाला स्वर दीर्घ होता है, ऐसा विधान यहाँ है, ऐसा अर्थ होता है। उदा० —इँ (आदेश होने पर) :—जाइँ··· ···अम्हे। इं (आदेश होने पर) :—उम्मीलन्ति··· ···मुञ्च वा। णि (आदेश होने पर) :—फुल्लन्ति··· ···जेम वा। इसी तरह महूणि (ऐसा रूप होता है)। नपुंसकलिंग में होने वाली ही (संज्ञा के आगे जस् और शस् इनके ऐसे आदेश होते हैं; अन्य लिंग में होने वाली संज्ञा के आगे ऐसे आदेश नहीं होते हैं। उदा०—) वच्छा, वच्छे। जस् और शस् प्रत्ययों के (स्थान पर) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण अन्य प्रत्ययों के स्थान पर ऐसे आदेश नहीं होते हैं। उदा०—) सुहं।

स्त्रियामुदोतौ वा ॥ २७ ॥

स्त्रियां वर्तमानान्नाम्नः परयोर्जस्शसोः स्थाने प्रत्येकं उत् ओत् इत्येतौ सप्राग्दीर्घौ वा भवतः। वचनभेदो यथासंख्यनिवृत्त्यर्थः। मालाउ[1] मालाओ। बुद्धीउ बुद्धीओ। सहीउ सहीओ। धेणूउ धेणूओ। वहूउ वहूओ। पक्षे। माला बुद्धी सही धेणू वहू। स्त्रियामिति किम्। वच्छा। जस्-शस इत्येव। मालाए कयं।

स्त्रीलिंग में होने वाली संज्ञा के आगे आने वाले जस् और शस् (प्रत्ययों) के स्थान पर प्रत्येक को उ और ओ ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं, (और उस समय) उनके पूर्व (यानी पीछे) होने वाला स्वर दीर्घ होता है। (आदेशों के) अनुक्रम की निवृत्ति करने के लिए वचनभेद है। उदा —मालाउ······वहूओ। (विकल्प—) पक्ष में।—माला··· ···वहू। स्त्रीलिंग में होने वाली (संज्ञा के आगे आने वाले) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण अन्य लिंगी संज्ञा के आगे उ और ओ नहीं होते हैं। उदा०—) वच्छा। जस् और शस् (प्रत्ययों) के स्थान पर ही (उ और ओ होते हैं; अन्य प्रत्ययों के स्थान पर नहीं होते है। उदा०—) मालाए कयं।

ईतः सेश्चा वा ॥ २८ ॥

स्त्रियां वर्तमानादीकारान्तात् सेर्जस्शसोश्च स्थाने आकारो वा भवति। [2]एसा हसन्तीआ। गोरीआ[3] चिट्ठन्ति पेच्छ वा। पक्षे। हसन्ती गोरीओ।

स्त्रीलिंग में होने वाली ईकारान्त (संज्ञा) के आगे होने वाले सि (प्रत्यय) तथा जस् और शस् (प्रत्यय) इनके स्थान पर आकार विकल्प से आता है। उदा०—एसा··· ···पेच्छ वा। (विकल्प—) पक्ष में :—हसन्ती, गोरीओ।

---

१. क्रम से :—माला। बुद्धि। सखी। धेनु। वधू।

२. एषां हसन्ती। ३. √गौरी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टा-ङस्-ङेरदादिदेद्वा तु ङसेः ॥ २९ ॥

स्त्रियां वर्तमानान्नाम्नः परेषां टाङस्ङीनां स्थाने प्रत्येकं अत्-आत् इत् एत् इत्येते चत्वार आदेशाः सप्राग्दीर्घा भवन्ति । ङसेः पुनरेते सप्राग्दीर्घा वा भवन्ति । [1]मुद्धाअ मुद्धाइ मुद्धाए [2]कयं [3]मुहं ठिअं[4] वा । कप्रत्यये तु मुद्धिआअ मुद्धिआइ मुद्धिआए । [5]कमलिआअ कमलिआइ कमलिआए । बुद्धीअ बुद्धीआ बुद्धीइ बुद्धीए कयं विहवो[6] ठिअं वा । सहीअ सहीआ सहीइ सहीए कयं वयणं[7] ठिअं वा । धेणूअ धेणूआ धेणूइ धेणूए कयं दुद्धं[8] ठिअं वा । वहूअ वहूआ वहूइ वहूए कयं भवणं[9] ठिअं वा । ङसेस्तु वा । मुद्धाअ मुद्धाइ मुद्धाए । बुद्धीअ बुद्धीआ बुद्धीइ बुद्धीए । सहीअ सहीआ सहीइ सहीए । धेणूअ धेणूआ धेणूइ धेणूए । वहूअ वहूआ वहूइ वहूए आगओ । पक्षे । मुद्धाओ मुद्धाउ मुद्धाहिंतो । रईओ रईउ[10] रईहिंतो । धेणूओ धेणूउ धेणूहिंतो । इत्यादि । शेषेदन्तवत् (३.१२४) अतिदेशात् जस्-शस्-ङसि-त्तो-दो द्वामि दीर्घः (३.१२)इति दीर्घत्वं पक्षेपि भवति । स्त्रियामित्येव । वच्छेण । वच्छस्स । वच्छम्मि । वच्छाओ । हादीनामिति किम् । मुद्धा बुद्धी सही धेणू वहू ।

स्त्रीलिंग मे होने वाली संज्ञा के आगे आने वाले टा, ङस्, और ङि इन प्रत्ययों के स्थान पर प्रत्येक को अ, आ, इ और ए ऐसे ये चार आदेश, उनके पूर्व होने वाला (यानी पीछे होने वाला) स्वर दीर्घ होकर, होते हैं । परन्तु ङसि प्रत्यय के बारे में मात्र ये (आदेश उनके) पूर्व (यानी पीछे) आने वाला स्वर दीर्घ होकर विकल्प से होते हैं । उदा०—मुद्धाअ ··· ···ठिअं वा । (संज्ञा के आगे स्वार्थे (क प्रत्यय होनेपर मात्र) ऐसे रूप होते हैं)—मुद्धिआअ··· ···कमिलआए । (अन्य शब्दों के रूप) —बुद्धीअ··· ···वहुए··· ···ठिअं वा । ङसि प्रत्यय के बारे में (ये आदेश) विकल्प से होते हैं । उदा०—मुद्धाअ··· ···वहूए आगओ । (विकल्प--) पक्ष में:—मुद्धाओ······धेणूहिंतो, इत्यादि । 'शेषे दन्तवत्' सूत्र से विहित किए अतिदेश के कारण, 'जस्··· ···दीर्घः' सूत्र से आने वाला दीर्घत्व विकल्प—पक्ष में भी होता है । स्त्रीलिंग में होने वाली ही (संज्ञा के आगे होने वाले टा इत्यादि प्रत्ययों के स्थान पर अ इत्यादि आदेश आते हैं, अन्य लिंगी संज्ञा के आगे नहीं आते हैं । उदा०—वच्छेण······वच्छाओ । टा, इत्यादि यानी टा, ङस्, और ङि इनके (स्थान

---

१. मुग्धा । २. कृत । ३. मुख । ४. स्थित ।
५. कमलिका । ६. विभव । ७. वचन/वदन ।
८. √दुग्ध । ९. भवन । १०. रति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर अ इत्यादि आदेश आते हैं) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण से प्रत्यय न हो, तो ऐसे आदेश नहीं होते हैं । उदा०—) मुद्धा……वहू ।

नात आत् ॥ ३० ॥

स्त्रियां वर्तमानादादन्तान्नाम्नः परेषां टा-ङस्-ङि-ङसीनामादादेशो न भवति । मालाअ मालाइ मालाए कयं सुहं ठिअं आगओ वा ।

स्त्रीलिंग में होने वाली आकारान्त संज्ञा के आगे आनेवाले टा, ङस्, ङि, और ङसि इन प्रत्ययों को आ ऐसा आदेश नहीं होता है । उदा०-मालाअ…आगओ वा ।

प्रत्यये ङीर्न वा ॥ ३१ ॥

उणादिसूत्रेण (हे० २·४) प्रत्ययनिमित्तो यो ङीरुक्तः सः स्त्रियां वर्तमानान्नाम्नो वा भवति । [1]साहणी । कुरुचरी । पक्षे । आत् (हे० २.४) इत्याप् । साहणा[1] । कुरुचरा ।

'अणादि' सूत्र से प्रत्यय के निमित्त से (यानी प्रत्यय के स्वरूप में) जो ङी (= ई) प्रत्यय कहा हुआ है, वह स्त्रीलिंग में होने वाली संज्ञाओं को विकल्प से लगता है । उदा०—साहणी; कुरुचरी । (विकल्प—) पक्षमें –'आत्' सूत्र के अनुसार (कहा हुआ) आप् प्रत्यय लगता है । उदा०—साहणा, कुरुचरा ।

अजातेः पुंसः ॥ ३२ ॥

अजातिवाचिनः पुल्लिङ्गाद् स्त्रियां वर्तमानाद् ङीर्वा भवति । नीली[2] नीला । काली काला । हसमाणी हसमाणा । सुप्पणही सुप्पणहा । इमीए इमाए । इमीणं इमाणं । एईए एआए । एईणं एआणं । अजातेरिति किम् । [3]करिणी । अया । एलया । अप्राप्ते विभाषेयम् । तेन[4] गोरी कुमारी इत्यादौ संस्कृतवन्नित्यमेव ङीः ।

अजातिवाचक पुल्लिंगी शब्दों से स्त्रीलिंग में आने वाले (= होने वाले) शब्दों के आगे ई (ङी) प्रत्यय विकल्प से आता है । उदा०—नीली…एआणं । अजातिवाचक (पुल्लिंगी शब्दों से) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण यदि पुल्लिंगी शब्द जातिवाचक हो, तो ऐसा नहीं होता है । उदा०—) करिणी… …एलया । (यह प्रत्यय) प्राप्त न होने पर, यह विकल्प है । इसलिए गोरी, कुमारी, इत्यादि शब्दों में संस्कृत के समान नित्य ई (ङी) प्रत्यय लगा हुआ है ।

१. क्रमसे:—√साधन । √कुरुचर ।

२. क्रमसे:—नील । काल । हसमाण । शूर्पणख । इदम् । इदम् । एतद् । एतद् ।

३. क्रमसे:—करिन् । अज । एड/एल । ४. क्रमसे:—गौर । कुमार ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किं यत्तदोस्यमामि ॥ ३३ ॥

सि-अम्-आम्-वर्जिते स्यादौ परे एभ्यः स्त्रियां ङीर्वा भवति। कीओ काओ। कीए। काए। कीसु कासु। एवम्। जीओ जाओ। तीओ ताओ। इत्यादि। अस्यमामीति किम्। का जा सा। कं जं तं। काण जाण ताण।

सि, अम् और आम् (प्रत्यय) छोड़कर, अन्य विभक्ति प्रत्यय आगे होने पर, किम्, यद् और तद् इन (सर्वनामों) को स्त्रीलिंग में ङी प्रत्यय विकल्प से लगता है। उदा०—कीओ......कासु। इसी तरह ही, जीओ......ताओ, इत्यादि (रूप) होते हैं। सि, अम् और आम् प्रत्यय छोड़कर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण ये प्रत्यय आगे होने पर, स्त्रीलिंग में ङी प्रत्यय नहीं लगता है। उदा०—) का......ताण।

छायाहरिद्रयोः ॥ ३४ ॥

अनयोराप्प्रसंगे नाम्नः स्त्रियां ङीर्वा भवति। छाही छाया। हलद्दी हलद्दा।

छाया और हरिद्रा इन (दो शब्दों) के बारे में, आप् (प्रत्यय) लगने के प्रसंग में, संज्ञा के स्त्रीलिंग में ङी (प्रत्यय) विकल्प से लगता है। उदा०—छाही...हलद्दा।

स्वस्रादेर्डा ॥ ३५ ॥

स्वस्रादेः स्त्रियां वर्तमानात् डा प्रत्ययो भवति। ससा[1]। नणन्दा[2]। दुहिआ[3]। दुहिआहिं[3]। दुहिआसु[3]। दुहिआ[4] सुओ। गउआ[5]।

स्त्रीलिंग में होने वाले स्वसृ इत्यादि शब्दों को डित् और (डा) प्रत्यय लगता है। उदा०—ससा......गउआ।

ह्रस्वोमि ॥ ३६ ॥

स्त्रीलिंगस्य नाम्नोमि परे ह्रस्वो भवति। मालं। नइं[6]। वहुं। हसमाणिं हसमाणं पेच्छ। अमीति किम्। माला सही वहू।

अम् (प्रत्यय) आगे होने पर, स्त्रीलिंगी संज्ञा का (अन्त्य) स्वर ह्रस्व होता है। उदा०—मालं......पेच्छ। अम् (प्रत्यय) आगे होने पर ऐसा क्यों कहा है। (कारण यह प्रत्यय आगे न होने पर, संज्ञा का अन्त्य स्वर ह्रस्व नहीं होता है। उदा०—) माला......वहू।

---

१. स्वसृ। २. ननन्द। ३. दुहितृ।
४. दुहितृ-सुत। ५. गवय। ६. नदी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नामन्त्र्यात् सौ मः ॥ ३७ ॥

आमन्त्र्यार्थात् परे सौ सति क्लीबे स्वरान्म् सेः (३·२५) इति यो म् उक्तः स न भवति । हे [1]तण । हे दहि । हे महु ।

संबोधनार्थी सि (प्रत्यय) आगे होने पर, 'क्लीवे स्वरान्म् सेः' सूत्र में कहा हुआ जो म्, वह नहीं होता है । उदा० —हे तण······महु ।

डो दीर्घो वा ॥ ३८ ॥

आमन्त्र्यार्थात् परे सौ सति अतः सेर्डोः (३·२) इति यो नित्यं डोः प्राप्तो यश्च अक्लीबे सौ (३·१९) इति इदुतोरकारान्तस्य च प्राप्तो दीर्घः सः वा भवति । हे देव हे देवो । हे खमासमण हे [2]खमासमणो । हे अज्ज[3] हे अज्जो । दीर्घः । हे हरी हे हरि । हे गुरू हे गुरु । जाइविसुद्धेण । पहू हे प्रभो इत्यर्थः । एवं दोण्णि[5] पहू जिअलोए । पक्षे । हे [6]पहु । एषु प्राप्ते विकल्पः । इह त्वप्राप्ते हे गोअमा[7] हे गोअम । हे कासवा[8] हे कासव । रेरे चप्फलया[9] । रे रे निग्घिणया[10] ।

संबोधनार्थी सि (प्रत्यय) आगे होने पर, 'अतः सेर्डोः' सूत्र से जो डो नित्य प्राप्त होता है वह, तथा 'अक्लीवे सौ' सूत्र से इकारान्त और उकारान्त तथा अकारान्त (शब्दो के अन्त्य) स्वर का जो दीर्घ (स्वर) प्राप्त होता है वह, वे विकल्प से होते है । उदा०—हे देव······अज्जो । दीर्घ (स्वर) का उदाहरण:— हे हरी······पहू; (यहाँ) हे प्रभु ऐसा अर्थ है; एवं दोण्णि······लोए । (विकल्प—) पक्षमेंः—हे पहु । इन (इकारान्त और उकारान्त) शब्दों में (दीर्घस्वर) प्राप्त होते समय विकल्प है । (अब) यहाँ (यानी आगे दिए उदाहरणों में दीर्घस्वर) प्राप्त न होते भी, (ऐसा दिखाई देता हैं:—) हे गोअमा······निग्घिणया ।

ऋतोद् वा ॥ ३९ ॥

ऋकारान्तस्यामन्त्रणे सौ परे अकारोन्तादेशो वा भवति । हे पितः हे पिअ[11] । हे दातः हे दाय[12] । पक्षे । हे पिअरं[11] । हे दायार[12] ।

---

१. तृण । २. क्षमाश्रमण । ३. आर्य ।
४. जातिविशुद्धेन प्रभो । ५. एवं द्वौ प्रभो जीवलोके । ६. प्रभु ।
७. गोतम । ८. कश्यप ।
९. निष्फल, झूठ बोलने वाला इस अर्थ में चप्पलय देशी शब्द है ।
१०. निर्घृणक । ११. पितृ । १२. दातृ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऋकारान्त शब्दों के संबोधन में, सि (प्रत्यय) आगे होने पर, अकार ऐसा अन्तादेश (= अन्त में अ ऐसा आदेश) विकल्प से होता है । उदा०—हे पित:··· दाय । (विकल्प—) पक्ष में:—हे पिअरं······दायार ।

नाम्न्यरं वा ॥ ४० ॥

ऋदन्तस्यामन्त्रणे सौ परे नाम्नि संज्ञायां विषये अरं इति अन्तादेशो वा भवति । हे पित: हे पिअरं । पक्षे । हे पिअ । नाम्नीति किम् । हे कर्तः हे कत्तार[1] ।

ऋकारान्त शब्दों के संबोधन में; सि (प्रत्यय) आगे होने पर, नामों के यानी संज्ञाओं के बारे में, अरं ऐसा अन्तादेश (= अन्त में आदेश) विकल्प से होता है । उदा०—हे पित:······पिअरं । (विकल्प—) पक्षमें:—हे पिअ । संज्ञाओं के बारे में ऐसा क्यों कहा है ? (कारण ऋकारान्त शब्द संज्ञा न हो, तो अरं ऐसा अन्तादेश नहीं होता है । उदा०—) हे कर्तः ·····कत्तार ।

वाप ए ॥ ४१ ॥

आमन्त्रणे सौ परे आप एत्वं वा भवति । हे माले[2] हे महिले । अज्जिए । पज्जिए पक्षे । हे माला । इत्यादि । आप इति किम् । हे पिउच्छा । हे माउच्छा । बहुलाधिकारात् क्वचिदोत्वमपि । [3]अम्मो भणामि [4]भणिए ।

संबोधन में सि (प्रत्यय) आगे होने पर, (उसके पिछले) आ (आप्) स्वर का विकल्प से ए होता है । उदा०—रे माले······पज्जिए । (विकल्प—) पक्षमें:— हे माला इत्यादि । आ (आप्) का (ए होता है) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण पीछे आप् न हो, तो ए नहीं होता है । उदा०—) हे पिउच्छा ···माउच्छा । बहुल का अधिकार होने के कारण, (इस आप् का) कभी ओ भी होता है । उदा०— अम्मो······भणिए ।

ईदूतोर्ह्रस्वः ॥ ४२ ॥

आमन्त्रणे सौ परे ईदूदन्तयोर्ह्रस्वो भवति । हे नइ । हे गामणि । हे [5]समणि । हे वहु । हे खलपु ।

संबोधन में सि (प्रत्यय) आगे होने पर; ईकारान्त और ऊकारान्त संज्ञाओं का (अन्त्य स्वर) ह्रस्व (यानी अनुक्रम से इ और उ) होता है । उदा०—नइ···खलपु ।

१. कर्तृ । २. क्रमसे:—माला महिला । आर्यिका । प्रार्यिका ।
३. अम्बा । ४. भणित । ५. श्रमणी ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्विपः ॥ ४३ ॥

क्विबन्तस्येदूदन्तस्य ह्रस्वो भवति। गामणिणा खलपुणा। गामणिणो खलपुणो।

क्विप् प्रत्यय से अन्त होने वाले ईकारान्त और ऊकारान्त संज्ञाओं का (अन्त्य स्वर विभक्ति प्रत्यय आगे होने पर) ह्रस्व हो जाता है। उदा०—गामणिणा···खलपुणो

ऋतामुदस्यमौसु वा ॥ ४४ ॥

सि-अम्-औ-वर्जिते अर्थात् स्यादौ परे ऋदन्तानामुदन्तादेशो वा भवति। जस्। भत्तू[1] भत्तुणो भत्तउ भत्तओ। पक्षे। भत्तारा[1]। शस्। भत्तू भत्तुणो। पक्षे। भत्तारे। टा। भत्तुणा। पक्षे। भत्तारेण। भिस्। भत्तूहिं। पक्षे। भत्तारेहिं। ङसि। भत्तुणो भत्तूओ भत्तूउ भत्तूहि भत्तूहिंतो। पक्षे। भत्ताराओ भत्ताराउ भत्ताराहि भत्ताराहिंतो भत्तारा। ङस्। भत्तुणो भत्तुस्स। पक्षे। भत्तारस्स। सुप्। भत्तूसु। पक्षे। भत्तारेसु। बहुवचनस्य व्याप्त्यर्थत्वात् यथादर्शनं नाम्न्यपि उद् वा भवति जस्-शस्-ङसि-ङस्सु। पिउणो[2] जामाउणो भाउणो। टायाम्। पिउणा। भिसि। पिऊहिं। सुपि। पिऊसु। पक्षे। पिअरा इत्यादि। अस्य मौस्विति किम्। सि। पिआ। अम्। पिअरं। औ। पिअरा।

सि, अम्, और ओ, ये प्रत्यय छोड़कर अर्थात् इतर विभक्ति प्रत्यय आगे होने पर, ऋकारान्त शब्दों को उत् ऐसा अन्तादेश (यानी अन्त में उ ऐसा आदेश) विकल्प से होता है। उदा०—जस् (प्रत्यय आगे होने पर):—भत्तू··· ···भत्तओ; (विकल्प—) पक्ष में:—भत्तारा। शस् (प्रत्यय आगे होने पर):—भत्तू, भत्तुणो; (विकल्प —) पक्षमें:—भत्तारे। टा (प्रत्यय आगे होने पर):—भत्तुणा; (विकल्प—) पक्षमें:—भत्तारेण। भिस् (प्रत्यय आगे होने पर):—भत्तूहिं; (विकल्प—) पक्षमें:—भत्तारेहिं। ङसि (प्रत्यय आगे होने पर):—भत्तुणो ······भत्तूहिंतो; (विकल्प——) पक्षमें:—भत्ताराओ······भत्तारा। ङस् (प्रत्यय आगे होने पर):—भत्तुणो, भत्तुस्स, (विकल्प—) पक्षमें:—भत्तारस्स। सुप् (प्रत्यय आगे होने पर):—भत्तूसु; (विकल्प—) पक्षमें—भत्तारेसु। बहुवचन व्याप्त्यर्थी (यानी समावेशक अर्थ में) होने से (साहित्य में) जैसा दिखाई देगा वैसा संज्ञाओं के बारे में भी, जस् शस् ङसि और ङस् प्रत्यय आगे होने पर, विकल्प से (अन्त में) उ आता है उदा०—(जस् और शस् प्रत्यय आगे होने पर):—पिउणो······भाउणो। टा (प्रत्यय आगे होने पर)—पीउणा। भिस् (प्रत्यय आगे होने पर).—पिऊहिं। सुप् (प्रत्यय आगे होने पर):—

---

1. भर्तृ। 2. क्रमसे:—पितृ जामातृ भ्रातृ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पिअसु। (विकल्प—) पक्षमें:—पिअरा, इत्यादि। सि, अम्, और अ। प्रत्यय छोड़कर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण ये प्रत्यय आगे होने पर, अन्त में उ आदेश नहीं होता है। उदा०—) सि (आगे होने पर):—पिआ। अम् (आगे होने पर :—पिअरं। औ (आगे होने पर):—पिअरा।

आरः स्यादौ ॥ ४५ ॥

स्यादौ परे ऋत आर इत्यादेशो भवति। भत्तारो भत्तारा। भत्तारं भत्तारे। भत्तारेण भत्तारेहिं। एवं ङस्यादिषूदाहार्यम्। लुप्तस्याद्यपेक्षया। भत्तार[1]-विहिअं।

सि इत्यादि (विभक्ति प्रत्यय) आगे होने पर, (शब्द के अन्त्य) ऋ को आर आदेश होता है। उदा०—भत्तारो······भत्तारेहिं। इसी तरह ङसि इत्यादि प्रत्यय आगे होने पर उदाहरण ले। (अन्त्य ऋ का आर होने के बाद, कुछ कारण से) स्यादि (यानी विभक्ति--) प्रत्ययों के लोप की अपेक्षा होते भी (यह आर वैसाही रहता है। उदा०—) भत्तारविहिअं।

आ अरा मातुः ॥ ४६ ॥

मातृसम्बन्धिन ऋतः स्यादौ परे आ अरा इत्यादेशौ भवतः। माआ माअरा। माआउ माआओ माअराउ माअराओ। माअं माअरं। इत्यादि। बाहुलकाज्जनन्यर्थस्य आ देवतार्थस्तु अरा इत्यादेशः। माआए [2]कुच्छीए। नमो[3] माअराण। मातुरिद् वा (१.१३५) इतीत्त्वे माईण इति भवति। ऋतामुदं (३.४४) इत्यादिना उत्वे माऊए [4]समन्निअं [5]वन्दे इति। स्यादावित्येव [6]माइदेवो। [7]माइगणो।

सि इत्यादि (विभक्ति प्रत्यय) आगे होने पर, मातृशब्द से सम्बन्धित होने वाले ऋ को आ और अरा ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—माआ··· ···माअरं, इत्यादि। बहुलत्व होने से, मा इस अर्थ में होने वाले मातृ शब्द में आ, और देवता इस अर्थ होने पर, (मातृशब्द में) अरा, ऐसा आदेश होता है। उदा०—माआए···मा अराण। 'मातुरिद् वा' सूत्र के अनुसार, (मातृ शब्द में ऋ का) इ होने पर, माईण ऐसा (रूप) होता है। परन्तु 'ऋतामुद०' इत्यादि सूत्र के अनुसार (मातृ में से ऋ का) उ होने पर 'माऊए समन्निअं वन्दे', ऐसा होता है। विभक्ति प्रत्यय आगे होने पर ही (मातृ में से ऋ को आ और अरा ये आदेश होते हैं; अन्य समय में नहीं होते हैं। उदा०—) माइदेवो, माइगणो।

---

१. भर्तृ-विहित। २. कुक्षि। ३. नमः। ४. समन्वित। ५. √वन्द्। ६. मातृदेव। ७. मातृगण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाम्न्यरः ॥ ४७ ॥

ऋदन्तस्य नाम्नि संज्ञायां स्यादौ परे अर इत्यन्तादेशो भवति । [1]पिअरा । पिअरं पिअरे । पिअरेण पिअरेहिं । [2]जामायरा । जामायरं जामायरे । जामायरेण जामायरेहिं । [3]भायरा । भायरं भायरे । भायरेण भायरेहिं ।

ऋ (स्वर) से अन्त होने वाले नामों में यानी संज्ञा शब्दों में, विभक्ति प्रत्यय आने होने पर, (अन्त्य ऋ को) अर ऐसा अन्तादेश (= अन्त में अ आदेश) होता है । उदा०—पिअरा ···भायरेहिं ।

आ सौ न वा ॥ ४८ ॥

ऋदन्तस्य सौ परे आकारो वा भवति । पिआ । जामाया । भाया । [4]कत्ता । पक्षे । पिअरो । जामायरो । भायरो । [4]कत्तारो ।

सि (प्रत्यय) आगे होने पर; ऋकारान्त शब्दों के अन्त में आकार विकल्प से होता है । उदा०—यिआ··· ··कत्ता । (विकल्प—) पक्षमें—पिअरो···कत्तारो ।

राज्ञः ॥ ४९ ॥

राज्ञो नलोपेन्त्यस्य आत्वं वा भवति सौ परे । [5]राया । हे राया । पक्षे । आणादेशे । रायाणो । हे राया हे रायं इति तु शौरसेन्याम् । एवं हे [6]अप्पं हे अप्प ।

सि (प्रत्यय) आगे होने पर, राजन् शब्द में से (अन्त्य) न् का लोप होने पर, अन्त्य (वर्ण) का आ विकल्प से होता है । उदा०—राया, हे राया । (विकल्प —) पक्ष में:—(सूत्र ३.५६ के अनुसार) आण ऐसा आदेश होने परः—रायाणो । हे राया, हे रायं ऐसा शौरसेनी (भाषा) में होता है । इसी तरह हे अप्पं, हे अप्प (ऐसा होता है) ।

जस्शस्ङसिङसां णो ॥ ५० ॥

राजन्-शब्दात् परेषामेषां णो इत्यादेशो वा भवति । जस् । रायाणो चिट्ठन्ति । पक्षे । राया । शस् । रायाणो पेच्छ । पक्षे । राया राए । ङसि । राइणो रण्णो आगओ । पक्षे । रायाओ रायाउ रायाहि रायाहिंतो राया । ङस् । राइणो रण्णो [7]धणं । पक्षे । रायस्स ।

राजन् शब्द के आगे आने वाले जस्, शस् ङसि और ङस् प्रत्ययों को णो ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—जस् (को आदेश):—रायाणो चिट्ठन्ति ।

---

१. पितृ । २. जामातृ । ३. भ्रातृ । ४. कर्तृ ।
५. राजन् । ६. आत्मन् । ७. धन ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(विकल्प—) पक्ष में :—राया । शस् (को आदेश):—रायाणो पेच्छ । (विकल्प—) पक्ष में:—राया, राए । ङसि (को आदेश):—राइणो······आगओ । (विकल्प—) पक्ष में:—रायाओ······राया । ङस् (को आदेश):—राइणो धणं । (विकल्प—) पक्ष में :—रायस्स ।

टो णा ॥ ५१ ॥

राजन्-शब्दात् परस्य टा इत्यस्य णा इत्यादेशो वा भवति । राइणा रण्णा । पक्षे । राएण[1] कयं ।

राजन् शब्द के आगे,टा प्रत्यय को णा ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—राइणा, राणा । (विकल्प—) पक्षमें:···राएण कयं ।

इर्जस्य णोणाङौ ॥ ५२ ॥

राजन्शब्दसम्बन्धिनो जकारस्य स्थाने णोणाङिषु परेषु इकारो वा भवति । राइणो चिट्ठन्ति पेच्छ आगओ धणं वा । राइणा कयं । राइम्मि । पक्षे । रायाणो । रण्णो । रायणा । राएण । रायम्मि ।

णो, णा और ङि (प्रत्यय) आगे होने पर, राजन् शब्द से सम्बन्धित होने वाले जकार के स्थान पर इकार विकल्प से होता है । उदा०—राइणो······राइम्मि । (विकल्प—) पक्ष में:—रायाणो······रायस्मि ।

इणममामा ॥ ५३ ॥

राजन्शब्दसम्बन्धिनो जकारस्य अमाम्भ्यां सहितस्य स्थाने इजणम् इत्यादेशो वा भवति । राइणं पेच्छ । राइणं धणं । पक्षे । रायं । राईणं ।

अम् और आम् प्रत्ययों के सह, राजन् शब्द से सम्बन्धित होने वाले जकार के स्थान पर इणं ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—राइणं···धणं । (विकल्प—) पक्षमें:—रायं, राईणं ।

ईद्भिस्भ्यसाम्सुपि ॥ ५४ ॥

राजन्शब्दसम्बन्धिनो जकारस्य भिसादिषु परतो वा ईकारो भवति । भिस् । राईहि । भ्यस् । राईहि राईहिंतो राईसुंतो । आम् । राईणं । सुप् । राईसु । पक्षे । रायाणेहि । इत्यादि ।

भिस्, इत्यादि (यानी भिस्, भ्यस् आम् और सुप्) प्रत्यय आगे होने पर,राजन् शब्द से सम्बन्धित होने वाले जकार का ईकार विकल्प से होता है । उदा०—

---

१. कृत ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भिस् (आगे होने पर) :—राईहि। भ्यस् (आगे होने पर) :—राईहि…… राईसुंतो। आम् (आगे होने पर) :—राईणं। सुप् (आगे होने पर) :— राईसु। (विकल्प—) पक्ष में :—रायाणेहि, इत्यादि।

आजस्य टाङसिङस्सु सणाणोष्वण् ।। ५५ ।।

राजन्शब्दसम्बन्धिन आज इत्यवयवस्य टाङसिङस्सु णा णो इत्यादेशापन्नेषु परेषु अण् वा भवति। रण्णा राइणा कयं। रण्णो राइणो आगओ धणं वा। टाङसिङस्स्विति किम्। रायाणो चिट्ठन्ति पेच्छ वा। सणाणोष्विति किम्। राएण। रायाओ। रायस्स।

णा और णो ऐसे आदेश जिनको प्राप्त हुए हैं ऐसे टा, ङसि और ङस् ये प्रत्यय आगे होने पर, राजन् शब्द से सम्बन्धित होने वाले 'आज' अवयव का अण् विकल्प से होता है। उदा०—रण्णा ……धणं वा। टा, ङसि, और ङस् प्रत्यय आगे होने पर ऐसा क्यों कहा है? (कारण ये प्रत्यय आगे न होने पर, अण् नहीं होता है। उदा०—) रायाणो……पेच्छ वा। णा और णो ऐसे आदेश जिनको प्राप्त हुए हैं ऐसा क्यों कहा है? (कारण ये आदेश न हों, तो अण् नहीं होता है। उदा०—) राएण……रायस्स।

पुंस्यन आणो राजवच्च ।। ५६ ।।

पुंलिङ्गे वर्तमानस्यान्नन्तस्य स्थाने आण इत्यादेशो वा भवति। पक्षे। यथा—दर्शनं राजवत् कार्यं भवति। आणादेशे च अतः सेर्डोः (३.२) इत्यादयः प्रवर्तन्ते। पक्षे तु राज्ञः जस्-शस्-ङसि-ङसां णो (३.५०), टो णा (३.२४) इणममामा (३.५३) इति प्रवर्तन्ते। अप्पाणो[1] अप्पाणा। अप्पाणं अप्पाणे। अप्पाणेण अप्पाणेहि। अप्पाणाओ अप्पाणासुंतो। अप्पाणस्स अप्पाणाण। अप्पाणम्मि अप्पाणेसु। अप्पाण[2]-कयं। पक्षे राजवत्। अप्पा अप्पो। हे अप्पा हे अप्प। अप्पाणो चिट्ठन्ति। अप्पाणो पेच्छ। अप्पणा अप्पेहि। अप्पाणो अप्पाओ अप्पाउ अप्पाहि अप्पाहिंतो अप्पा। अप्पासुंतो। अप्पणो धणं। अप्पाणं। अप्पे अप्पेसु॥ रायाणो रायाणा। रायाणं रायाणे। रायाणेण रायाणेहि। रायाणाहिंतो। रायाणस्स रायाणाणं। रायाणम्मि रायाणेसु। पक्षे। राया इत्यादि॥ एवम् [3]जुवाणो। जुवाण-जणो। जुआ॥ बम्हाणो[4] बम्हा। [5]अद्धाणो अद्धा॥ उक्षन् उच्छाणो उच्छा। [6]गावाणो गावा।

---

१. आत्मन्। २. आत्मन्+कृत।

३. क्रम से:—युवन्। युवन्+जन। युवन्। ४. ब्रह्मन्।

५. अध्वन्। ६. ग्रावन्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[1]पूसाणो पूसा। [2]तक्खाणो तक्खा। मुद्धाणो[3] मुद्धा। श्वन् साणो सा॥ सुकर्मणः पश्य सुकम्माणे पेच्छ। निएइ[4] कह सो सुकम्भाणे। पश्यति कथं स सुकर्मणः इत्यर्थः। पुंसीति किम्। शर्म सम्मं।

पुल्लिग में होने वाली, अन् से अन्त होने वाली संज्ञाओं के (अन्त्य) स्थान में आण आदेश विकल्प से आता है। (विकल्प--) पक्ष में, वाङ्मय में जैसा दिखाई देगा वैसा, राजन् शब्द के समान कार्य होता है। और आण आदेश होने पर, 'अतः सेर्डो:' इत्यादि सूत्रों में से नियम लगते हैं। परन्तु (विकल्प--) पक्ष में, राजन् शब्द के बारे में लगने वाले 'जस्-शस्''' '''इण ममा इन सूत्रों में से नियम लगते हैं। उदा०--अप्पाणो''' '''अप्पाणेसु; अप्पाण--कयं; (विकल्प--) पक्ष में :-- राजन् शब्द के समान :--अप्पा''' '''अप्पेसु (ऐसे रूप होते हैं); रायाणो''' ''' रायाणेसु; (विकल्प--) पक्ष में :--राया, इत्यादि। इसी तरह :--जुवाणो''' सुकम्माणे पेच्छ; निएइ''' '''सुकम्भाणे (यानी) शुभ कर्म करने वालों को कैसे देखता है, ऐसा अर्थ है। पुल्लिग में होने वाली (अन्नन्त संज्ञाओं के) ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्नन्त शब्द पुल्लिग में न हो, तो आण आदेश नहीं होता है। उदा०--) शर्म, सम्मं।

आत्मनष्टो णिआ णइआ ॥ ५७ ॥

आत्मनः परस्याष्टायाः स्थाने णिआ णइआ इत्यादेशौ वा भवतः। अप्पणिआ पा[5] उसे उवगयम्मि। [6]अप्पणिआ य [7]विअड्डि [8]खाणिआ। अप्पणइआ। पक्षे। अप्पाणेण।

आत्मन् शब्द के आगे होने वाले टा (प्रत्यय) के स्थान पर णिआ और णइआ ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०--अप्पणिआ''' '''अप्पणइआ। (विकल्प-) पक्ष में :--अप्पाणेण।

अतः सर्वादेर्डेर्जसः ॥ ५८ ॥

सर्वादेरदन्तात् परस्य जसः डित् ए इत्यादेशो भवति। [9]सव्वे। अन्ने। जे। ते। के। एक्के। कयरे। इयरे। एए। अत किम्। सव्वाओ। [10]रिद्धीओ। जस इति किम्। सव्वस्स।

सर्व, इत्यादि अकारान्त सर्वनामों के आगे आनेवाले जस् (प्रत्यय) को डित् ए ऐसा आदेश होता है। उदा०--सव्वे''' '''एए। अकारान्त (सर्वनामों के)

---

१. पूषन्। २. तक्षन्। ३. मूर्धन्।

४. '''निअ। दृश् धातु का निअ आदेश है (सूत्र ४.१८१ देखिए)।

५. प्रावृष्। ६. उपगत। ७. वितर्दि। ८. खनि।

९. क्रम से :--सर्व। अन्य। ज (यद्)। त (तद्)। क (किम्)। एक। कतर। इतर। एतद्। १०. ऋद्धि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऐसा क्यों कहा है ? (कारण सर्वनाम अकारान्त न हो, तो जस् को ङित् ए आदेश नहीं होता है। उदा० —) सव्वाओ रिद्धीओ। जस् (प्रत्यय) को ऐसा क्यों कहा है ? (कारण अन्य प्रत्ययों को ऐसा आदेश नहीं होता है। उदा० —) सव्वस्स।

ङेः स्सिम्मित्थाः ॥ ५९ ॥

सर्वादिरकारात् परस्य ङेः स्थाने स्सि म्मि त्थ एते आदेशा भवन्ति। सव्वस्सि सव्वम्मि सव्वत्थ। [1]अन्नस्सि अन्नम्मि अन्नत्थ। एवं सर्वत्र। अत इत्येव। [2]अमुम्मि।

सर्व, इत्यादि अकारान्त सर्वनामों के आगे आने वाले ङि (प्रत्यय) के स्थान पर स्सि, म्मि और त्थ ये आदेश होते हैं। उदा० —सव्वस्सि ... ... अन्नत्थ। इसी तरह इतर सर्वत्र (यानी अन्य अकारान्त सर्वनामों के बारे में होता है)। अकारान्त सर्वनामों के ही (बारे में ऐसा होता है; अन्य स्वर से अन्त होने वाले सर्वनामों के आगे ङि को ऐसे आदेश नहीं होते हैं। उदा० —) अमुम्मि।

न वानिदमेतदो हिं ॥ ६० ॥

इदम्–एतद्–वर्जितात् सर्वादेरदन्तात् परस्य ङेर्हिमादेशो वा भवति। सव्वहिं। अन्नहिं। कहिं। जहिं। तहिं। बहुलाधिकारात् किंयत्तद्भ्यः स्त्रियामपि। काहिं। जाहिं। ताहिं। बाहुलकादेव किंयत्तदोस्यमामि (३.३३) इति ङीर्नास्ति। पक्षे सव्वस्सि सव्वम्मि सव्वत्थ। इत्यादि। स्त्रियां तु पक्षे। काए कीए। जाए जीए। ताए तीए। इदमेतद्वर्जनं किम्। इमस्सि एअस्सि।

इदम् और एतद् (ये सर्वनाम) छोड़ कर, अन्य सर्व इत्यादि सर्वनामों के आगे आने वाले ङि (प्रत्यय) को हिं ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा० —सव्वहिं ... ... तहिं। बहुल का अधिकार होने से, किम्, यद्, और तद् इनके स्त्रीलिंगी रूपों में भी (हिं ऐसा आदेश होता है। उदा० —) काहिं ... ... ताहिं। (इस) बहुलत्व के ही कारण, 'किंयत्तदोस्यमामि' सूत्र से कहा हुआ ङी प्रत्यय नहीं आता है। (विकल्प —) पक्ष में—सव्वस्सि ... ... सव्वत्थ, इत्यादि। स्त्रीलिंग मे मात्र (विकल्प —) पक्ष में :—काए ... ... तीए। इदम् और एतद् (ये सर्वनाम) छोड़ कर ऐसा क्यों कहा

---

१. अन्य। २. √अदस्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है ? (कारण उनके बारे में हि आदेश नहीं होता है। उदा०—) इमस्सि, एअस्सि ।

आमो डेसिं ॥ ६१ ॥

सर्वादिरकारान्तात् परस्यामो डेसिमित्यादेशो वा भवति। सव्वेसिं। अन्नेसिं। [1]अवरेसिं। [2]इमेसिं। [3]एएसिं। जेसिं। तेसिं। केसिं। पक्षे। सव्वाण। अन्नाण। [1]अवराण। [2]इमाण। [3]एआण। जाण। ताण। काण। बाहुलकात् स्त्रियामपि। सर्वासाम् सव्वेसिं। एवम् अन्नेसिं। तेसिं।

सर्व, इत्यादि अकारान्त सर्वनामों के आगे आने वाले आम् (प्रत्यय) को डित् एसिं (डेसिं) ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—सव्वेसिं……केसिं। (विकल्प—) पक्ष में :—सव्वाण……काण। बहुलत्व के कारण स्त्रीलिंग में भी (एसिं आदेश होता है। उदा०—) सर्वासां, सव्वेसिं; इसी तरह अन्नेसिं, तेसिं।

किंतद्भ्यां डासः ॥ ६२ ॥

किंतद्भ्यां परस्यामः स्थाने डास इत्यादेशो वा भवति। कास। तास। पक्षे। केसिं। तेसिं।

किम् और तद् इन (सर्वनामों) के आगे आने वाले आम् (प्रत्यय) के स्थान पर डास (= डित् आस) ऐसा आदेश विकल्प से आता है। उदा०—कास, तास। (विकल्प—) पक्ष में :—केसिं, तेसिं।

किंयत्तद्भ्यो ङसः ॥ ६३ ॥

एभ्यः परस्य ङसः स्थाने डास इत्यादेशो वा भवति। ङसः स्सः (३.१०) इत्यस्यापवादः। पक्षे सोऽपि भवति। कास कस्स। जास जस्स। तास तस्स। बहुलाधिकारात् किंतद्भ्यामाकारान्ताभ्यामपि डासादेशो वा। कस्या धनम् कास धणं। तस्या धनम् तास धणं। पक्षे। काए। ताए।

किम्, यद्, और तद् इनके आगे आने वाले ङस् (प्रत्यय) के स्थान पर डास (= डित् आस) ऐसा आदेश विकल्प से होता है। 'ङसः स्सः' सूत्र में कहे गये हुए नियम का अपवाद (प्रस्तुत नियम) है। (विकल्प—) पक्ष में वह (स्स) भी होता है। उदा०—कास……तस्स। बहुल का अधिकार होने से, किम् और तद् ये सर्वनामों आकारान्त (यानी स्त्रीलिंग में) होने पर भी, डास

---

१. अपर। २. इदम्।
३. एतद्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदेश विकल्प से होता है। उदा०—कस्या······घर्णं। (विकल्प —) पक्ष में :—काए; ताए।

ईदुभ्यः स्सा से ॥ ६४ ॥

किमादिभ्यः ईदन्तेभ्यः परस्य ङसः स्थाने स्सा से इत्यादेशौ वा भवतः। टा-ङस्-ङेरदादिदेद्वा तु ङसेः (३.२९) इत्यस्यापवादः। पक्षे अदाद-योपि। किस्सा कीसे कीअ कीआ कीइ कीए। जिस्सा जीसे जीअ जीआ जीइ जीए। तिस्सा तीसे तीअ तीआ तीइ तीए।

ईकारान्त (स्त्रीलिंगी) किम् इत्यादि (यानी किम्, यद्, और तद् इन) सर्वनामों के आगे ङस (प्रत्यय) के स्थान पर स्सा और से ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। 'टाङस्······ङसेः' सूत्र में (कहे हुए) नियम का अपवाद (प्रस्तुत नियम) है। (विकल्प—) पक्ष में (उस ३.२९ सूत्रानुसार) अ, इत्यादि भी होते हैं। उदा०—किस्सा······तीए।

ङेर्डाहे डाला इआ काले ॥ ६५ ॥

कियत्तद्भ्यः कालेभिधेये ङेः स्थाने आहे आला इति डितौ इआ इति च आदेशा वा भवन्ति। हिंस्सिम्मि त्थानामपवादः। पक्षे तेपि भवन्ति। काहे काला कइआ। जाहे जाला जइआ। ताहे ताला तइआ। ताला[1] जाअन्ति गुणा जाला ते सहि अएहिँ घेप्पन्ति ॥ १ ॥ पक्षे। कहिं कस्सि कम्मि कत्थ।

समय कहने के वक्त, किम, यद् और तद् इन (सर्वनामों) के आगे आने वाले ङि (प्रत्यय) के स्थान पर आहे और आला ऐसे (ये दो) डित् (आदेश), और इआ ऐसा आदेश, विकल्प से होता है। (ङि प्रत्यय को) हिं, स्सि, म्मि, और त्थ ऐसे आदेश होते हैं (सूत्र ३.५९–६० देखिए) इस नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। (विकल्प—) पक्ष में वे भी (यानी हिं, स्सि, म्मि, और त्थ भी) होते हैं। उदा०—काहे······तइआ; ताला······घेप्पन्ति; (विकल्प—) पक्ष में :—कहिं, कत्थ।

ङसेर्म्हा ॥ ६६ ॥

कियत्तद्भ्यः परस्य ङसेः स्थाने म्हा इत्यादेशो वा भवति। कम्हा। जम्हा। तम्हा। पक्षे। काओ। जाओ। ताओ।

किम्, यद्, और तद् इन (सर्वनामों) के आगे आने वाले ङसि (प्रत्यय)

---

१. तदा जायन्ते गुणाः यदा ते सहृदयैः गृह्यन्ते ॥ १ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के स्थान पर म्हा ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—कम्हा...... तम्हा। (विकल्प—) पक्षमें :—काओ...... ताओ।

तदो डोः ॥ ६७ ॥

तदः परस्य ङसेर्डो इत्यादेशो वा भवति। तो। तम्हा।

तद् (सर्वनाम) के आगे आने वाले ङसि (प्रत्यय) को डो (= डित् ओ) ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा—तो, तम्हा।

किमो डिणोडीसौ ॥ ६८ ॥

किमः परस्य ङसेर्डिणो डीस इत्यादेशौ वा भवतः। किणो। कीस। कम्हा।

किम् (सर्वनाम) के आगे आने वाले ङसि (प्रत्यय) को डिणो (= डित् णो) और डीस (= डित् ईस) ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—किणो...... कम्हा।

इदमेतत्कियत्तद्भ्यष्टो डिणा ॥ ६९ ॥

एभ्यः सर्वादिभ्योकारान्तेभ्यः परस्याष्टायाः स्थाने डित् इणा इत्यादेशो वा भवति। इमिणा इमेण। एदिणा एदेण। किणा केण। जिणा जेण। तिणा तेण।

इदम्, एतद्, किम्, यद्, और तद् इन अकारान्त सर्वनामों के आगे आने वाले टा (प्रत्यय) के स्थान पर डित् इणा ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—इमिणा...... तेण।

तदो णः स्यादौ क्वचित् ॥ ७० ॥

तदः स्थाने स्यादौ परे ण आदेशो भवति क्वचित् लक्ष्यानुसारेण। णं पेच्छ। तं पश्येत्यर्थः। सोअइ[1] अ णं रहुवई। तमित्यर्थः। स्त्रियामपि। [2]हत्थुन्नामिअ–मुही णं तिअडा। तां त्रिजटेत्यर्थः। णेण भणिअं। तेन भणितमित्यर्थः। तो णेण [3]करयलट्ठिआ। तेन इत्यर्थः। भणिअं[4] च णाए। तया इत्यर्थः। णेहिं कयं। तैः कृतमित्यर्थः। णाहिं कयं। ताभिः कृतमित्यर्थः।

विभक्ति प्रत्यय आगे होने पर, लक्ष्य के (साहित्य में से उदाहरण के) अनुसार, तद् (सर्वनाम) के स्थान पर ण ऐसा आदेश क्वचित् होता है। उदा०—णं

१. शोचति च तं रघुपतिः। २. हस्त–उन्नामित–मुखी तां त्रिजटा।
३. तस्मात् तेन करतलस्थिता। ४. भणितं च तया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पेच्छ (यानी) तं पश्य (यानी उसको देख) ऐसा अर्थ है। सोअइ… …रहुवई (इस वाक्य में णं यानी) तं (= उसको) ऐसा अर्थ है। स्त्रीलिंग में भी (तद् सर्वनाम को ण ऐसा आदेश होता है। उदा०—) हत्थु… …तिअडा। (इस वाक्य में णं तिअडा यानी) तां त्रिजटा (= उसको त्रिजटा) ऐसा अर्थ है। णेण भणिअं (यानी) तेन भणितं (= उसने कहा) ऐसा अर्थ है। तो णेण… … ट्ठिआ (इसमें णेण यानी) तेन (= उसने) ऐसा अर्थ है। भणिअं च णाए (इस वाक्य में णाए यानी) तया (= उसने) ऐसा अर्थ है। णेहि कयं (यानी) तैः कृतम् (= उन्होंने किया) ऐसा अर्थ है। णाहि कयं (यानी) ताभिः कृतम् (= उन्होंने किया) ऐसा अर्थ है।

किमः कस्त्रतसोश्च ॥ ७१ ॥

किमः को भवति स्यादौ त्रतसोश्च परयोः। को के। कं के। केण। त्र। कत्थ। तस्। कओ कत्तो कदो।

विभक्ति प्रत्यय और त्र तथा तस् (प्रत्यय) आगे होने पर, किम् (सर्वनाम) का क होता है। उदा०—(विभक्ति प्रत्यय आगे होने पर) :—को……केण। त्र (प्रत्यय आगे होने पर):—कत्थ। तस् (प्रत्यय आगे होने पर:—) कओ…कदो।

इदम इमः ॥ ७२ ॥

इदमः स्यादौ परे इम आदेशो भवति। इमो इमे। इमं इमे। इमेण। स्त्रियामपि। इमा।

विभक्ति प्रत्यय आगे होने पर, इदम् (सर्वनाम) को इम आदेश होता है। उदा०—इमो……इमेण। स्त्रीलिंग में भी (यह आदेश होता है। उदा०—) इमा।

पुंस्त्रियोर्न वायमिमिआ सौ ॥ ७३ ॥

इदम्-शब्दस्य सौ परे अयमिति पुल्लिंगे इमिआ इति स्त्रीलिंगे आदेशौ वा भवतः। अहवायं[1] कयकज्जो। इमिआ[2] वाणिअ-धूआ। पक्षे। इमो। इमा।

सि (प्रत्यय) आगे होने पर, इदम् (सर्वनाम—) शब्द को पुल्लिंग में अयं ऐसा और स्त्रीलिंग में इमिआ ऐसा, ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—अहवायं… धूआ। (विकल्प—) पक्ष में:—इमो, इमा।

स्सिंस्सयोरत् ॥ ७४ ॥

इदमः स्सिंस्स इत्येतयोः परयोरद्भवति वा। अस्सिं। अस्स। पक्षे।

---

१. अथवा अयं कृतकार्यः। २. इयं वणिक्-दुहिता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इमादेशोपि। इमस्सि। इमस्स। बहुलाधिकारादन्यत्रापि भवति। एहि [1]एसु। आहि। एभिः एषु आभिरित्यर्थः।

स्सि और स्स ये (प्रत्यय) आगे होने पर, इदम् (सर्वनाम) का 'अ' विकल्प से होता है। उदा०—अस्सि, अस्स। (विकल्प—) पक्ष में:—(इदम् सर्वनाम को सूत्र ३.७२ के अनुसार) इम ऐसा आदेश भी होता है। उदा०—इमस्सि, इमस्स। बहुलका अधिकार होने से, अन्यत्र भी (यानी अन्य कुछ प्रत्ययों के पूर्व भी इदम् का अ होता है। उदा०—) एहि, एसु और आहि (यानी) एभिः, एषु और आभिः ऐसा अर्थ होता है।

ङेर्मेन हः ॥ ७५ ॥

इदमः कृते मादेशात् परस्य ङेः स्थाने मेन सह ह आदेशो वा भवति। इह। पक्षे। इमस्सि। इमम्मि।

जिसमें इम आदेश किया हुआ है ऐसे इदम् (सर्वनाम) के आगे आने वाले ङि (प्रत्यय) के स्थान पर म के साथ 'ह' ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—इह। (विकल्प—) पक्षमें:—इमस्सि, इमम्मि।

न त्थः ॥ ७६ ॥

इदमः परस्य ङेः स्सि म्मि त्थाः (३.५९) इति प्राप्तः त्थो न भवति। इह इमस्सि इमम्मि।

ङि प्रत्यय का 'ङे······त्थाः' सूत्रानुसार होनेवाला त्थ ऐसा आदेश इदम् सर्वनाम के आगे नहीं होता है। उदा०—इह······इमम्मि।

णोम्शस्टाभिसि ॥ ७७ ॥

इदमः स्थाने अम् शस् टाभिस्सु परेषु ण आदेशो वा भवति। णं पेच्छ। णे पेच्छ। णेण णेहि कयं। पक्षे। इमं। इमे इमेण। इमेहि।

अम्, शस्, टा और भिस् प्रत्यय आगे होने पर, इदम् (सर्वनाम) के स्थान पर 'ण' (ऐसा) आदेश विकल्प से होता है। उदा०—णं······कयं। (विकल्प —) पक्षमें:—इमं······इमेहि।

अमेणम् ॥ ७८ ॥

इदमोमा सहितस्य स्थाने इणम् इत्यादेशो वा भवति। इणं पेच्छ। पक्षे। इमं।

---

१. इदम् का अ होने के बाद. सूत्र ३.१५ के अनुसार, इस अ का ए होकर, एहि, एसु ये रूप बने हुए हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अम् (प्रत्यय) के साथ इदम् (सर्वनाम) के स्थान पर इणं ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—इणं पेच्छ । (विकल्प —) पक्षमें:—इमं ।

क्लीबे स्यमेदमिणमो च ॥ ७९ ॥

नपुंसकलिंगे वर्तमानस्येदमः स्यम्भ्यां सहितस्य इदम् इणमो इणं च नित्यमादेशा भवन्ति । इदं इणमो इणं धणं चिट्ठइ पेच्छ वा ।

नपुंसक लिंग में होनेवाले इदम् (सर्वनाम) को, सि और अम् (प्रत्ययों) के सह, इदं, इणमो और इणं ऐसे आदेश नित्य होते हैं । उदा०—इदं······पेच्छ वा ।

...मः किं ॥ ८० ॥

किमः क्लीबे वर्तमानस्य स्यम्भ्यां सह किं भवति । किं कुलं[1] तुह । किं किं ते[2] पडिहाइ ।

नपुंसक लिंग में होनेवाले किम् (सर्वनाम) का, सि और अम् (प्रत्ययों) के सह, किं होता है । उदा०—किं······पडिहाइ ।

वेदं तदेतदो ङसाम्भ्यां सेसिमौ ॥ ८१ ॥

इदम् तद् एतद् इत्येतेषां स्थाने ङस् आम् इत्येताभ्यां सह यथासंख्यं से सिम् इत्यादेशौ वा भवतः । इदम् । से सीलं । से गुणा । अस्य शीलं गुणा वेत्यर्थः । सिं उच्छाहो । एषाम् उत्साह इत्यर्थः । तद् । से सीलं । तस्य तस्या वेत्यर्थः । सिं गुणा । तेषां तासां वेत्यर्थः । एतद् । से अहिअं । एतस्याहितमित्यर्थः । सिं गुणा । सिं सीलं । एतेषां गुणाः शीलं वेत्यर्थः । पक्षे । इमस्स इमेसिं इमाण । तस्स तेसिं ताण । एअस्स एएसिं एआण । इदंतदोरामापि से आदेशं कश्चिदिच्छति ।

ङस् और आम् (प्रत्ययों) के सह, इदम्, तद् और एतद् (इन सर्वनामों) के स्थान पर अनुक्रमसे से और सिम् ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—इदम् (के आदेश):—से······गुणा (यानी) अस्य (= इसका) शील अथवा गुण ऐसा अर्थ है । सिं उच्छाहो (यानी) एषां (= इनका) उत्साह ऐसा अर्थ है । तद् (के आदेश):—से सीलं (इन शब्दों में से यानी) उसका या उसकी ऐसा अर्थ है । सिं गुणा (इस शब्द समूह मे सिं यानी) उनका (पुल्लिंगी तथा स्त्रीलिंगी) ऐसा अर्थ है । सिं गुणा······सीलं (इन शब्दों में) एतेषां (= इनका) गुण अथवा शील ऐसा अर्थ होता है । (विकल्प–) पक्षमें:—इमस्स······एआण । इदम् और तद् (सर्वनामों)

1. किं कुलं तव । 2. किं किं ते प्रतिभाति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का आम् (प्रत्यय) के सह 'से' ऐसा आदेश होता है, ऐसा कोई एक (वैयाकरण) मानता है।

वैतदो ङसेस्त्तो त्ताहे ॥ ८२ ॥

एतदः परस्य ङसेः स्थाने त्तो त्ताहे इत्येतावादेशौ वा भवतः। एत्तो एत्ताहे। पक्षे। एआओ एआउ एआहि एआहिंतो एआ।

एतद् सर्वनाम के आगे आनेवाले ङसि (प्रत्यय) के स्थान पर त्तो और त्ताहे ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—एत्तो, एत्ताहे। (विकल्प—) पक्षमें:— एआओ……एआ।

त्थे च तस्य लुक् ॥ ८३ ॥

एतदस्त्थे परे चकारात् त्तो त्ताहे इत्येतयोश्च परयोस्तस्य लुग् भवति। एत्थ। एत्तो। एत्ताहे।

एतद् (सर्वनाम) के आगे, त्थ तथा (सूत्र में से) चकार के कारण त्तो और त्ताहे (ये आदेश) होने पर, (एतद् शब्द में से) 'त' का लोप होता है। उदा०— एत्थ……एत्ताहे।

एरदीतौ म्मौ वा ॥ ८४ ॥

एतद एकारस्य ङ्यादेशे म्मौ परे अदीतौ वा भवतः। अयम्मि। ईयम्मि। पक्षे। एअम्मि।

एतद् (सर्वनाम) में से एकार को ङी (= ङित् ई) आदेश होने पर, (उसके) आगे म्मि (प्रत्यय) होने पर, उसके अ और ई विकल्प से होते हैं। उदा०— अयम्मि, ईयम्मि। (विकल्प—) पक्षमें:—एअम्मि।

वैसेणमिणमो सिना ॥ ८५ ॥

एतदः सिना सह एस इणं इणमो इत्यादेशा वा भवन्ति। [1]सव्वस वि एस गई। सव्वाण[2] वि पत्थिवाण एस मही। एस [3]सहाओ च्चिअ। ससहरस्स। [4]एस सिरं। इणं। इणमो। पक्षे। एअं। एसा। एसो।

सि (प्रत्यय) के सह एतद् (सर्वनाम) को एस, इणं और इणमो ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—सव्वस्स………इणमो। (विकल्प—) पक्षमें:— एअं……एसो।

---

१. सर्वस्य अपि एषा गतिः। २. सर्वेषां अपि पार्थिवानां एषा मही।
३. एषः स्वभावः एव शशधरस्य। ४. शिरस्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तदश्च तः सोऽक्लीबे ॥ ८६ ॥

तद एतदश्च तकारस्य सौ परे अक्लीबे सो भवति। सो [1]पुरिसो। सा महिला। एसो[2] पिओ। एसा मुद्धा। सावित्येव। ते एए [3]धन्ना। ताओ एआओ[4] महिलाओ। अक्लीब इति किम्। तं [5]एअं वणं।

सि (प्रत्यय) आगे होने पर, तद् और एतद् (सर्वनामों) के तकार का, नपुंसकलिंग न होते, स होता है। उदा०—सो पुरिसो······मुद्धा। सि (प्रत्यय) आगे होने पर ही (ऐसा स होता है; अन्य प्रत्यय आगे होने पर, स नहीं होता है। उदा०—) ते एए······महिलाओ। नपुंसकलिंग न होते, ऐसा क्यों कहा है? (कारण ये सर्वनाम नपुंसकलिंग में हों, तो ऐसा स नहीं होता है। उदा०—तं······वणं।

वादसो दस्य होनोदाम् ॥ ८७ ॥

अदसो दकारस्य सौ परे ह आदेशो वा भवति तस्मिश्च कृते अतः सेर्डोः (३.३) इत्योत्वं शेषं संस्कृतवत् (४.४४८) इत्यतिदेशाद् आत् (हे० २.४) इत्याप्, क्लीबे स्वरान्म् से: (३.२५) इति मश्च न भवति। अह पुरिसो। अह महिला। अह वणं। [6]अह मोहो परगुणलहुअयाइ। अह णे हिअएण हसइ[7] मारुय तणओ। असावस्मान् हसतीत्यर्थः। अह कमलमुही[8]। पक्षे। उत्तरेण मुरादेशः। अमू पुरिसो। अमू महिला। अमुं वणं।

सि (प्रत्यय) आगे होने पर, अदस् (सर्वनाम) के दकार को 'ह' ऐसा आदेश विकल्प से होता है, और वह किए जाने के बाद, 'अतः सेर्डोः' सूत्र के अनुसार आनेवाला ओ, 'शेषं संस्कृतवत्' सूत्र के अतिदेश से 'आत्' सूत्र से आने वाला आ (आप्) प्रत्यय, और 'क्लीबे··· ···से:' सूत्र से आनेवाला म्, ये (तीनों भी विकार) नहीं होते हैं। उदा०—अह··· ···लहुअयाइ। अह णे ··· ···तणओ (इस वाक्य) में वह हमको हँसता है ऐसा अर्थ है। अह कमलमुही। (विकल्प—) पक्ष में :—अगले (= ३.८८) सूत्र के अनुसार (अदस् के दकार को) मु ऐसा आदेश होता है। उदा०—अमू··· ···वणं।

मुः स्यादौ ॥ ८८ ॥

अदसो दस्य स्यादौ परे मुरादेशो भवति। अमू पुरिसो। अमुणो पुरिसा।

---

१. पुरुष। २. प्रिय। ३. ते एते धन्याः।
४. ताः एताः महिलाः। ५. तद् एतद् वनम्।
६. असो मोहः परगुणलघुकतया।
७. असौ अस्मान् हृदयेन हसति मारुततनयः। ८. कमलमुखी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमुं वणं । अमूइं वणाइं अमूणि वणाणि । अमू माला । अमूउ अमूओ मालाओ । अमुणा अमूहिं । ङसि । अमूओ अमूउ अमूहिंतो । भ्यस् । अमूहिंतो अमूसुंतो । ङस् । अमुणो अमुस्स । आम् । अमूण । ङि । अमुम्मि । सुप् । अमूसु ।

विभक्ति प्रत्यय आगे होने पर, अदस् (सर्वनाम) के द को मु ऐसा आदेश होता है । उदा०—अमू पुरिसो··· ···मालाओ । अमुणा अमूहि । ङसि (प्रत्यय आगे होने पर) :—अमू ओ··· ···अमूहितो । भ्यस् (प्रत्यय आगे होने पर) :—अमूहितो अमूसुंतो । ङस् (प्रत्यय आगे होने पर) :—अमुणो अमुस्स । आम् (प्रत्यय आगे होने पर) :—अमूण । ङि (प्रत्यय आगे होने पर) :—अमुम्मि । सुप् (प्रत्यय आगे होने पर) :—अमूसु ।

म्मावयेऔ वा ।। ८९ ।।

अदसोन्त्यव्यञ्जनलुकि दकारान्तस्य स्थाने ङ्यादेशे म्मौ परतः अय इअ इत्यादेशौ वा भवतः । अयम्मि । इयम्मि । पक्षे । अमुम्मि ।

अदस् (सर्वनाम) के अन्त्य व्यञ्जन का लोप होने पर, दकारान्त (बने हुए) अदस् के स्थान पर, ङि (प्रत्यय) का आदेश रूप ऐसा म्मि (प्रत्यय) आगे होने पर, अयं और इअ ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—अयम्मि, इयम्मि । (विकल्प—) पक्ष में :—अमुम्मि ।

युष्मदस्तं तुं तुवं तुह तुमं सिना ।। ९० ।।

युष्मदः सिना सह तं तुं तुवं तुह तुमं इत्येते पञ्चादेशा भवन्ति । तं तं तुवं तुह तुमं [1]दिट्ठो ।

सि (प्रत्यय) के सह युष्मद् सर्वनामको तं, तुं, तुवं, तुह, और तुमं ऐसे ये पाँच आदेश होते हैं । उदा०—तं तुं··· ···दिट्ठो ।

भे तुब्भे तुज्झ तुम्ह तुय्हे उय्हे जसा ।। ९१ ।।

युष्मदो जसा सह भे तुब्भे तुज्झ तुम्ह तुय्हे उय्हे इत्येते षडादेशा भवन्ति । भे तुब्भे तुज्झ तुम्ह तुय्हे उय्हे चिट्ठह । ब्भो म्हज्झो वा (३.१०४) इति वचनात् तुम्हे तुज्झे । एवं चाष्टरूप्यम् ।

जस् (प्रत्यय) के सह युष्मद् (सर्वनाम) को भे, तुब्भे, तुज्झ, तुम्ह, तुम्हे, और उय्हे ऐसे छः आदेश होते हैं । उदा०—भे··· ···चिट्ठह । 'ब्भो म्हज्झौ वा' इस वचन के कारण (तुब्भे इस रूप में से ब्भ के अंश के म्ह और ज्झ होकर)

1. दृष्ट ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुम्हे और तुज्झे (ऐसे रूप) होते हैं। और इसी तरह ये (कुल) आठ रूप होते हैं।

तं तुं तुमं तुवं तुह तुमे तुए अमा ॥ ९२ ॥

युष्मदोमा सह एते सप्तादेशा भवन्ति। तं तुं तुमं तुवं तुह तुमे तुए [1]वन्दामि।

अम् (प्रत्यय) के सह युष्मद् (सर्वनाम) को तं, तुं, तुमं, तुवं, तुह, तुमे, तुए (ऐसे ये) सात आदेश होते हैं। उदा०—तं... ...वन्दामि।

वो तुज्झ तुब्भे तुय्हे उय्हे भे शसा ॥ ९३ ॥

युष्मदः शसा सह एते षडादेशा भवन्ति। वो। तुज्झ। तुब्भे। ब्भो म्ह-ज्झौ वेति वचनात् तुम्हे तुज्झे। तुय्हे उय्हे भे पेच्छामि।

शस् (प्रत्यय) के सह युष्मद् (सर्वनाम) को वो, तुज्झ, तुब्भे, तुय्हे, उय्हे, और भे (ऐसे) ये छः आदेश होते हैं। उदा०—वो... ...तुब्भे; 'ब्भो म्ह ज्झौ वा' इस वचनानुसार, तुम्हे, तुज्झे; तुय्हे... ...पेच्छामि।

भे दि दे ते तइ तए तुमं तुमइ तुमए तुमे तुमाइ टा ॥ ९४ ॥

युष्मदष्टा इत्यनेन सह एते एकादशादेशा भवन्ति। भे दि दे ते तइ तए तुमं तुमइ तुमए तुमे तुमाइ [2]जम्पिअं।

टा (प्रत्यय) के सह युष्मद् (सर्वनाम) को भे, दि, दे, ते, तइ, तए, तुमं, तुमइ, तुमए, तुमे, और तुमाइ (ऐसे) ये ग्यारह आदेश होते हैं। उदा०—भे दि ... ...जंपिअं।

भे तुब्भेहिं उज्झेहिं उम्हेहिं तुय्हेहिं उय्हेहिं भिसा ॥९५॥

युष्मदो भिसा सह एते षडादेशा भवन्ति। भे। तुब्भेहिं। ब्भोम्हज्झौ वेति वचनात् तुम्हेहिं तुज्झेहिं। उज्झेहिं उम्हेहिं तुय्हेहिं उय्हेहिं भुत्तं[3]। एवं चाष्टरूप्यम्।

भिस् (प्रत्यय) के सह युष्मद् सर्वनाम को भे, तुब्भेहिं, उज्झेहिं, उम्हेहिं, तुय्हेहिं, और उय्हेहिं (ऐसे) ये छः आदेश होते हैं। उदा०—भे, तुब्भेहिं; 'ब्भो म्हज्झौ वा' इस वचनानुसार तुम्हेहिं, तुज्झेहिं; उज्झेहिं... ...भुत्तं। एवं (कुल) आठ रूप होते हैं।

---

१. √वन्द्। २. जल्पित। ३. भुक्त।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तइ-तुव-तुम-तुह-तुब्भा ङसौ ।। ९६ ।।

युष्मदो ङसौ पञ्चम्येकवचने परत एते पञ्चादेशा भवन्ति । ङसेस्तु त्तो-दो-दु-हि-हिन्तो-लुको यथाप्राप्तमेव । तइत्तो तुवत्तो तुमत्तो तुहत्तो तुब्भत्तो । ब्भो म्हज्झौ वेति वचनात् तुम्हत्तो तुज्झत्तो । एवं दो-दु-हि-हिंतो-लुक्ष्वप्युदाहार्यम् । तत्तो इति तु त्वत्त इत्यस्य वलोपे सति ।

पंचमी एक वचन का ङसि प्रत्यय आगे होने पर, युष्मद् (सर्वनाम) को तइ, तुव, तुम, तुह, और तुब्भ (ऐसे) ये पांच आदेश होते हैं । ङसि को तो त्तो, दो दु, हि, हिंतो, और लुक् (सूत्र ३.८ देखिए) ये आदेश हमेशा की तरह प्राप्त होते ही हैं । उदा०—तइत्तो··· ···तुब्भत्तो; 'ब्भो म्हज्झौ वा' वचन के अनुसार तुम्हत्तो और तुज्झत्तो । इसी प्रकार, दो दु, हि, हिंतो और लोप इनके बारे में उदाहरण ले । 'तत्तो' यह रूप मात्र (संस्कृत में से) त्वत्तः (इस रूप) में से व् का लोप होकर बना है ।

तुय्ह तुब्भ तहिंतो ङसिना ।। ९७ ।।

युष्मदो ङसिना सहितस्य एते त्रय आदेशा भवन्ति । तुय्ह तुब्भ तहिंतो आगओ । ब्भो म्हज्झौ वेति वचनात् तुम्ह तुज्झ । एवं च पञ्च रूपाणि ।

ङसि (प्रत्यय) के सह युष्मद् (सर्वनाम) को तुम्ह, तुब्भ, और तहिंतो (ऐसे) ये तीन आदेश होते हैं । उदा०—तुय्ह··· ···आगओ । 'ब्भो म्ह ज्झौ वा' वचन के अनुसार तुम्ह, तुज्झ । और इसी प्रकार (कुल) पाँच रूप होते हैं ।

तुब्भतुय्होय्होम्हा भ्यसि ।। ९८ ।।

युष्मदो भ्यसि परत एते चत्वार आदेशा भवन्ति । भ्यसस्तु यथाप्राप्तमेव । तुब्भत्तो तुय्हत्तो उय्हत्तो । उम्हत्तो ब्भो म्ह-ज्झौ वेति वचनात् । तम्हत्तो तुज्झत्तो । एवं दो-दु-हि-हिंतो-सुन्तोष्वप्युदाहार्यम् ।

भ्यस् (प्रत्यय) आगे होने पर, युष्मद् (सर्वनाम) को तुब्भ, तुय्ह, उय्ह और उम्ह (ऐसे) ये चार आदेश होते हैं । भ्यस् (प्रत्यय) के आदेश (सूत्र ३.९ देखिए) हमेशा की तरह होते ही हैं । उदा०—तुब्भत्तो··· ··· । 'ब्भो म्हज्झौ वा' वचन के अनुसार, तुम्हत्तो, तुज्झत्तो । इसी प्रकार, दो, दु, हि हिंतो और सुंतो (प्रत्ययों) के बारे में उदाहरण लें ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तइ-तु-ते-तुम्हं-तुह-तुहं-तुव-तुम-तुमे-तुमो-
तुमाइ-दि-दे-इ-ए-तुब्भोब्भोय्हा ङसा ॥ ९९ ॥

युष्मदो ङसा षष्ठ्येकवचनेन सहितस्य एते अष्टादशादेशा भवन्ति। तइ। तु। ते। तुम्हं। तुह। तुहं। तुव। तम। तमे। तुमो। तुमाइ। दि। दे। इ। ए। तब्भ। उब्भ। उय्ह धणं। ब्भो म्हज्झौ वेति वचनात् तुम्ह तुज्झ, उम्ह उज्झ। एवं च द्वाविंशती रूपाणि।

षष्ठी एकवचन के ङस् (प्रत्यय) के सह युष्मद् (सर्वनाम) को तइ, तु, ते, तुम्हं, तुह, तुहं, तुव, तुम, तुमे, तुमो, तुमाइ, दि, दे, इ, ए, तुब्भ, उब्भ, और उय्ह (ऐसे) ये अठारह आदेश होते हैं। उदा०—तइ……उय्ह धणं। 'ब्भो म्ह ज्झौ वा' वचन के अनुसार तुम्ह और तुज्झ, तथा उम्ह और उज्झ (ये रूप होते हैं)। और इस प्रकार (कुल) बाईस रूप होते हैं।

तु वो भे तुब्भ तुब्भं तुब्भाण तुवाण-
तुमाण तुहाण उम्हाण आमा ॥ १०० ॥

युष्मद आमा सहितस्य एते दशादेशा भवन्ति। तु। वो। भे। तुब्भ। तब्भं। तुब्भाण। तुवाण। तमाण। तुहाण। उम्हाण। क्त्वा स्यादेर्णस्वोर्वा (१.२७) इत्यनुस्वारे तब्भाणं तुवाणं तुमाणं तुहाणं उम्हाणं। ब्भो म्हज्झौ वेति वचनात् तुम्ह तुज्झ, तुम्हं तुज्झं, तुम्हाण तुम्हाणं तुज्झाण तुज्झाणं, धणं। एवं च त्रयोविंशती रूपाणि।

आम (प्रत्यय) के सहित (होने वाले) युष्मद् (सर्वनाम) को तु, वो भे, तुब्भ, तुब्भं, तुब्भाण, तुवाण, तुमाण, तुहाण, और उम्हाण (ऐसे) ये दस आदेश होते हैं। उदा०—तु वो— …उम्हाण। 'क्त्वास्यादेर्णस्वोर्वा' इस सूत्र के अनुसार, (ण के ऊपर) अनुस्वार आने पर, तुब्भाणं… …उम्हाणं (ऐसे भी रूप होते हैं)। 'ब्भो म्हज्झौ वा' वचन के अनुसार, तुम्ह… …तुज्झाणं धणं (ऐसे रूप होते हैं)। और इस प्रकार, (कुल) तेईस रूप होते हैं।

तुमे तुमए तुमाइ तइ तए ङिना ॥ १०१ ॥

युष्मदो ङिना सप्तम्येकवचनेन सहितस्य एते पञ्चादेशा भवन्ति। तुमे तुमए तुमाइ तइ तए ठिअं।

सप्तमी एक वचन के ङि (प्रत्यय) के सहित (होनेवाले) युष्मद् को तुमे, तुमए, तुमाइ, तइ, और तए (ऐसे) ये पाँच आदेश होते हैं। उदा०—तुमे… …तए ठिअं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तु-तुव-तुम-तुह-तुब्भा ङौ ॥ १०२ ॥

युष्मदो ङौ परत एते पञ्चादेशा भवन्ति । ङेस्तु यथा प्राप्तमेव । तुम्मि । तुवम्मि । तुमम्मि । तुहम्मि । तुब्भम्मि । ब्भो म्हज्झौ वेति वचनात् तुम्हम्मि तुज्झम्मि । इत्यादि ।

ङि (प्रत्यय) आगे होने पर, युष्मद् (सर्वनाम) को तु, तुव, तुम, तुह, और तुब्भ (ऐसे) ये पाँच आदेश होते हैं। ङि (प्रत्यय) के आदेश (सू० ३.११ देखिए) हमेशा की तरह होते ही हैं। उदा०—तुम्मि… …तुब्भम्मि । 'ब्भो म्हज्झो वा' इस वचन के अनुसार, तुम्हम्मि और तुज्झम्मि; इत्यादि ।

सुपि ॥ १०३ ॥

युष्मदः सुपि परतः तु-तुव-तुम-तुह-तुब्भा भवन्ति । तुसु । तुवेसु । तुमेसु । तुहेसु । तुब्भेसु । ब्भो म्हज्झौ वेति वचनात् तुम्हेसु तुज्झेसु । केचित्तु सुप्येत्वविकल्पमिच्छन्ति । तन्मते तुवसु तुमसु तुहसु तुब्भसु तुम्हसु तुज्झसु । तुब्भस्यात्वमपीच्छत्यन्यः । तुब्भासु तुम्हासु तुज्झासु ।

सुप (प्रत्यय) आगे होने पर, युष्मद् (सर्वनाम) को तु, तुव, तुम, तुह और तुब्भ (ऐसे ये पाँच आदेश) होते हैं। उदा०—तुसु… …तुब्भेसु । 'ब्भो म्हज्झो वा' वचन के अनुसार, तुम्हेसु और तुज्झेसु (ये रूप होते हैं) । सुप् (प्रत्यय) आगे होने पर (उसके पिछले अ का) ए विकल्प से होता है, ऐसा कुछ (वैयाकरण) मानते हैं; उनके मतानुसार, तुवसु… …तुज्झसु (ऐसे रूप होंगे) । (सु प्रत्यय के पूर्व) तुब्भ में (अन्त्य अ का) आ होता है, ऐसा दूसरा कोई (वैयाकरण) मानता है; (उसके मतानुसार) तुब्भासु……तुज्झासु (ऐसे रूप होंगे) ।

ब्भो म्हज्झौ वा ॥ १०४ ॥

युष्मदादेशेषु यो द्विरुक्तो भस्तस्य म्ह ज्झ इत्येतावादेशौ वा भवतः । पक्षे स एवास्ते तथैव चोदाहृतम् ।

युष्मद् (सर्वनाम) को (कहे हुए) आदेशों में से जो द्विरुक्त भ (= ब्भ) कहा हुआ है, उसको म्ह और ज्झ ऐसे ये (दो) आदेश विकल्प से होते हैं। (विकल्प—) पक्ष में:—वह (ब्भ) वैसा ही रहता है। और तदनुसार (ऊपर) उदाहरण दिये हैं।

अस्मदो म्मि अम्मि अम्हि हं अहं अहयं सिना ॥१०५॥

अस्मदः सिना सह एते षडादेशा भवन्ति । अज्ज म्मि हासिआ[1] मामि तेण । उन्नम[2] न अम्मि कुविआ । अम्हि[3] करेमि । जेण[4] हं विद्धा ।

---

१. अद्य अहं हासिता (मामि) तेन । २. उन्नम न अहं कुपिता । ३. अहं करोमि । ४. येन अहं बुद्धा (विद्धा) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किं [1]पम्हुट्ठम्मि अहं । अहयं [2]कयप्पणामो ।

सि (प्रत्यय) के सह अस्मद् (सर्वनाम) को म्मि, अम्मि, अम्हि, हं, अहं और अहयं (ऐसे) ये छः आदेश होते हैं । उदा०—अज्ज म्मि—···कयप्पणामो ।

अम्ह अम्हे आम्हो मो वयं भे जसा ॥ १०६ ॥

अस्मदो जसा सह एते षडादेशा भवन्ति । अम्ह अम्हे अम्हो मो वयं भे भणामो ।

जस् (प्रत्यय) के सह अस्मद् को अम्ह, अम्हे, अम्हो, मो, वयं और भे (ऐसे) ये छः आदेश होते हैं । उदा०—अम्ह··· भे भणामो ।

णे णं मि अम्मि अम्ह मम्ह मं ममं मिमं अहं अमा ॥ १०७ ॥

अस्मदोमा सह एते दशादेशा भवन्ति । णे णं मि अम्मि अम्ह मम्ह मं ममं मिमं अहं पेच्छ ।

अम् (प्रत्यय) के सह अस्मद् (सर्वनाम) को णे, णं, मि, अम्मि, अम्ह, मम्ह, मं; ममं, मिमं और अहं (ऐसे ये) आदेश होते हैं । उदा०—णे··अहं पेच्छ ।

अम्हे अम्हो अम्ह णे शसा ॥ १०८ ॥

अस्मदः शसा सह एते चत्वार आदेशा भवन्ति । अम्हे अम्हो अम्ह णे पेच्छ ।

शस् (प्रत्यय) के सह अस्मद् (सर्वनाम) को अम्हे अम्हो, अम्ह और णे (ऐसे) ये चार आदेश होते हैं । उदा०—अम्हे·····णे पेच्छ ।

मि मे ममं ममए ममाइ मइ मए मयाइ णे टा ॥ १०९ ॥

अस्मदष्टा सह एते नवादेशा भवन्ति । मि मे ममं ममए ममाइ मइ मए मयाइ णे कयं ।

टा (प्रत्यय) के सह अस्मद् (सर्वनाम) को मि, मे, ममं, ममए, ममाइ, मइ, मए, मयाइ और णे (ऐसे) ये नौ आदेश होते हैं । उदा०—मि मे······णे कयं ।

अम्हेहि अम्हाहि अम्ह अम्हे णे भिसा ॥ ११० ॥

अस्मदो भिसा सह एते पञ्चादेशा भवन्ति । अम्हेहि अम्हाहि अम्ह अम्हे णे कयं ।

भिस् (प्रत्यय) के सह अस्मद् को अम्हेहि, अम्हाहि, अम्ह, अम्हे और णे (ऐसे) ये पाँच आदेश होते हैं । उदा०—अम्हेहि·····णे कयं ।

---

१. किं प्रमृष्टा अस्मि अहम् । २. अहं कृतप्रणामः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मइ-मम-मह-मज्झा ङसौ ॥ १११ ॥

अस्मदो ङसौ पञ्चम्येकवचने परत एते चत्वार आदेशा भवन्ति। ङसेस्तु यथाप्राप्तमेव। मइत्तो ममत्तो महत्तो मज्झत्तो आगओ। मत्तो इति तु मत्त इत्यस्य। एवं दो-दु-हि हिंतो लुक्ष्वप्युदाहार्यम्।

पंचमी एकवचन का ङसि (प्रत्यय) आगे होने पर, अस्मद् (सर्वनाम) को मइ, मम, मह और मज्झ (ऐसे) ये चार आदेश होते हैं। ङसि के आदेश (सूत्र ३.८ देखिए) हमेशा की तरह होते हैं। उदा०—मइत्तो...... आगओ। मत्तो यह रूप मात्र (संस्कृत में से) मत्तः इस (रूप) से आया है। इसी प्रकार दो, दु, हि, हिंतो और लुक् इनके बारे में उदाहरण लें।

ममाम्हौ भ्यसि ॥ ११२ ॥

अस्मदो भ्यसि परतो मम अम्ह इत्यादेशौ भवतः। भ्यसस्तु यथाप्राप्तम्। ममत्तो अम्हत्तो। ममाहिंतो अम्हाहिंतो। ममासुंतो अम्हासुंतो। ममेसुंतो अम्हेसुंतो।

भ्यस् (प्रत्यय) आगे होने पर, अस्मद् (सर्वनाम) को मम और अम्ह ऐसे (दो) आदेश होते हैं। भ्यस् के आदेश हमेशा की तरह होते हैं (सूत्र ३.९ देखिए)। उदा०—ममत्तो... ...अम्हे सुंतो।

मे मइ मम मह महं मज्झ मज्झं अम्ह अम्हं ङसा ॥ ११३ ॥

अस्मदो ङसा षष्ठ्येकवचनेन सहितस्य एते नवादेशा भवन्ति। मे मइ मम मह महं मज्झ मज्झं अम्ह अम्हं धणं।

षष्ठी एक वचन के ङस् (प्रत्यय) से सहित (होने वाले) अस्मद् को मे, मइ, मम, मह, महं, मज्झ, मज्झं, अम्ह, और अम्हं (ऐसे) ये नौ आदेश होते हैं। उदा०—मे... ...अम्हं धणं।

णे णो मज्झ अम्ह अम्हं अम्हे अम्हो अम्हाण ममाण महाण मज्झाण आमा ॥ ११४ ॥

अस्मद आमा सहितस्य एते एकादशादेशा भवन्ति। णे णो मज्झ अम्हं अम्हे अम्हो अम्हाण ममाण महाण मज्झाण धणं। क्त्वास्यादेर्ण स्वोर्वा (१.२७) इत्यनुस्वारे। अम्हाणं ममाणं महाणं मज्झाणं। एवं च पञ्चदश रूपाणि।

आम् (प्रत्यय) से सहित (होनेवाले) अस्मद् को णे, णो, मज्झ, अम्ह, अम्हं, अम्हे, अम्हो, अम्हाण, ममाण, महाण, और मज्झाण (ऐसे) ये ग्यारह आदेश होते हैं। उदा०—णे... ...मज्झाण धणं। 'क्त्वास्यादेर्ण स्वोर्वा' सूत्र के अनुसार, (ण के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऊपर) अनुस्वार आने पर, अम्हाणं······मज्झाणं (ऐसे रूप होते हैं)। और इसी प्रकार (कुल) पन्द्रह रूप होते हैं।

मि मइ ममाइ मए मे ङिना ॥११५॥

अस्मदो ङिना सहितस्य एते पञ्चादेशा भवन्ति। मि मइ ममाइ मए मे ठिअं।

ङि (प्रत्यय) से सहित (होने वाले) अस्मद् को मि, मइ, ममाइ, मए, और मे (ऐसे) ये पाँच आदेश होते हैं। उदा०—मि······मे ठिअं।

अम्ह-मम-मह-मज्झा ङौ ॥११६॥

अस्मदो ङौ परत एते चत्वार आदेशा भवन्ति। ङेस्तु यथाप्राप्तम्। अम्हम्मि ममम्मि महम्मि मज्झम्मि ठिअं।

ङि (प्रत्यय) आगे होने पर, अस्मद् (सर्वनाम) को अम्ह, मम, मह, और मज्झ (ऐसे) ये चार आदेश होते हैं। ङिप्रत्यय के आदेश (सूत्र ३.११ देखिए) हमेशा की तरह होते हैं। उदा०—अम्हम्मि······मज्झम्मि ठिअं।

सुपि ॥ ११७ ॥

अस्मदः सुपि परे अम्हादयश्चत्वार आदेशा भवन्ति। अम्हेसु ममेसु महेसु मज्झेसु। एत्व-विकल्प-मते तु। अम्हसु ममसु महसु मज्झसु। अम्हस्यात्वमपीच्छत्यन्यः। अम्हासु।

सुप् (प्रत्यय) आगे होने पर, अस्मद् (सर्वनाम) को अम्ह इत्यादि (यानी अम्ह, मम, मह और मज्झ ऐसे ये) चार आदेश होते हैं। उदा०—अम्हेसु······मज्झेसु। (सु प्रत्यय के पूर्व पिछले अ का) ए विकल्प से होता है इस मत के अनुसार, अम्हसु······मज्झसु (ऐसे रूप होंगे)। (सु प्रत्यय के पूर्व) 'अम्ह' में (अ का) आ होता है ऐसा दूसरा कोई (वैयाकरण) मानता है; तदनुसार अम्हासु (ऐसा रूप होगा)।

त्रेस्ती तृतीयादौ ॥ ११८ ॥

त्रेः स्थाने ती इत्यादेशो भवति तृतीयादौ। तीहिं कयं। तीहिंतो आगओ। तिण्हं धणं। तीसु ठिअं।

तृतीया इत्यादि (यानी तृतीया से सप्तमीतक) विभक्तियों में त्रि (इस संख्यावाचक शब्द) के स्थान पर ती ऐसा आदेश होता है। उदा०—तीहिं······तीसु ठिअं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वेर्दो वे ॥ ११९ ॥

द्विशब्दस्य तृतीयादौ दो वे इत्यादेशौ भवतः। दोहि वेहि कयं। दोहिंतो वेहिंतो आगओ। दोण्हं वेण्हं धणं। दोसु वेसु ठिअं।

तृतीया इत्यादि (यानी तृतीया से सप्तमीतक) विभक्तियों में द्वि (इस संख्यावाचक) शब्द को दो और वे ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—दोहि ... ... वेसु ठिअं।

दुवे दोण्णि वेण्णि च जस्-शसा ॥१२०॥

जस्-शस्भ्यां सहितस्य द्वेः स्थाने दुवे दोण्णि वेण्णि इत्येते दो वे इत्येतौ च आदेशा भवन्ति। दुवे दोण्णि वेण्णि दो वे ठिआ पेच्छा वा। ह्रस्वः संयोगे (१.८४) इति ह्रस्वत्वे दुण्णि विण्णि।

जस् और शस् (इस प्रत्ययों) से सहित (होने वाले) द्वि (शब्द) के स्थान पर दुवे, दोण्णि, और वेण्णि ऐसे ये (तीन) तथा दो और वे ऐसे ये (दो), ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—दुवे... ...पेच्छ वा। 'ह्रस्वः संयोगे' सूत्र के अनुसार, (स्वर का) ह्रस्वत्व आने पर, दुण्णि और विण्णि (ऐसे रूप होते हैं)।

त्रेस्तिण्णिः ॥ १२१ ॥

जस्-शस्भ्यां सहितस्य त्रेः स्थाने तिण्णि इत्यादेशो भवति। तिण्णि ठिआ पेच्छ वा।

जस् और शस् (प्रत्ययों) से सहित (होनेवाले) त्रि (शब्द) के स्थान पर तिण्णि ऐसा आदेश होता है। उदा०—तिण्णि ... ...पेच्छ वा।

चतुरश्चत्तारो चउरो चत्तारि ॥ १२२ ॥

चतुर्-शब्दस्य जस्-शस्भ्यां सह चत्तारो चउरो चत्तारि इत्येते आदेशा भवन्ति। चत्तारो चउरो चत्तारि चिट्ठन्ति पेच्छ वा।

जस् और शस् (प्रत्ययों) के सह चतुर (इस संख्यावाचक) शब्द को चत्तारो, चउरो और चत्तारि ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा०—चत्तारो... ... पेच्छ वा।

संख्याया आमो ण्ह ण्हं ॥ १२३ ॥

संख्याशब्दात् परस्यामो ण्ह ण्हं इत्यादेशौ भवतः। दोण्ह। तिण्ह। चउण्ह।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचण्ह[1] । छण्ह । सत्तण्ह । अट्ठण्ह । एवम् । दोण्हं । तिण्हं । चउण्हं । पंचण्हं । छण्हं । सत्तण्हं । अट्ठण्हं । [2]नवण्हं । [3]दसण्हं । [4]पण्णरसण्हं । दिवसाणं । अट्ठार[5]सण्हं समणसाहस्सीणं[6] । कतीमाम् कइण्हं । बहुलाधिकारात् विंशत्यादेर्न भवति ।

संख्यावाचक शब्द के आगे आनेवाले आम् (प्रत्यय) को ण्ह और ण्हं ऐसे आदेश होते हैं । उदा०—दोण्ह...... अट्ठण्ह । इसी प्रकार :—दोण्हं...... कइण्हं (ऐसे रूप होते हैं) । बहुल का अधिकार होने से, विंशति इत्यादि (संख्यावाचक) शब्दों के बारे में (ण्ह और ण्हं ये आदेश) नहीं होते हैं ।

शेषेदन्तवत् ॥ १२४ ॥

उक्तादन्यः शेषस्तत्र स्यादिविधिरदन्तवदतिदिश्यते । येष्वाकाराद्यन्तेषु पूर्वं कार्याणि मोक्तानि तेषु जस्शसोर्लुक् (३·४) इत्यादीनि अदन्ताधिकारविहितानि कार्याणि भवन्तीत्यर्थः । तत्र जस्शसोर्लुक् इत्येतत्-कार्यातिदेशः । माला गिरी गुरू सही [7]वहू रेहन्ति पेच्छ वा । अमोऽस्य (३·५) इत्येतत्कार्यातिदेशः । गिरिं गुरुं सहिं वहुं[7] गामणिं खलपुं पेच्छ । टा आमोर्णः (३·६) इत्येतत्कार्यातिदेशः । हाहाण कयं । मालाण गिरीण गुरूण सहीण [7]वहूण धणं । टायास्तु । टो णा (३·२४) । टाङस्ङेरदादिद्वेद्वा तु ङसेः (३·२९) इति विधिरुक्तः । भिसो हि हिँ हिं (३·७) इत्येतत्कार्यातिदेशः । मालाहि गिरीहि गुरूहि सहीहि वहूहि कयं । एवं सानुनासिकानुस्वारयोरपि । ङसेस् त्तोदोदुहिहिन्तो लुकः (३·८) इत्येतत्कार्यातिदेशः । मालाओ मालाउ मालाहिन्तो । बुद्धीओ बुद्धीउ बुद्धीहिंतो । धेणूओ धेणूउ धेणूहिंतो आगओ । हिलुकौ तु प्रतिषेत्स्येते (३·१२७-१२६) । भ्यसस् त्तो दो दु हि हिंतो सुंतो (३·९) इत्येतत्कार्यातिदेशः । मालाहिंतो मालासुंतो । हिस्तु निषेत्स्यते (३·१२७) । एवं गिरीहिंतो इत्यादि । ङसः स्सः (३·१०) इत्येतत्कार्यातिदेशः । गिरिस्स । गुरुस्स । दहिस्स । [8]मुहुस्स । स्त्रियां तु टाङस्ङेः° (३·२९) इत्याद्युक्तम् । ङे म्मि ङेः (३·११) इत्येतत्कार्यातिदेशः । गिरिम्मि । गुरुम्मि । दहिम्मि । महुम्मि । ङेस्तु निषेत्स्यते (३·१२८) । स्त्रियां तु टाङस्ङेः° (३·२९) इत्याद्युक्तम् । जस्शस्ङसित्तोदोद्वामि दीर्घः (३·१२) इत्येतत्कार्यातिदेशः । गिरी गुरू चिट्ठन्ति । गिरीओ गुरूओ आगओ । गिरीण गुरूण धणं । भ्यसि वा (३·१३) इत्येतत्कार्यातिदेशो न प्रवर्तते । इदुतो दीर्घः (३·१६) इति नित्यं

---

१. क्रम से :—पंचन् । षट् । सप्तन् । अष्टन् । २. नवन् ।
३. दशन् । ४. पंचदशानां दिवसानाम् । ५. अष्टादश ।
६. श्रमणसाहस्री । ७. वधू । ८. मधु ।

विधानात्। टाणशस्येत् (३·१४) भिस्भ्यस्सुपि (३·१५) इत्येतत्कार्यातिदेशस्तु निषेत्स्यते (३·१२९)।

(अब तक) कहा हुआ (रूप विचार) छोड़ कर (उर्वरित) अन्य (रूप-विचार यानी) शेष; उसके बारे में अकारान्त शब्द के समान विभक्तिरूपों का विचार है, ऐसा अतिदेश (इस सूत्र से) किया जाता है। (यानी) आकार इत्यादि (स्वरों) से अन्त होने वाले शब्दों के बारे में (जो रूप इत्यादि) कार्य अब तक नहीं कहे हुए हैं, उन शब्दों के बारे में 'जस्शसोर्लुक्' इत्यादि अकारान्त शब्दाधिकार में कहे हुए कार्य होते है, ऐसा अर्थ है। (स्पष्ट शब्दों में ऐसा कहा जा सकता है :—) उनमें से पहले, 'जस्शसोर्लुक्' सूत्र के कार्य का अतिदेश ऐसा होता है :— माला··· ···पेच्छ वा। 'अमोऽस्य' सूत्र के कार्य का अतिदेश (ऐसा :—) गिरि··· ···पेच्छ। 'टा आमोर्णः' सूत्र के कार्य का अतिदेश (ऐसा होता है :—) हाहाण कमं; मालाण··· ···वहूण धणं; टा (प्रत्यय) के बारे में मात्र, 'टो णा' और 'टाङस्··· ···ङसे' ऐसा विधि (= नियम) कहा हुआ है। 'भिसो··· ···हिं' सूत्र के कार्य का अतिदेश (एसा :—) मालाहि··· ··· ··· ···बहूहि कयं; इसी प्रकार सानुनासिक और सानुस्वार 'हिं' के बारे में (अतिदेश होता है)। 'ङसेस्··· ···लुकः' सूत्र के कार्य का अतिदेश (ऐसा होता है :—) मालाओ··· ···धेणूहितो आगओ; (इनमें से) हि और लुक् इनका निषेध आगे (सूत्र ३.१२६-१२७) किया जाएगा। 'भ्यस्··· ···सुन्तो' सूत्र के कार्य का अतिदेश (ऐसा :—) मालाहितो, मालासुंतो; हि प्रत्यय का निषेध आगे (सूत्र ३.१२७ में) किया जाएगा; इसी प्रकार गिरीहितो, इत्यादि (रूप होते हैं)। 'ङसः स्सः' सूत्र के कार्य का अतिदेश (ऐसा :—) गिरिस्स··· ···महुस्स; स्त्रीलिंगी शब्दों के बारे में मात्र 'टङस् ङेः' इत्यादि नियम कहा हुआ है। 'डे म्मि ङेः' सूत्र के कार्य का अतिदेश (ऐसा होता है :—) गिरिम्मि··· ···महुम्मि; परन्तु डे (प्रत्यय) के बारे में मात्र आगे (सूत्र ३.१२८ में) निषेध किया जाएगा; स्त्रीलिंगी शब्दों के बारे में मात्र 'टाङस् ङेः' इत्यादि नियम कहा है। 'जस्··· ···दीर्घः' सूत्र के कार्य का अतिदेश (ऐसा) :—गिरी··· ···गुरूणधणं 'भ्यसि वा' सूत्र के कार्य का अतिदेश (मात्र) नहीं लागू होता है; कारण 'इदुतो दीर्घः' ऐसा नित्य नियम कहा हुआ है। 'टाणशस्येत्' और 'भ्यस्सुपि' इन सूत्रों के कार्यों के अतिदेश का निषेध आगे (सूत्र ३.१२९ में) किया जाएगा।

न दीर्घो णो ॥ १२५ ॥

इदुदन्तयोरर्थात् जस्शस्ङस्यादेशे णो इत्यस्मिन् परतो दीर्घो न भवति। अग्गिणो वाउणो। णो इति किम्। अग्गी अग्गीओ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इकारान्त और उकारान्त शब्दों के आगे, अर्थात् जस् और ङसि (इन प्रत्ययों) को णो आदेश होने पर, (उनका अन्त्य स्वर) दीर्घ नहीं होता है। उदा०— अग्गिणो, वाउणो। (आगे) णो आदेश होने पर ऐसा क्यों कहा है? (कारण आगे णो आदेश न हो, तो अन्त्य स्वर दीर्घ होता है। उदा०—) अग्गी, अग्गीओ।

ङसेर्लुक् ॥ १२६ ॥

आकारान्तादिभ्योदन्तवत् प्राप्तौ ङसेर्लुग् न भवति। मालत्तो मालाओ मालाउ मालाहिंतो आगओ। एवम् अग्गीओ वाऊओ इत्यादि।

आकारान्त इत्यादि शब्दों के आगे, अकारान्त शब्द के समान प्राप्त हुए ङसि (प्रत्यय) का लोप नहीं होता है। उदा०—मालत्तो ......आगओ। इसी प्रकार अग्गीओ, वाऊओ, इत्यादि (रूप होते हैं)।

भ्यसश्च हिः ॥ १२७ ॥

आकारान्तादिभ्योदन्तवत् प्राप्तो भ्यसो ङसेश्च हिर्न भवति। मालाहिंतो मालासुंतो। एवं अग्गीहिंतो इत्यादि। मालाओ मालाउ मालाहिंतो। एवं अग्गीओ इत्यादि।

आकारान्त इत्यादि शब्दों के आगे, अकारान्त शब्द के समान प्राप्त हुए भ्यस् और ङसि (इन प्रत्ययों) का हि नहीं होता है। उदा०—मालाहिंतो, मालासुंतो। इसी प्रकार अग्गीहिंतो, इत्यादि; मालाओ ......मालाहिंतो; इसी प्रकार अग्गीओ इत्यादि (रूप होते हैं)।

ङेर्डे: ॥ १२८ ॥

आकारान्तादिभ्योदन्तवत् प्राप्तो ङेर्डे न भवति। अग्गिम्मि। वाउम्मि। दहिम्मि। महुम्मि।

आकारान्त इत्यादि शब्दों के आगे, अकारान्त शब्द के समान प्राप्त होने वाले ङि (प्रत्यय) का डे नहीं होता है। उदा०—अग्गिम्मि......महुम्मि।

एत् ॥ १२९ ॥

आकारान्तादीनामर्थात् टाशस्भिसभ्यस्सुप्सु परतोदन्तवद् एत्वं न भवति। मालाए कयं। मालाओ पेच्छ। मालाहि कयं। मालाहिंतो मालासुंतो आगओ। मालासु ठिअं। एवं अग्गिणो वाउणो इत्यादि।

टा, शस्, भिस्, और सुप् ये (प्रत्यय) अर्थात् आकारान्त इत्यादि शब्दों के आगे होने पर, अकारान्त शब्द के समान, उनके (अन्त्य स्वर का) ए नहीं होता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। उदा०—हाहाण··· ···माल्लासु ठिअं। इसी प्रकार अग्गिणो, वाउणो इत्यादि (रूप होते हैं)।

द्विवचनस्य बहुवचनम् ॥ १३० ॥

सर्वासां विभक्तीनां स्यादीनां त्यादीनां च द्विवचनस्य स्थाने बहुवचनं भवति। दोण्णि [1]कुणन्ति। दुवे [1]कुणन्ति। दोहिं दोहिंतो दोसुंतो दोसु। [2]हत्था। पाया। थणया। नयणा।

स्यादि तथा त्यादि (इन) सब विभक्तियों के बारे में, द्विवचन के स्थान पर बहुवचन आता है। उदा०—दोण्णि··· ···नयणा।

चतुर्थ्याः षष्ठी ॥ १३१ ॥

चतुर्थ्याः स्थाने षष्ठी भवति। मुणिस्स[3] मुणीण देइ[4]। [5]नमो देवस्स देवाण।

चतुर्थी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति आती है। उदा०—मुणिस्स······ देवाण।

तादर्थ्यङेर्वा ॥ १३२ ॥

तादर्थ्यविहितस्य ङेश्चतुर्थ्येकवचनस्य स्थाने षष्ठी वा भवति। देवस्स देवाय। देवार्थमित्यर्थः। ङेरिति किम्। देवाण।

'उसके लिए' (तादर्थ्य) इस अर्थ में कहे हुए ङे इस चतुर्थी एकवचनी प्रत्यय के स्थान पर षष्ठी (विभक्ति) विकल्प से आती है। उदा०—देवस्स, देवाय (यानी) देव के लिए ऐसा अर्थ है। ङे (प्रत्यय) के (स्थान पर) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण चतुर्थी बहुवचनी प्रत्यय के स्थान पर ऐसा विकल्प नहीं होता है। उदा०—) देवाण।

वधाड्डाइश्च वा ॥ १३३ ॥

वधशब्दात् परस्य तादर्थ्यङेर्डिद् आइ षष्ठी च वा भवति। वहाइ वहस्स वहाय। वधार्थमित्यर्थः।

वध शब्द के आगे, तादर्थ्य (दिखानेवाले) ङे प्रत्यय के डित् आइ और षष्ठी विकल्प से होते हैं। उदा०—वहाइ···वहाय (यानी) वध के लिए ऐसा अर्थ है।

---

१. कृ धातु का आदेश कुण (सूत्र ४.६५ देखिए)।

२. क्रम से:—हस्त। पाद। स्तन–क। नयन।

३. मुनि।

४. √दा।

५. नमः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्वचिद् द्वितीयादेः ॥ १३४ ॥

द्वितीयादीनां विभक्तीनां स्थाने षष्ठी भवति क्वचित् । सीमाधरस्स[1] वन्दे । तिस्सा[2] मुहस्स भरिमो । अत्र द्वितीयायाः षष्ठी । धणस्स लद्धो । धनेन लब्ध इत्यर्थः । चिरस्स मुक्का । चिरेण मुक्तेत्यर्थः । तेसिमे अमणा इण्णं । तैरेतदनाचरितम् । अत्र तृतीयायाः । चोरस्स बीहइ । चोराद् बिभेतीत्यर्थः । इअराइं जाण लहु[3] अक्खराइं पायन्ति मिल्ल सहिआण । पादान्तेन सहितेभ्य इतराणीति । अत्र पंचम्याः पिट्ठीए [4]केसभारो । अत्र सप्तम्याः ।

द्वितीया, इत्यादि विभक्तियों के स्थान पर षष्ठी (विभक्ति) क्वचित् आती है । उदा०—सीमाधरस्स······भरिमो; यहाँ द्वितीया के स्थान पर षष्ठी आई है । धणस्स लद्धो (यानी) धन से प्राप्त ऐसा अर्थ है; चिरस्समुक्का (यानी) चिर काल के बाद छुटी हुई ऐसा अर्थ है; तेसि······इण्णं (यानी) वे यह (बात) आचरण में नहीं लाये (ऐसा अर्थ है); यहाँ तृतीया के स्थान पर (षष्ठी विभक्ति आई है) । चोरस्स बीहइ (यानी) चोर से डरता है ऐसा अर्थ है, इअराइं······सहिआण (इस वाक्य) में पादान्त से सहित होनेवाले से भिन्न (ऐसा अर्थ है), यहाँ पंचमी (विभक्ति) के स्थान पर (षष्ठी विभक्ति आई है) । पिट्ठीए केस भारो; यहाँ सप्तमी के (स्थान षष्ठी आई है) ।

द्वितीयातृतीययोः सप्तमी ॥ १३५ ॥

द्वितीयातृतीययोः स्थाने क्वचित् सप्तमी भवति । गामे[5] वसामि[6] । [7]नयरे न [8]जामि । अत्र द्वितीयायाः । मइ[9] वेविरीए मलिआइं । तिसु तेसु[10] अलंकिआ पुहवी । अत्र तृतीयायाः ।

द्वितीया और तृतीया इन (विभक्तियों) के स्थान पर क्वचित् सप्तमी (विभक्ति) आती है । उदा०—गामे······जामि; यहाँ द्वितीया के (स्थान पर सप्तमी आई है) । मइ······पुहवी; यहाँ तृतीया के (स्थान पर सप्तमी आई है) ।

पञ्चम्यास्तृतीया च ॥ १३६ ॥

पञ्चम्याः स्थाने क्वचित् तृतीया सप्तम्यौ भवतः । चोरेण बीहइ । चोराद्

---

१. सीमाधरं वन्दे ।
२. तस्याः मुखं स्मरामः ।
३. लघु-अक्षर ।
४. पृष्ठे केशभारः ।
५. ग्राम ।
६. √वस् ।
७. नगर ।
८. √या (=जाना) ।
९. मया वेपनशीलया मृदितानि ।
१०. त्रिभिः तैः अलंकृता पृथ्वी ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभेतीत्यर्थः। अन्ते उरे रमि उमागओ राया[1]। अन्तः पुराद् रन्त्वागत इत्यर्थः।

पंचमी (विभक्ति) के स्थान पर क्वचित् तृतीया और सप्तमी (विभक्तियाँ) आती है। उदा०—चोरेण बीहइ (यानी) चोर से डरता है ऐसा अर्थ है। अंतेउरे··· राया (यानी) अंतःपुर से रमकर राजा आया ऐसा अर्थ है।

सप्तम्या द्वितीया ॥ १३७ ॥

सप्तम्याः स्थाने क्वचिद् द्वितीया भवति। विज्जुज्जोयं [2]भरइ रत्तिं। आर्षे तृतीयापि दृश्यते। तेणं कालेणं तेणं समएणं। तस्मिन् काले तस्मिन् समये इत्यर्थः। प्रथमाया अपि द्वितीया दृश्यते। चउवीसं पि जिणवरा। चतुर्विंशति रपि जिनवरा इत्यर्थः।

सप्तमी (विभक्ति) के स्थान पर क्वचित् द्वितीया आती है। उदा०—विज्जु··· रत्तिं। आर्ष प्राकृत में (सप्तमी के स्थान पर) तृतीया विभक्ति भी दिखाई देती है। उदा०—तेणं····· समएणं (यानी) उस काल में उस समय में ऐसा अर्थ है। प्रथमा (विभक्ति) के स्थान पर भी (क्वचित्) द्वितीया दिखाई देती है। उदा०—चउवीसं पि जिणवरा (यानी) चौबिस भी जिन श्रेष्ठ ऐसा अर्थ है।

क्यङोर्यलुक् ॥ १३८ ॥

क्यङन्तस्य क्यङ्षन्तस्य वा सम्बन्धिनो यस्य लुग् भवति। गरुआइ गरुआअइ। अगुरुर्गुरुर्भवति गुरुरिवाचरति वेत्यर्थः। क्यङ्ष् क्यङ्ष्। दमदमाइ दमदमाअइ। लोहिआइ लोहिआअइ।

क्यङ् तथा क्यङ्ष् (इन प्रत्ययों) से अन्त होनेवाले शब्दो से संबंधित होनेवाले य का लोप विकल्प से होता है। उदा०—गरुआइ, गरुआअइ (यानी) गुरु न होते गुरु होता है अथवा गुरु के समान आचार करता है, ऐसा अर्थ है। क्यङ्ष् (प्रत्ययान्त शब्द के बारे में):— दमदमाइ··· लोहिआअइ।

त्यादीनामाद्यत्रयस्याद्यस्येचेचौ ॥ १३९ ॥

त्यादीनां विभक्तीनां परस्मैपदानामात्मनेपदानां च सम्बन्धिनः प्रथम त्रयस्य यदाद्यं वचनं तस्य स्थाने इच् एच् इत्येतावदेशौ भवतः। हसइ[3] हसए वेवइ वेवए। चकारौ इचे चः (४.१३८) इत्यत्र विशेषणार्थौ।

1. राजन्। 2. विद्युदुद्योतं स्मरति रात्रौ।

3. क्रमसे:—हस्। वेप्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परस्मैपद और आत्मनेपद इन त्यादि विभक्तियों से संबंधित होनेवाले प्रथम-त्रय का जो आद्य वचन, उसके स्थान पर इच् और एच् ऐसे ये (दो) आदेश होते हैं। उदा०—हसइ.....वेवए। (इच् और एच् में से) दो चकार 'इचेच:' इस सूत्र में विशेषणार्थी इस स्वरूप में होते हैं।

द्वितीयस्य सि से ॥१४०॥

त्यादीनां परस्मैपदानामात्मनेपदानां च द्वितीयस्य त्रयस्य सम्बन्धिन आद्यवचनस्य स्थाने सि से इत्येतावदेशौ भवतः। हससि हससे। वेवसि वेवसे।

धातुओं को लगनेवाले परस्मैपद और आत्मनेपद प्रत्ययों में से द्वितीय-त्रय से संबंधित होनेवाले आद्य वचन के स्थान पर सि और से ऐसे ये (दो) आदेश होते हैं। उदा०—हससि.....वेवसे।

तृतीयस्य मिः ॥ १४१ ॥

त्यादीनां परस्मैपदानामात्मनेपदानां च तृतीयस्य त्रयस्याद्यस्य वचनस्य स्थाने मिरादेशो भवति। हसामि। वेवामि। बहुलाधिकाराद् मिवेः स्थानीयस्य मेरिकारलोपश्च। [1]बहुजाणय रूसिउं सक्कं। शक्नोमीत्यर्थः। न मरं। न म्रिये इत्यर्थः।

धातुओं को लगनेवाले परस्मैपद और आत्मनेपद प्रत्ययों में से तृतीय-त्रय के आद्य वचन के स्थान पर मि ऐसा आदेश होता है। उदा०—हसामि, वेवामि। और बहुल का अधिकार होने से, मिवि के स्थानीय मि के इकार का लोप होता है। उदा०—बहु.....सक्कं (इन शब्दों में सक्कं यानी) शक्नोमि (समर्थ हूँ) ऐसा अर्थ है; न मरं; (यहाँ) मैं नहीं मरता हूँ ऐसा अर्थ है।

बहुष्वाद्यस्य न्ति न्ते इरे ॥ १४२ ॥

त्यादीनां परस्मैपदात्मनेपदानामाद्यत्रयसम्बन्धिनो बहुषु वर्तमानस्य वचनस्य स्थाने न्ति न्ते इरे इत्यादेशा भवन्ति। हसन्ति। वेवन्ति। हसिज्जन्ति। रमिज्जन्ति। [2]गज्जन्ते खे मेहा बहिन्ते[3] रक्खसाणं च। उप्पज्जन्ते [4]कइहिअय-सायरे कव्व-रयणाइं। दोण्णि वि न[5] पहुप्पिरे बाहू। न प्रभवत इत्यर्थः। विच्छुहिरे। विक्षभ्यन्तीत्यर्थः। क्वचिद् इरे एकत्वेऽपि। सूसइरे [6]गामचिक्खल्लो[7] शुष्यतीत्यर्थः।

---

1. बहुजाणय (= चोर, जार, धूर्त इन अर्थों में देशी शब्द) रोषितुं शक्नोमि।
2. गर्जन्ति खे मेघाः।
3. बिभ्यति राक्षसेभ्यः च।
4. उत्पद्यन्ते कवि हृदय-सागरे काव्य-रत्नानि।
5. द्वौ अपि न प्रभवतः बाहू।
6. ग्राम।
7. कीचड अर्थ में चिक्खल्ल देशी शब्द है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धातुओं को लगनेवाले परस्मैपद और आत्मनेपद प्रत्ययों में से आद्य त्रय से संबंधित होनेवाले बहु (= अनेक) वचन के स्थान पर न्ति, न्ते और इरे ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—हसन्ति······रयणाइं; दोण्णि····· बाहू; (यहाँ न पहुप्पिरे यानी) न प्रभवतः (= समर्थ नहीं होते हैं) ऐसा अर्थ है; विच्छुहिरे (यानी) विक्षुभ्यन्ति (= क्षुब्ध होते हैं) ऐसा अर्थ है। इरे (प्रत्यय) क्वचित् एकवचन में भी लगता है। उदा०—सूसइरे गामचिक्खल्लो (यहाँ सूसइरे यानी) शुष्यति (= सुखता है) ऐसा अर्थ है।

मध्यमस्येत्थाहचौ ॥ १४३ ॥

त्यादीनां परस्मैपदात्मनेपदानां मध्यमस्य त्रयस्य बहुषु वर्तमानस्य स्थाने इत्था हच् इत्येतावादेशौ भवतः। हसित्था हसह। वेवित्था वेवह। बाहुलकादित्थान्यत्रापि। यद्यत्ते रोचते जं जं ते रोइत्था। हच् इति चकारः इहहचोर्हस्य (४.२६८) इत्यत्र विशेषणार्थः।

धातुओं को लगनेवाले परस्मैपद और आत्मनेपद प्रत्ययों में से मध्यम त्रय के बहु (=अनेक) वचन के स्थान पर इत्था और इच् ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा०—हसित्था······वेवह। बाहुलक से इत्था (प्रत्यय) अन्य स्थानों पर (लगा हुआ दिखाई देता है। उदा०—) यद्यत्ते······रोइत्था। हच् में से चकार 'इह हचोर्हस्य' इस सूत्र में विशेषणार्थी है।

तृतीयस्य मोमुमाः ॥१४४॥

त्यादीनां परस्मैपदात्मनेपदानां तृतीयस्य त्रयस्य सम्बन्धिनो बहुषु वर्तमानस्य वचनस्य स्थाने मो मु म इत्येते आदेशा भवन्ति। हसामो हसामु हसाम। [1]तुवरामु तुवराम।

धातुओं को लगनेवाले परस्मैपद और आत्मनेपद प्रत्ययों में तृतीय त्रय से संबंधित होनेवाले बहु (=अनेक) वचन के स्थान पर मो, मु और म ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा०—हसामो······तुवरमा।

अत एवैच् से ॥ १४५ ॥

त्यादेः स्थाने यौ एच् से इत्येतादेशावुक्तौ तावकारान्तादेव भवतो नान्यस्मात्। हसए हससे। तुवरए तुवरसे। करए[2] करसे। अत इति किम्। ठाइ[3] ठासि। वसुआइ [4]वसुआसि। होइ[5] होसि। एवकारोकारान्ताद् एच् से एव

१. त्वर्। २. कृ। ३. स्था।
४. वसुआ धातु उद्+वा धातु का आदेश है। देखिए सू ४-११। ५. भू।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भवत इति विपरीतावधारणनिषेधार्थः । तेनाकारान्ताद् इच् सि इत्येतावपि सिद्धौ । हसइ हससि । वेवइ वेवसि ।

धातुओं को लगनेवाले प्रत्ययों के स्थान पर (ऊपर सूत्र ३.१३९-४० में) जो एज् और से ऐसे ये (दो) आदेश कहे हुए हैं, वे केवल अकारान्त धातुओं के आगे ही होते हैं, अन्य (स्वरान्त धातुओं) के आगे नहीं होते हैं । उदा०—हसए‥‥करसे । अकारान्त धातुओं के आगे ऐसा क्यों कहा है ? (कारण अन्य स्वरान्त धातुओं के आगे ये दो आदेश नहीं आते हैं । उदा० —) ठाइ‥ ‥होसि । अकारान्त धातुओं के आगे ही एच् और से (ये आदेश) होते हैं ऐसे विपरीत निश्चय (= अवधारण) का निषेध करने के लिए (सूत्र में अतः शब्द के आगे एव-कार (= एव शब्द) प्रयुक्त किया है । इसलिए अकारान्त धातुओं के आगे इच् और सि ये दो भी (आदेश) सिद्ध होते हैं । उदा०—हसइ‥ ‥वेवसि ।

सिनास्तेः सिः ॥ १४६ ॥

सिना द्वितीयत्रिकादेशेन सह अस्तेः सिरादेशो भवति । [1]निट्ठुरो जं सि । सिनेति किम् । से आदेशे सति अत्थि तुमं ।

(धातुओं को लगने वाले प्रत्ययों में से) द्वितीय त्रिक में से (= तीन के समूह में से) (आद्यवचन के) सि इस आदेश के सह अस् (धातु) को सि ऐसा आदेश होता है । उदा०—निट्ठुरो जं सि । सि (इस आदेश) के सह ऐसा क्यों कहा है ? (कारण सि आदेश न होने पर), से आदेश होते समय अत्थि तुमं (ऐसा प्रयोग होता है) ।

मिमोमैर्म्हिम्होम्हा वा ॥ १४७ ॥

अस्तेर्धातोः स्थाने मि मो म इत्यादेशैः सह यथासंख्य म्हि म्हो म्ह इत्यादेशा वा भवन्ति । एस म्हि । एषोस्मीत्यर्थः । गय[2] म्हो । गय[2] म्ह । मुकारस्याग्रहणादप्रयोग एव तस्येत्यवसीयते । पक्षे । अत्थि अहं । अत्थि अम्हे । अत्थि अम्हो । ननु च सिद्धावस्थायां पक्ष्मश्मष्मस्मह् मां म्हः (२.७४) इत्यनेन म्हादेशे म्हो इति सिध्यति । सत्यम् । किं तु विभक्तिविधौ प्रायः साध्यमानावस्थाङ्गीक्रियते । अन्यथा वच्छेण वच्छेसु सव्वे जे ते के इत्याद्यर्थं सूत्राण्यनारम्भणीयानि स्युः ।

अस् धातु के स्थान पर, मि, मो और म इन आदेशों के सह अनुक्रम से म्हि, म्हो, और म्ह ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—एस म्हि (यानी) एषः

1. निष्ठुरः यद् असि । 2. गताः स्मः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्मि (यह मैं हूँ) ऐसा अर्थ होता है; गय··· ···म्ह। सूत्र में मुकार (इस आदेश) का निर्देश न होने से, (उसका) प्रयोग होता ही नहीं, ऐसा जाना है। (विकल्प—) पक्ष में :—अत्थि··· ···अम्हो। (शंका :—) 'पक्ष्म··· ···म्हः' सूत्र के अनुसार, (स्म. इस रूप के) सिद्धावस्था में म्ह आदेश के होते 'म्हो' यह रूप सिद्ध होता है (ऐसा नहीं कहा जा सकता क्या ?)। (उत्तर :—) यह सच है। तथापि प्रत्यय लगाकर (होने वाले रूपों के) नियम कहते समय, प्रायः (शब्द की) साध्यमान अवस्था स्वीकृत की जाती है; अन्यथा वच्छेण··· ···के इत्यादि रूप सिद्धि क लिए सूत्र कहने की जरूरत नहीं थी, ऐसा होगा।

अत्थिस्त्यादिना ॥ १४८ ॥

अस्तेः स्थाने त्यादिभिः सह अत्थि इत्यादेशो भवति। अत्थि सो। अत्थि ते। अत्थि तुमं। अत्थि तुम्हे। अत्थि अहं। अत्थि अम्हे।

ति इत्यादि (धातुओं को लगने वाले) प्रत्ययों के सह अस् (धातु) के स्थान पर अत्थि ऐसा आदेश होता है। उदा०—अत्थि··· ···अम्हे।

णेरदेदावावे ॥ १४९ ॥

णेः स्थाने अत् एत् आव आवे एते चत्वार आदेशा भवन्ति। [1]दरिसइ। कारेइ करावइ करावेइ। हासेइ हसावइ हसावेइ। उव[2]सामेइ उवसमावइ उवसमावेइ। बहुलाधिकारात् क्वचिदेन्नास्ति। [3]जाणावेइ। क्वचिद् आवे नास्ति। [4]पाएइ। भावेइ।

णि (इस प्रत्यय) के स्थान पर अ, ए, आव, और आवे (ऐसे) ये चार आदेश होते हैं। उदा०—उवसमावेइ। बहुल का अधिकार होने से, क्वचित् ए (आदेश) नहीं होता है। उदा०—जाणावेइ। क्वचित्आवे (आदेश) नहीं होता है। उदा०—पाएइ, भावेइ।

गुर्वादेरविर्वा ॥ १५० ॥

गुर्वादेर्णेः स्थाने अवि इत्यादेशो वा भवति। शोषितम् सोसविअं सोसिअं। तोषितम् तोसविअं तोसिअं।

दीर्घ स्वर आदि (स्थान में) होनेवाले धातुओं को लगनेवाले णि (इस प्रत्यय) के स्थान पर अवि ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—शोषितम्··· तोसिअं।

---

१. √दृश्। २. √उप+शम्।
३. जाण धातु ज्ञा धातु आदेश है (सूत्र ४.७ देखिए)।
४. क्रमसे:—√पा। √भू।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भ्रमेराडो वा ॥ १५१ ॥

भ्रमेः परस्य णेराड आदेशो वा भवति। भमाडइ भमाडेइ। पक्षे भामेइ भमावइ भमावेइ।

भ्रम् (धातु) के आगे आनेवाले णि (प्रत्यय) को आड ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—भमाडइ, भमाडेइ। (विकल्प—) पक्षमें:—भामेइ······भमावेइ।

लुगावी क्तभावकर्मसु ॥ १५२ ॥

णेः स्थाने लुक् आवि इत्यादेशौ भवतः क्ते भावकर्मविहिते च प्रत्यये परतः। कारिअं कराविअं। हासिअं हसाविअं। खामिअं[1]खमाविअं। भावकर्मणोः। कारीअइ करावीअइ। कारिज्जइ कराविज्जइ। हासीअइ हसावीअइ। हासिज्जइ हसाविज्जइ।

क्त तथा भाव और कर्म इनके लिए कहे हुए प्रत्यय आगे होने पर, णि (प्रत्यय) के स्थान पर लोप और आवि ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—(क्तप्रत्यय आगे होने पर):—कारिअं······खमाविअं। भाव-कर्म प्रत्यय (आगे होने पर):—कारीअइ··· हसाविज्जइ।

अदेल्लुक्यादेरत आः ॥ १५३ ॥

णेरदेल्लोपेषु कृतेषु आदेरकारस्य आ भवति। अति पाडइ[2]। पारइ। एति। कारेइ[3]। खामेइ। लुकि। कारिअं। खामिअं। कारीअइ खामीअइ। कारिज्जइ खामिज्जइ। अदेल्लुकीति किम्। कराविअं। करावीअइ कराविज्जइ। आदेरिति किम्। संगामेइ[4]। इह व्यवहितस्य मा भूत्। कारिअं। इहान्त्यस्य मा भूत्। अति इति किम्। दूसेइ[5]। केचित् तु आवे-आव्यादेशयोरप्यादेरत आत्वमिच्छन्ति। कारावेइ। हासाविओ जणो[6]सामलीए।

णि (प्रत्यय) के अ, ए और लोप किए जाने पर, (धातु में) आदि (होनेवाले) अकार का आकार होता है। उदा०—अ किए जाने पर:—पाडइ, माडइ। ए किए जाने पर:—कारेइ, खामेइ। लोप किए जाने पर:—कारिअं·········खामिज्जइ। (णि प्रत्यय के) अ,ए और लोप किए जाने पर ऐसा क्यों कहा है ?(कारण वैसा न हो, तो आदि अकार का आकार नहीं होता है। उदा०—) कराविअं·········कराविज्जइ। आदि (होनेवाले अकार का आकार होता है) ऐसा क्यों कहा है ? कारण 'संगामेइ'

1. क्षामित।
2. क्रमसे:—√पत्। √भू।
3. क्रमसे:—√कृ। √क्षम्।
4. संग्राम।
5. √दुष्।
6. हासितः जनः श्यामलया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस स्थल पर व्यवहित होनेवाले (अकार) का (आकार) न हो (इसलिए); और 'कारिअं' में अन्त्य (अकार) का (आकार) न हो (इसलिए)। अकार का (आकार होता है) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण अन्य स्वर आदि होने पर, ऐसा आकार नहीं होता है। उदा०—) दूसेइ। तथापि (णि प्रत्यय के) आवे और आवि ये आदेश होने पर भी, (धातु में से आदि अकार का आकार होता है, ऐसा कुछ (वैयाकरण) मानते हैं। (उनके मतानुसार) कारावेइ, हासाविओ जणो सामलीए, (ऐसा होगा)।

मौ वा ॥ १५४ ॥

अत आ इति वर्तते। अदन्ताद् धातोर्मौ परे अत आत्वं वा भवति। हसामि हसमि। जाणामि जाणमि लिहामि लिहमि[1]। अत इत्येव। होमि[2]।

अत आ (= अ का आ होता है) ये शब्द (सूत्र ३.१५३ में से) प्रस्तुत सूत्र में) अनुवृत्ति से होते ही हैं। अकारान्त धातु के आगे मि प्रत्यय होने पर, (धातु के अन्त्य) अ का आ विकल्प से होता है। उदा०—हसामि⋯ ⋯लिहमि। अकाही (आकार होता है; अन्य अन्त्य स्वरों का आकार नहीं होता है। उदा०—) होमि।

इच्च मोमुमे वा ॥ १५५ ॥

अकारान्ताद् धातोः परेषु मोमुमेषु अत इत्त्वं चकाराद् आत्त्वं च वा भवतः। भणिमो भणामो। भणिमु भणामु। भणिम भणाम। पक्षे। भणमो। भणमु। भणम। वर्तमानापञ्चमीशतृषु वा (३·१५८) इत्येत्वे तु भणेमो भणेमु भणेम। अत इत्येव। ठामो। होमो।

अकारान्त धातु के आगे मो, मु, और म (ये प्रत्यय) होने पर, (धातु में से अन्त्य) अ का इ, और (सूत्र में से) चकार के कारण आ, ऐसे (विकार। आदेश) विकल्प से होते हैं। उदा०—भणिको⋯ ⋯भणाम। (विकल्प—) पक्ष में :—भणमो⋯ ⋯ ⋯ ⋯भणम। 'वर्तमाना⋯ ⋯वा' इस सूत्र के अनुसार, (अकारान्त धातु के अन्त्य अ का) ए होने पर, भणेमो⋯ ⋯भणेम (ऐसे रूप होते हैं)। (अन्त्य) अ का हो (आ होता है; अन्य अन्त्य स्वरों का आ नहीं होता है। उदा०—) ठामो, होमो।

क्ते ॥ १५६ ॥

क्ते परतोत इत्त्वं भवति। हसिअं। पढिअं[3]। नविअं[4]। हासिअं। पाढिअं। गयं नयं इत्यादि तु सिद्धावस्थापेक्षणात्। अत इत्येव। [5]झायं। [6]लुअं। [7]हूअं।

---

१. √लिख्। २. √ भू—हो।
३. पठित। ४. नत। √नम्।
५. ध्यात। ६. लून। ७. भूत। हूत।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(अकारान्त धातु के) आगे क्त (प्रत्यय) होने पर, (धातु में से अन्त्य) अ का इ होता है। उदा०—हसिअं......पाढिअं। गयं और नयं ये रूप मात्र (संस्कृत में से गत और मत इन) सिद्धावस्था की (रूपों की) अपेक्षा से हैं। (अन्त्य) अ का ही (इ होता है; अन्य अन्त्य स्वरों का इ नहीं होता है। उदा०—) झायं.....हुअं।

एच्च क्त्वातुमृतव्यभविष्यत्सु ॥ १५७ ॥

क्त्वातुमृतव्येषु भविष्यत्कालविहिते च प्रत्यये परतोत एकारश्चकारादिकारश्च भवति। क्त्वा। हसेऊण। हसिऊण। तुम्। हसेउं हसिउं। तव्य। हसेअव्वं हसिअव्वं। भविष्यत्। हसेहिइ हसिहिइ अत इत्येव। काऊण।

(अकारान्त धातु के) आगे क्त्वा, तुम् और तव्य (ये प्रत्यय) तथैव भविष्य काल का ऐसा कहा हुआ प्रत्यय, (आगे) होने पर (धातु में से अन्त्य) अ का एकार, और (सूत्र में से) चकार के कारण, इकार होता है। उदा०—क्त्वा (प्रत्यय आगे होने पर):—हसेऊण, हसिऊण। तुम् (प्रत्यय आगे होने पर) हसेउं, हसिउं। तव्य (प्रत्यय आगे होने पर):—हसेअव्वं, हसिअव्वं। भविष्यकाल का प्रत्यय (आगे होने पर):—हसेहिइ, हसिहिइ। (अन्त्य) अ के ही (इ और ए होते हैं; अन्य अन्त्य स्वरों के इ और ए नहीं होते हैं। उदा०—) काऊण।

वर्तमानापञ्चमीशतृषु वा ॥ १५८ ॥

वर्तमानापञ्चमीशतृषु परत अकारस्य स्थाने एकारो वा भवति। वर्तमाना। हसेइ हसइ। हसेम हसिम। हसेमु हसिमु। पञ्चमी। हसेउ हसउ। [1]सुणेउ सुणउ। शतृ। हसेन्तो हसन्तो। क्वचिन्न भवति। जयइ[2]। क्वचिदात्वमपि। [1]सुणाउ।

वर्तमान काल के प्रत्यय, आज्ञार्थ के प्रत्यय, और शतृ (यह) प्रत्यय आगे होने पर, (धातु के अन्त्य) अकार के स्थान पर एकार विकल्प से होता है। उदा० —वर्तमान काल के प्रत्यय (आगे होने पर):—हसेइ......हसिमु। आज्ञार्थ के प्रत्यय (आगे होने पर):—हसेउ......सुणउ। शतृ प्रत्यय (आगे होने पर):—हसेन्तो, हसन्तो। क्वचित् (अन्त्य अ का ए) नहीं होता है। उदा०—जयइ। क्वचित् (अन्त्य अ का) आ भी होता है। उदा—सुणाउ।

ज्जा ज्जे ॥ ॥ १५९ ॥

ज्जा ज्ज इत्यादेशयोः परयोरकारस्य एकारो भवति। हसेज्जा हसेज्ज। अत इत्येव। होज्जा होज्ज।

---

१. √श्रु। २. √जि।

ज्जा और ज्ज ये आदेश (—रूप प्रत्यय) आगे होने पर, (धातु के अन्त्य) अकार का एकार होता है। उदा०— हसेज्जा, हसेज्ज। (अन्त्य) अ का ही (एकार होता है; अन्य स्वरों का नहीं। उदा०—) होज्जा, होज्ज।

ईअइज्जौ क्यस्य ॥ १६० ॥

चि-जि-प्रभृतीनां भावकर्मविधिं वक्ष्यामः। येषां तु न वक्ष्यते तेषां संस्कृतातिदेशात् प्राप्तस्य क्यस्य स्थाने ईअ इज्ज इत्येतावादेशौ भवतः। हसीअइ हसिज्जइ। हसीअन्तो हसिज्जन्तो। हसीअमाणो हसिज्जमाणो। पढीअइ पढिज्जइ। होईअइ होइज्जइ। बहुलाधिकारात् क्वचित् क्योपि विकल्पेन भवति। मए नवेज्ज[1]। मए नविज्जेज्ज। तेण लहेज्ज[2]। तेण लहिज्जेज्ज। तेण अच्छेज्ज[3]। तेण अच्छिज्जेज्ज। तेण अच्छीअइ।

चि, जि, इत्यादि (धातुओं) के भाव-कर्म-रूप सिद्ध करने के नियम हम आगे (सूत्र ४.२४१-२४३ देखिए) कहेंगे। परंतु जिन (धातुओं) के बारे में (ऐसे नियम) नहीं कहे जाएंगे, उनके बारे में, संस्कृत में से अतिदेश से प्राप्त हुए क्य (प्रत्यय) के स्थान पर ईअ और इज्ज ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा०—हसीअइ······होइज्जइ। बहुल का अधिकार होने से, क्वचित् क्य (= य) भी विकल्प से लगता है। मए··· अच्छीअइ।

दृशिवचेर्डीसडुच्चं ॥ १६१ ॥

दृशेर्वचेश्च परस्य क्यस्य स्थाने यथासंख्यं डीस डुच्च इत्यादेशौ भवतः। ईअइज्जापवादः। दीसइ। वुच्चइ।

दृश् और वच् (इन धातुओं) के आगे आनेवाले क्य (प्रत्यय) के स्थान पर अनुक्रम से डीस (= डित् ईस) और डुच्च (= डित् उच्च) ऐसे आदेश होते हैं। (क्त प्रत्यय के) ईअ और इज्ज (ऐसे आदेश होते हैं—सूत्र ३.१६० देखिए) इस नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—दीसइ, वुच्चइ।

सी ही हीअ भूतार्थस्य ॥ १६२ ॥

भूतेर्थे विहितोद्यतन्यादिः प्रत्ययो भूतार्थः, तस्य स्थाने सी ही हीअ इत्यादेशा भवन्ति। उत्तरत्र व्यञ्जनादीअ-विधानात् स्वरान्तादेवायं विधिः। कासी काही[4]काहीअ। अकार्षीत् अकरोत् चकार वेत्यर्थः। एवम्। ठासी ठाही ठाहीअ। आर्षे। देविन्दो[5]इणमब्बवी इत्यादौ सिद्धावस्थाश्रयणात् ह्यस्तन्याः प्रयोगः।

---

१. √नम्। २. √लभ्। ३. अच्छ के लिए सूत्र ४.२१५ देखिए।
४. √कृ। ५. देवेन्द्रः इदं अब्रवीत्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूतकाल के अर्थ में कहा हुआ (जो) अद्यतनी इत्यादि प्रत्यय, वह भूतकाल का प्रत्यय होता है; उसके स्थान पर सी, ही और हीअ ऐसे आदेश होते हैं। अगले सूत्र में (३.१६३ में), (व्यञ्जनान्त धातु के अन्त्य) व्यञ्जन के आगे ईअ (ऐसा) प्रत्यय कहा जाने के कारण, स्वरान्त धातु के बारे में ही यह (प्रस्तुत) नियम है (ऐसा जाने)। उदा०—कासी······काहीअ (यानी) अकार्षीत्······किंवा चकार (= क्रिया) ऐसा अर्थ है। इसी प्रकार: ठासी ठाहीअ। आर्ष प्राकृत में, देविन्दो इणमब्बवी इत्यादि स्थलों पर सिद्धावस्था में से (रूपों का) आधार होने से, ह्यस्तनी का प्रयोग (किया गया दिखाई देता है)।

व्यञ्जनादीअः ॥ १६३ ॥

व्यञ्जनाद् धातोः परस्य भूतार्थस्याद्यतन्यादि प्रत्ययस्य ईअ इत्यादेशो भवति। हुवीअ। अभूत् अभवत् बभूवेत्यर्थः। एवं—अच्छीअ। आसिष्ट आस्त आसांचक्रे वा। गेण्हीअ। अग्रहीत् अगृह्णात् जग्राह वा।

व्यंजनान्त धातु के आगे भूतार्थ में होनेवाले अद्यतनी इत्यादि प्रत्यय को ईअ ऐसा आदेश होता है। उदा०—हुवीअ (यानी) अभूत्······बभूव (= हुआ) ऐसा अर्थ है। इसी प्रकार:—अच्छीअ (यानी) आसिष्ट···...चक्रे (ऐसा अर्थ है), गेण्हीअ (यानी) अग्रहीत्······जग्राह (=लिया) (ऐसा अर्थ है)।

तेनास्तेरास्यहेसी ॥ १६४ ॥

अस्तेर्धातोस्तेन भूतार्थेन प्रत्ययेन सह आसि अहेसि इत्यादेशौ भवतः। आसि सो तुमं अहं वा। जे आसि। ये आसन्नित्यर्थः। एवं अहेसि।

उस भूतकालार्थी प्रत्यय के सह अस् धातु को आसि और अहेसि ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—आसि······अहं वा; जे आसि (यानी) ये आसन् (= जो होते) ऐसा अर्थ है। इसी प्रकार:—अहेसि।

ज्जात् सप्तम्या इर्वा ॥ १६५ ॥

सप्तम्यादेशात् ज्जात् पर इर्वा प्रयोक्तव्यः। भवेत् होज्जइ होज्ज।

सप्तमी (= विध्यर्थ) का आदेश होनेवाले ज्ज के आगे इ विकल्प से प्रयुक्त करे। उदा०—भवेत् होज्जइ होज्ज।

भविष्यति हिरादिः ॥ १६६ ॥

भविष्यदर्थे विहिते प्रत्यये परे तस्यैवादिर्हिः प्रयोक्तव्यः। होहिइ। भविष्यति भविता वेत्यर्थः। एवम्। होहिन्ति होहिसि होहित्था। हसिहिइ। काहिइ।

---

१. √कृ। २. देवेन्द्रः इदं अब्रवीत्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भविष्यकालार्थ में कहा हुआ प्रत्यय आगे होने पर, उस (प्रत्यय) के ही पूर्व/पीछे 'हि' (यह अक्षर) प्रयुक्त करे। उदा०—होहिइ (यानी) भविष्यति किंवा भविता (=होगा) ऐसा अर्थ है। इसी प्रकारः—होहिन्ति······काहिइ।

मिमोमुमे स्सा हा न वा ॥ १६७ ॥

भविष्यत्यर्थे मिमोमुमेषु तृतीयत्रिकादेशेषु परेषु तेषामेवादी 'स्सा हा' इत्येतौ वा प्रयोक्तव्यौ। हेरपवादौ। पक्षे हिरपि। होस्सामि होहामि। होस्सामो होहामो होस्सामु होहामु होस्साम होहाम। पक्षे। होहिमि। होहिमु होहिम। क्वचित्तु हा न भवति। हसिस्सामो हसिहिमो।

भविष्यकालार्थ में (होनेवाले) मि, मो, मु और म ऐसे तृतीय त्रिक के आदेश आगे होने पर, उनके ही पूर्व/पीछे स्सा और हा ऐसे ये (शब्द) विकल्प से प्रयुक्त करे। (भविष्यकालार्थी प्रत्यय के पीछे) 'हि' (शब्द) प्रयुक्त करे (सूत्र ३·१६६) नियम का अपवाद (यहाँ कहा है)। (विकल्प—) पक्ष में 'हि' भी प्रयुक्त करे। उदा०—होस्सामि··· ···होहाम। (विकल्प—) पक्षमें—होहिमि··· ···होहिम। परंतु क्वचित् 'हा' (शब्द) नहीं आता है। उदा०—हसिस्सामो, हसिहिमो।

मोमुमानां हिस्सा हित्था ॥ १६८ ॥

धातोः परौ, भविष्यति काले मोमुमानां स्थाने, हिस्सा हित्था इत्येतौ वा प्रयोक्तव्यौ। होहिस्सा होहित्था। हसिहिस्सा हसिहित्था। पक्षे। होहिमो होस्सामो होहामो। इत्यादि।

धातु के आगे भविष्यकाल में मो, मु और म इनके स्थान पर हिस्सा और हित्था ऐसे ये (शब्द) विकल्प से प्रयुक्त करे। उदा०—होहिस्सा···हसिहित्था। (विकल्प—) पक्षमें—होहिमो······होहामो, इत्यादि।

मेः स्सं ॥ १६९ ॥

धातोः परो भविष्यति काले म्यादेशस्य स्थाने स्सं वा प्रयोक्तव्यः। होस्सं। हसिस्सं। कित्त[1] इस्सं। पक्षे। होहिमि होस्सामि होहामि। कित्त[1] इहिमि।

धातु के आगे भविष्यकाल में मि (प्रत्यय) के आदेश के स्थान पर (सूत्र ३·१६७ देखिए) स्सं (शब्द) विकल्प से प्रयुक्त करे। उदा०—होस्सं··· ···कित्तइस्सं। (विकल्प—) पक्षमें:—होहिमि ·····कित्तइहिमि।

कृदो हं ॥ १७० ॥

करोतेर्ददातेश्च[2] परो भविष्यति विहितस्य म्यादेशस्य स्थाने हं वा

---

१. √कीर्त्। २. √कृ। ३. √दा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रयोक्तव्यः । काहं दाहं । करिष्यामि दास्यामीत्यर्थः । पक्षे । काहिमि दाहिमि । इत्यादि ।

करोत्ति और ददाति (इन धातुओं) के आगे, भविष्यकाल में कहे हुए मि (प्रत्यय) के आदेश के स्थान पर हं शब्द विकल्प से प्रयुक्त करे । उदा०—काहं, दाहं (यानी) करिष्यामि (= मैं करूँगा, दास्यामि (= मैं दूंगा) ऐसा अर्थ है । (विकल्प—) पक्षमें:—काहिमि, दाहिमि इत्यादि ।

श्रुगमिरुदिविदिदृशिमुचिवचिछिदिभिदिभुजां सोच्छं गच्छं रोच्छं वेच्छं दच्छं मोच्छं वोच्छं छेच्छं भेच्छं भोच्छं ॥१७१॥

श्वादीनां धातूनां भविष्यद्-विहित-म्यन्तानां स्थाने सोच्छमित्यादयो निपात्यन्ते । सोच्छं श्रोष्यामि । गच्छं गमिष्यामि । संगच्छं संगस्ये । रोच्छं रोदिष्यामि । विद ज्ञाने । वेच्छं वेदिष्यामि । दच्छं द्रक्ष्यामि । मोच्छं मोक्ष्यामि । वोच्छं वक्ष्यामि । छेच्छं छेत्स्यामि । भेच्छं भेत्स्यामि । भोच्छं भोक्ष्ये ।

भविष्यकालार्थ में कहे हुए मि (प्रत्यय) से अन्त होनेवाले श्रु, इत्यादि (यानी श्रु, गम्, रुद्, विद्, दृश, मुच, वच्, छिद्, भिद् और भुज् इन) धातुओं के स्थान पर सोच्छं इत्यादि (यानी सोच्छं, गच्छं, रोच्छं, वेच्छं, दच्छं, मोच्छं, वोच्छं, छेच्छं, भेच्छं और भोच्छं ऐसे ये शब्द) निपात रूप में आते हैं । उदा०—सोच्छं···रोदिष्यामि; विद् (धातु यहाँ जानना) (ज्ञान) (इस अर्थ में है), वेच्छं·····भोक्ष्ये ।

सोच्छादय इजादिषु हिलुक् च वा ॥ १७२ ॥

श्वादीनां स्थाने इजादिषु भविष्यदादेशेषु यथासंख्यं सोच्छादयो भवन्ति । ते एवादेशा अन्त्यस्वराद्यवयववर्जा इत्यर्थः । हिलुक् च वा भवति । सोच्छिइ । पक्षे । सोच्छिहिइ । एवम् सोच्छिन्ति सोच्छिहिन्ति । सोच्छिसि सोच्छिहिसि, सोच्छित्था सोच्छिहित्था सोच्छिह सोच्छिहिह । सोच्छिमि सोच्छिहिमि सोच्छिस्सामि सोच्छिहामि सोच्छिस्सं सोच्छं, सोच्छिमो सोच्छिहिमो सोच्छिस्सामो सोच्छिहामो सोच्छिहिस्सा सोच्छिहित्था । एवं मुमयोरपि । गच्छिइ गच्छिहिइ, गच्छिन्ति गच्छिहिन्ति । गच्छिसि गच्छिहिसि, गच्छित्था गच्छिहित्था गच्छिह गच्छिहिह । गच्छिमि गच्छिहिमि गच्छिस्सामि गच्छिहामि गच्छिस्सं गच्छं, गच्छिमो गच्छिहिमो गच्छिस्सामो गच्छिहामो गच्छिहिस्सा गच्छिहित्था । एव मुमयोरपि । एवं रुदादीनामप्युदाहार्यम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इच् इत्यादि भविष्यकाल के आदेश (आगे) होने पर, श्रु इत्यादि (यानी श्रु, गम्, रुद्, विद्, दृश्, मुच्, वच्, छिद्, भिद् और भुज् इन) धातुओं के स्थान पर सोच्छ इत्यादि (यानी सोच्छ, गच्छ, रोच्छ, वेच्छ, दच्छ, मोच्छ, वोच्छ, छेच्छ, भेच्छ और भोच्छ) होते हैं। यानी अन्त्य स्वर इत्यादि अवयव छोड़कर, वे ही आदेश होते हैं, ऐसा अर्थ है। और (इस समय) हि (इस अक्षर) का लोप विकल्प से होता है। उदा०—सोच्छिइ; (विकल्प—) पक्षमें:—सोच्छिहिइ। इसी प्रकार:— सोच्छिन्ति······सोच्छिहित्था; इसी प्रकार मु और म (इन प्रत्ययों) के बारे में भी (जाने)। गच्छिइ······गच्छिहित्था; इसी प्रकार मु और म (इन प्रत्ययों) के बारे में भी (जाने) इसी प्रकार रुद् इत्यादि (धातुओं के रूपों के उदाहरण लें।

दुसुमु विध्यादिष्वेकस्मिंस्त्रयाणाम् १७३ ॥

विध्यादिष्वर्थेषूत्पन्नानामेकत्वेर्थे वर्तमानानां त्रयाणामपि त्रिकाणां स्थाने यथासंख्यं दु सु मु इत्येते आदेशा भवन्ति। हसउ सा। हससु तुमं। हसामु अहं। पेच्छउ पेच्छसु पेच्छामु। दकारोच्चारणं भाषान्तरार्थम्।

विधि, इत्यादि अर्थों में उत्पन्न हुए (और) एकत्व अर्थ में होने वाले त्रयों के त्रिकों के स्थान पर अनुक्रम से दु, सु और मु ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—हसमु··· पेच्छामु। (दु में) दकार का उच्चारण अन्य (यानी शौरसेनी) भाषा के लिए है।

सोर्हिर्वा ॥ १७४ ॥

पूर्वसूत्रविहितस्य सोः स्थाने हिरादेशो वा भवति। देहि। देसु।

पिछले (यानी ३·१७३) सूत्र में कहे हुए सु (इस आदेश) के स्थान पर 'हि' ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—देहि, देसु।

अत इज्जस्विज्जहीज्जेलुको वा ॥ १७५ ॥

अकारात् परस्य सोः इज्जसु इज्जहि इज्जे इत्येते लुक् च आदेशा वा भवन्ति। हसेज्जसु हसेज्जहि हसेज्जे हस। पक्षे। हससु। अत इति किम्। होसु। ठाहि।

(अकारान्त धातु के अन्त्य) अकार के आगे आने वाले सु (इस आदेश) के इज्जसु, इज्जहि, इज्जे ऐसे ये (तीन) और लोप, ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—हसेज्जसु······हस। (विकल्प—) पक्षमें:—हससु। अकार के (आगे आने वाले) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण अन्य स्वरों के आगे सु के इज्जसु इत्यादि आदेश नहीं होते हैं। उदा०—) होसु, ठाहि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुषु न्तु ह मो ॥ १७६ ॥

विध्यादिषूत्पन्नानां बहुष्वर्थेषु वर्तमानानां त्रयाणां त्रिकाणां स्थाने यथासंख्यं न्तु ह मो इत्येते आदेशा भवन्ति। न्तु। हसन्तु, हसन्तु हसेयुर्वा। ह। हसह, हसत हसेत वा। मो। हसामो हसाम हसेम वा। एवम्। तुवरन्तु[1] तुवरह तुवरामो।

विधि, इत्यादि अर्थों में उत्पन्न हुए (और) बहु (=अनेक) इस अर्थ में होनेवाले त्रयों के त्रिकों के स्थान पर अनुक्रम से न्तु, ह और मो ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा०—न्तु (का उदाहरण):—हसन्तु (यानी) हसन्तु किंवा हसेयुः (हँसने दो या हँसे ऐसा अर्थ है)। ह (का उदाहरण):—हसह (यानी) हसत अथवा हसेत (=तुम हसो या तुम हसें ऐसा अर्थ है)। मो (का उदाहरण):—हसामो (यानी) हसाम किंवा हसेम (हमें हँसने दो या हम हसें, ऐसा अर्थ है)। इसीप्रकारः—तुवरन्तु··· तुवरामो (ऐसे रूप होते हैं)।

वर्तमाना भविष्यन्त्योश्च ज्ज ज्जा वा ॥ १७७ ॥

वर्तमानाया भविष्यन्त्याश्च विध्यादिषु च विहितस्य प्रत्ययस्य स्थाने ज्ज ज्जा इत्येतावदेशौ वा भवतः। पक्षे यथाप्राप्तम्। वर्तमाना। हसेज्ज हसेज्जा। पढेज्ज[2] पढेज्जा। सुणेज्ज[3] सुणेज्जा। पक्षे। हसइ। पढइ। सुणइ। भविष्यन्ती। पढेज्ज पढेज्जा। पक्षे। पढिहिइ। विध्यादिषु। हसेज्ज हसिज्जा। हसतु हसेद् वा इत्यर्थः। पक्षे। हसउ। एवं सर्वत्र। यथा तृतीयत्रये। अइ[4] वाएज्जा। अइवायावेज्जा। न समणु[5] जाणामि न समणुजाणेज्जा वा। अन्ये त्वन्यासामपीच्छन्ति। होज्ज, भवति भवेत् भवतु अभवत् अभूत् बभूव भूयात् भविता भविष्यति अभविष्यद् वा इत्यर्थः।

वर्तमानकाल के तथाही भविष्यकाल के और विधि इत्यादि (अर्थों) में कहे हुए जो प्रत्यय, उनके स्थान पर ज्ज और ज्जा ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं। (विकल्प—) पक्षमें:—हमेशा के प्रत्यय होते ही हैं। उदा०—वर्तमानकाल में:—हसेज्ज·····सुणेज्जा; (विकल्प—) पक्षमें:—हसइ·····सुणइ। भविष्यकाल में:—पढेज्ज, पढेज्जा; (विकल्प—) पक्षमें:—पढिहिइ। विधि, इत्यादि में:—हसेज्ज, हसेज्जा (यानी) हसतु किंवा हसेत् ऐसा अर्थ है; (विकल्प—) पक्षमें:—हसउ। इसी प्रकार सर्व स्थानों पर। उदा०—तृतीय के त्रय में:—अइ वाएज्जा······ समणुजाणामि अथवा न समणुजाणेज्जा। (ज्ज और ज्जा ये आदेश) अन्य काल और

1. √त्वर्। 2. √पठ्। 3. √श्रु-सुण।
4. √अति+पत्। 5. √समनुज्ञा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थ इनके बारे में भी होते हैं, ऐसा दूसरे वैयाकरण मानते हैं (उनके मतानुसार:-) होज्ज यानी भवति······अभविष्यत् ऐसा अर्थ है ।

मध्ये च स्वरान्ताद् वा ॥ १७८ ॥

स्वरान्ताद् धातोः प्रकृतिप्रत्यययोर्मध्ये चकारात् प्रत्ययानां च स्थाने ज्ज ज्जा इत्येतौ वा भवतः वर्तमानाभविष्यन्त्योर्विध्यादिषु च । वर्तमाना । होज्जइ होज्जाइ होज्ज होज्जा । पक्षे । होइ । एवम् । होज्जसि होज्जासि होज्ज होज्ज । पक्षे । होसि । एवम् । होज्जहिसि होज्जाहिसि होज्ज होज्जा होहिसि । होज्जहिमि होज्जाहिमि होज्जस्सामि होज्जहामि होज्जस्सं होज्ज होज्जा । इत्यादि । विध्यादिषु । होज्जउ होज्जाउ होज्ज होज्जा, भवतु भवेद् वेत्यर्थः । पक्षे । होउ । स्वरान्तादिति किम् । हसेज्ज हसेज्जा । तुवरेज्ज तुवरेज्जा ।

वर्तमानकाल और भविष्यकाल इनमें तथैव विधि इत्यादि (अर्थों) में, स्वरान्त धातु के बारे में, (धातु की) प्रकृति और प्रत्यय इनके बीच, तथैव (सूत्र में से) चकार के कारण प्रत्ययों के स्थान पर, ज्ज और ज्जा ऐसे ये शब्द विकल्प से आते हैं । उदा॰—वर्तमानकालमें:—होज्जइ······होज्जा; (विकल्प—) पक्षमें:—होइ । इसी प्रकार:—होज्जसि······होज्जा; (विकल्प—) पक्षमें:—होसि । इसी प्रकार (भविष्यकालमें):—होज्जहिसि······होज्जा, इत्यादि । विधि इत्यादि में:—होज्जउ······होज्जा (यानी) भवतु किंवा भवेत् ऐसा अर्थ है; (विकल्प—) पक्षमें:—होउ । स्वरान्त धातु के बारे में ऐसा क्यों कहा है ? (कारण धातु स्वरान्त न हो, तो ऐसा प्रकार नहीं होता है । उदा॰—) हसेज्ज······तुवरेज्जा ।

क्रियातिपत्तेः ॥ १७९ ॥

क्रियातिपत्तेः स्थाने ज्जज्जावादेशौ भवतः । होज्ज होज्जा । अभविष्यदित्यर्थः । जइ होज्ज[1] वण्णणिज्जो ।

क्रियातिपत्ति (=संकेतार्थ) के स्थान पर ज्ज और ज्जा (ऐसे ये) आदेश होते हैं । उदा॰—होज्ज, होज्जा (यानी) अभविष्यत् ऐसा अर्थ है । जइहोज्ज वण्णणिज्जो ।

न्त माणौ ॥ १८० ॥

क्रियातिपत्तेः स्थाने न्त-माणौ आदेशौ भवतः । होन्तो होमाणो, अभविष्यद् इत्यर्थः ।

---

१. यदि अभविष्यत् वर्णनीयः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हरिणट्ठाणे हरिणंक [1]जइ सि हरिणाहिवं निवेसन्तो ।
न सहंतो च्चिअ तो राहु-परिहवं से जिअन्तस्स ॥ ६ ॥

क्रियातिपत्ति (=संकेतार्थ) के स्थान पर न्त और माण (ऐसे ये) आदेश होते हैं। उदा०—होन्तो, होमाणो (यानी) अभविष्यत् ऐसा अर्थ है; हरिण … जिअन्तस्स ।

शत्रानशः ॥ १८१ ॥

शतृ आनश् इत्येतयोः प्रत्येकं न्त माण इत्येतावादेशौ भवतः। शतृ। हसन्तो हसमाणो। आनश्। वेवन्तो[2] वेवमाणो।

शतृ और आनश् (इन प्रत्ययों) के प्रत्येक को न्त और माण ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा०—शतृ (प्रत्यय) को:—हसन्तो, हसमाणो। आनश् (प्रत्यय) को:—वेवन्तो, वेवमाणो।

ई च स्त्रियाम् ॥ १८२ ॥

स्त्रियां वर्तमानयोः शत्रानशोः स्थाने ई चकारात् न्तमाणौ च भवन्ति। हसई हसन्ती हसमाणी। वेवई वेवन्ती वेवमाणी।

स्त्रीलिंग में होनेवाले शतृ और आनश् (इन प्रत्ययों) के स्थान पर ई, तथैव (सूत्र में से) चकार के कारण न्त और माण (ये भी) होते हैं। उदा०—हसई …… वेवमाणी।

इत्याचार्यहेमचन्द्रविरचितायां सिद्धहेमचन्द्राभिधानस्वोपज्ञ-
शब्दानुशासनवृत्तौ अष्टमस्याध्यायस्य तृतीयः पादः

(आठवें अध्याय का तृतीयपाद समाप्त हुआ।)

१. हरिणस्थाने हरिणांक यदि हरिणाधिपं न्यवेशयिष्यः (निवेसन्तो सि)।
न असहिष्यथा एव ततः राहुपरिभवं अस्य जयतः ॥

२. √वेप्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्थ पादः

इदितो वा ॥ १ ॥

सूत्रे ये इदितो धातवो वक्ष्यन्ते तेषां ये आदेशास्ते विकल्पेन भवन्तीति वेदितव्यम्। तत्रैव च उदाहरिष्यन्ते।

(अब अगले) सूत्रों में जो इ (यह अक्षर) इत् होनेवाले धातु कहे जाएंगे, उनको जो आदेश होते हैं, वे विकल्प से होते हैं ऐसा जाने। उनके उदाहरण भी वहीं दिए जाएंगे।

कथेर्वज्जर-पज्जरोप्पाल-पिसुण-संघ-बोल्ल-चव-जम्प-सीस-साहाः ॥२॥

कथेर्धातोर्वज्जरादयो दशादेशा वा भवन्ति। वज्जरइ। पज्जरइ। उप्पालइ। पिसुणइ। संघइ। बोल्लइ। चवइ। जंपइ। सीसइ। साहइ। उब्बुक्कइ इति तूत्पूर्वस्य बुक्क भाषणे इत्यस्य। पक्षे। कहइ। एते चान्यैर्देशीषु पठिता अपि अस्माभिर्धात्वादेशीकृता विविधेषु प्रत्ययेषु प्रतिष्ठन्तामिति। तथा च। वज्जरिओ कथितः। वज्जरिऊण कथयित्वा। वज्जरणं कथनम्। वज्जरन्तो कथयन्। वज्जरिअव्वं कथयितव्यम्। इति रूपसहस्राणि सिध्यन्ति। संस्कृतधातुवच्च प्रत्ययलोपागमदिविधिः।

कथ् (कथि) धातु को वज्जर इत्यादि (यानी वज्जर, पज्जर, उप्पाल, पिसुण, संघ, बोल्ल, चव, जंप, सीस और साह ऐसे) दस आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०— वज्जरइ······साहइ। उब्बुक्कइ (यह रूप) मात्र उद् (उपसर्ग) पूर्व में होनेवाले 'बुक्क' यानी कहना (भाषणे (इस धातु से होता है। विकल्प—) पक्षमें:—कहइ। ये (आदेश) यद्यपि अन्य वैयाकरणों ने देशी शब्दों में कहे हैं, तथापि हमने उन्हें धात्वादेश किया है; (हेतु यह कि) विविध प्रत्ययों में (उन्हें) प्रतिष्ठा मिले। और इसलिए वज्जरिओ ········कथयितव्यम्, इसी प्रकार सहस्रों रूप सिद्ध होते हैं, और (इन धात्वादेशों के बारे में) संस्कृत में से धातु के समान ही प्रत्यय, लोप, आगम इत्यादि विधि (कार्य) होते हैं।

दुःखे णिव्वरः ॥ ३ ॥

दुःखविषयस्य कथेर्णिव्वर इत्यादेशो वा भवति। णिव्वरइ। दुःखं कथयतीत्यर्थः।

दुःख विषयक कथ् (धातु) को णिव्वर ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०— णिव्वरइ (यानी) दुःख से कहना है ऐसा अर्थ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जुगुप्सेर्झुणदुगुच्छदुगुञ्छाः ॥ ४ ॥

जुगुप्सेरेते त्रय आदेशा वा भवन्ति । झुणइ । दुगुच्छइ । दुगुञ्छइ । पक्षे । जुगुच्छइ । गलोपे । दुउच्छइ दुउञ्छइ जुउच्छइ ।

जुगुप्स् (धातु) को ये (= झुण, दुगुच्छ और दुगुञ्छ) तीन आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—झुणइ······दुगुञ्छइ । (विकल्प—) पक्षमें:—जुगुच्छइ । (इन रूपों में) ग् का लोप होने पर, दुउच्छइ; दुउञ्छइ, जुउच्छइ (ऐसे रूप होते हैं) ।

बुभुक्षिवीज्योर्णीरव-वोज्जौ ॥ ५ ॥

बुभुक्षेराचारक्विबन्तस्य च वीजेर्यथासंख्यमेतावादेशौ वा भवतः । णीरवइ । बुहुक्खइ । वोज्जइ । वीजइ ।

बुभुक्षु और आचार (अर्थ में लगनेवाले) क्विप् (प्रत्यय) से अन्त होनेवाला बीज्, इन धातुओं) को अनुक्रम से (णीरव और वोज्ज) ये आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—णीरवइ; (विकल्प–पक्षमें:—) बुहुक्खइ । वोज्जइ; (विकल्प—पक्षमें:—) वीजइ ।

ध्यागोर्झागौ ॥ ६ ॥

अनयोर्यथासंख्यं झागा इत्यादेशौ भवतः । झाइ । झाअइ । णिज्झाइ । णिज्झाअइ । निपूर्वो दर्शनार्थः[1] । गाइ गायइ । झाणं[2] । गाणं ।

(ध्यै और गै) इन (धातुओं) को अनुक्रम से झा और गा ऐसे आदेश होते हैं । उदा०—झाइ······णिज्झाअइ; नि (यह उपसर्ग) पूर्व में होनेवाला (ध्यै धातु) देखना (दर्शन) अर्थ में है; गाइ······गाणं ।

ज्ञो जाणमुणौ ॥ ७ ॥

जानातेर्जाणमुण इत्यादेशौ भवतः । जाणइ मुणइ । बहुलाधिकारात् क्वचित् विकल्पः । जाणिअं[3] णायं । जाणिऊण णाऊण । जाणणं[4] णाणं । मणइ इति तु मन्यतेः ।

ज्ञा (जानाति इस धातु) को जाण और मुण ऐसे आदेश होते हैं । उदा०—जाणइ, मुणइ । बहुल का अधिकार होने से, क्वचित् विकल्प होता है । उदा०—जाणिअं···णाणं । मणइ यह रूप मात्र मन् (मन्यते) (धातु) का हैं ।

---

१. √नि + ध्यै । २. क्रमसे:—√ध्यान । √गान ।
३. √ज्ञात । ४. √ज्ञान ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदो ध्मो धुमा ॥ ८ ॥

उदः परस्य ध्मो धातोर्धुमा इत्यादेशो भवति । उद्धुमाइ ।

उद् (उपसर्ग) के आगे आनेवाले ध्मा धातु को धुमा ऐसा आदेश होता है । उदा०—उद्धुमाइ ।

श्रदो धो दहः ॥ ९ ॥

श्रदः परस्य दधातेर्दह इत्यादेशो भवति । सद्दहइ । [1]सद्दहमाणो जीवो ।

श्रद् (इस अव्यय) के अगले धा (दधाति) धातु को दह ऐसा आदेश होता है । उदा०—सद्दहइ······जीवो ।

पिबेः पिज्ज-डल्ल-पट्ट-घोट्टाः ॥ १० ॥

पिबतेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति । पिज्जइ । डल्लइ । पट्टइ । घोट्टइ । पिअइ ।

पिबति (पा-पिब् धातु) को (पिज्ज, डल्ल,पट्ट और घोट्ट ऐसे) ये चार आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—पिज्जइ······घोट्टइ । (विकल्प–पक्षमें:—) पिअइ ।

उद्वातेरोरुम्मा वसुआ ॥ ११ ॥

उत्पूर्वस्य वातेः ओरुम्मा वसुआ इत्येतावादेशौ वा भवतः । ओरुम्माइ । वसुआइ । उव्वाइ ।

उद् (यह उपसर्ग) पूर्व में होनेवाले वा (वाति) धातु को ओरुम्मा और वसुआ ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—ओरुम्माइ, वसुआइ । (विकल्प–पक्षमें:–) उव्वाइ ।

निद्रातेरोहीरोङ्घौ ॥ १२ ॥

निपूर्वस्य द्रातेः ओहीर उङ्घ इत्यादेशौ वा भवतः । ओहीरइ । उङ्घइ । निद्दाइ ।

नि (उपसर्ग) पूर्व में होनेवाले द्रा (द्राति) धातु को ओहीर और उङ्घ ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—ओहीरइ, उङ्घइ । (विकल्प पक्षमें:–) निद्दाइ ।

आघ्रेराइग्घः ॥ १३ ॥

आजिघ्रतेराइग्घ इत्यादेशो वा भवति । आइग्घइ । अग्घाइ ।

आ+घ्रा (आजिघ्रति) धातु को आइग्घ । ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—आइग्घइ । (विकल्प–पक्ष में:—) अग्घाइ ।

---

१. श्रद्धानः जीवः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्नातेरब्भुत्तः ॥ १४ ॥

स्नातेरब्भुत्त इत्यादेशो वा भवति। अब्भुत्तइ। ण्हाइ।

स्ना (स्नाति) धातु को अब्भुक्त ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—अब्भुत्तइ। (विकल्प- क्षमें:—) ण्हाइ।

समः स्त्यः खाः ॥ १५ ॥

संपूर्वस्य स्त्यायतेः खा इत्यादेशो भवति। संखाइ। संखायं।

सम् (उपसर्ग) पूर्व में होनेवाले स्त्यायति (स्त्यै) धातु को खा ऐसा आदेश होता है। उदा०—संखाइ, संखायं।

स्थष्ठा-थक्क-चिट्ठ-निरप्पाः ॥ १६ ॥

तिष्ठतेरेते चत्वार आदेशा भवन्ति। ठाइ ठाअइ। [1]ठाणं। पट्ठिओ। उट्ठिओ। पट्ठाविओ। उट्ठाविओ। थक्कइ। चिट्ठइ। चिट्ठिऊण। निरप्पइ। बहुलाधिकारात् क्वचिन्न भवति। [2]थिअं। थाणं। पत्थिओ। उत्थिओ। थाऊण।

स्था (तिष्ठति) धातु को (ठा, थक्क, चिट्ठ और निरप्प ऐसे) ये चार आदेश होते हैं। उदा०—ठाइ ·····निरप्पइ। बहुल का अधिकार होने से, क्वचित् (ऐसे आदेश) नहीं होते हैं। उदा०—थिअं·····थाऊण।

उदष्ठकुक्कुरौ ॥ १७ ॥

उदः परस्य तिष्ठतेः ठ कुक्कुर इत्यादेशौ भवतः। उट्ठइ। उक्कुक्कुरइ।

उद् (उपसर्ग) के अगले तिष्ठति (√स्था) धातु को ठ और कुक्कुर ऐसे आदेश होते हैं। उदा० —उट्ठइ, उक्कुक्कुरइ।

म्लेर्वापव्वायौ ॥ १८ ॥

म्लायतेर्वा पव्वाय इत्यादेशौ वा भवतः। वाइ। पव्वायइ। मिलाइ।

म्लायति (√म्लै) को वा और पव्वाय ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—वाइ, पव्वायइ। (विकल्प-पक्षमें:—) मिलाइ।

निर्मो निम्माणनिम्मवौ ॥ १९ ॥

निर्पूर्वस्य मिमीतेरेतावादेशौ भवतः। निम्माणइ। निम्मवइ।

---

१. क्रमसे:—स्थान। प्रस्थित। उत्स्थित। प्रस्थापित। उत्स्थापित।

२. क्रमसे:—स्थित। स्थान। प्रस्थित। उत्स्थित। √स्था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर् (उपसर्ग) पूर्व में होनेवाले मिमीति (√ मा) को निम्माण और निम्मव ये आदेश होते हैं। उदा०—निम्माणइ, निम्मवइ।

क्षेर्णिज्झरो वा ॥ २० ॥

क्षयतेर्णिज्झर इत्यादेशो वा भवति। णिज्झरइ। पक्षे। झिज्जइ।

क्षयति (√क्षि) को णिज्झर ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—णिज्झरइ। (विकल्प—) पक्षमें:—झिज्जइ।

छदेर्णेर्णुमनूमसन्नुमढक्कौम्बालपव्वालाः ॥ २१ ॥

छदेर्ण्यन्तस्य एते षडादेशा वा भवन्ति। णुमइ। नूमइ। णत्वे णूमइ। सन्नुमइ। ढक्कइ। ओम्बालइ। पव्वालइ। छायइ।

प्रेरक (=प्रयोजक) प्रत्यय अन्त में होनेवाले छदि (छद्) धातु को (णुम, नूम, सन्नुम, ढक्क, ओम्बाल और पव्वाल ऐसे) ये छः आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—णुमइ, नूमइ; (नूम में से न का) ण होने पर, णूमइ; सन्नुमइ··· ···पव्वालइ। (विकल्प—पक्ष :—) छायइ।

निवृपत्योर्णिहोडः ॥ २२ ॥

निवृगः पतेश्च ण्यन्तस्य णिहोड इत्यादेशो वा भवति। णिहोडइ। पक्षे। निवारेइ। पाडेइ।

प्रेरक प्रत्यय अन्त में होने वाले निवृ (निवृग:) और पत् (पति) इन धातुओं को णिहोड ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—णिहोडइ। (विकल्प—) पक्ष में :—निवारेइ। पाडेइ।

दूङो दूमः ॥ २३ ॥

दूङो ण्यन्तस्य दूम इत्यादेशो भवति। दूमेइ मज्झ[1] हिअयं।

प्रेरक प्रत्यय के अन्त में होने वाले दू (दूङ्) धातु को दूम ऐसा आदेश होता है। उदा०—दूमेइ··· ···हिअयं।

धवलेर्दुमः ॥ २४ ॥

धवलयतेर्ण्यन्तस्य दुमादेशो वा भवति। दुमइ। धवलइ। स्वराणां स्वरा (बहुलम्) (४.२३८) इति दीर्घत्वमपि। दूमिअं। धवलितमित्यर्थः।

प्रेरक प्रत्ययान्त धवलयति (धातु) को दुम ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—दुमइ। (विकल्प पक्ष में) :—धवलइ। 'स्वराणां स्वरा (बहुलम्)'

---

१. मम हृदयम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र से (दुम में से ह्रस्व उ का) दीर्घ ऊ भी होता है। उदा०—दूमिअं (यानी) धवलित ऐसा अर्थ है।

तुलेरोहामः ॥ २५ ॥

तुलेर्ण्यन्तस्य ओहाम इत्यादेशो वा भवति। ओहामइ। तुलइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त तुल् (धातु) को ओहाम ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—ओहामइ। (विकल्प-पक्ष में :—) तुलइ।

विरिचेरोलुण्डोल्लुण्डपल्हत्थाः ॥ २६ ॥

विरेचयतेर्ण्यन्तस्य ओलुण्डादयस्त्रय आदेशा वा भवन्ति। ओलुण्डइ। उल्लुण्डइ। पल्हत्थइ। विरेअइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त विरेचयति (वि + रिच् धातु) को ओलुण्ड इत्यादि (यानी ओलुण्ड, उल्लुण्ड और पल्हत्थ ऐसे ये) तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—ओलुण्डइ… …पल्हत्थइ। (विकल्प-पक्ष :—) विरेअइ।

तडेराहोडविहोडौ ॥ २७ ॥

तडेर्ण्यन्तस्य एतावादेशौ वा भवतः। आहोडइ। विहोडइ। पक्षे ताडेइ।

प्रेरक प्रत्यय अन्त में होने वाले तड् (तडि) धातु को (आहोड और विहोड) ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—आहोडइ, विहोडइ (विकल्प—) पक्ष में :—ताडेइ।

मिश्रेर्वीसालमेलवौ ॥ २८ ॥

मिश्रयतेर्ण्यन्तस्य वीसाल मेलव इत्यादेशौ वा भवतः। वीसालइ। मेलवइ। मिस्सइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त मिश्रयति धातु को वीसाल और मेलव आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—वीसालइ, मेलवइ। (विकल्प-पक्ष में :—) मिस्सइ।

उद्धूलेर्गुण्ठः ॥ २९ ॥

उद्धूलेर्ण्यन्तस्य गुण्ठ इत्यादेशो वा भवति। गुण्ठइ। पक्षे। उद्धूलेइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त उद्धूल् धातु को गुण्ठ ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—गुण्ठइ। (विकल्प—) पक्ष में :—उद्धूलेइ।

भ्रमेस्तालिअण्ट-तमाडौ ॥ ३० ॥

भ्रमयतेर्ण्यन्तस्य तालिअण्ट तमाड इत्यादेशौ वा भवतः। तालिअण्टइ। तमाडइ। भामेइ। भमाडेइ भमावेइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भ्रमयति (√भ्रम्) इस प्रेरक प्रत्ययान्त धातु को तालिअण्ट और तमाड ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—तालिअण्टइ, तमाडइ। (विकल्प पक्ष :—) भामेइ··· ···भमावेइ।

नशेर्विउड-नासव-हारव-विप्पगाल-पलावाः ॥ ३१ ॥

नशेर्ण्यन्तस्य एते पञ्चादेशा वा भवन्ति। विउडइ। नासवइ। हारवइ। विप्पगालइ। पलावइ। पक्षे। नासइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त नश् धातु को (विउड, नासव, हारव, विप्पगाल, और पलाव ऐसे) ये पाँच आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—विउडइ··· ···पलावइ। (विकल्प—) पक्ष में :—नासइ।

दृशेर्दाव-दंस-दक्खवाः ॥ ३२ ॥

दृशेर्ण्यन्तस्य एते त्रय आदेशा वा भवन्ति। दावइ। दंसइ। दक्खवइ। दरिसइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त दृश् धातु को (दाव, दंस और दक्खव ऐसे) ये तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—दावइ··· ···दक्खवइ। (विकल्प पक्ष में :—) दरिसइ।

उद्घटेरुग्गः ॥ ३३ ॥

उत्पूर्वस्य घटेर्ण्यन्तस्य उग्ग इत्यादेशो वा भवति। उग्गइ। उग्घाडइ।

उद् (उपसर्ग) पूर्व में होने वाले प्रेरक प्रत्ययान्त घट् धातु को उग्ग ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—उग्गइ (विकल्प पक्ष में :—) उग्घाडइ।

स्पृहः सिहः ॥ ३४ ॥

स्पृहो ण्यन्तस्य सिह इत्यादेशो वा भवति। सिहइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त स्पृह् धातु को सिह ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—सिहइ।

संभावेरासंघः ॥ ३५ ॥

सम्भावयतेरासंघ इत्यादेशो (वा) भवति। आसंघइ। संभावइ।

सम्भावयति (धातु) को आसंघ ऐसा आदेश (विकल्प से) होता है। उदा०—आसंघइ (विकल्प—पक्ष :—) सम्भावइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उन्नमेरुत्थंघोल्लाल-गुलुगुञ्छोप्पेलाः ॥ ३६ ॥

उत्पूर्वस्य नमेर्ण्यन्तस्य एते चत्वार आदेशा वा भवन्ति। उत्थंघइ। उल्लालइ। गुलुगुञ्छइ। उप्पेलइ। उन्नामइ।

उद् (उपसर्ग) पूर्व में होने वाले प्रेरक प्रत्ययान्त नम् (धातु) को (उत्थंघ, उल्लाल, गुलुगुञ्छ और उप्पेल ऐसे) ये चार आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—उत्थंघइ··· ···उप्पेलइ। (विकल्प-पक्ष में :—) उन्नामइ।

प्रस्थापेः पट्ठव-पेण्डवौ ॥ ३७ ॥

प्रपूर्वस्य तिष्ठतेर्ण्यन्तस्य पट्ठव पेण्डव इत्यादेशौ वा भवतः। पट्ठवइ। पेण्डवइ। पट्ठावइ।

प्र (उपसर्ग) पूर्व में होने वाले प्रेरक प्रत्ययान्त तिष्ठति (√स्था) को पट्ठव और पेण्डव ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—पट्ठवइ, पेण्डवइ। (विकल्प पक्ष :—) पट्ठावइ।

विज्ञपेर्वोक्कावुक्कौ ॥ ३८ ॥

विपूर्वस्य जानातेर्ण्यन्तस्य वोक्क अवुक्क इत्यादेशौ वा भवतः। वोक्कइ। अवुक्कइ। विण्णवइ।

वि (उपसर्ग) पूर्व में होने वाले प्रेरक प्रत्ययान्त जानाति (√ज्ञा) को वोक्क और अवुक्क ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—वोक्कइ, अवुक्कइ। (विकल्प-पक्ष में :—) विण्णवइ।

अर्पेरल्लिव-चच्चुप्प-पणामाः ॥ ३९ ॥

अर्पेर्ण्यन्तस्य एते त्रय आदेशा वा भवन्ति। अल्लिवइ। चच्चुप्पइ। पणामइ। पक्षे। अप्पेइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त अर्प् (अर्पि) को (अल्लिव, चच्चुप्प और पणाम ऐसे) ये तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—अल्लिवइ··· ···पणामइ। (विकल्प-) पक्ष में :—अप्पेइ।

यापेर्जवः ॥ ४० ॥

यातेर्ण्यन्तस्य जव इत्यादेशो वा भवति। जवइ। जावेइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त याति (√या) धातु को जव ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—जवइ (विकल्प-पक्ष में :—) जावेइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्लावेरोम्वाल-पव्वालौ ॥ ४१ ॥

प्लवतेर्ण्यन्तस्य एतावादेशौ वा भवतः। ओम्वालइ। पव्वालइ। पावेइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त प्लवति (√प्लु) को (ओम्वाल और पव्वाल ऐसे) ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०— ओम्वालइ, पव्वालइ। (विकल्प पक्ष मे :—) पावेइ।

विकोशेः पक्खोडः ॥ ४२ ॥

विकोशयतेर्नामधातोर्ण्यन्तस्य पक्खोड इत्यादेशो वा भवति। पक्खोडइ। विकोसइ।

विकोशयति इस प्रेरक प्रत्ययान्त नाम धातु को पक्खोड ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—पक्खोडइ। (विकल्प पक्ष में :—) विकोसइ।

रोमन्थेरोग्गाल-वग्गोलौ ॥ ४३ ॥

रोमन्थेर्नामधातोर्ण्यन्तस्य एतावादेशौ वा भवतः। ओग्गालइ। वग्गोलइ। रोमन्थइ।

रोमन्थ (शब्द) से होने वाले प्रेरक प्रत्ययान्त नाम धातु को (ओग्गाल और ऐसे) ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—ओग्गालइ, वग्गोलइ। (विकल्प–पक्ष में :—) रोमंथइ।

कमेर्णिहुवः ॥ ४४ ॥

कमे स्वार्थण्यन्तस्य णिहुव इत्यादेशो वा भवति। णिहुवइ। कामेइ।

स्वार्थे प्रेरक प्रत्यय से अन्त होने वाले कम् धातु को णिहुव ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—णिहुवइ (विकल्प-पक्ष में :—) कामेइ।

प्रकाशेर्णुव्वः ॥ ४५ ॥

प्रकाशेर्ण्यन्तस्य णुव्व इत्यादेशो वा भवति। णुव्वइ। पयासेइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त प्रकाश् धातु को णुव्व ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—णुव्वइ। (विकल्प–पक्ष में :—) पयासेइ।

कम्पेर्विच्छोलः ॥ ४६ ॥

कम्पेर्ण्यन्तस्य विच्छोल इत्यादेशो वा भवति। विच्छोलइ। कम्पेइ।

प्रेरक प्रत्ययान्त कम्प् धातु को विच्छोल ऐसा विकल्प से होता है। उदा०— विच्छोलइ। (विकल्प–पक्ष में :—) कम्पेइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आरोपेर्वलः ।। ४७ ।।

आरुहेर्ण्यन्तस्य वल इत्यादेशो वा भवति । वलइ । आरोवेइ ।

प्रेरक प्रत्ययान्त आरुह् धातु को वल ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०— वलइ । (विकल्प-पक्ष में :—) आरोवेइ ।

दोले रंखोलः ।। ४८ ।।

दुलेः स्वार्थे ण्यन्तस्य रंखोल इत्यादेशो वा भवति । रंखोलइ । दोलइ ।

स्वार्थे प्रेरक प्रत्यय से अन्त होने वाले दुल् धातु को रंखोल ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—रंखोलइ । (विकल्प-पक्ष में :—) दोलइ ।

रञ्जे रावः । ४९ ।।

रञ्जेर्ण्यन्तस्य राव इत्यादेशो वा भवति । रावेइ । रञ्जेइ ।

प्रेरक प्रत्ययान्त रञ्ज् धातु को राव ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०— रावेइ । (विकल्प-पक्ष में :—) रञ्जेइ ।

घटेः परिवाडः ।। ५० ।।

घटेर्ण्यन्तस्य परिवाड इत्यादेशो वा भवति । परिवाडेइ । घडेइ ।

प्रेरक प्रत्ययान्त घट् धातु को परिवाड ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०— परिवाडेइ । (विकल्प-पक्ष में :—) घडेइ ।

वेष्टेः परिआलः ।। ५१ ।।

वेष्टेर्ण्यन्तस्य परिआल इत्यादेशो वा भवति । परिआलेइ । वेढेइ ।

प्रेरक प्रत्ययान्त वेष्ट् धातु को परिआल ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०— परिआलेइ (विकल्प-पक्ष :—) वेढेइ ।

क्रियः किणो वेस्तु क्के च ।। ५२ ।।

णेरिति निवृत्तम् । क्रीणातेः किण इत्यादेशो भवति । वेः परस्य तु द्विरुक्तः केश्चकारात् किणश्च भवति । किणइ । विक्केइ । विकिणइ ।

णेः (प्रेरक प्रत्ययान्त धातु को) इस शब्द की अब निवृत्ति होती है । क्री (क्रीणाति) धातु को किण ऐसा आदेश होता है । वि (इस उपसर्ग) के आगे होने वाले क्री (क्रीणाति) धातु को मात्र द्वित्वयुक्त के (= क्के), और (सूत्र में से) चकार के कारण किण (ऐसे आदेश) होते हैं । उदा०—किणइ··· ··· विकिणइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भियो भा-बीहौ ॥ ५३ ॥

बिभेतेरेतावादेशौ भवतः। भाइ। बीहइ। बीहिअं[1]। बहुलाधिकाराद् भीओ।

भी (बिभेति) धातु को (भा और बहि ऐसे) ये आदेश होते हैं। उदा०—भाइ... बीहिअं। बहुल का अधिकार होने के कारण, (बीह आदेश न होते हो) भीओ (ऐसा रूप होता है)।

आलीङोल्ली ॥ ५४ ॥

आलीयतेः अल्ली इत्यादेशो भवति। अल्लीयइ। अल्लीणो[2]।

आली (आलीयति) को अल्ली ऐसा आदेश होता है। उदा०—अल्लीयइ, अल्लीणो।

निलीङेर्णिलीअ-णिलुक्क-णिरिग्घ-लुक्क-लिक्क-ल्हिक्काः ॥५५॥

निलीङ एते षडादेशा वा भवन्ति। णिलीअइ। णिलुक्कइ। णिरिग्घइ। लुक्कइ। लिक्कइ। ल्हिक्कइ। निलिज्जइ।

निली धातु को (णिलीअ, णिलुक्क, णिरिग्घ, लुक्क, लिक्क, और ल्हिक्क ऐसे) ये छः आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—णिलीअइ... ल्हिक्कइ। (विकल्प—पक्ष में :—) निलिज्जइ।

विलीङेर्विरा ॥ ५६ ॥

विलीङेर्विरा इत्यादेशो वा भवति। विराइ। विलिज्जइ।

विली धातु को विरा ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—विराइ। (विकल्प पक्ष में :—) विलिज्जइ।

रुते रुञ्ज-रुण्टौ ॥ ५७ ॥

रौतेरेतावादेशौ भवतः। रुञ्जइ। रुण्टइ। रवइ।

रु (रौति) धातु को (रुञ्ज और रुण्ट ऐसे) ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—रुञ्जइ, रुण्टइ। (विकल्प पक्ष में :—) रवइ।

श्रुटेर्हणः ॥ ५८ ॥

शृणोतेर्हण इत्यादेशो वा भवति। हणइ। सुणइ।

---

1. बीह धातुका क० भू० धा० वि०। 2. आलीन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रु (शृणोति) धातु को हण ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—हणइ। (विकल्प पक्ष में :—) सुणइ।

धूगेर्धुवः ॥ ५९ ॥

धुनातेर्धुव इत्यादेशो वा भवति। धुवइ। धुणइ।

धू (धुनाति) धातु को धुव ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—धुवइ। (विकल्प पक्ष में :—) धुणइ।

भुवेर्हो-हुव-हवाः ॥ ६० ॥

भुवो धातोर्हो हुव हव इत्येते आदेशा वा भवन्ति। होइ होन्ति। हुवइ हुवन्ति। हवइ हवन्ति। पक्षे। भवइ। [1]परिहीण विहवो। भविउं। पभवइ। परिभवइ। सम्भवइ। क्वचिदन्यदपि। [2]उब्भुअई। [3]भत्तं।

भू (धातु) को हो, हुव, और हव ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०— होइ...... हवन्ति। (विकल्प-) पक्ष में :—भवइ...... सम्भवइ। क्वचित् भिन्न (वर्णान्तर) भी होता है। उदा०—उब्भुअइ, भत्तं।

अविति हुः ॥ ६१ ॥

विद् वर्जे प्रत्यये भुवो हु इत्यादेशो वा भवति। हुन्ति। भवन् हुन्तो। अवितीति किम्। होइ।

वित् (प्रत्यय) छोड़ कर (अन्य) प्रत्यय होने पर, भू (धातु) को हु ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—हुन्ति...... हुन्तो। वित् छोड़ कर ऐसा क्यों कहा है ? (कारण वैसा न होने पर, हु आदेश नहीं होता है। उदा०—) होइ।

पृथक्स्पष्टे णिव्वडः ॥ ६२ ॥

पृथग्भूते स्पष्टे च कर्तरि भुवो णिव्वड इत्यादेशो भवति। णिव्वडइ। पृथक् स्पष्टो वा भवतीत्यर्थः

पृथग्भूत और स्पष्ट ऐसा कर्तरि अर्थ होने पर, भू (धातु) को णिव्वड ऐसा आदेश होता है। उदा०—णिव्वडइ (यानी) पृथक् अथवा स्पष्ट होता है ऐसा अर्थ है।

प्रभौ हुप्पो वा ॥ ६३ ॥

---

१. परिहीणविभवः। २. उद्भवति।
३. भूत।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभुकर्तृकस्य भुवो हुप्प इत्यादेशो वा भवति। प्रभुत्वं च प्रपूर्वस्यैवार्थः। अङ्गे च्चिअ[1] न पहुप्पइ। पक्षे। पभवइ।

प्रभावो / समर्थ होना इस कर्तरि अर्थ में होने वाले भू (धातु) को हुप्प ऐसा आदेश विकल्प से होता है। समर्थ होना यह अर्थ प्र (उपसर्ग) पूर्व में होने वाले भू धातु का है। उदा०—अङ्गे··· ···पहुप्पइ। (विकल्प) पक्ष में :— पभवेइ।

क्ते हूः ॥ ६४ ॥

भुवः क्त प्रत्यये हूरादेशो भवति। [2]हूअं। अणुहूअं। पहूअं।

भू (धातु) के आगे क्त प्रत्यय होने पर, (भू को) हू आदेश होता है। उदा०–हूअं··· ···पहूअं।

कृगेः कुणः ॥ ६५ ॥

कृगः कुण इत्यादेशो वा भवति। कुणइ। करइ।

कृ (कृग्) धातु को कुण ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—कुणइ। (विकल्प–पक्ष में :—) करइ।

काणेक्षिते णिआरः ॥ ६६ ॥

काणेक्षितविषयस्य कृगो णिआर इत्यादेशो वा भवति। णिआरइ। काणेक्षितं करोति।

काणेक्षित–विषयक कृ धातु को णिआर ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०–णिआरइ (यानी) काणेक्षितं करोति (ऐसा अर्थ है)।

निष्टम्भावष्टम्भे णिट्ठुह-संदाणं ॥ ६७ ॥

निष्टम्भविषयस्यावष्टम्भ विषयस्य च कृगो यथासंख्यं णिट्ठुह संदाण इत्यादेशौ वा भवतः। णिट्ठुहइ। निष्टम्भं करोति। संदाणइ। अवष्टम्भं करोति।

निष्टंभ–विषयक और अवष्टंभ–विषयक कृ धातु को अनुक्रम से णिट्ठुह और संदाण ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—णिट्ठुहइ (यानी) निष्टम्भं करोति (ऐसा अर्थ है)। संदाणइ (यानी) अवष्टम्भं करोति (ऐसा अर्थ है)।

---

१. अङ्गे एव न प्रभवति।

२. क्रम से :—भूत। अनुभूत। प्रभूत।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रमे वावम्फः ॥ ६८ ॥

श्रमविषयस्य कृगो वावम्फ इत्यादेशो वा भवति। वावम्फइ। श्रमं करोति।

श्रमविषयक कृ धातु को वावम्फ ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०— वावम्फइ (यानी) श्रमं करोति (ऐसा अर्थ है)।

मन्युनौष्ठमालिन्ये णिव्वोलः ॥ ६९ ॥

मन्युना करणेन यदोष्ठमालिन्यं तद् विषयस्य कृगो णिव्वोल इत्यादेशो वा भवति। णिव्वोलइ। मन्युना ओष्ठं मलिनं करोति।

क्रोध के कारण से (आने वाला) जो होठों का मालिन्य वह विषय होने वाले कृ धातु को णिव्वोल ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—णिव्वोलइ (यानी) क्रोध से होंठ मलिन करता है (ऐसा अर्थ है)।

शैथिल्य-लम्बने पयल्लः ॥ ७० ॥

शैथिल्यविषयस्य लम्बनविषयस्य च कृगः पयल्ल इत्यादेशो वा भवति। पयल्लइ। शिथिली भवति लम्बते वा।

शैथिल्य विषयक तथा लम्बन विषयक कृ धातु को पयल्ल ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—पयल्लइ (यानी) शिथिल होता है अथवा टंगता है। टंगा रहता है (ऐसा अर्थ है)।

निष्पाताच्छोटे णीलुञ्छः ॥ ७१ ॥

निष्पतनविषयस्य आच्छोटनविषयस्य च कृगो णीलुञ्छ इत्यादेशो भवति वा। णीलुञ्छइ। निष्पतति आच्छोटयति वा।

निष्पतन-विषयक और आच्छोटन-विषयक कृ धातु को णीलुञ्छ ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—णीलुञ्छइ (यानी) निष्पतति (= बाहर जाता है) अथवा आच्छोटयति (= भेदन कराता है) (ऐसा अर्थ है)।

क्षुरे कम्मः ॥ ७२ ॥

क्षुर-विषयस्य कृगः कम्म इत्यादेशो वा भवति। कम्मइ। क्षुरं करोतीत्यर्थः।

क्षुर-विषयक कृ धातु को कम्म ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—कम्मइ (यानी , क्षुरं करोति (= क्षुर करता है) ऐसा अर्थ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चाटौ गुलल: ॥ ७३ ॥

चाटुविषयस्य कृगो गुलल इत्यादेशो वा भवति। गुललइ। चाटु करोतीत्यर्थः।

चाटु-विषयक कृ धातु को गुलल ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—गुललइ (यानी) चाटु करोति (= चाटु / मधुर बोलता है) ऐसा अर्थ है।

स्मरेर्झर-झूर-भर-भल-लढ-विम्हर-सुमर-पयर-पम्हुहाः ॥ ७४ ॥

स्मरेरेते नवादेशा वा भवन्ति। झरइ। झूरइ। भरइ। भलइ। लढइ। विम्हरइ। सुमरइ। पयरइ। पम्हुहइ। सरइ।

स्मृ (स्मरि) धातु को (झर, झूर, भर, भल, लढ, विम्हर, सुमर, पयर, और पम्हुह ऐसे) ये नौ आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—झरइ··· ···पम्हुहइ। (विकल्प पक्ष में :—) सरइ।

विस्मुः पम्हुस-विम्हर-वीसराः ॥ ७५ ॥

विस्मरतेरेते आदेशा भवन्ति। पम्हुसइ। विम्हरइ। वीसरइ।

विस्मृ (विस्मरति) धातु को (पम्हुस, विम्हर और वीसर ऐसे) ये आदेश होते हैं। उदा०—पम्हुसइ··· ···वीसरइ।

व्याहृगः कोक्क-पोक्कौ ॥ ७६ ॥

व्याहरतेरेतावादेशौ वा भवतः। कोक्कइ। ह्रस्वत्वे तु कुक्कइ। पोक्कइ। पक्षे। वाहरइ।

व्याहृ (व्याहरति) धातु को (कोक्क और पोक्क) ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—कोक्कइ; (कोक्कइ में से ओ स्वर) ह्रस्व होने पर, कुक्कइ (ऐसा रूप होगा); पोक्कइ। (विकल्प-) पक्ष में :—वाहरइ।

प्रसरेः पयल्लोवेल्लौ ॥ ७७ ॥

प्रसरतेः पयल्ल उवेल्ल इत्येतावादेशौ वा भवतः। पयल्लइ। उवेल्लइ। पसरइ।

प्रसृ (प्रसरति) धातु को पयल्ल और उवेल्ल ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—पयल्लइ, उवेल्लइ। (विकल्प पक्ष में :—) पसरइ।

महमहो गन्धे ॥ ७८ ॥

---

१. मालती। २. मालतीगन्धः प्रसरति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रसरतेर्गन्धविषये महमह इत्यादेशो वा भवति। महमहइ मालई[1]। मालई-गन्धो पसरइ। गन्ध इति किम्। पसरइ।

गन्ध-विषयक प्रसरति (√प्र + सृ) धातु को महमह ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—महमहइ मालई। (विकल्प पक्ष में :—) मालई गन्धो पसरइ। गन्धविषयक (प्रसृ धातु) ऐसा क्यों कहा है ……? (कारण गन्ध विषयक प्रसृ धातु न हो, तो महमह आदेश नहीं होता है। उदा०—) पसरइ।

निस्सरेर्णी-हर-नील-धाड-वरहाडाः ॥ ७९ ॥

निस्सरतेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति। णीहरइ। नीलइ। धाडइ। वरहाडइ। नीसरइ।

निस्सरति (निस्सृ) धातु को (णीहर, नील, धाड और वरहाड ऐसे) ये चार आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—णीहरइ… …वरहाडइ। (विकल्प—पक्ष में :—) नीसरइ।

जाग्रेर्जग्गः ॥ ८० ॥

जागर्तेर्जग्ग इत्यादेशो वा भवति। जग्गइ। पक्षे। जागरइ।

जागर्ति (√जागृ) धातु को जग्ग ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—जग्गइ। (विकल्प—) पक्ष में :—जागरइ।

व्याप्रेराअड्डः ॥ ८१ ॥

व्याप्रियते राअड्ड इत्यादेशो वा भवति। आअड्डेइ। वावरेइ।

व्याप्रियति (√व्यापृ) धातु को आ अड्ड ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—आ अड्डेइ। (विकल्प-पक्ष में) :— वावरेइ।

संवृगेः साहर-साहट्टौ ॥ ८२ ॥

संवृणोतेः साहर साहट्ट इत्यादेशौ वा भवतः। साहरइ। साहट्टइ। संवरइ।

संवृणोति (√सम + वृ) धातु को साहर और साहट्ट ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—साहरइ, साहट्टइ (विकल्प—पक्ष में :—) संवरइ।

आदृङेः संनामः ॥ ८३ ॥

आद्रियतेः संनाम इत्यादेशो वा भवति। संनामइ। आदरइ।

आद्रियति (√आ + दृ) धातु को संनाम ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—संनामइ। विकल्प—पक्ष में :—) आदरइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रहृगेः सारः ॥ ८४ ॥

प्रहरतेः सार इत्यादेशो वा भवति । सारइ । पहरइ ।

प्रहरति (√प्र + हृ) धातु को सार ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—सारइ । (विकल्प-पक्ष में) :—पहरइ ।

अवतरेरोह-ओरसौ ॥ ८५ ॥

अवतरतेः ओह ओरस इत्यादेशौ वा भवतः । ओहइ। ओरसइ । ओअरइ ।

अवतरति (√अव+तृ) धातु को ओह और ओरस ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं । ओहइ, ओरसइ । (विकल्प पक्ष में) :—ओअरइ ।

शकेश्चय-तर-तीर-पाराः ॥ ८६ ॥

शक्नोतेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति । चयइ । तरइ । तीरइ । पारइ । सक्कइ । त्यजतेरपि चयइ । हानिं करोति । तरतेरपि तरइ । तीरयतेरपि तीरइ । पारयतेरपि पारेइ । कर्म समाप्नोति ।

शक्नोति (√शक्) धातु को (चय, तर, तीर, और पार ऐसे) ये चार आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—चयइ ··· ···पारइ । (विकल्प-पक्ष में) :—सक्कइ । त्यजति (√त्यज्) धातु से भी चयइ (यह रूप होता है); (त्यजति यानी) हानिं करोति (= त्याग करता है, ऐसा अर्थ है) । तरति (√तृ) धातु से भी तरइ (ऐसा रूप होता है) । तीरयति (√तीर्) धातु से भी तीरइ (यह रूप होता है । पारयति (√पृ) धातु से भी पारेइ (रूप होता है) । (पारेइ यानी) कर्म समाप्नोति (= कर्म पूर्ण करता है, ऐसा अर्थ होता है) ।

फक्कस्थक्कः ॥ ८७ ॥

फक्कतेस्थक्क इत्यादेशो भवति । थक्कइ ।

फक्कति (√फक्क्) धातु को थक्क आदेश होता है । उदा०—थक्कइ ।

श्लाघः सलहः ॥ ८८ ॥

श्लाघतेः सलह इत्यादेशो भवति । सलहइ ।

श्लाघति (√श्लाघ्) धातु को सलह आदेश होता है । उदा०—सलहइ ।

खचेर्वेअडः ॥ ८९ ॥

खचतेर्वेअड इत्यादेशो वा भवति । वेअडइ । खचइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खचति (√खच्) धातु को वेअड ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—वेअडइ (विकल्प–पक्ष में) :—खचइ ।

पचेः सोल्ल-पउलौ ॥ ९० ॥

पचतेः सोल्ल पउल इत्यादेशौ वा भवतः। सोल्लइ। पउलइ। पयइ।

पचति (√पच्) धातु को सोल्ल और पउल ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—सोल्लइ, पउलइ। (विकल्प पक्ष में) :—पयइ।

मुचेश्छडडावहेड-मेल्लोस्सिक्क-रेअव-णिल्लुञ्छ-धंसाडाः ॥९१॥

मुञ्चतेरेते सप्तादेशा वा भवन्ति। छड्डइ। अवहेडइ। मेल्लइ। उस्सिक्कइ। रेअवइ। णिल्लुञ्छइ। धंसाडइ। पक्षे। मुअइ।

मुञ्चति (√मुच्) धातु को (छड्ड, अवहेड, मेल्ल, उस्सिक्क, रेअव, णिल्लुञ्छ' और धंसाड ऐसे) ये सात आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—छड्डइ··· ···धंसाडइ। (विकल्प–) पक्ष में :— मुअइ।

दुःखे णिव्वलः ॥ ९२ ॥

दुःखविषयस्य मुचेः णिव्वल इत्यादेशो वा भवति। णिव्वलेइ। दुःखं मुञ्चतीत्यर्थः।

दुःख-विषयक मुच् (मुचि) धातु को णिव्वल ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—णिव्वलेइ (यानी) दुःख का / दुःख से त्याग करता है ऐसा अर्थ है।

वञ्चेर्वेहव-वेलव-जूरवोमच्छाः ॥ ९३ ॥

वञ्चतेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति। वेहवइ। वेलवइ। जूरवइ। उमच्छइ। वञ्चइ।

वञ्चति (√वञ्च्) धातु को (वेहव, वेलव, जूरव, और उमच्छा ऐसे) ये चार आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—वेहवइ··· ···उमच्छइ। (विकल्प पक्ष में) :—वञ्चइ।

रचेरुग्गहावह-विडविड्डाः ॥९४॥

रचेर्धातोरेते त्रय आदेशा वा भवन्ति। उग्गहइ। अवहइ। विडविड्डइ। रयइ।

रच् (रचि) धातु को (उग्गह, अवह, विडविड्ड ऐसे) ये तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—उग्गहइ··· ···विडविड्डइ। (विकल्प पक्ष में) :—रयइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समारचेरुवहुत्थ-सारव-समार-केलायाः ॥ ९५ ॥

समारचेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति । उवहुत्थइ । सारवइ । समारइ । केलायइ । समारयइ ।

समारच् (समारचि) धातु को (उवहुत्थ, सारव, समार और केलाय ऐसे) ये चार आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—उवहुत्थइ··· ···केलायइ । (विकल्प पक्ष में) :—समारयइ ।

सिचेः सिञ्चसिम्पौ ॥ ९६ ॥

सिञ्चतेरेतावादेशौ वा भवतः । सिञ्चइ । सिम्पइ । सेअइ ।

सिञ्चति (√सिच्) धातु को (सिञ्च और सिम्प ऐसे) ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—सिञ्चइ, सिम्पइ । (विकल्प पक्ष में) :—सेअइ ।

प्रच्छः पुच्छः ॥ ९७ ॥

पृच्छेः पुच्छादेशो भवति । पुच्छइ ।

पृच्छि (√प्रच्छ्) धातु को पुच्छ आदेश होता है । उदा०—पुच्छइ ।

गर्जेर्बुक्कः ॥ ९८ ॥

गर्जतेर्बुक्क इत्यादेशो वा भवति । बुक्कइ । गज्जइ ।

गर्जति (गर्ज्) धातु को बुक्क ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०— बुक्कइ (विकल्प–पक्ष में :—) गज्जइ ।

वृषे ढिक्कः ॥ ९९ ॥

वृषकर्तृकस्य गर्जेर्ढिक्क इत्यादेशो वा भवति । ढिक्कइ । वृषभो गर्जति ।

वृष–कर्तृक गर्ज् (गर्जि) धातु को ढिक्क आदेश विकल्प से होता है । उदा०— ढिक्कइ (यानी ; वृषभ (= बैल) गर्जना करता है (ऐसा अर्थ है) ।

राजेरग्घ-छज्ज-सह-रीर-रेहाः ॥ १०० ॥

राजेरेते पञ्चादेशा वा भवन्ति । अग्घइ । छज्जइ । सहइ । रीरइ । रेहइ । रायइ ।

राज् (राजि) धातु को ('अग्घ, छज्ज, सह, रीर और रेह ऐसे) ये पाँच आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—अग्घइ··· ···रेहइ । (विकल्प पक्ष में :— रायइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मस्जेराउड्ड-णिउड्ड-बुड्ड-खुप्पाः ॥१०१॥

मज्जतेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति। आउड्डइ। णिउड्डइ। बुड्डइ। खुप्पइ। मज्जइ।

मज्जति (√मस्ज्) धातु को (आउड्ड, णिउड्ड, बुड्ड और खुप्प) ये चार आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—आउड्डइ... ...खुप्पइ। (विकल्प पक्ष में :—) मज्जइ।

पुञ्जेरारोल-वमालौ ॥ १०२ ॥

पुञ्जेरेतावादेशौ वा भवतः। आरोलइ। वमालइ। पुञ्जइ।

पुञ्ज् (पुञ्जि) धातु को (आरोल और वमाल ऐसे) ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—आरोलइ, वमालइ। (विकल्प पक्ष में :—) पुञ्जइ।

लस्जेर्जीहः ॥ १०३ ॥

लज्जतेर्जीह इत्यादेशो वा भवति। जीहइ। लज्जइ।

लज्जति (√लस्ज्) धातु को जीह ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—जीहइ। (विकल्प—पक्ष में) :—लज्जइ।

तिजेरो सुक्कः ॥ १०४ ॥

तिजेरो सुक्क इत्यादेशो वा भवति। ओसुक्कइ तेअणं।

तिज् (तिजि) धातु को ओसुक्क ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—ओसुक्कइ। (विकल्प—पक्ष में :—) तेअणं (तेजनम्)।

मृजेरुग्घुस-लुञ्छ-पुञ्छ-पुंस-फुस-पुस-लुह-हुल-रोसाणाः॥१०५॥

मृजेरेते नवादेशा वा भवन्ति। उग्घुसइ। लुञ्छइ। पुञ्छइ। पुंसइ। फुसइ। पुसइ। लुहइ। हुलइ। रोसाणइ। पक्षे। मज्जइ।

मृज् (मृजि) धातु को उग्घुस, लुञ्छ, पुञ्छ, पुंस, फुस, पुस, लुह, हुल, और रोसाण ऐसे ये नौ आदेश विकल्प से होते है। उदा०—उग्घुसइ... ...रोसाणइ। (विकल्प—) पक्ष में :—मज्जइ।

भञ्जेर्वेमय-मुसुमूर-मूर-सूर-सूड-विर-पविरञ्ज-करञ्ज-नीरञ्जाः ॥ १०६ ॥

भञ्जेरेते नवादेशा वा भवन्ति। वेमयइ। मुसुमूरइ। मूरइ। सूरइ। सूडइ। विरइ। पविरञ्जइ। करञ्जइ। नीरञ्जइ। भञ्जइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भञ्ज् (भञ्जि) धातु को (वेमय, मुसुमूर, मूर, सूर, सूड, विर, पविरञ्ज, करञ्ज और नीरञ्ज ऐसे) ये नौ आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—वेमयइ······ नीरञ्जइ। (विकल्प पक्ष में :—) भञ्जइ।

अनुव्रजेः पडिअग्गः ॥ १०७ ॥

अनुव्रजेः पडिअग्ग इत्यादेशो वा भवति। पडिअग्गइ। अणुवच्चइ।

अनुव्रज् (अनुव्रजि) धातु को पडिअग्ग ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—पडिअग्गइ। (विकल्प पक्ष में) :—अणुवच्चइ।

अर्जेर्विढवः ॥ १०८ ॥

अर्जेर्विढव इत्यादेशो वा भवति। विढवइ। अज्जइ।

अर्ज् (अर्जि) धातु को विढव ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—विढवइ। (विकल्प-पक्ष में) :—अज्जइ।

युजो जुञ्ज-जुज्ज-जुप्पाः ॥ १०९ ॥

युजो जुञ्ज जुज्ज जुप्प इत्यादेशा भवन्ति। जुञ्जइ। जुज्जइ। जुप्पइ।

युज् धातु को जुञ्ज, जुज्ज और जुप्प ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—जुञ्जइ······ जुप्पइ।

भुजो भुञ्ज-जिम-जेम-कम्माण्ह-चमढ-समाण-चड्डाः ॥११०॥

भुज एतेष्टादेशा भवन्ति। भुञ्जइ। जिमइ। जेमइ। कम्मेइ। अण्हइ। समाणइ। चमढइ। चड्डइ।

भुज् धातु को भुञ्ज, जिम, जेम, कम्माण्ह, चमढ, समाण और चड्ड ये आठ आदेश होते हैं। उदा०—भुञ्जइ······चड्डइ।

वोपेन कम्मवः ॥ १११ ॥

उपेन युक्तस्य भुजेः कम्मव इत्यादेशो वा भवति। कम्मवइ। उवहुञ्जइ।

उप (इस उपसर्ग) से युक्त होने वाले भुज् (भुजि) धातु को कम्मव ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—कम्मवइ। (विकल्प-पक्ष में :—) उवहुञ्जइ।

घटेर्गढः ॥ ११२ ॥

घटतेर्गढ इत्यादेशो वा भवति। गढइ। घडइ।

घटति (√घट्) धातु को गढ ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—गढइ। (विकल्प-पक्ष में) :—घडइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समो गलः ॥ ११३ ॥

सम्पूर्वस्य घटतेर्गल इत्यादेशो वा भवति। संगलइ। संघडइ।

सम् (उपसर्ग) पूर्व में होने वाले घटति (घट्) धातु को गल ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—संगलइ। (विकल्प पक्ष में):—संघडइ।

हासेन स्फुटेमु रः ॥ ११४ ॥

हासेन करणेन यः स्फुटिस्तस्य मुरादेशो वा भवति। मुरइ। हासेन स्फुटयति।

हास (= हास्य) इस करण से युक्त होने वाला जो स्फुट् (स्फुटि) धातु, उसको मुर आदेश विकल्प से होता है। उदा०—मुरइ (यानी) हासेन स्फुटति (ऐसा अर्थ है)।

मण्डेश्चिञ्च-चिञ्चअ-चिञ्चिल्ल-रीड-टिविडिक्काः ॥११५॥

मण्डेरेते पञ्चादेशा वा भवन्ति। चिञ्चइ। चिञ्चअइ। चिञ्चिल्लइ। रीडइ। टिविडिक्कइ। मण्डइ।

मण्ड् (मण्डि) धातु को चिञ्च, चिञ्चअ, चिञ्चिल्ल, रीड और टिविडिक्क ऐसे ये पाँच आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—चिञ्चइ...... टिविडिक्कइ। (विकल्प–पक्ष में :—) मण्डइ।

तुडेस्तोड-तुट्ट–खुट्ट-खुडोक्खुडोल्लुक्क-णिलुक्क-लुक्कोल्लूराः ॥ ११६ ॥

तुडरेते नवादेशा वा भवन्ति। तोडइ। तुट्टइ। खुट्टइ। खुडइ। उक्खुडइ। उल्लुक्कइ। णिलुक्कइ। लुक्कइ। उल्लूरइ। तुडइ।

तुड् (तुडि) धातु को (तोड, तुट्ट, खुट्ट, खुड, उक्खुड, उल्लुक्क, णिलुक्क, लुक्क और उल्लूर ऐसे) ये नौ आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—तोडइ...... उल्लूरइ। (विकल्प–पक्ष में):—तुडइ।

घूर्णो घुल-घोल-घुम्म-पहल्लाः ॥ ११७ ॥

घूर्णेरेते चत्वार आदेशा भवन्ति। घुलइ। घोलइ। घुम्मइ। पहल्लइ।

घूर्ण् (घूर्णि) धातु को (घुल, घोल, घुम्म और पहल्ल ऐसे) ये चार आदेश होते है। उदा०—घुलइ...... पहल्लइ।

विवृतेर्ढंसः ॥ ११८ ॥

विवृतेर्ढंस इत्यादेशो वा भवति। ढंसइ। विवट्टइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवृत् धातु को ढंस ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—ढंसइ। (विकल्प पक्ष में):—विवट्टइ।

क्वथेरट्टः ॥ ११९ ॥

क्वथेरट्ट इत्यादेशो वा भवति। अट्टइ। कढइ।

क्वथ् (क्वथि) धातु को अट्ट ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—अट्टइ। (विकल्प पक्ष में):—कढइ।

ग्रन्थेर्गण्ठः ॥ १२० ॥

ग्रन्थेर्गण्ठ इत्यादेशो भवति। गण्ठइ। [1]गण्ठी।

ग्रन्थ् धातु को गण्ठ ऐसा आदेश होता है। उदा०—गण्ठइ। गण्ठी।

मन्थेर्घुसल-विरोलौ ॥ १२१ ॥

मन्थेर्घुसल विरोल इत्यादेशौ वा भवतः। घुसलइ। विरोलइ। मन्थइ।

मथ् (मन्थि) धातु को घुसल और विरोल ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—घुसलइ, विरोलइ। (विकल्प-पक्ष में):—मन्थइ।

ह्लादेरवअच्छः ॥ १२२ ॥

ह्लादेर्ण्यन्तस्याण्यन्तस्य च अवअच्छ इत्यादेशो भवति। अवअच्छइ। ह्लादते ह्लादयति वा। इकारो ण्यन्तस्यापि परिग्रहार्थः।

प्रेरक प्रत्ययान्त तथैव प्रेरक प्रत्यय रहित ऐसे ह्लादते (√ह्लाद्) धातु को अवअच्छ ऐसा आदेश होता है। उदा०—अवअच्छाइ (यानी) ह्लादते अथवा ह्लादयति (ऐसा अर्थ है)। (सूत्र में से ह्लादि शब्द में से) इकार प्रेरक प्रत्ययान्त ह्लाद् धातु के ग्रहण करने के लिए है।

नेः सदो मज्जः ॥ १२३ ॥

निपूर्वस्य सदो मज्ज इत्यादेशो भवति। अत्ता एत्थ[2] णुमज्जइ।

नि (उपसर्ग) पूर्व में होने वाले सद् धातु को मज्ज ऐसा आदेश होता है। उदा०—अत्ता एत्थ णुमज्जइ।

छिदेर्दुहाव-णिच्छल्ल-णिज्झोड-णिव्वर-णिल्लूर-लूराः ॥ १२४ ॥

छिदेरेते षडादेशा वा भवन्ति। दुहावइ। णिच्छल्लइ। णिज्झोडइ। णिव्वरइ। णिल्लूरइ। लूरइ। पक्षे। छिन्दइ।

---

१. ग्रन्थि। २. आत्मा अत्र निषीदति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छिद् (छिदि) धातु को (दुहाव, णिच्छल्ल, णिज्झोड, णिव्वर, णिल्लूर और लूर ऐसे) ये छः आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०——दुहावइ······लूरइ। (विकल्प–) पक्ष में :——छिन्दइ।

आङा ओअन्दोद्दालौ ॥ १२५ ॥

आङा युक्तस्य छिदेरोअन्द उद्दाल इत्यादेशौ वा भवतः। ओअन्दइ। उद्दालइ। अच्छिन्दइ।

आ (उपसर्ग) से युक्त होने वाले छिद् धातु को ओअन्द और उद्दाल ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०——ओअन्दइ, उद्दालइ। (विकल्प पक्ष में) :——अच्छिन्दइ।

मृदो मल-मढ-परिहट्ट-खड्ड-चड्ड-मड्ड-पन्नाडाः ॥ १२६ ॥

मृद्नातेरेते सप्तादेशा भवन्ति। मलइ। मढइ। परिहट्टइ। खड्डइ। चड्डइ। मड्डइ। पन्नाडइ।

मृद्नाति (√मृद्) धातु को (मल, मढ, परिहट्ट, खड्ड, चड्ड, मड्ड और पन्नाड ऐसे) ये सात आदेश होते हैं। उदा०——मलइ······पन्नाडइ।

स्पन्देश्चुलुचुलः ॥ १२७ ॥

स्पन्देश्चुलुचुल इत्यादेशो वा भवति। चुलुचुलइ। फन्दइ।

स्पन्द् धातु को चुलुचुल ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०——चुलुचुलइ। (विकल्प–पक्ष में) :——फन्दइ।

निरः पदेर्वलः ॥ १२८ ॥

निर्पूर्वस्य पदेर्वल इत्यादेशो वा भवति। निव्वलइ। निप्पज्जइ।

निर् (उपसर्ग) पूर्व में होने वाले पद् धातु को वल ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०——निव्वलइ। (विकल्प–पक्ष में) :——निप्पज्जइ।

विसंवदेर्विअट्ट–विलोट्ट–फंसाः ॥ १२९ ॥

विसंपूर्वस्य वदेरेते त्रय आदेशा वा भवन्ति। विअट्टइ। विलोट्टइ। फंसइ। विसंवयइ।

वि और सम् (ये उपसर्ग) पूर्व में होने वाले वद् धातु को (विअट्ट, विलोट्ट और फंस ऐसे) ये तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०——विअट्टइ······फंसइ। (विकल्प पक्ष में) :——विसंवयइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शदो झड-पक्खोडौ ॥ १३० ॥

शीयतेरेतावादेशौ भवतः । झडइ । पक्खोडइ ।

शीयते (√शद्) धातु को (झड और पक्खोड ऐसे) ये आदेश होते हैं । उदा०—झडइ, पक्खोडइ ।

आक्रन्देर्णीहरः ॥ १३१ ॥

आक्रन्देर्णीहर इत्यादेशो वा भवति । णीहरइ । अक्कन्दइ ।

आक्रन्द् (आक्रन्दि) धातु को णीहर ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—णीहरइ । (विकल्प—पक्ष में) :—अक्कन्दइ ।

खिदेर्जूरविसूरौ ॥ १३२ ॥

खिदेरेतावादेशौ वा भवतः । जूरइ । विसूरइ । खिज्जइ ।

खिद् (खिदि) धातु को जूर और विसूर ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—जूरइ, विसूरइ । (विकल्प—पक्ष में) :—खिज्जइ ।

रुधेरुत्थंघः ॥ १३३ ॥

रुधेरुत्थंघ इत्यादेशो वा भवति । उत्थन्घइ । रुन्धइ ।

रुध् (रुधि) धातु को उत्थंघ ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—उत्थंघइ । (विकल्प—पक्ष में :—रुन्धइ ।

निषेधेर्हक्कः ॥ १३४ ॥

निषेधतेर्हक्क इत्यादेशो वा भवति । हक्कइ । निसेहइ ।

निषेधति (√नि + सिध्) धातु को हक्क ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—हक्कइ । (विकल्प—पक्ष में) :—निसेहइ ।

क्रुधेर्जूरः ॥ १३५ ॥

क्रुधेर्जूर इत्यादेशो (वा) भवति । जूरइ । कुज्झइ ।

क्रुध् धातु को जूर ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—जूरइ । (विकल्प-पक्ष में) :—कुज्झइ ।

जनो जा-जम्मौ ॥ १३६ ॥

जायतेर्जाजम्म इत्यादेशौ भवतः । जाअइ । जम्मइ ।

जायते (√जन्) धातु को जा और जम्म ऐसे आदेश होते हैं । उदा०—जाअइ । जम्मइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तनेस्तड-तड्ड-तड्डव-विरल्लाः ॥ १३७ ॥

तनेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति । तडइ । तड्डइ । तड्डवइ । विरल्लइ । तणइ ।

तन् धातु को (तड, तड्ड, तड्डव और विरल्ल ऐसे) ये चार आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—तडइ ······विरल्लइ । (विकल्प–पक्ष में) :—तणइ ।

तृपस्थिप्पः ॥ १३८ ॥

तृप्यते स्थिप्प इत्यादेशो भवति । थिप्पइ ।

तृप्यति (√तृप्) धातु को थिप्प आदेश होता है । उदा०—थिप्पइ ।

उपसर्पेरल्लिअः ॥ १३९ ॥

उपपूर्वस्य सृपेः कृतगुणस्य अल्लिअ इत्यादेशो वा भवति । अल्लिअइ । उवसप्पइ ।

उप (यह उपसर्ग) पूर्व में होने वाले और जिसमें गुण किया हुआ है, ऐसे सृप् धातु को अल्लिअ आदेश विकल्प से होता है । उदा०—अल्लिअइ । (विकल्प पक्ष में) :—उवसप्पइ ।

संतपेर्झङ्खः ॥ १४० ॥

सन्तपेर्झङ्ख इत्यादेशो वा भवति । झङ्खइ । पक्षे । सन्तप्पइ ।

सन्तप् धातु को झङ्ख ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—झङ्खइ । (विकल्प–) पक्ष में :—सन्तप्पइ ।

व्यापेरोअग्गः ॥ १४१ ॥

व्याप्नोतेरो अग्ग इत्यादेशो वा भवति । ओअग्गइ । वावेइ ।

व्याप्नोति (√व्याप्) धातु को ओअग्ग ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—ओअग्गइ । (विकल्प–पक्ष में) :—वावेइ ।

समापेः समाणः ॥ १४२ ॥

समाप्नोतेः समाण इत्यादेशो वा भवति । समाणइ । समावेइ ।

समाप्नोति (√समाप्) धातु को समाण ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—समाणइ । (विकल्प–पक्ष में) :—समावेइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षिपेर्गलत्थाडडक्ख-सोल्ल-पेल्ल-णोल्ल-छुह-हुल-परी-घत्ता ॥ १४३ ॥

क्षिपेरेते नवादेशा वा भवन्ति। गलत्थइ। अड्डक्खइ। सोल्लइ। पेल्लइ। णोल्लइ। ह्रस्वत्वे तु णुल्लइ। छुहइ। हुलइ। परीइ घत्तइ। खिवइ।

क्षिप् धातु को (गल्लत्थ, अड्डक्ख, सोल्ल, पेल्ल, णोल्ल, छुह, हुल, परी, और घत्त ऐसे) ये नौ आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०--गलत्थइ······णोल्लइ; (णोल्ल में से ओ स्वर) ह्रस्व होने पर, मात्र णुल्लइ (ऐसा रूप होगा); छुहइ······। (विकल्प पक्ष में):--खिवइ।

उत्क्षिपेर्गुलगुञ्छोत्थंघाल्लत्थोब्भुत्तोस्सिक्क-हक्खुवाः ॥ १४४ ॥

उत्पूर्वस्य क्षिपेरेते षडादेशा वा भवन्ति। गुलगुञ्छइ। उत्थंघइ। अल्लत्थइ। उब्भुत्तइ। उस्सिक्कइ। हक्खुवइ। उक्खिवइ।

उद् (उपसर्ग) पूर्व मे होने वाले क्षिप् धातु को (गुलगुञ्छ, उत्थंघ, अल्लत्थ, उब्भुत्त, उस्सिक्क और हक्खुव ऐसे) ये छः आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०--गुलगुञ्छइ······हक्खुवइ। (विकल्प पक्ष में):--उक्खिवइ।

आक्षिपेर्णीरवः ॥ १४५ ॥

आङ्पूर्वस्य क्षिपेर्णीरव इत्यादेशो वा भवति। णीरवइ। अक्खिवइ।

आ (उपसर्ग) पूर्व में होने वाले क्षिप् धातु को णीरव ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०--णीरवइ। (विकल्प-पक्ष में):--अक्खिवइ।

स्वपेः कमवस-लिस-लोट्टाः ॥ १४६ ॥

स्वपेरेते त्रय आदेशा वा भवन्ति। कमवसइ। लिसइ। लोट्टइ। सुअइ।

स्वप् धातु को (कमवस, लिस और लोट्ट ऐसे) ये तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०--कमवसइ······लोट्टइ। (विकल्प-पक्ष में):--सुअइ।

वेपेरायम्बायज्झौ ॥ १४७ ॥

वेपेरायम्ब आयज्झ इत्यादेशौ वा भवतः। आयम्बइ। आयज्झइ। वेवइ।

वेप् धातु को आयम्ब और आयज्झ ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०--आयम्बइ, आयज्झइ। (विकल्प-पक्ष में):--वेवइ।

विलपेर्झङ्ख-वडवडौ ॥ १४८ ॥

विलपेर्झङ्ख वडवड इत्यादेशौ वा भवतः। झङ्खइ। वडवइ। विलवइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विलप् धातु को झङ्ख और वडवड ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा॰—झङ्खइ, वडवडइ। (विकल्प—पक्ष में) :—विलवइ।

लिपो लिम्पः ॥ १४९ ॥

लिपतेर्लिम्प इत्यादेशो भवति। लिम्पइ।

लिप् धातु को लिम्प ऐसा आदेश होता है। उदा॰—लिम्पइ।

गुप्येर्विर-णडौ ॥ १५० ॥

गुप्यतेरेतावादेशौ वा भवतः। विरइ। णडइ। पक्षे। गुप्पइ।

गुप्यति (√गुप्) धातु को विर और णड ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा॰—विरइ, णडइ। (विकल्प—) पक्ष में :—गुप्पइ।

क्रपोवहो णिः ॥ १५१ ॥

क्रपेः अवह इत्यादेशो ण्यन्तो भवति। अवहावेइ। कृपां करोतीत्यर्थः।

कृप् (क्रपि) धातु को प्रेरक प्रत्यय से अन्त होने वाला अवह (यानी अवहावे) ऐसा आदेश होता है। उदा॰—अवहावेइ (यानी) कृपा करता है, ऐसा अर्थ है।

प्रदीपेस्तेअव-सन्दुम-सन्धुक्काब्भुत्ताः ॥ १५२ ॥

प्रदीप्यतेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति। तेअवइ। सन्दुमइ। सन्धुक्कइ। अब्भुत्तइ। पलीवइ।

प्रदीप्यति (√प्रदीप्) धातु को तेअव, सन्दुम, सन्धुक्क और अब्भुत्त ऐसे ये चार आदेश विकल्प से होते हैं। उदा॰—तेअवइ⋯⋯अब्भुत्तइ। (विकल्प—पक्ष में) :—पलीवइ।

लुभेः संभावः ॥ १५३ ॥

लुभ्यतेः सम्भाव इत्यादेशो वा भवति। सम्भावइ। लुब्भइ।

लुभ्यति (√लुभ्) धातु को सम्भाव ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा॰—सम्भावइ। (विकल्प—पक्ष में) :—लुब्भइ।

क्षुभेः खउर-पड्डुहौ ॥ १५४ ॥

क्षुभेः खउर पड्डुह इत्यादेशौ वा भवतः। खउरइ। पड्डुहइ। खुब्भइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षुभ् धातु को खउर और पड्डुह ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०--खउरइ, पड्डुहइ। (विकल्प—पक्ष में) :--खुब्भइ।

आङो रभे रम्भ-ढवौ ॥ १५५ ॥

आङः परस्य रभे रम्भ ढव इत्यादेशौ वा भवतः। आरम्भइ। आढवइ। आरभइ।

आ (उपसर्ग) के आगे होने वाले रभ् धातु को रम्भ और ढव ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०--आरम्भइ, आढवइ। (विकल्प—पक्ष में) :--आरभइ।

उपालम्भेर्झङ्ख-पच्चार-वेलवाः ॥ १५६ ॥

उपालम्भेरेते त्रय आदेशा वा भवन्ति। झङ्खइ। पच्चारइ। वेलवइ। उवालम्भइ।

उपालम्भ् धातु को (झङ्ख, पच्चार और वेलव ऐसे) ये तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०--झङ्खइ··· ···वेलवइ। (विकल्प—पक्ष में) :--उवालम्भइ।

अवेर्जृम्भो जम्भा ॥ १५७ ॥

जृम्भेर्जम्भा इत्यादेशो भवति वेस्तु न भवति। जम्भाइ जम्भाअइ। अवेरिति किम्। केलिपसरो[1] विअम्भइ।

जृम्भ् धातु को जम्भा ऐसा आदेश होता है; तथापि वि (उपसर्ग) पीछे होने पर, (जम्भा आदेश) नहीं होता है। उदा०—जम्भाइ, जम्भाअइ। वि (यह उपसर्ग) पीछे होने पर (जम्भा आदेश) नहीं होता है, ऐसा क्यों कहा है ? (कारण वि उपसर्ग पीछे न होने पर ही, जम्भा आदेश होता है। उदा०—) केलिपसरो विअम्भइ।

भाराक्रान्ते नमेर्णिसुढः ॥ १५८ ॥

भाराक्रान्ते कर्तरि नमेर्णिसुढ इत्यादेशो (वा) भवति। णिसुढइ। पक्षे। णवइ। भाराक्रान्तो नमतीत्यर्थः।

भाराक्रान्त (कोई पुरुष) कर्ता होने पर, नम् धातु को णिसुढ ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—णिसुढइ। (विकल्प—) पक्ष में :—णवइ; (यानी) भाराक्रान्तः नमति (बोझ से आक्रान्त पुरुष नमता है), ऐसा अर्थ है।

---

१. केलिप्रसरः विजृम्भते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विश्रमेर्णिव्वा ॥ १५९ ॥

विश्राम्यतेर्णिव्वा इत्यादेशो वा भवति । णिव्वाइ । वीसमइ ।

विश्राम्यति (√विश्रम्) धातु को णिव्वा ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—णिव्वाइ। (विकल्प–पक्ष में) :— वीसमइ ।

आक्रमेरोहावोत्थारच्छुन्दाः ॥ १६० ॥

आक्रमतेरेते त्रय आदेशा वा भवन्ति । ओहावइ । उत्थारइ । छुन्दइ । अक्कमइ ।

आक्रमति (√आक्रम्) धातु को ओहाव, उत्थार और छुन्द ऐसे ये तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा० ओहावइ··· ··· छुन्दइ। (विकल्प–पक्ष में) :— अक्कमइ ।

भ्रमेष्टिरिटिल्ल-ढुण्ढुल्ल-ढण्ढल्ल-चक्कम्म-भम्मड-भमड-भमाड-तलअण्ट-झण्ट-झम्प-भुम-गुम-फुम-फुस-ढुम-ढुस-परी-पराः ॥१६१॥

भ्रमेरेतेष्टादशादेशा वा भवन्ति । टिरिटिल्लइ । ढुण्ढुल्लइ । ढण्ढल्लइ । चक्कम्मइ । भम्मडइ । भमाडइ । तल अण्टइ । झण्टइ । झम्पइ । भुमइ । गुमइ । फुमइ । फुसइ । ढुमइ । ढुसइ । परीइ । परइ । भमइ ।

भ्रम् धातु को टिरिटिल्ल, ढुण्ढुल्ल, ढण्ढल्ल चक्कम्म, भम्मड, भमड, भमाड, तलअण्ट, झण्ट, झम्प, भुम, गुम, फुम, फुस, ढुम, ढुस, परी, और पर ऐसे ये अठारह आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—टिरिटिल्लइ··· ···परइ। (विकल्प–पक्ष में) :—भमइ ।

गमेरई-अइच्छाणुवज्जावज्जसोक्कुसाक्कुस-पच्चड्ड-पच्छन्द-णिम्मह-णी-णीण-णीलुक्क-पदअ-रम्भ-परिअल्ल-वोल-परिअल-णिरिणास-णिवहावसेहावहराः ॥ १६२ ॥

गमेरेते एकविंशतिरादेशा वा भवन्ति । अईइ । अइच्छइ । अणुवज्जइ । अवज्जसइ । उक्कुसइ । अक्कुसइ । पच्चड्डइ । पच्छन्दइ । णिम्महइ । णीइ । णीणइ । णीलुक्कइ । पदअइ । रम्भइ । परिअल्लइ । वोलइ । परिअलइ । णिरिणासइ । णिवहइ । अवसेहइ । अवहरइ । पक्षे । गच्छइ । हम्मइ णिहम्मइ णीहम्मइ आहम्मइ पहम्मइ इत्येते तु हम्म गतावित्यस्यैव भविष्यन्ति ।

गम् धातु को अई, अइच्छ, अणुवज्ज, अवज्जस, उक्कुस, अक्कुस, पच्चड्ड, पच्छन्द; णिम्मह, णी, णीण, णीलुक्क, पदअ, रम्भ, परिअल्ल, वोल, परिअल, णिरि-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णास, णिवह, अवसेह और अवहर ऐसे ये इक्कीस आदेश विकल्प से होवे हैं। उदा०—अईइ… …अवहरइ। (विकल्प—) पक्ष में :—गच्छइ। परन्तु णिहुम्मइ, णीहम्मइ, आहम्मइ, और पहम्मइ ऐसे ये रूप तो 'हम्म गतौ' (में कहे हुए हुम्म्) धातु के होंगे।

आङा अहिपच्चुअः ॥ १६३ ॥

आङा सहितस्य गमेः अहिपच्चुअ इत्यादेशो वा भवति। अहिपच्चुअइ। पक्षे। आगच्छइ।

आ (उपसर्ग) से सहित होने वाले गम् धातु को अहिपच्चुअ ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—अहिपच्चुअइ। (विकल्प—) पक्ष में :—आगच्छइ।

समा अब्भिडः ॥ १६४ ॥

समा युक्तस्य गमेः अब्भिड इत्यादेशो वा भवति। अब्भिडइ। संगच्छइ।

सम् (उपसर्ग) से युक्त होने वाले गम् धातु को अब्भिड ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—अब्भिडइ। (विकल्प-पक्ष में) :—संगच्छइ।

अभ्याङोम्मत्थः ॥ १६५ ॥

अभ्याङ्भ्यां युक्तस्य गमेः उम्मत्थ इत्यादेशो वा भवति। उम्मत्थइ। अब्भागच्छइ। अभिमुखमागच्छतीत्यर्थः।

अभि और आ (इन दो उपसर्गों) से युक्त होने वाले गम् धातु को उम्मत्थ ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—उम्मत्थइ। (विकल्प-पक्ष मे) : —अब्भागच्छइ। (यानी) अभिमुखं आगच्छति, ऐसा अर्थ है।

प्रत्याङा पलोट्टः ॥ १६६ ॥

प्रत्याङ्भ्यां युक्तस्य गमेः पलोट्ट इत्यादेशो वा भवति। पलोट्टइ। पच्चागच्छइ।

प्रति और आ (इन उपसर्गों) से युक्त होने वाले गम् धातु को पलोट्ट ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—पलोट्टइ। (विकल्प-पक्ष में) :—पच्चागच्छइ।

शमेः पडिसा-परिसामौ ॥ १६७ ॥

शमेरेतावादेशौ वा भवतः। पडिसाइ। परिसामइ। समइ।

शम् धातु को पडिसा और परिसाम ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—पडिसाइ, परिसामइ। (विकल्प-पक्ष में) :—समइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रमेः संखुड्ड-खेड्डोब्भाव-किलिकिञ्च-कोट्टुम-मोट्टाय-णीसर-वेल्लाः ॥ १६८ ॥

रमतेरेतेष्टादेशा वा भवन्ति । संखुड्डइ । खेड्डइ । उब्भावइ । किलिकिञ्चइ । कोट्टुमइ । मोट्टायइ । णीसरइ । वेल्लइ । रमइ ।

रम् धातु को संखुड्ड, खेड्ड, उब्भाव, किलिकिञ्च, कोट्टुम, मोट्टाय, णीसर, और वेल्ल ये आठ आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—संखुड्डइ······वेल्लइ । (विकल्प-पक्ष में) :—रमइ ।

पूरेरग्घाडाग्घवोद्धुमाङ्गुमाहिरेमाः ॥ १६९ ॥

पूरेरेते पञ्चादेशा वा भवन्ति । अग्घाडइ । अग्घवइ । उद्धुमाइ । अङ्गुमइ । अहिरेमइ । पूरइ ।

पूर् धातु को अग्घाड, अग्घव, उद्धुमा, अङ्गुम और अहिरेम ये पाँच आदेश विकल्प से होते हैं । उदा०—अग्घाडइ······अहिरेमइ । (विकल्प-) पक्ष पूरइ ।

त्वरस्तुवर-जअडौ ॥ १७० ॥

त्वरतेरेतावादेशौ भवतः । तुवरइ । जअडइ । [1]तुवरन्तो । [2]जअडन्तो ।

त्वरते (√त्वर्) धातु को तुवर और जअड ऐसे ये आदेश होते हैं । उदा०—तुवरअइ······जअडन्तो ।

त्यादिशत्रोस्तूरः ॥ १७१ ॥

त्वरतेस्त्यादौ शतरि च तूर इत्यादेशो भवति । तूरइ । तूरन्तो ।

त्यादि (यानी धातु को लगने वाले प्रत्यय) और शतृ (प्रत्यय) लगते समय, त्वरते (√त्वर्) धातु को तुर ऐसा आदेश होता है । उदा०—तूरइ । तूरन्तो ।

तुरोत्यादौ ॥ १७२ ॥

त्वरोत्यादौ तुर आदेशो भवति । तुरिओ । तुरन्तो ।

अत् (= अ) इत्यादि (प्रत्यय आगे होने पर), त्वर् धातु को तुर आदेश होता है । उदा०—तूरइ, तुरन्तो ।

क्षरः खिर-झर-पज्झर-पच्चड-णिच्चल-णिट्टुआः ॥ १७३ ॥

क्षरेरेते षड् आदेशा भवन्ति । खिरइ । झरइ । पज्झरइ । पच्चडइ । णिच्चलइ । णिट्टुअइ ।

१–२. तुवर और जअड इनके व० का० धा० वि० ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षर् धातु को खिर, झर, पज्झर, पच्चड, णिच्चल और णिट्टुअ ये छः आदेश होते हैं। उदा०—खिरइ… …णिट्टुअइ।

उच्छल उत्थल्लः ॥ १७४ ॥

उच्छलतेरुत्थल्ल इत्यादेशो भवति। उत्थल्लइ।

उच्छलति (√उच्छल्) धातु को उत्थल्ल आदेश होता है। उदा०—उत्थल्लइ।

विगलेस्थिप्प-णिट्टुहौ ॥ १७५ ॥

विगलतेरेतावादेशौ वा भवतः। थिप्पइ। णिट्टुहइ। विगलइ।

विगलति (√विगल्) धातु को थिप्प और णिट्टुह ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—थिप्पइ, णिट्टुहइ। (विकल्प-पक्ष में) :—विगलइ।

दलिवल्योर्विसट्ट-वम्फौ ॥ १७६ ॥

दलेर्वलेश्च यथासंख्यं विसट्ट वम्फ इत्यादेशौ वा भवतः। विसट्टइ। वम्फइ पक्षे दलइ। वलइ।

दल् और वल् इन धातुओं को अनुक्रम से विसट्ट और वम्फ ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—विसट्टइ, वम्फइ। (विकल्प-) पक्ष में :—दलइ, वलइ।

भ्रंशेः फिड-फिट्ट-फुड-फुट्ट-चुक्क-भुल्लाः ॥ १७७ ॥

भ्रंशेरेते षडादेशा वा भवन्ति। फिडइ। फिट्टइ। फुडइ। फुट्टइ। चुक्कइ। भुल्लइ। पक्षे। भंसइ।

भ्रंश् धातु को फिड, फिट्ट, फुड, फुट्ट, चुक्क और भुल्ल ऐसे ये छः आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—फिडइ… …भुल्लइ। (विकल्प-) पक्ष में :—भंसइ।

नशेर्णिरणास-णिवहावसेह-पडिसा-सेहावहराः ॥ १७८ ॥

नशेरेते षडादेशा वा भवन्ति। णिरणासइ। णिवहइ। अवसेहइ। पडिसाइ। सेहइ। अवहरइ। पक्षे। नस्सइ।

नश् धातुको णिरणास, णिवह, अवसेह, पडिसा, सेह और अवहर ये छः आदेश विकल्प होते हैं। उदा०—णिरणासइ… …अवहरइ (विकल्प-) पक्ष में:—नस्सइ।

अवात्काशो वासः ॥ १७९ ॥

अवात् परस्य काशो वास इत्यादेशो भवति। ओवासइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अव (उपसर्ग) के आगे होनेवाले काश् धातु को वास ऐसा आदेश होता है। उदा०—ओवासइ।

संदिशेरप्पाहः ॥ १८० ॥

सन्दिशतेप्पाह इत्यादेशो वा भवति। अप्पाहइ। सन्दिसइ।

संदिशति (√संदिश्) धातु को अप्पाह ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—अप्पाहइ। (विकल्प-पक्ष में):—संदिसइ।

दृशो निअच्छापेच्छावयच्छावयज्झ-वज्ज-सव्वव-देक्खौअक्खा-वक्खावअक्ख-पुलोअ-पुलअ-निआवआस-पासाः ॥ १८१ ॥

दृशेरेते पञ्चदशादेशा भवन्ति। निअच्छइ। पेच्छइ। अवयच्छइ। अवयज्झइ। वज्जइ। सव्ववइ। देक्खइ। ओअक्खइ। अवक्खइ। अवअक्खइ। पुलोएइ। पुलएइ। निअइ। अवआसइ। पासइ। निज्झाअइ। इति तु निध्यायतेः स्वरादत्यन्ते भविष्यति।

दृश् धातु को निअच्छ, पेच्छ, अवयच्छ, अवयज्झ, वज्ज, सव्वव, देक्ख, ओअक्ख, अवक्ख, अवअक्ख, पुलोअ, पुलअ, निअ, अवआस और पास ऐसे ये पंद्रह आदेश होते हैं। उदा०— निअच्छइ······पासइ। निज्झाअइ (यह रूप) मात्र निध्यायति में से (अन्त्य) स्वर के आगे (यानी √निध्यै = निज्झा के आगे) अ अन्त में आने पर होगा।

स्पृशः फास-फंस-फरिस-छिव-छिहालुङ्खालिहाः ॥ १८२ ॥

स्पृशतेरेते सप्त आदेशा भवन्ति। फासइ। फंसइ। फरिसइ। छिवइ। छिहइ। आलुङ्खइ। आलिहइ।

स्पृशति (√स्पृश्) धातु को फास, फंस, फरिस, छिव, छिह, आलुङ्ख और आलिह ऐसे ये सात आदेश होते हैं। उदा०—फासइ······आलिहइ।

प्रविशे रिअः ॥ १८३ ॥

प्रविशेः रिअ इत्यादेशो वा भवति। रिअइ। पविसइ।

प्रविश् धातु को रिअ ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—रिअइ। (विकल्प—पक्ष में):—पविसइ।

प्रान्मृशमृषोर्म्हुसः ॥ १८४ ॥

प्रात् परयोर्मृशतिमुष्णात्योर्म्हुसं इत्यादेशो भवति। पम्हुसइ। प्रमृशति प्रमुष्णाति वा।

प्र (इस उपसर्ग) के आगे होनेवाले मृशति (√मृश्) और मुष्णाति (√मृष्) इन धातुओं को म्हुस ऐसा आदेश होता है। उदा०—पम्हुसइ (यानी) प्रमृशति अथवा प्रमुष्णाति ऐसा अर्थ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पिषेर्णिवह-णिरिणास-णिरिणज्ज-रोञ्च-चड्डाः ॥ १८५ ॥

पिषेरेते पञ्चादेशा भवन्ति वा। णिवहइ। णिरिणासइ। णिरिणज्जइ। रोञ्चइ। चड्डइ। पक्षे। पीसइ।

पिष् धातु को णिवह, णिरिणास, णिरिणज्ज, रोञ्च और चड्ड ये पांच आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—णिवहइ...चड्डइ। (विकल्प—पक्ष में):—पीसइ।

भषेर्भुक्कः ॥ १८६ ॥

भषेर्भुक्क इत्यादेशो वा भवति। भुक्कइ। भसइ।

भष् धातु को भुक्क ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—भुक्कइ। (विकल्प—पक्ष में):—भसइ।

कृषेः कड्ढ-साअड्ढाञ्चाणच्छायञ्छाइञ्छाः ॥ १८७ ॥

कृषेरेते षडादेशा वा भवन्ति। कड्ढइ। साअड्ढइ। अञ्चइ। अणच्छइ। अयञ्छइ। आइञ्छइ। पक्षे। करिसइ।

कृष् धातु को कड्ढ, आसड्ढ, अञ्च, अणच्छ, अयञ्छ और आइञ्छ ऐसे ये छः आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—कड्ढइ...आइञ्छइ। (विकल्प—पक्ष में):—करिसइ।

असावक्खोडः ॥ १८८ ॥

असिविषयस्य कृषेरक्खोड इत्यादेशो भवति। अक्खोडेइ। असिं कोशात् कर्षति इत्यर्थः।

असि-विषयक कृष् धातु को अक्खोड ऐसा आदेश होता है। उदा०—अक्खोडेइ (यानी) म्यान से तलवार निकालता है, ऐसा अर्थ है।

गवेषेर्ढुण्ढुल्ल-ढण्ढोल्ल-गमेस-घत्ताः ॥ १८९ ॥

गवेषेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति। ढुण्ढुल्लइ। ढण्ढोल्लइ। गमेसइ। घत्तइ। गवेसइ।

गवेष् धातु को ढुण्ढुल्ल, ढण्ढोल्ल, गमेस और घत्त ऐसे ये चार आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—ढुण्ढुल्लइ......घत्तइ। (विकल्प पक्ष में):—गवेसइ।

श्लिषेः सामग्गावयास-परिअन्ताः ॥ १९० ॥

श्लिष्यतेरेते त्रय आदेशा वा भवन्ति। सामग्गइ। अवयासइ। परिअन्तइ। सिलेसइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्लिष्यति (√श्लिष्) धातु को (सामग्ग, अवयास और परिअन्त) ये तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—सामग्गइ······परिअन्तइ। (विकल्प-पक्ष में):—सिलेसइ।

म्रक्षेश्चोप्पडः ॥ १९१ ॥

म्रक्षेश्चोप्पड इत्यादेशो वा भवति। चोप्पडइ। मक्खइ।

म्रक्ष् धातु को चोपड ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—चोप्पडइ। (विकल्प—पक्ष में):—मक्खइ।

काङ्क्षेराहाहिलङ्घाहिलङ्ख-वच्च-वम्फ-मह-सिह-विलुम्पाः ॥ १९२ ॥

काङ्क्षतेरेतेऽष्टादेशा वा भवन्ति। आहइ। अहिलङ्घइ। अहिलङ्खइ। वच्चइ। वम्फइ। महइ। सिहइ। विलुम्पइ। कङ्खइ।

काङ्क्षति (√काङ्क्ष्) धातु को आह, अहिलङ्घ, अहिलङ्ख, वच्च, वम्फ, मह, सिह और विलुम्प ऐसे ये आठ आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—आहइ······विलुम्पइ। (विकल्प—पक्ष में):—कङ्खइ।

प्रतीक्षेः सामय-विहीर-विरमालाः ॥ १९३ ॥

प्रतीक्षेरेते त्रय आदेशा वा भवन्ति। सामयइ। विहीरइ। विरमालइ। पडिक्खइ।

प्रतीक्ष् धातु को सामय, विहरि और विरमाल ये तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—सामयइ······विरमालइ (विकल्प—पक्ष में):—पडिक्खइ।

तक्षेस्तच्छ-चच्छ-रम्प-रम्फाः ॥ १९४ ॥

तक्षेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति। तच्छइ। चच्छइ। रम्पइ। रम्फइ। तक्खइ।

तक्ष् धातु को तच्छ, चच्छ, रम्प और रम्फ ये चार आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—तच्छइ······रम्फइ। (विकल्प—पक्ष में):—तक्खइ।

विकसेः कोआस-वोसट्टौ ॥ १९५ ॥

विकसेरेतावादेशौ वा भवतः। कोआसइ। वोसट्टइ। विअसइ।

विकस् धातु को कोआस और वोसट्ट ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—कोआसइ, वोसट्टइ। (विकल्प—पक्ष में):—विअसइ।

हसेर्गुञ्जः ॥ १९६ ॥

हसेर्गुञ्ज इत्यादेशो वा भवति। गुञ्जइ। हसइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ह्रस् धातु को गुञ्ज ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—गुञ्जइ। (विकल्प-पक्षमें):—हसइ।

स्रंसेल्र्हस-डिम्भौ ॥ १९७ ॥

स्रंसेरेतावादेशौ वा भवतः। ल्हसइ। परिल्हसइ सलिल [1]वसणं। डिम्भइ। संसइ।

स्रंस् धातु को ल्हस और डिम्भ ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—ल्हसइ··· डिम्भइ। (विकल्प-पक्ष में):—संसइ।

त्रसेर्डर-बोज्ज-वज्जाः ॥ १९८ ॥

त्रसेरेते त्रय आदेशा वा भवन्ति। डरइ। बोज्जइ। वज्जइ। तसइ।

त्रस् धातु को डर, बोज्ज और वज्ज ये तीन आदेश विकल्प होते हैं। उदा०—डरइ··· ···वज्जइ। (विकल्प-पक्ष में) :—तसइ।

न्यसो णिम-णुमौ ॥ १९९ ॥

न्यस्यतेरे तावादेशौ भवतः। णिमइ। णुमइ।

न्यस्यति (√न्यस्) धातु को णिम और णुम ये आदेश होते हैं। उदा०—णिमइ, णुमइ।

पर्यसः पलोट्ट-पल्लट्ट-पल्हत्थाः ॥ २०० ॥

पर्यस्यतेरेते त्रय आदेशा भवन्ति। पलोट्टइ। पल्लट्टइ। पल्हत्थइ।

पर्यस्यति (√पर्यस्) धातु को पलोट्ट, पल्लट्ट और पल्हत्थ ये तीन आदेश होते हैं। उदा०—पलोट्टइ··· ···पल्हत्थइ।

निःश्वसेर्झङ्खः ॥ २०१ ॥

निःश्वसे झंङ्ख इत्यादेशो वा भवति। झङ्खइ। नीससइ।

निःश्वस् धातु को झङ्ख ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—झङ्खइ। (विकल्प-पक्ष में) :—नीससइ।

उल्लसेरूसलोसुम्भ-णिल्लस-पुलआअ-गुञ्जोल्लारोआः ॥२०२॥

उल्लसेरेते षडादेशा वा भवन्ति। ऊसलइ। ऊसुम्भइ। णिल्लसइ। पुलआअइ। गुञ्जोल्लइ। ह्रस्वत्वे तु गुञ्जुल्लइ। आरोअइ। उल्लसइ।

1. (परिस्रंसते) सलिल-वसनम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उल्लस् धातु को (ऊसल, ऊसुम्भ, णिल्लस, पुलआअ, गुञ्जोल्ल, और आरोअ ऐसे) ये छः आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—ऊसलइ''' '''गुञ्जोल्लइ; (गुञ्जोल्ल में से ञ्जो का ओ) ह्रस्व होने पर, गुञ्जुल्लइ = (ऐसा रूप होगा); आरोअइ। (विकल्प–पक्ष में) :—उल्लसइ।

भासेर्भिसः ॥ २०३ ॥

भासेर्भिस इत्यादेशो वा भवति। भिसइ। भासइ।

भास् धातु को भिस् ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—भिसइ। (विकल्प–पक्ष में) :—भासइ।

ग्रसेर्घिसः ॥ २०४ ॥

ग्रसेर्घिस इत्यादेशो वा भवति। घिसइ। गसइ।

ग्रस् धातु को घिस ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—घिसइ। (विकल्प–पक्ष में) :—गसइ।

अवाद् गाहेर्वाहः ॥ २०५ ॥

अवात् परस्य गाहेर्वाह इत्यादेशो वा भवति। ओवाहइ। ओगाहइ।

अव (उपसर्ग) के आगे होने वाले गाह् धातु को वाह ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—ओवाहइ। (विकल्प–पक्ष में) :—ओगाहइ।

आरुहेश्चड-वलग्गौ ॥ २०६ ॥

आरुहेरेतावादेशौ वा भवतः। चडइ। वलग्गइ। आरुहइ।

आरुह् धातु को चड और वलग्ग ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—चडइ, वलग्गइ। (विकल्प–पक्ष में) :—आरुहइ।

मुहेर्गुम्म-गुम्मडौ ॥ २०७ ॥

मुहेरेतावादेशौ वा भवतः। गुम्मइ। गुम्मडइ। मुज्झइ।

मुह् धातु को गुम्म और गुम्मड ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—गुम्मइ, गुम्मडइ। (विकल्प–पक्ष में) : मुज्झइ।

दहेरहिऊलालुङ्खौ ॥ २०८ ॥

दहेरे तावादेशौ वा भवतः। अहिऊलइ। आलुङ्खइ। डहइ।

दह् धातु को (अहिऊल और आलुङ्ख ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—अहिऊलइ, आलुङ्खइ। (विकल्प–पक्ष में) :—डहइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रहो वल-गेण्ह-हर-पङ्ग-निरुवाराहिपच्चुआः ॥ २०९ ॥

ग्रहेरेते षडादेशा भवन्ति। वलइ। गेण्हइ। हरइ। पङ्गइ। निरुवारइ। अहिपच्चुअइ।

ग्रह् धातु को (बल, गेण्ह, हर, पङ्ग, निरुवार और अहिपच्चुअ) ऐसे ये छः आदेश होते हैं। उदा०—वलइ······अहिपच्चुअइ।

क्त्वा-तुम्-तव्येषु घेत् ॥ २१० ॥

ग्रहः क्त्वा-तुम्-तव्येषु घेत् इत्यादेशो भवति। क्त्वा। घेत्तूण। घेत्तुआण। क्वचिन्न भवति। गेण्हिअ। तुम्। घेत्तुं। तव्य। घेत्तव्वं।

क्त्वा, तुम् और तव्य (प्रत्यय आगे) होने पर, ग्रह् धातु को घेत् ऐसा आदेश होता है। उदा०—क्त्वा (प्रत्यय आगे होने पर):—घेत्तूण, घेत्तुआण; क्वचित् (यह घेत् आदेश) नहीं होता है; उदा०—गेण्हिअ। तुम् (प्रत्यय आगे होने पर):—घेत्तुं। तव्य (प्रत्यय आगे होने पर):—घेत्तव्वं।

वचो वोत् ॥ २११ ॥

वक्तेर्वोत् इत्यादेशो भवति क्त्वा-तुम्-तव्येषु। वोत्तूण। वोत्तुं। वोत्तव्वं।

क्त्वा, तुम् और तव्य (प्रत्यय आगे) होने पर, वक्ति (√वच्) धातु को वोत् ऐसा आदेश होता है उदा०—(क्त्वा प्रत्यय आगे होने पर):—वोत्तूण। (तुम् प्रत्यय आगे होने पर):—वोत्तुं। (तव्य प्रत्यय आगे होने पर):—वोत्तव्वं।

रुदभुजमुचां तोन्त्यस्य ॥ २१२ ॥

एषामन्त्यस्य क्त्वातुमतव्येषु तो भवति। रोत्तूण रोत्तुं रोत्तव्वं। भोत्तूण भोत्तुं भोत्तव्वं। मोत्तूण मोत्तुं मोत्तव्वं।

क्त्वा, तुम् और तव्य (ये प्रत्यय आगे) होने पर, (रुद्, भुज् और मुच्) इन (धातुओं) के अन्त्य वर्ण का त् होता है। उदा०—(रुद्).—रोत्तूण······रोत्तव्वं। (भुज्):—भोत्तूण······भोत्तव्व। (मुच्):—मोत्तूण······मोत्तव्वं।

दृशस्तेन ट्ठः ॥ २१३ ॥

दृशोन्त्यस्य तकारेण सह द्विरुक्तठकारो भवति। दट्ठूण। दट्ठुं। दट्ठव्वं।

दृश् धातु के अन्त्य वर्ण का, (क्त्वा, तुम् और तव्य प्रत्यय आगे होने पर), तकार के सह द्वित्वयुक्त ठ (=ट्ठ) होता है। उदा०—दट्ठूण··· दट्ठव्वं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ कृगो भूतभविष्यतोश्च ॥ २१४ ॥

कृगोऽन्त्यस्य आ इत्यादेशो भवति भूतभविष्यत्कालयोश्चकारात् क्त्वातुम्-तव्येषु च। काहीअ अकार्षीत् अकरोत् चकार वा। काहिइ करिष्यति कर्ता वा। क्त्वा। काऊण। तुम्। काउं। तव्य। कायव्वं।

भूतकाल और भविष्यकाल (इनके प्रत्यय आगे) होने पर, तथैव (सूत्र में से) चकार के कारण, क्त्वा, तुम् और तव्य (ये प्रत्यय आगे) होने पर, कृ धातु के अन्त्य वर्ण को आ ऐसा आदेश होता है। उदा० - (भूतकाल में):—काहीअ (यानी) अकार्षीत्, अकरोत् अथवा चकार (ऐसा अर्थ है)। (भविष्यकाल में)—काहिइ (यानी) करिष्यति किंवा कर्ता (ऐसा अर्थ है)। क्त्वा (प्रत्यय आगे होने पर):—काऊण। तुम् (प्रत्यय आगे होने पर):—काउं। तव्य (प्रत्यय आगे होने पर):—कायव्वं।

गमिष्यमासां छः ॥ २१५ ॥

एषामन्त्यस्य छो भवति। गच्छइ। इच्छइ। जच्छइ। अच्छइ।

(गम्, इष्, यम् और आस्) इन धातुओं के अन्त्य वर्ण का छ होता है। उदा०—गच्छइ.... अच्छइ।

छिदिभिदोन्दः ॥ २१६ ॥

अनयोरन्त्यस्य नकाराक्रान्तो दकारो भवति। छिन्दइ।

(छिद् और भिद्) इन धातुओं के अन्त्य वर्ण का नकार से युक्त दकार (=न्द) होता है। उदा०—छिन्दइ, भिन्दइ।

युधबुधगृधक्रुधसिधमुहां ज्झः ॥ २१७ ॥

एषामन्त्यस्य द्विरुक्तो झो भवति। जुज्झइ। बुज्झइ। गिज्झइ। कुज्झइ। सिज्झइ। मुज्झइ।

(युध्, बुध्, गृध्, क्रुध्, सिध् और मुह्) इन धातुओं के अन्त्य वर्ण का द्विरुक्त झ (=ज्झ) होता है। उदा०—जुज्झइ.... मुज्झइ।

रुधोन्धम्भौ च ॥ २१८ ॥

रुधोन्त्य स्यन्ध म्भ इत्येतौ चकारात् ज्झश्च भवति। रुन्धइ। रुम्भइ। रुज्झइ।

रुध् धातु के अन्त्य वर्ण को न्ध और म्भ ऐसे ये (दो) और (सूत्र में से) चकार के कारण ज्झ (ऐसे आदेश होते हैं)। उदा०—रुन्धइ....... रुज्झइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सद्पतोर्डः ॥ २१९ ॥

अनयोरन्त्य डो भवति । सडइ । पडइ ।

(सद् और पत्) इन धातुओं के अन्त्य वर्ण का ड होता है । उदा०—सडइ, पडइ ।

क्वथवर्धां ढः ॥ २२० ॥

अनयोरन्त्यस्य ढो भवति । कढइ । वड्ढइ [1]पवय-कलकलो । [2]परि-अड्ढइ लायण्णं । बहुवचनाद् वृधेः कृतगुणस्य वर्धेश्चाविशेषेण ग्रहणम् ।

(क्वथ् और वृध्) इन धातुओं के अन्त्य वर्ण का ढ होता है । उदा०—कढइ... ...लायण्णं । (सूत्र में वर्धाम् ऐसा) बहुवचन प्रयुक्त होने के कारण, जिसमें गुण किया हुआ है ऐसे (वृध् का यानी) वर्ध् का भी कुछ भी फर्क न करते ग्रहण होता है ।

वेष्टः ॥ २२१ ॥

वेष्ट वेष्टने इत्यस्य धातोः कगटडं इत्यादिना (२.७७) षलोपेन्त्यस्य ढो भवति । वेढइ । वेढिज्जइ ।

'वेष्ट वेष्टने' (यहाँ कहे हुए) वेष्ट् धातु में 'कगटड॰' इत्यादि सूत्र से ष् (व्यंजन) का लोप होने पर, (वेष्ट् के) अन्त्य वर्ण का ढ होता है । उदा०—वेढइ, वेढिज्जइ ।

समो ल्लः ॥ २२२ ॥

सम्पूर्वस्य वेष्टतेरन्त्य द्विरुक्तो लो भवति । संवेल्लइ ।

सम् (उपसर्ग) पूर्व में होने वाले वेष्टति (वेष्ट्) धातु के अन्त्य वर्ण का द्विरुक्त ल (= ल्ल) होता है । उदा०—संवेल्लइ ।

वोदः ॥ २२३ ॥

उदः परस्य वेष्टतेरन्त्यस्य ल्लो वा भवति । उव्वेल्लइ । उव्वेढइ ।

उद् (उपसर्ग) के आगे होने वाले वेष्टति (√वेष्ट्) धातु के अन्त्य वर्ण का ल्ल विकल्प से होता है । उदा०—उव्वेल्लइ । (विकल्प-पक्ष में) :—उव्वेढइ ।

स्विदां ज्जः ॥ २२४ ॥

स्विदिप्रकाराणामन्त्यस्य द्विरुक्तो जो भवति । सव्वं गसि[3]जिजरीए । संपज्जइ[4] । खिज्जइ[5] । बहुवचनं प्रयोगानुसरणार्थम् ।

---

१. वर्धते प्लवग-कलकलः । २. परिवर्धते लावण्यम् ।
३. सर्वांग-स्वेदनशीलायाः । ४. सं + पद् । ५. √खिद् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्विद् (धातु के) प्रकार के धातुओं के अन्त्य वर्ण का द्विरुक्त ज (= ज्ज) होता है। उदा०—सव्वंग… …खिज्जइ। (सूत्र में स्विदां ऐसा) बहुवचन, (वाङ्मयीन) प्रयोग के अनुसरण दिखाने के लिए है।

व्रजनृतमदां च्चः ॥ २२५ ॥

एषामन्त्यस्य द्विरुक्तश्चो भवति। वच्चइ। नच्चइ। मच्चइ।

(व्रज्, नृत् और मद्) इन धातुओं के अन्त्य वर्ण का द्विरुक्त च (= च्च) होता है। उदा०—वच्चइ… …मच्चइ।

रुदनमोर्वः ॥ २२६ ॥

अनयोरन्त्यस्य वो भवति। रुवइ रोवइ। नवइ।

(रुद् और नम्) इन धातुओं के अन्त्य वर्ण का व होता है। उदा०—रुवइ… …नवइ।

उद्विजः ॥ २२७ ॥

उद्विजतेरन्त्यस्य वो भवति। उव्विवइ। [1]उव्वेवो।

उद्विजति (उद् + विज्) धातु के अन्त्य वर्ण का व होता है। उदा०—उव्विवइ, उव्वेवो।

खादधावोर्लुक् ॥ २२८ ॥

अनयोरन्त्यस्य लुग् भवति। खाइ खाअइ। खाहिइ। खाउ। धाइ। धाहिइ। धाउ। बहुलाधिकाराद् वर्तमाना-भविष्यद्-विध्याद्येकवचन एव भवति। तेनेह न भवति। खादन्ति। धावन्ति। क्वचिन्न भवति। धावइ[2] पुरओ।

(खाद् और धाव्) इन धातुओं के अन्त्य वर्ण का लोप होता है। उदा०—खाइ… …धाउ। बहुल का अधिकार होने से, वर्तमान काल, भविष्यकाल और विधि इत्यादि में से एकवचन में ही (ऐसा अन्त्य वर्ण का लोप) होता है; इसलिए यहाँ (= आगे दिए उदाहरणों में ऐसा लोप) नहीं होता है। उदा०—खादन्ति, धावन्ति। क्वचित् (एकवचन में ऐसा लोप) नहीं होता है। उदा०-धावइ पुरओ।

सृजो रः ॥ २२९ ॥

सृजो धातोरन्त्यस्य रो भवति। निसिरइ[3]। वोसिरइ[4]। वोसिरामि[4]।

---

१. उद्वेग।
२. धावति पुरतः।
३. √नि + सृज्।
४. √व्युद् + सृज्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सृज् धातु के अन्त्य वर्ण का र होता है। उदा०—निसिरइ··· ···वोसिरामि।

शकादीनां द्वित्वम् २३० ॥

शकादीनामन्त्यस्य द्वित्वं भवति। शक् सक्कइ। जिम् जिम्मइ। लग् लग्गइ। मग् मग्गइ। कुप् कुप्पइ। नश् नस्सइ। अट् परिअट्टइ[1]। लुट् पलोट्टइ[2]। तुट् तुट्टइ। नट् नट्टइ। सिव सिव्वइ इत्यादि।

शक् इत्यादि धातुओं के अन्त्य वर्ण का द्वित्व होता है। उदा० - शक् सक्कइ ··· ···सिव् सिव्वइ, इत्यादि।

स्फुटिचलेः ॥ २३१ ॥

अनयोरन्त्यस्य द्वित्वं वा भवति। फुट्टइ फुडइ। चल्लइ चलइ।

(स्फुट् और चल्) इन धातुओं के अन्त्य वर्ण का द्वित्व विकल्प से होता है। उदा०—फुट्टइ······चलइ।

प्रादेर्मीलेः २३२ ॥

प्रादेः परस्य मीलेरन्त्यस्य द्वित्वं वा भवति। पमिल्लइ[3] पमीलइ। निमिल्लइ निमीलइ। सम्मिल्लइ सम्मीलइ। उम्मिल्लइ उम्मीलइ। प्रादेरिति किम्। मीलइ।

उपसर्ग के (प्रादेः) आगे होनेवाले मील् धातु के अन्त्य (व्यञ्जन) का द्वित्व विकल्प से होता है। उदा०—पमिल्लइ······उम्मीलइ। उपसर्ग के आगे होनेवाले (मील् धातु के) ऐसा क्यों कहा है? (कारण पीछे उपसर्ग न हो, तो मील् के अन्त्य वर्ण का द्वित्व नहीं होता है। उदा० - -) मीलइ।

उवर्णस्यावः २३३ ॥

धातोरन्त्यस्योवर्णस्य अवादेशो भवति। ह्नुङ् निण्हवइ[4]। हु निहवइ[5]। च्युङ् चवइ। रु रवइ। कु कवइ। सू सवइ पसवइ[6]।

धातु के अन्त्य उ-वर्ण को अव ऐसा आदेश होता है। उदा०—ह्नु (ह्नुङ्) निण्हवइ······पसवइ।

ऋवर्णस्यारः ॥ २३४ ॥

धातोरन्त्यस्य ऋवर्णस्य अरादेशो भवति। करइ[7]। धरइ। मरइ। वरइ।

---

१. √परि + अट्। २. √प्र + लुट्।

३. क्रमसेः—प्रमील्। निमील्। संमील्। उन्मील्। ४. √नि + ह्नु।

५. √नि + हु। ६. प्र + सू।

७. क्रमसेः—कृ। धृ। मृ। वृ। वृ। सृ। हृ। तृ। जृ। जृ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सरइ । हरइ । तरइ । जरइ ।

धातु के अन्त्य ऋ-वर्ण को अर आदेश होता है । उदा०—करइ······जरइ ।

वृषादीनामरिः ॥ २३५ ॥

वृष इत्येवं प्रकाराणां धातूनां ऋवर्णस्य अरिः इत्यादेशो भवति । वृष वरिसइ । कृष् करिसइ । मृष् मरिसइ । हृष् हरिसइ । येषामरिरादेशो दृश्यते ते वृषादयः ।

वृष् इत्यादि प्रकार के धातुओं के ऋ-वर्ण को अरि ऐसा आदेश होता है । उदा०—वृष् वरिसइ······हरिसइ । जिन धातुओं में अरि ऐसा आदेश दिखाई देता है, वे वृष् इत्यादि प्रकार के धातु होते हैं ।

रुषादीनां दीर्घः ॥ २३६ ॥

रुष इत्येव प्रकाराणां धातूनां स्वरस्य दीर्घो भवति । रूसइ[1] । तूसइ । सूसइ । दूसइ । पूसइ । सीसइ । इत्यादि ।

रुष् इत्यादि प्रकार के धातुओं के (ह्रस्व) स्वर का दीर्घ (स्वर) होता है । उदा०—रूसइ······सीसइ, इत्यादि ।

युवर्णस्य गुणः ॥ २३७ ॥

धातोरिवर्णस्य च क्ङित्यपि गुणो भवति । जेऊण[2] । नेऊण[3] । नेइ[3] । नेन्ति[3] । उड्डेइ[4] । उड्डेन्ति[4] । मोत्तूण[5] । सोऊण[6] । क्वचिन्न भवति[7] । नीओ । उड्डीणो[8] ।

धातु के इ-वर्ण का, क्ङित् प्रत्यय आगे होने पर भी, गुण होता है । उदा०—जेऊण······सोऊण । क्वचित् (ऐसा गुण) नहीं होता है । उदा०—नीओ, उड्डीणो ।

स्वराणां स्वराः ॥ २३८ ॥

धातुषु स्वराणां स्थाने स्वरा बहुलं भवन्ति । हवइ[9] हिवइ । चिणइ चुणइ । सद्दहणं सद्दहाणं । धावइ धुवइ । रुवइ रवइ । क्वचिन्नित्यम् । देइ[10] । लेइ । विहेइ । नासइ । आर्षे । बेमि[11] ।

धातुओं में स्वरों के स्थान पर (अन्य) स्वर बहुलत्व से आते हैं । उदा०—

---

१. क्रमसेः—रुष् । तुष् । शुष् । दुष् । पुष् । शिष् । २. √जि ।
३. √नी । ४. √उड्डी । ५. √मुच् । ६. श्रु ।
७. नीत ८. उड्डीन । ९. क्रमसेः—√भू । √चि । श्रद्धान । √धाव् । √रुद् ।
१०. क्रमसेः—√दा । √ला । √विभी । √नश् । ११. ब्रू ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुवइ······रोवइ। क्वचित् (ये अन्य स्वर) नित्य आते हैं। उदा०—देइ······नासइ। आर्ष प्राकृत में:—बेमि।

व्यञ्जनाद्दन्ते ॥ २३९ ॥

व्यञ्जनान्ताद् धातोरन्ते अकारो भवति। भमइ[1]। हसइ। कुणइ। चुम्बइ। भणइ। उवसमइ। पावइ। सिञ्चइ। रुन्धइ। मुसइ। हरइ। करइ। शबादीनां च प्रायः प्रयोगो नास्ति।

व्यञ्जनान्त धातु के अन्त में अकार आता है। उदा०—भमइ······करइ। परंतु शप् इत्यादि धातुओं का प्रयोग प्रायः (दिखाई) नहीं देता है।

स्वरादनतो वा ॥ २४० ॥

अकारान्तवर्जिताद् स्वरान्ताद् धातोरन्ते अकारागमो वा भवति। पाइ[2] पाअइ। धाइ धाअइ। जाइ जाअइ। झाइ झाअइ। जम्भाइ जम्भाअइ। उव्वाइ उव्वाअइ। मिलाइ मिलाअइ। विक्केइ विक्केअइ। होऊण होइऊण। अनत इति किम्। चिइच्छई[3]। दुगुच्छई।

अकारान्त धातु छोड़ कर, इतर स्वरान्त धातु के अन्त में अकार का आगम बिकल्प होता है। उदा०—पाइ··· ···होइ ऊण। अकारान्त धातु छोड़ कर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अकारान्त धातु के अन्त में ऐसा अकार का आगम नहीं होता है। उदा०—) चिइच्छइ, दुगुच्छइ।

चि-जि-श्रु-हु-स्तु-लू-पू-धूगां णो ह्रस्वश्च ॥ २४१ ॥

च्यादीनां धातूनामन्ते णकारागमो भवति एषां स्वरस्य च ह्रस्वो भवति। चि चिणइ। जिणइ। श्रु सुणइ। हु हुणइ। स्तु थुणइ। लू लुणइ। पू पुणइ। धुग् धुणइ। बहुलाधिकारात् क्वचिद् विकल्पः। उच्चिणइ[4] उच्चेइ। जेऊण जिणिऊण। जयइ जिणइ। सोऊण सुणिऊण।

चि इत्यादि (यानी चि, जि, श्रु, हु, स्तु, लू, पू और धू इन) धातुओं के अन्त मे णकार का आगम होता है और इन (धातुओं) के (दीर्घ) स्वर का ह्रस्व (स्वर) होता है। उदा०—चि चिणइ··· ···धुणइ। बहुल का अधिकार होने से, क्वचित् विकल्प होता है। उदा०—उच्चिणइ··· ···सुणिऊण।

---

१. क्रमसेः—भ्रम्। हस्। कृ-कुण। चुम्ब्। भण्। उपशम्। प्राप्। सिच्-सिञ्च्। रुध्-रुन्ध्। मुष्। हृ-हर्। कृ-कर्।

२. क्रम से :—पा। धाव्-धा। या। ध्यै। जृम्भ्। उद्वा। म्लै। बिक्री। भू-हो।

३. क्रम से :—चिकित्सति। जुगुप्सति। ४. क्रम से :—उच्चि। जि। जि। श्रु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ना वा कर्मभावे व्वः क्यस्य च लुक् ॥ २४२ ॥

च्यादीनां कर्मणि भावे च वर्तमानानामन्ते द्विरुक्तो वकारागमो वा भवति, तत्सन्नियोगे च क्यस्य लुक् । चिव्वइ चिणिज्जइ । जिव्वइ जिणिज्जइ । सुव्वइ सुणिज्जइ । हुव्वइ हुणिज्जइ । थुव्वइ थुणिज्जइ । लुव्वइ लुणिज्जइ । पुव्वइ पुणिज्जइ । धुव्वइ । धुणिज्जइ । एवं भविष्यति । चिव्विहिइ । इत्यादि ।

कर्मणि और भावे (रूपों में) होने वाले चि इत्यादि (यानी चि, जि, श्रु, हु, स्तु, लू, पू धू इन) धातुओं के अन्त में द्विरुक्त वकार का (यानी व्व का आगम विकल्प से होता है, और उस (व्व) के सान्निध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है । उदा—चिव्वइ··· ···धुणिज्जइ । इसी प्रकार ही भविष्य काल में (रूप होते हैं । उदा०—) चिव्विहिइ, इत्यादि ।

म्मश्चेः ॥ २४३ ॥

चिगः कर्मणि भावे च अन्ते संयुक्तो मो वा भवति, तत्सन्नियोगे क्यस्य च लुक् । चिम्मइ । चिव्वइ । चिणिज्जइ भविष्यति । चिम्मि हिइ । चिव्वि हिइ । चिणिहिइ ।

कर्मणि और भावे (रूपों में) होने वाले चि (धातु) के अन्त में संयुक्त म (= म्म) विकल्प से आता है, और उस (म्म) के सान्निध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है । उदा०—चिम्मइ··· ··· चिणिज्जइ । भविष्यकाल में (उदा०–) :—चिम्मिहिइ··· ···चिणिहिइ ।

हन्खनोन्त्यस्य ॥ २४४ ॥

अनयोः कर्म भावेन्त्यस्य द्विरुक्तो मो वा भवति, तत्सन्नियोगे क्यस्य च लुक् । हम्मइ हणिज्जइ । खम्मइ खणिज्जइ । भविष्यति । हम्मिहिइ । खम्मिहिइ खणिहिइ । बहुलाधिकाराद्धन्तेः कर्तर्यपि । हम्मइ हन्तीत्यर्थः । क्वचिन्न भवति । हन्तव्वं । हन्तूण । हओ ।

कर्मणि और भावे (रूपों में) होने वाले हन् और खन् इन धातुओं के अन्त में द्विरुक्त म (= म्म) विकल्प से आता है, और उस (म्म) के सान्निध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है । उदा०—हम्मइ··· ··· खणिज्जइ । भविष्य काल में (उदा०–) :—हम्मिहिइ··· ···खणिहिइ । बहुल का अधिकार होने से, हन्ति (√हन्) धातु के कर्तरि रूप में भी (ऐसा म्म आता है । उदा०—) हम्मइ यानी हन्ति (= वध करता है) ऐसा अर्थ है । क्वचित् (ऐसा म्म) नहीं होता है । उदा०—हन्तव्वं··· ···हओ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्भो दुह-लिह-वह-रुधामुच्चातः ॥ २४५ ॥

दुहादीनामन्त्यस्य कर्मभावे द्विरुक्तो भो वा भवति, तत्सन्नियोगे क्यस्य च लुक्, वहेरकारस्य च उकारः। दुब्भइ दुहिज्जइ। लिब्भइ लिहिज्जइ। वुब्भइ वहिज्जइ। रुब्भइ रुन्धिज्जइ। भविष्यति। दुब्भिहिइ दुहिहिइ। इत्यादि।

कर्मणि और भावे (रूपों) में, दुह् इत्यादि (यानी) दुह्, लिह्, वह् और रुध्) धातुओं के अन्त्य वर्ण का द्विरुक्त भ (= ब्भ) विकल्प से होता है, और उस (ब्भ) के सांनिध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है, और वह्—(धातु) में से अकार का उकार होता है। उदा०—दुब्भइ……रुन्धिज्जइ। भविष्यकाल में (उदा०—दुब्भिहिइ, दुहिहिइ इत्यादि।

दहो ज्झः ॥ २४६ ॥

दहोन्त्यस्य कर्मभावे द्विरुक्तो झो वा भवति, तत्सन्नियोगे क्यस्य च लुक्। डज्झइ डहिज्जइ। भविष्यति। डज्झिहिइ डहिहिइ।

कर्मणि और भावे रूपों में, दह् धातु के अन्त्यवर्ण का द्विरुक्त झ (= ज्झ) विकल्प से होता है, और उस (ज्झ) के सांनिध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—डज्झइ, डहिज्जइ। भविष्यकाल मे (उदा०):-डज्झिहिइ, डहिहिइ।

बन्धो न्धः ॥ २४७ ॥

बन्धेर्धातोरन्त्यस्य न्ध इत्यवयवस्य कर्मभावे ज्झो वा भवति, तत्सन्नियोगे क्यस्य च लुक्। बज्झइ बन्धिज्जइ। भविष्यति। बज्झिहिइ बन्धिहिइ।

कर्मणि और भावे रूपों में, बन्ध् धातु के अन्त्य न्ध् अवयव का ज्झ विकल्प से होता है और उस (ज्झ) के सांनिध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—बज्झइ बन्धिज्जइ। भविष्यकाल में (उदा०):—बज्झिहिइ, बन्धिहिइ।

समनूपाद् रुधेः ॥ २४८ ॥

समनूपेभ्यः परस्य रुधेरन्त्यस्य कर्मभावे ज्झो वा भवति, तत्संनियोगे क्यस्य च लुक्। संरुज्झइ। अणुरुज्झइ। उवरुज्झइ। पक्षे। संरुन्धिज्जइ। अणुरुन्धिज्जइ। उवरुन्धिज्जइ। भविष्यति। संरुज्झिहिइ संरुन्धिहिइ। इत्यादि।

कर्मणि और भावे रूपों में, सम्, अनु, (अथवा) उप (इन उपसर्गों) के आगे होनेवाले रुध् धातु के अन्त्य वर्ण का ज्झ विकल्प से होता है, और उस (ज्झ) के सांनिध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—संरुज्झइ……उवरुज्झइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(विकल्प—) पक्ष में:—संरुन्धिज्जइ······उवरुन्धिज्जइ। भविष्यकाल में:—संरुज्झिहिइ, संरुन्धिहिइ, इत्यादि।

गमादीनां द्वित्वम् ॥ २४९ ॥

गमादीनामन्त्यस्य कर्मभावे द्वित्वं वा भवति, तत्सन्नियोगे क्यस्य च लुक्। गम् गम्मइ गमिज्जइ। हस् हस्सइ हसिज्जइ। भण् भण्णइ भणिज्जइ। छुप् छुप्पइ छुविज्जइ। रुदनमोर्वः (४.२२६) इति कृतवकारादेशो रुदिरत्र पठ्यते। रुव् रुव्वइ रुविज्जइ। लभ् लब्भइ लहिज्जइ। कथ् कत्थइ कहिज्जइ। भुज् भुज्जइ भुञ्जिज्जइ। भविष्यति। गम्मिहिइ गमिहिइ। इत्यादि।

कर्मणि और भावे रूपों में, गम् इत्यादि धातुओं के अन्त्य वर्ण का विकल्प से द्वित्व होता है, और उस (द्वित्व) के सांनिध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—गम् गम्मइ······छुविज्जइ। 'रुदनमोर्वः' सूत्र से जिसमें वकार आदेश किया हुआ है ऐसा रुद् धातु यहाँ लेना है। रुव् रुव्वइ······भुञ्जिज्जइ। भविष्यकाल में:—गम्मिहिइ, गमिहिइ, इत्यादि।

हृ-कृ-तृ-ज्रामीरः ॥ २५० ॥

एषामन्त्यस्य ईर इत्यादेशो वा भवति तत्सन्नियोगे च क्य लुक्। हीरइ हरिज्जइ। कीरइ करिज्जइ। तीरइ तरिज्जइ। जीरइ जरिज्जइ।

(कर्मणि और भावे रूपों में, हृ, कृ, तृ और जृ) इन धातुओं के अन्त्य वर्ण को ईर ऐसा आदेश विकल्प से होता है। और उस (ईर) के सांनिध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—हीरइ······जरिज्जइ।

अर्जेर्विढप्पः ॥ २५१ ॥

अन्त्यस्येति निवृत्तम्। अर्जेर्विढप्प इत्यादेशो वा भवति, तत्सन्नियोगे क्यस्य च लुक्। विढप्पइ। पक्षे। विढविज्जइ अज्जिज्जइ।

(इस सूत्र में अब) अन्त्यस्य (=अन्त्य वर्ण का) इस शब्द की निवृत्ति हुई है। (कर्मणि और भावे रूपों में) अर्ज् धातु को विढप्प ऐसा आदेश विकल्प से होता है, और उसके सांनिध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—विढप्पइ। (विकल्प–) पक्ष में:—विढविज्जइ, अज्जिज्जइ।

ज्ञो णव्व-णज्जौ ॥ २५२ ॥

जानातेः कर्मभावे णव्व णज्ज इत्यादेशौ वा भवतः, तत्सन्नियोगे क्यस्य च लुक्। णव्वइ णज्जइ। पक्षे। जाणिज्जइ मुणिज्जइ। म्नज्ञोर्णः (२.४२) इति णादेशे तु। णाइज्जइ। नञ् पूर्वकस्य। अणाइज्जइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्मणि और भावे रूपों में, जानाति (√ज्ञा) धातु को णव्व और णज्ज ऐसे ये आदेश विकल्प से होते हैं, और उनके सांनिध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—णव्वइ, णज्जइ। (विकल्प—) पक्षमें:—जाणिज्जइ, मुणिज्जइ। 'म्नज्ञोर्णः' सूत्र से (ज्ञा धातु में ज्ञ इस संयुक्त व्यञ्जन को) ण आदेश होने पर तो णाइज्जइ (ऐसा रूप होता है)। नञ् (अव्यय) पूर्व में होने वाले (ज्ञा धातु का) अणाइज्जइ (ऐसा रूप होता है)।

व्याहृगेर्वाहिप्पः ।। २५३ ।।

व्याहरतेः कर्मभावे वाहिप्प इत्यादेशो वा भवति, तत्सन्नियोगे क्यस्य च लुक्। वाहिप्पइ। वाहरिज्जइ।

कर्मणि और भावे रूपों में, व्याहरति (√व्याहृ) धातु को वाहिप्प ऐसा आदेश विकल्प से होता है, और उसके सांनिध्य में क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—वाहिप्पइ। (विकल्प—पक्ष में) वाहरिज्जइ।

आरभेराढप्पः ।। २५४ ।।

आङ् पूर्वस्य रभेः कर्मभावे आढप्प इत्यादेशो वा भवति क्यस्य च लुक्। आढप्पइ। पक्षे। आढवीअइ।

कर्मणि और भावे रूपों में, आ (उपसर्ग) पूर्व में होनेवाले रभ् धातु को आढप्प ऐसा आदेश विकल्प से होता है, और (उसके सांनिध्य में) क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—आढप्पइ। (विकल्प—) पक्ष में:—आढवीअइ।

स्निहसिचोः सिप्पः ।। २५५ ।।

अनयोः कर्मभावे सिप्प इत्यादेशो भवति क्यस्य च लुक्। सिप्पइ। स्निह्यते सिच्यते वा।

कर्मणि और भावे रूपों में (स्निह् और सिच्) इन धातुओं को सिप्प ऐसा आदेश होता है, और (उसके सानिध्य में) क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—सिप्पइ (यानी) स्निह्यते अथवा सिच्यते (ऐसा अर्थ है)।

ग्रहेर्घेप्पः ।। २५६ ।।

ग्रहेः कर्मभावे घेप्प इत्यादेशो वा भवति क्यस्य च लुक्। घेप्पइ। गिण्हिज्जइ।

कर्मणि और भावे रूपों में, ग्रह् धातु को घेप्प ऐसा आदेश विकल्प से होता है, और (उसके सांनिध्य में) क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—घेप्पइ। (विकल्प—पक्ष में) गिण्हिज्जइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्पृशेश्छिप्पः ॥ २५७ ॥

स्पृशतेः कर्मभावे छिप्पादेशो वा भवति क्यलुक् च। छिप्पइ। छिविज्जइ।

कर्मणि और भावे रूपों में, स्पृशति (√स्पृश्) धातुको छिप्प ऐसा आदेश विकल्प से होता है, और (उसके सांनिध्य में) क्य (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—छिप्पइ। (विकल्प--पक्ष में):--छिविज्जइ।

क्तेनाप्फुण्णादयः ॥ २५८ ॥

अप्फुण्णादयः शब्दाः आक्रमिप्रभृतीनां धातूनां स्थाने क्तेन सह वा निपात्यन्ते। अप्फुण्णो आक्रान्तः। उक्कोसं उत्कृष्टम्। फुडं स्पष्टम्। वोलीणो अतिक्रान्तः। वो सट्टो विकसितः। निसुट्टो निपातितः। लुग्गो रुग्णः। ल्हिक्को नष्टः। पम्हुट्ठो प्रमृष्टः प्रमुषितो वा। विढत्तं अर्जितम्। छित्तं स्पृष्टम्। निमिअं स्थापितम्। चक्खिअं आस्वादितम्। लुअं लूनम्। जढं त्यक्तम्। झोसिअं क्षिप्तम्। निच्छूढं उद्वृत्तम्। पल्हत्थं पलोट्टं च पर्यस्तम्। ही समणं हेषितम्। इत्यादि।

अप्फुण्ण इत्यादि शब्द, आक्रम् इत्यादि धातुओं के स्थान पर, क्त (प्रत्यय) के सह निपात स्वरूप में विकल्प से आते हैं। अप्फुण्णो आक्रान्तः··· ··· ···हेषितम्, इत्यादि।

धातवोर्थान्तरेपि ॥ २५९ ॥

उक्तादर्थादर्थान्तरेपि धातवो वर्तन्ते। बलिः प्राणने पठितः खादनेपि वर्तते। बलइ खादति प्राणनं करोति वा। एवं कलिः संख्याने संज्ञानेपि। कलइ जानाति संख्यानं करोति वा। रिगिर्गतौ प्रवेशेपि। रिगइ प्रविशति गच्छति वा। काङ्क्षतेर्वम्फ आदेशः प्राकृते। वम्फइ। अस्यार्थः इच्छति खादति वा। फक्कतेस्थक्क आदेशः। थक्कइ नीचां गतिं करोति विलम्बयति वा। विलप्युपालम्भ्यो र्झङ्ख आदेशः। झङ्खइ। विलपति उपालभते भाषते वा। वा। एवं पडिवालेइ प्रतीक्षते रक्षति वा। केचित् कैश्चिदुपसर्गैर्नित्यम्। पहरइ युध्यते। संहरइ संवृणोति। अणुहरइ सदृशी भवति। नीहरइ पुरीषोत्सर्गं करोति। विहरइ क्रीडति। आहरइ खादति। पडिहरइ पुनः पूरयति। परिहरइ त्यजति। उवहरइ पूजयति वाहरइ आह्वयति। पवसइ देशान्तरं गच्छति। उच्चुपइ चटति। उल्लुहइ निःसरति।

उक्त (= कहे हुए) अर्थों से भिन्न अर्थों में भी धातु (प्राकृत में प्रयुक्त) होते हैं। उदा०—बल् (बलि) धातु प्राणन अर्थ में कहा हुआ है; वह खादन अर्थ में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी होता है। (अतः) बलइ (यानी) खादति (= खाता है) अथवा प्राणनं करोति (= श्वासोच्छ्वास करता है)। इसी प्रकार, कल् (कलि) धातु संख्यान (= गणना) तथैव संज्ञान (अर्थों) में भी होता है। उदा०—कलइ (यानी) जानाति (= जानता है) अथवा संख्यानं करोति (= गणना करता है)। रिग् (रिगि) धातु गति (तथैव) प्रवेश (इन अर्थों में) में भी होता है। उदा०—रिगइ (यानी) प्रविशति (= प्रवेश करता है) अथवा गच्छति (= जाता है)। प्राकृत में काङ्क्षति (√काङ्क्ष) धातु को वम्फ आदेश होता है। वम्फइ; इसका अर्थ इच्छति (= इच्छा करता है) अथवा खादति (= खाता है) (ऐसा होता है)। (प्राकृत में) फक्कति (√फक्क्) धातु को थक्क आदेश होता है। थक्कइ (यानी) नीचां गतिं करोति (= नीचे गमन करता है) अथवा विलम्बयति (= विलम्ब करता है) (ऐसा अर्थ होता है)। (प्राकृत में) विलप् (विलपि) और उपालम्भ् (उपालम्भि) इन धातुओं को झङ्ख ऐसा आदेश होता है। झङ्खइ (यानी) विलपति (= विलाप करता है), उपालभते (निन्दा करता है), अथवा भाषते (= बोलता है) (ऐसे अर्थ होते हैं)। इसी प्रकार :—पडिवालेइ (यानी) प्रतीक्षते (= प्रतीक्षा करता) अथवा रक्षति (= रक्षण करता है) (ऐसे अर्थ होते हैं)। कुछ (विशिष्ट) उपसर्गों से युक्त होने वाले कुछ (विशिष्ट) धातु (विशिष्ट ऐसे) निश्चित अर्थ में (प्राकृत में होते हैं)। उदा०—पहरइ (यानी) युध्यते (= युद्ध करता है); संहरति (यानी) संवृणोति (= ढकता); अणुहरइ (यानी) सदृशीभवति (= सदृश होता है); नीहरइ (यानी) पुरीषोत्सर्गं करोति (= मलोत्सर्ग करता है); विहरइ (यानी) क्रीडति (= खेलता है); आहरइ (यानी) खादति (= खाता है); पडिहरइ (यानी) पुनः पूरयति (= पुनः पूर्ण करता है); परिहरइ (यानी) त्यजति (= त्याग करता है); उवहरइ (यानी) पूजयति (= पूजा करता है); वाहरइ (यानी) आह्वयति (= बुलाता है); पवसइ (यानी) देशान्तरं गच्छति (= अन्य देश में जाता है); उच्चुणइ (यानी) चटति (= चाटता है); उल्लुहइ (यानी) निःसरति (= बाहर निकलता) है।

तो दोनादौ शौरसेन्यामयुक्तस्य ॥ २६० ॥

शौरसेन्यां भाषायामनादावपदादौ वर्तमानस्य तकारस्य दकारो भवति, न चेदसौ वर्णान्तरेण संयुक्तो भवति। तदो पूरिदपदिञ्ञेण[1] मारुदिणा मन्तिदो। एतस्मात् एदाहि एदाहो। अनादाविति किम्। तधा करेध जधा[2] तस्स

१. ततः पूरितप्रतिज्ञेन मारुतिना मन्त्रितः।

२. तथा कुरुत यथा तस्य राज्ञः अनुकम्पनीया भवामि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राइणो अणुकम्पणीआ भोमि। अयुक्तस्येति किम्। [1]मत्तो। अय्यउत्तो। असम्भाविद सक्कारं। हला स उन्तले।

शौरसेनी भाषा में, अनादि होने वाले (यानी) पद के आदि न होने वाले तकार का, यदि वह (तकार) अन्य वर्णों से संयुक्त न हो, तो (उस तकार का) दकार होता है। उदा०—तदो... ...एदादो। अनादि (होने वाले तकार का) ऐसा क्यों कहा है? (कारण यदि तकार पद का आदि हो, तो उसका दकार नहीं होता है। उदा०:—) तधा... ...भोमि। असंयुक्त (तकार का) ऐसा क्यों कहा है? (कारण तकार संयुक्त हो, तो उसका दकार नहीं होता है। उदा०—) मत्तो ... ...सउन्तले।

अधः क्वचित् ॥ २६१ ॥

वर्णान्तरस्याधो वर्तमानस्य तस्य शौरसेन्यां दो भवति। क्वचिल्लक्ष्यानुसारेण। [2]महन्दो निच्चिन्दो। अन्देउरं।

शौरसेनी भाषा में, (एकाध) अन्य वर्ण के अनन्तर होने वाले (यानी संयुक्त होने वाले) तकार का द होता है। (सूत्र में से) क्वचित् (शब्द का अभिप्राय है कि उपलब्ध) उदाहरणों के अनुसार। उदा०—महन्दो... ...अन्देउरं।

वाऽऽदेस्तावति ॥ २६२ ॥

शौरसेन्यां तावच्छब्दे आदेस्तकारस्य दो वा भवति। दाव। ताव।

शौरसेनी भाषा में, तावत् शब्द मे आदि (होने वाले) तकार का द विकल्प से होता है। उदा०—दाव, ताव।

आ आमन्त्र्ये सौ वेनो नः ॥ २६३ ॥

शौरसेन्यामिनो नकारस्य आमन्त्र्ये सौ परे आकारो वा भवति। भो कञ्चुइआ[3]। सुहिआ। पक्षे। भो [4]तवस्सि। भो भणस्सि।

शौरसेनी भाषा में, (शब्द के अन्त्य) इन् में से नकार का सम्बोधन अर्थ में होने वाले) सि (प्रत्यय) आगे होने पर, विकल्प से आकार होता है। उदा०—भोकञ्चुइआ, सुहिआ। (विकल्प—) पक्ष में :—पक्ष में :—भो तवस्सि, भो भणसि।

---

१. क्रम से :—मत्त। आर्यपुत्र। असम्भावित—सत्कारम्। हला शकुन्तले।

२. क्रम से :—महत्। निश्चिन्त। अन्तःपुर।

३. क्रम से :—भोः कञ्चुकिन्। सुखिन्।

४. क्रम से :—भो तपस्विन्। भो मनस्विन्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मो वा ॥ २६४ ॥

शौरसेन्यामामन्त्र्ये सौ परे नकारस्य मो वा भवति। भो[1] रायं। भो विअयवम्मं। सुकम्मं भयवं कुसुमा उह। भयवं तित्थं पवत्तेह। पक्षे। [2]सयल-लोअ-अन्ते आरि भयव हुदवह।

शौरसेनी भाषा में, सम्बोधनार्थी सि (प्रत्यय) आगे होने पर, (शब्द में से अन्त्य) नकार का म् विकल्प से होता है। उदा०—भो रायं··· ···पवत्तेह। (विकल्प—) पक्ष में :–सयल··· ···हुदवह।

भवद्-भगवतोः ॥ २६५ ॥

आमन्त्र्य इति निवृत्तम्। शौरसेन्यामनयोः सौ परे नस्य मो भवति। किं [3]एत्थभवं हिदएग चिन्तेदि। एदु भवं। समणे भगवं महावीरे। पज्जलिदो भयवं हुदासणो। क्वचिदन्यत्रापि। मघवं पाग[4] सासणे। संपाइ[5] अवं सीसो। कयवं[6] करेमि काहं च।

आमन्त्र्ये (= संबोधन अर्थ में) इस (सूत्र ४·२६४ में से) पद की (इस सूत्र में) निवृत्ति हुई है। शौरसेनी भाषा में, (भवत् और भगवत्) इन शब्दों के आगे सि (प्रत्यय) होने पर, न का म होता है। उदा०––किं एत्थ······हुदासणो। क्वचित् इतरत्र यानी अन्य शब्दों में भी (ऐसा म् होता है। उदा०––) मघवं······काहं च।

न वा र्यो य्यः ॥ २६६ ॥

शौर्यसेन्यां र्यस्य स्थाने य्यो वा भवति। अय्य उत्त[7] पय्याकूलीकदम्हि। सुय्यो। पक्षे। [8]अज्जो। पज्जाउलो। कज्जपरवसो।

---

१. क्रम से :––भो राजन्। भो विजयवर्मन्। सुकर्मन्। भगवन् कुसुमायुध। भगवन् तीर्थं प्रवर्तयत।

२. सकल लोक-अन्तश्चारिन् भगवन् हुतवह।

३. क्रम से :––किं अत्र भवान् सहृयेन चिन्तयति। ऐतु भवान्। श्रमणः भगवान् महावीरः। प्रज्वलितः भगवान् हुताशनः।

४. मघवान् पाकशासनः।

५. सम्पादितवान् शिष्य।

६. कृतवान्।

७. क्रमसेः––आर्यपुत्र पर्याकलीकृता अस्मि। सूर्य।

८. कमसेः––आर्य। पर्याकुल। कार्यपरवश।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शौरसेनी भाषा में, र्य के स्थान पर य्य विकल्प से होता है। उदा०--अय्य उत्त......सुय्यो। (विकल्प-) पक्ष में:--अज्जो......परवसो।

थो धः ॥ २६७ ॥

शौरसेन्यां थस्य धो वा भवति। कधेदि [1]कहेदि। णाधो णाहो। कधं कहं। राजपधो राजपहो। अपदादावित्येव। [2]थामं। थेओ।

शौरसेनी भाषा में, (पद के आदि न होनेवाले) थ का ध विकल्प से होता है। उदा०--कधेदि......राजपहो। पदके आदि न होनेवाले (थ का ही ध होता है, पद के प्रारम्भ में होनेवाले थ का ध नहीं होता है। उदा०--) थामं, थेओ।

इहहचोर्हस्य ॥ २६८ ॥

इह शब्द सम्बन्धिनो मध्यमस्येत्थाहचौ [३.१४३] इति विहितस्य हचश्च हकारस्य शौरसेन्यां धो वा भवति। [3]इध। होध। परित्तायध। पक्षे। इह। होह। परित्तायह।

शौरसेनी भाषा में, इह शब्द से संबंधित होनेवाले (ह), तथैव 'मध्यम......हच्चौ' सूत्र में कहे हुए हच् में से (ह), इन दोनों हकार का ध विकल्प से होता है। उदा०-इध ......परित्तायध। (विकल्प--) पक्ष में:--इह......परित्तायह।

भुवो भः ॥ २६९ ॥

भवते र्हकारस्य शौरसेन्यां भो वा भवति। भोदि होदि। भुवदि हुवदि। भवदि हवदि।

शौरसेनी भाषा में, भवति (√भू) धातु के हकार का भ विकल्प से होता है। उदा०—भोदि......हवदि।

पूर्वस्य पुरवः ॥ २७० ॥

शौरसेन्यां पूर्वशब्दस्य पुरव इत्यादेशो वा भवति। अपुरवं[4] नाडयं अपुरवागदं। पक्षे। अपुव्वं[5] पदं। अपुव्वागदं।

शौरसेनी भाषा में, पूर्व शब्द को पुरव ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०-अपुरवं......गदं। (विकल्प—) पक्ष में:--अपुव्वं......गदं।

---

१. क्रमसे:--√कथ्। नाथ। कथम्। राजपथ। २. क्रमसे:--स्थाम। स्तोक।
३. क्रमसे:--इह। √हो (भू)। परि+त्रै।
४. क्रमसे:--अपूर्वं नाटकम्। अपूर्वागतम्। ५. क्रमसे:--अपूर्वं पदम्। अपूर्वागत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्त्व इय-दूणौ ॥ २७१ ॥

शौरसेन्यां क्त्वा प्रत्ययस्य इय दूण इत्यादेशौ वा भवतः । भविय[1] भोदूण । हविय[2] होदूण । पढिय[3] पढिदूण । रमिय[4] रन्दूण । पक्षे । भोत्ता[1] । होत्ता[2] । पढित्ता[3] । रन्ता[4] ।

शौरसेनी भाषा में, क्त्वा प्रत्यय को इय और दूण ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०--भविय······रन्दूण । (विकल्प--) पक्षमें:--भोत्ता······रन्ता ।

कृगमो डडुअः ॥ २७२ ॥

आभ्यां परस्य क्त्वा प्रत्ययस्य डित् अडुअ इत्यादेशो वा भवति । कडुअ । गडुअ । पक्षे । करिय करिदूण । गच्छिय गच्छिदूण ।

(शौरसेनी भाषा में, कृ और गम्) इन धातुओं के आगे आनेवाले क्त्वा प्रत्यय को डित् अडुअ ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०--कडुअ, गडुअ । (विकल्प--) पक्षमें:--करिय······गच्छिदूण ।

दिरिचेचोः ॥ २७३ ॥

त्यादीनामाद्यत्रयस्याद्य स्येचेचौ [३.१३९] इति विहितयो रिचेचोः स्थाने दिर्भवति । वेति निवृत्तम् । नेदि[5] । देदि[6] । भोदि[7] । होदि[8] ।

(शौरसेनी भाषा में), 'त्यादी······चेचौ' सूत्र से कहे हुए इच् और एच् इन प्रत्ययों के स्थान पर दि होता है । (इस सूत्र में) वा (=विकल्प) शब्द की निवृत्ति हुई है । उदा०--नेदि···होदि ।

अतो देश्च ॥ २७४ ॥

अकारात् परयो रिचेचोः स्थाने देश्चकाराद् दिश्च भवति । अच्छदे अच्छदि[9] । गच्छदे गच्छदि । रमदे[10] रमदि । किज्जदे किज्जदि[11] । अत इति किम् । वसुआदि[12] । नेदि । भोदि ।

(शौरसेनी भाषा में, धातु के अन्त्य) अकार के आगे आने वाले इच् और एच् प्रत्ययों के स्थान पर दे, और (सूत्र में से) चकार के कारण दि होते हैं । उदा०--अच्छेद······किज्जदि । अकार के आगे (आने वाले इच् और एच् के) ऐसा क्यों

---

१. √भू । २. √हो, हव । ३. √पठ् । ४. √रम् ।
५. √नी । ६. √दा । ७. √भू । ८. √हो ।
९. √आस् (सूत्र ४·२१५ देखिए) । १०. √रम् । ११. क्रियते ।
१२. √उद्वा (सूत्र ४·११ देखिए) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहा है ? (कारण अकार छोड़कर अन्य स्वर के आगे दे नहीं होता है। उदा०--) वसुआदि······भोदि।

भविष्यति स्सिः ॥ २७५ ॥

शौरसेन्यां भविष्यदर्थे विहिते प्रत्यये परे स्सिर्भवति। हिस्साहामपवादः। भविस्सिदि। करिस्सिदि। गच्छिस्सिदि।

शौरसेनी भाषा में, भविष्यकालार्थी ऐसा कहा हुआ प्रत्यय (धातु के) आगे होने पर स्सि होता है। (भविष्यकाल में) हिस्सा (सूत्र ३·१६८ देखिए) और हा (सूत्र ३·१६७ देखिए) होते हैं, इस नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०-- भविस्सिदि······गच्छिस्सिदि।

अतो ङसेर्डादो-डादू ॥ २७६ ॥

अतः परस्य ङसेः शौरसेन्यां आदो आदु इत्यादेशौ डितौ भवतः। दूरादो[1] य्येव। दूरादु।

शौरसेनी भाषा में (शब्द के अन्त्य) अकार के आगे आने वाले ङसि प्रत्यय को डित् आदो और डित् आदु ऐसे आदेश होते हैं। उदा०--दूरादो······दूरादु।

इदानीमो दाणिं ॥ २७७ ॥

शौरसेन्यामिदानीमः स्थाने दाणिं इत्यादेशो भवति। अनन्तरकरणीयं[2] दाणिं आणवेदु अय्यो। व्यत्ययात् प्राकृतेपि। अन्नं दाणिं[3] बोहिं।

शौरसेनी भाषा में, इदानीम् के स्थान पर दाणिं ऐसा आदेश होता है। उदा०— अनन्तर······अय्यो। (और) व्यत्यय (सूत्र ४·४४७ देखिए) होने के कारण, प्राकृत में भी (दाणिं शब्द दिखाई देता है। उदा०--) अन्नं दाणिं बोहिं।

तस्मात्ताः ॥ २७८ ॥

शौरसेन्यां तस्माच्छब्दस्य ता इत्यादेशो भवति। ता[4] जाव पविसामि। ता अलं एदिणा माणेण।

शौरसेनी भाषा में, तस्मात् शब्द को ता ऐसा आदेश होता है। उदा०-- ता जाव······माणेण।

मोन्त्याण्णो वेदेतोः ॥ २७९ ॥

---

१. क्रमसे:--दूरात् एव दूरात्।

२. अनन्तरकरणीयं इदानीं आज्ञापयतु आर्यः। ३. अन्यं इदानीं बोधिम्।

४. क्रमसे:--तस्मात् यावत् प्रविशामि। तस्मात् अलं एतेन मानेन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शौरसेन्यामन्त्यान्मकारात् पर इदेतोः परयोर्णकारागमो वा भवति। इकारे। [1]जुत्तं णिमं जुत्तमिमं। सरिसं णिमं सरि समिणं। एकारे। किं णेदं[2] किमेदं। एवं णेदं एवमेदं।

शौरसेनी भाषा में (शब्द के) अन्त्य मकार के आगे इ और ए ये स्वर होने पर, णकार का आगम विकल्प से होता है। उदा०--इकार आगे होने पर:--जुत्तं ...... सरिसमिणं। एकार आगे होने पर:--किंणेदं......एवमेदं।

एवार्थेय्येव ॥ २८० ॥

एवार्थे य्येव इति निपातः शौरसेन्यां प्रयोक्तव्यः। मम[3] य्येव बम्भणस्स। सो य्येव एसो।

शौरसेनी भाषा में, एव के अर्थ में य्येव ऐसा निपात (अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा०--मम......एसो।

हञ्जे चेट्याह्वाने ॥ २८१ ॥

शौरसेन्यां चेट्याह्वाने हञ्जे इति निपातः प्रयोक्तव्य। हञ्जे [4]चदुरिके।

शौरसेनी भाषा से, चेटी को बुलाते समय, हञ्जे ऐसा निपात (=अव्यय) प्रयुक्त करे। उदा०--हञ्जे चदुरिके।

हीमाणहे विस्मयनिर्वेदे ॥ २८२ ॥

शौरसेन्यां हीमाणहे इत्ययं निपातो विस्मये निर्वेदे च प्रयोक्तव्यः। विस्मये। हीमाणहे [5]जीवन्तवच्छा मे जणणी। निर्वेदे। हीमाणहे पलिस्सन्ता[6] हगे एदेण नियविधिणो दुव्ववसिदेण।

शौरसेनी भाषा में हीमाणहे ऐसा यह निपात विस्मय और निर्वेद दिखाने के लिए प्रयुक्त करे। उदा०--दिखाने के लिए :--हीमाणहे... ...जणणी। निर्वेद दिखाने के लिए :--हीमाणहे... ...दुव्वसिदेण।

---

१. क्रम से--युक्तं इदम्। सदृशं इदम्।

२. क्रम से :--किं एतद्। एवं एतद्।

३. क्रम से :--मम एव ब्राह्मणस्य। स एव एषः।

४. हञ्जे चतुरिके।

५. (हीमाणहे)--जीवद्-वत्सा मे जननी।

६. (हीमाणहे) परिश्रान्तः अहं एतेन निजविधेः दुर्व्यवसितेन।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

णं नन्वर्थे ॥ २८३ ॥

शौरसेन्यां नन्वर्थे णमिति निपातः प्रयोक्तव्यः। णं [1]अफलोदया। णं अय्य-मिस्सेहिं पुढमं य्येव आणत्तं। णं भवं मे अग्गदो चलदि। आर्षे वाक्यालङ्कारेपि दृश्यते। नमो[2] त्थु णं। जयाणं। तयाणं।

शौरसेनी भाषा में, ननु के अर्थ में णं ऐसा निपात प्रयुक्त करे। उदा० √णं ... ...चलदि। आर्ष प्राकृत में (णं अव्यय / निपात) वाक्यालङ्कार के स्वरूप में (प्रयुक्त किया हुआ) दिखाई देता है। उदा० √नमो ... ... तयाणं।

अम्महे हर्षे ॥ २८४ ॥

शौरसेन्यां अम्महे इति निपातो हर्षे प्रयोक्तव्यः। अम्हहे एआए[3] सुम्मिलाए सुपलिगढिदो भवं।

शौरसेनी भाषा में, अम्महे (यह निपात) हर्ष दिखाने के लिए प्रयुक्त करे। उदा०—अम्महे... ...भवं।

ही ही विदूषकस्य ॥ २८५ ॥

शौरसेन्यां हीही इति निपातो विदूषकाणां हर्षे द्योत्ये प्रयोक्तव्यः। ही ही भो सम्पन्ना[4] मणोरधा पियवयस्सस्स।

शौरसेनी भाषा में ही ही ऐसा निपात विदूषकों का हर्ष दिखाना हो, तो प्रयुक्त करे। उदा०—ही ही भो... ...वयस्सस्स।

शेषं प्राकृतवत् ॥ २८६ ॥

शौरसेन्यामिह प्रकरणे यत् कार्यमुक्तं ततोन्यच्छौरसेन्यां प्राकृतवदेव भवति। दीर्घह्रस्वौ मिथो वृत्तौ (१.४) इत्यारभ्य तो दोनादौ शौरसेन्याम-युक्तस्य (४.२६०) एतस्मात् सूत्रात् प्राग् यानि सूत्राणि एषु यान्युदाहरणानि तेषु मध्ये अमूनि तदवस्थान्येव शौरसेन्या भवन्ति अमूनि पुनरेवं विधानि भवन्तीति विभागः प्रतिसूत्रं स्वयमभ्यूह्य दर्शनीयः। यथा। अन्दावेदी। जुवदि जणो। मणसिला। इत्यादि।

---

१. क्रम से :—(णं) नफलोदया। (णं) आर्यमिश्रैः प्रथमं एव आज्ञप्तम्। (णं) भवान् मे अग्रतः चलति।

२. क्रम से :—नमोऽस्तु (णं)। यदा (णं)। तदा (णं)।

३. (अम्हहे) एताए सूर्मिलया सुपरिगृहीतः भवान्।

४. (ही ही) भोः सम्पन्नाः मनोरथाः प्रियवयस्यस्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शौरसेनी भाषा के बारे में जो कुछ कार्य इस प्रकरण में कहा हुआ है, वह छोड़ कर अन्य कार्य प्राकृत के समान शौरसेनी भाषा में होता है। (अभिप्राय ऐसा है :--) 'दीर्घ··· ···वृत्तौ' इस सूत्र से प्रारम्भ करके 'तो दोनादौ··· ···युक्तस्य' इस सूत्र के पूर्व तक जो सूत्र और उनके लिए जो उदाहरण दिए हुए हैं, उनमें से 'अमुक सूत्र जैसे के तैसे शौरसेनी को लागू पड़ते हैं,' (और) अमुक सूत्र मात्र (कुछ फर्क से) इसी प्रकार लागू पड़ते हैं,' इत्यादि विभाग प्रत्येक सूत्र का स्वयं ही विचार करके (अभ्यूह्य) दिखाए। उदा०--अन्दावेदी··· ···मणसिला, इत्यादि।

अत एत् सौ पुंसि मागध्याम् ॥ २८७ ॥

मागध्यां भाषायां सौ परे अकारस्य एकारो भवति पुंसि पुल्लिंगे। एष मेषः एशे मेशे। एशे[1] पुलिशे। करोमि भदन्त करेमि भन्ते। अत इति किम्। णिही[2]। कली। गिली। पुंसीति किम्। जलं। यदपि 'पोराणमद्धमागह भासानिययं हवइ सुत्तं' इत्यादिनार्षस्य अर्धमागधभाषानियतत्वमाम्नायि वृद्धैस्तदपि प्रायोऽस्यैव विधानान्न वक्ष्यमाणलक्षणस्य। कयरे[3] आगच्छइ। से तारिसे दुक्खसहे जिइन्दिए। इत्यादि।

मागधी भाषा में, पुंसि यानी पुल्लिग में, सि (प्रत्यय) आगे होने पर, (शब्द के अन्त्य) अकार का एकार होता है। उदा०--एष··· ···भन्ते। अकार का (एकार होता है) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण अन्य स्वरों का एकार नहीं होता है। उदा०--) णिही··· ···गिली। पुल्लिग में ऐसा क्यों कहा है ? (कारण अन्य लिंगों में ऐसा एकार नहीं होता है। उदा०--) जलं। (जैन धर्मियों के) प्राचीन सूत्र अर्ध मागध भाषा में हैं इत्यादि वचन से वृद्ध पुरुषों ने यद्यपि आर्ष यानी अर्ध मागध भाषा है ऐसा कहा है, तथापि वह भी प्रायः (अभी प्रस्तुत स्थान में बताए हुए इस) नियम के अनुसार है, (यहाँ से आगे) कहे जाने वाले नियमों के अनुसार नहीं है (यह ध्यान में रखे।) उदा०--कयरे··· ···जिइन्दिरा, इत्यादि।

रसोर्लशौ ॥ २८८ ॥

मागध्यां रेफस्य दन्त्यसकारस्य च स्थाने यथासंख्यं लकारस्तालव्य-

१. एषः पुरुषः।

२. क्रम से :--निधि। करिन्। गिरि।

३. क्रम से :--कतरः आगच्छति। सः तादृशः दुःखसहः जितेन्द्रियः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शकारश्च भवति । र । नले[1] । कले । स । [2]हंशे । शुदं । शोभणं । उभयोः । [3]शालशे । पुलिशे ।

लहश-[4]वश-नमिल-शुल-शिल-विअलिद-मन्दाल-लायिदंहि-युगे ।
वीलयिणे पक्खालदु मम शयलमवय्य-यम्बालं ॥ १ ॥

मागधी भाषा में, रेफ के और दन्त्य सकार के स्थान पर अनुक्रम से लकार और तालव्य शकार होते हैं। उदा०--र (के स्थान पर) :--नले, कले। स (के स्थान पर :--) हंशे... ...शोभणं। दोनों के (स्थान पर) :--शालशे, पुलिशे। (तथैव :--) लहशवश... ...यम्बालं।

सषोः संयोगे सोऽग्रीष्मे ॥ २८९ ॥

मागध्यां सकार-षकारयोः संयोगे वर्तमानयोः सो भवति ग्रीष्मशब्दे तु न भवति। ऊर्ध्वं लोपाद्यपवादः। स। [5]पस्खलदि हस्ती। बुहस्पदी। मस्कली। विस्मये। ष। शुस्क[6]-दालुं। कस्टं। विस्नुं। शस्प-कवले। उस्मा। निस्फलं। धनुस्खण्डं अग्रीष्म इति किम्। गिम्ह[7]-वाशले।

मागधी भाषा में, संयोग में होने वाले सकार और षकार (इन) का स होता है; परन्तु ग्रीष्म शब्द में मात्र (ष का स) नहीं होता है। प्रथम होने वाले (स् और ष् इन) का लोप होता है (सूत्र २.७७ देखिए) इत्यादि (नियमों) का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०--स (का स) :--पक्खलदि... ...विस्मये। ष (का स) :--शुस्कदालुं... ...धनुस्खण्डं। ग्रीष्म शब्द में (ष का स) नहीं होता है ऐसा क्यों कहा है ? (कारण ग्रीष्म शब्द में आगे दिया हुआ वर्णान्तर होता है। उदा०--) गिम्ह-वाशले।

ट्टष्ठयोस्टः ॥ २९० ॥

द्विरुक्तस्य टस्य षकाराक्रान्तस्य च ठकारस्य मागध्यां सकाराक्रान्तः

१. क्रम से :--नर। कर।

२. क्रम :--हंस। श्रुत। शोभन।

३. क्रम से :--सारस। पुरुष।

४. रभसवश-नमनशील-सुर-शिरस्-विगलित-मन्दार-राजित-अंघ्रि-युगः। वीर-जिनः प्रक्षालयतु मम सकलं अवद्य-जम्बालम् ॥

५. क्रम से :--प्रस्खलति हस्ती। बृहस्पति। मस्करिन्। विस्मय।

६. क्रम से :--शुष्क-दारु। कष्ट। विष्णु। शष्प-कवल। ऊष्मा। निष्फल। धनुष्खण्ड।

७. ग्रीष्म-वासर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टकारो भवति । ट्ट । [1]पस्टे । भस्टालिका । भस्टिणी । ष्ठ । [2]शुस्टु कदं । कोस्टागालं ।

मागधी भाषा में, द्विरुक्त ट (=ट्ट) और षकार से युक्त ठकार (=ष्ठ) इनका सकार से युक्त टकार (=स्ट) होता है । उदा०--ट्ट (का स्ट):--पस्टे···भस्टिणी । ष्ठ (कास्ट):--शुस्टु·····कोस्टागालं ।

स्थर्थयोस्तः ॥ २९१ ॥

स्थ र्थ इत्येतयोः स्थाने मागध्यां सकाराक्रान्तः तो भवति । स्थ । [3]उवस्तिदे । शुस्तिदे । र्थ । [4]अस्तवदी । शस्तावाहे ।

मागधी भाषा में, स्थ और र्थ इनके स्थान पर सकार से युक्त त (=स्त) होता है । उदा०--स्थ (का स्त):--उवस्तिदे, शुस्तिदे र्थ (का स्त):--अस्तवदी,शस्तवाहे ।

जद्यां यः ॥ २९२ ॥

मागध्यां जद्यां स्थाने यो भवति । ज । [5]याणदि । यणवदे । अय्युणे । दुय्यणे । गय्यदि । गुणवय्यिदे । द्य । मय्यं[6] । अय्य किल विय्याहले आगदे । य । [7]यादि । यधाशलूवं । याणवत्तं । यदि । यस्य यत्वविधानं आदेर्योजः (१.२४५) इति बाधनार्थम् ।

मागधी भाषा में, ज, द्य, और य इनके स्थान पर य होता है । उदा०--ज (के स्थान पर):-याणदि·····वय्यिदे । द्य (के स्थान पर):-मय्यं·····आगदे । य (के स्थान पर):--यादि···यदि । 'आदेर्योजः' सूत्र का (यहाँ बाध हो, इसलिए य का य होता है, ऐसा विधान (प्रस्तुत सूत्र में) किया है ।

न्यण्यज्ञञ्जां ञ्ञः ॥२९३॥

मागध्यां न्य ण्य ज्ञ ञ्ज इत्येतेषां द्विरुक्तो ञो भवति । न्य । [8]अहिमञ्ञुकुमाले । अञ्ञदिशं । शामञ्ञ-गुणे । कञ्ञका-वलणं । ण्य । [9]पुञ्ञवन्ते ।

---

१. क्रमसे:--पट्ट । भट्टारिका । भट्टिनी । २ क्रमसे:--सुष्ठुकृतम् । कोष्ठागार ।
३. क्रमसे:--उपस्थित । सुस्थित । ४. क्रमसे:--अर्थपति । अर्थवती । सार्थवाह ।
५. क्रमसे --जानाति । जनपद । अर्जुन । दुर्जन । गर्जति । गुणवर्जित ।
६. क्रमसे:--मद्य । अद्य किल विद्याधरः आगतः ।
७. क्रमसे:--याति । यथास्वरूपम् । यानपात्तम् । यदि ।
८. क्रमसे:--अभिमन्युकुमार । अन्यदिशम् । सामान्यगुण । कन्यका-वरण ।
९. क्रमसे:--पुण्यवत् । अब्रह्मण्य । पुण्याह । पुण्य ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अबम्हञ्ञं । पुञ्ञाहं । पुञ्ञं । ज्ञ । [1]पञ्ञाविशाले । शव्वञ्ञे । अवञ्ञा । ञ्ज । [2]अञ्ञली । धणञ्ञए । पञ्ञले ।

मागधी भाषा में, न्य, ण्य, ज्ञ और ञ्ज इनका द्विरुक्त ञ (= ञ्ञ) होता है। उदा०--न्य (का ञ्ञ):--अहिमञ्ञु······वलणं । ण्य (का ञ्ञ):--पुञ्ञवन्ते··· पुञ्ञं । ज्ञ (का ञ्ञ):--पञ्ञाविशाले ······अवञ्ञा । ञ्ज (का ञ्ञ):--अञ्ञली ······पञ्ञले ।

व्रजो जः ॥ २९४ ॥

मागध्यां व्रजेर्जकारस्य ञ्ञो भवति । यापवादः । वञ्ञदि ।

मागधी भाषा में, व्रज् (धातु) में से जकार का ञ्ञ होता है । (जकार का) य होता है (सूत्र ४.२९२ देखिए) इस नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०--वञ्ञदि ।

छस्य श्चोनादौ ॥ २९५ ॥

मागध्यामनादौ वर्तमानस्य छस्य तालव्य-शकाराक्रान्तश्चो भवति । गश्च[3] गश्च । उश्चलदि पिश्चिले । पुश्चदि । लाक्षणिकस्यापि । आपन्न-वत्सलः आवन्न-वश्चले । तिर्यक् प्रेक्षते तिरिच्छि पेच्छइ, तिरिश्चि पेस्कदि । अनादाविति किम् । [4]छाले ।

मागधी भाषा में, अनादि होने वाले छ का तालव्य शकार से युक्त च (= श्च) होता है । उदा०--गश्च ···पुश्चदि । व्याकरण नियमानुसार आने वाले (छ) का भी (श्च होता है ; उदा०···) आपन्नवत्सलः··· ···पेस्कदि । अनादि होने वाले (छ का) ऐसा क्यों कहा है ? (कारण छ आदि हो, तो श्च नहीं होता है । उदा०--) छाले ।

क्षस्य ≍कः ॥ २९६ ॥

मागध्यामनादौ वर्तमानस्य क्षस्य ≍को जिह्वामूलीयो भवति । [5]य≍के । ल≍कशे । अनादावित्येव । खय-यलहला क्षय-जलधरा इत्यर्थः ।

---

१. क्रम से :--प्रज्ञाविशाल । सर्वज्ञ । अवज्ञा ।

२. क्रम से :--अञ्जलि । धनञ्जय । प्राञ्जलि / प्राञ्जल ।

३. क्रम से :--गच्छ गच्छ । उच्छलति । पिच्छिलः । पृच्छति ॥ उच्छलति के लिए सूत्र ४.१७४ देखिए ।

४. छाग । ५. क्रम से:--यक्ष । राक्षस ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मागधी भाषा में, अनादि होने वाले क्ष का ≍क यानी जिह्वामूलीय क होता है। उदा०—य≍के, ल≍कशे। अनादि होने वाले (क्ष) का ही (≍क होता है; क्ष आदि होने पर, ≍क नहीं होता है। उदा०--) खय-यलहूला क्षम जलधराः, ऐसा अर्थ है।

स्कः प्रेक्षाचक्षोः ॥ २९७ ॥

मागध्यां प्रेक्षेराचक्षेश्च क्षस्य सकाराक्रान्तः को भवति। जिह्वामूलीयापवादः। पेस्कदि। आचस्कदि।

मगधी भाषामें, प्रेक्ष् और आच स् इन धातुओं में से क्ष का सकार से युक्त क (=स्क) होता है। (क्ष का) जिह्वामूलीय (क) होता है (सूत्र ४.२९६ देखिए) इस नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—पेस्कदि, आचस्कदि।

तिष्ठश्चिष्ठः ॥ १९८ ॥

मागध्यां स्था-धातोर्यस्तिष्ठ इत्यादेशस्तस्य चिष्ठ इत्यादेशो भवति। चिष्ठदि।

मागधी भाषा में, स्था (धातु) को जो तिष्ठ आदेश होता है, उस (तिष्ठ) को चिष्ठ ऐसा आदेश होता है। उदा०—चिष्ठदि।

अवर्णाद् वा ङसो डाहः ॥ २९९ ॥

मागध्यामवर्णात् परस्य ङसो डित् आह इत्यादेशो वा भवति। हगे [1]न एलिशाह कम्माह काली। भगदत्त[2]-शोणिदाह कुम्भे। पक्षे। भीमशेणस्स[3] पश्चादो हिण्डी अदि। हिडिम्बाएँ[4] घडुक्कय-शोके ण उवशमदि।

मागधी भाषा में (शब्द के अन्त्य) वर्ण के आगे आनेवाले ङस् (प्रत्यय) को डित् आह ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—हगे······कुम्भे। (विकल्प–)पक्षमें:– भीमशेणस्स······उवशमदि।

आमो डाहँ वा ॥ ३०० ॥

मागध्यामवर्णात् परस्य आमोनुनासिकान्तो डित् आहादेशो वा भवति। [5]शयणाहँ सुहं। पक्षे। [6]नलिन्दाणं। व्यत्ययात् प्राकृतेपि। ताहँ। तुम्हाहँ। अम्हाहँ। [7]सरिआहँ। कम्माहँ[8]।

---

१. अहं न ईदृशस्यकर्मणः कारी। २. भगदत्त-शोणितस्य कुम्भः।
३. भीमसेनस्य पश्चात् हिण्ड्यते। ४. हिडिम्बायाः घटोत्कच-शोकः न उपशाम्यति।
५. स्वजनानां सुखम्। ६. नरेन्द्राणाम्।
७. सरिताम्। ८. कर्मणाम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगधी भाषा में, (शब्द के अन्त्य) अ वर्ण के आगे आने वाले आम् (प्रत्यय) को अनुनासिक से अन्त होनेवाला डित् आह (=आहँ) ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०-शयणाहँ सुहं। (विकल्प—) पक्षमें:—नलिन्दाणं। व्यत्यय (सूत्र ४·४४७ देखिए) होने के कारण, प्राकृत में भी (आम् प्रत्यय को आहँ ऐसा आदेश दिखाई देता है। उदा०—) ताहँ······कम्माहँ।

अहंवयमोर्हगे ॥ ३०१ ॥

मागध्यामहं वयमोः स्थाने हगे इत्यादेशो भवति। हगे [1]शक्कावदाल-तिस्त-णि वाशी धीवले। हगे शंपत्ता।

मगधी भाषा में, अहं और वयम् इन रूपों के स्थान पर हगे ऐसा आदेश होता है। उदा०—हगे······संपत्ता।

शेषं शौरसेनीवत् ॥ ३०२ ॥

मागध्यां यदुक्तं ततोन्यच्छौरसेनीवत् द्रष्टव्यम्। तत्र तो दोनादौ शौर-मयुक्तस्य (४.२६०)। पविशदु[2] आवुत्ते शामिपशादाय। अधः क्वचित् (४.२६१)। अले किं एशे[3] महन्दे कलयले। वादेस्तावति (४.२६२)। मालेध[4] वा धलेध वा। अयं दाव शे आगमे। आ आमन्त्र्ये सौ वेनो नः (४.२६३)। कञ्चुइआ। मो वा (४.२६४)। भो रायं/भवद्। भगवतोः (४.२६५)। [5]एदु भवं शमणे भयवं महावीले। भयवं [6]कदन्ते ये अप्पणो पक्खं उज्झिय पलस्स पक्खं पमाणीकलेशि। न वा र्यो य्यः (४.२६६)। अय्य[7] एशे खु कुमाले मलयकेदू। थो धः (४.२६७)। अले [8]कुम्भिला कधेहि। इह हचोर्हस्य (४.२६८)। ओशलध[9] अय्या ओशलध। भुवो भः (४.२६९)। भोदि। पूर्वस्य पुरवः (४.२७०)। अपुरवे। क्त्व इय दूणौ (४.२७१)। किं खु शोभणे [10]बम्हणे शित्ति कलिय लञ्ञा पलिग्गहे दिण्णे। कृगमो डडुअः

१. क्रमसे:—अहं शक्रावतार-तीर्थ-निवासी धीवरः। वयं संप्राप्ताः।

२. प्रविशतु आवुत्त स्वामि-प्रसादाय।

३. अरे किं एषः महान् कलकलः।

४. मारयत वा धरत वा। अयं तावत् अस्य आगमः।

५. ऐतु भवान् श्रमणः भगवान् महावीरः।

६. भगवान् कृतान्तः यः आत्मनः पक्षं उज्झित्वा परस्य पक्षं प्रमाणी करोषि।

७. आर्य एष खलु कुमारः मलयकेतुः।

८. अरे कुम्भिल कथय।

९. अपसरत आर्याः अपसरत।

१०. किं खलु शोभनः ब्राह्मणः असि इति कृत्वा राज्ञा परिग्रहः दत्तः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(४.२७२)। कडुअ। गडुअ। दिरिचेचोः (४.२७३)। अमच्च[1]-ल⌒कशं पिक्खिदुं इदो य्येव आगश्चदि। अतो देश्च (४.२७४)। अले[2]—किं राशे महन्दे कलयले शुणीअदे। भविष्यति स्सिः (४.२७५)। ता[3] कहिं नु गदे लुहिलप्पिए भविस्सिदि। अतो ङसेर्डादोडादू (४.२७६)। अहं पि [4]भागुलायणादो मुद्दं पावेमि। इदानीमो दाणिं (४.२७७)। शुणध [5]दाणिं हगे शक्कावयाल-तिस्त-णिवाशी धीवले। तस्मात्ताः (४.२७८)। ता [6]याव पविशामि। मोन्त्याण्णो वेदेतोः(४.२७९)। युत्तं णिमं। शलिशं णिमं[7]। एवार्थय्येव। [४.२८०] मम[8] य्येव। हञ्जे चेटचाह्वाने (४.२८१)। हञ्जे[9] चदुलिके। हीमाणहे विस्मयनिर्वेदे (४.२८२)। विस्मये। यथा उदात्तराघवे। राक्षसः। हीमाणहे [10]जीवन्त-वश्चामे जणणी। निर्वेदे। यथा विक्रान्तभीमे राक्षसः। हीमाणहे पलिस्सन्ताहगे[11] एदेण नियविधिणो दुव्ववशिदेण। णं नन्वर्थे (४.२८३)। णं [12]अवशलोपशप्पणीया लायाणो। अम्महे हर्षे (४. २८४)। अम्महे एआए[13] शुम्मिलाए शुपलिगढिदे भवं। ही ही विदूषकस्य (४.२८५)। ही ही सम्पन्ना[14] मे मणोलधा पियवयस्सस्स। शेषं प्राकृतवत् (४.२८६)। मागध्यामपि दीर्घ-ह्रस्वौ मिथो वृत्तौ (१.४) इत्यारभ्य तो दोनादौ शौरसेन्यामयुक्तस्य (४.२६०) इत्यस्मात् प्राग् यानि सूत्राणि तेषु यान्युदाहरणानि सन्ति, तेषु मध्ये अमूनि तदवस्थान्येव मागध्यायममूनि पुनरेवं विधानि भवन्तीति विभागः स्वयमभ्यूह्य दर्शनीयः।

---

१. अमात्य—राक्षसं प्रेक्षितुं इतः एव आगच्छति।
२. अरे किं एषः कलकलः श्रूयते।
३. तदा / तावत् कुत्र नु गतः रुधिरप्रियः भविष्यति।
४. अहं अपि भागुरायणात् मुद्रां प्राप्नोमि।
५. शृणुत इदानीं अहं शक्रावतार-तीर्थ-निवासी धीवरः।
६. तस्मात् यावत् प्रविशामि।
७. क्रम से :—युक्तं इदम्। सदृशं इदम्।
८. मम एव।
९. हञ्जे चतुरिके।
१०. (हीमाणहे) जीवद् वत्सा मे जननी।
११. (हीमाणहे) परिश्रान्ताः वयं एतेन निजविधेः दुर्व्यवसितेन।
१२. ननु अवसर-उपसर्पणीयाः राजानः।
१३. अम्महे एतया सूर्मिलया सुपरिगृहीतः भवान्।
१४. ही ही सम्पन्ना मे मनोरथा प्रियवयस्यस्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मागधी भाषा में, जो (कार्य होता है ऐसा अब तक) कहा है, उसके व्यतिरिक्त अन्य (कार्य) शौरसेनी भाषा के समान होता है ऐसा जाने। उदा०—'तो··· ···मयुक्तस्य' (इस नियम के अनुसार :—) पविशदु··· ···पशादाय। 'अधः क्वचित्' (नियमानुसार) :—अले किं··· ···कलबले। वादेस्तावति' (नियम के अनुसार) :—मालेध··· ···आगमे। 'आआमन्त्र्ये··· ···नः' (नियमानुसार) :—भोकञ्चुइआ। 'मो वा' (सूत्र के अनुसार) :—भो रायं। 'भवद् भगवतोः' (सूत्र के अनुसार) :—एदु भवं··· ···पमाणकिलेशि। 'न वा र्योय्यः' (नियमानुसार) :—अय्य एशे··· ···मलयकेदू। 'थोधः' (सूत्र के अनुसार) :—अले··· ···कधेहि। 'इहहचोर्हस्य' (नियम से) :—ओशलध··· ···ओशलध। 'भुवो भः' (सूत्रानुसार) :—भोदि। 'पूर्वस्य पुरवः' (नियम के अनुसार) :—अपुरवे। 'क्त्व इयदूणौ' (नियमानुसार) :—किं खु··· ···दिण्णे। 'कृगमो डडुअः' (नियम के अनुसार) :—कडुअ, गडुअ। 'दिरिचेचोः' (सूत्रानुसार) :—अमच्च··· ···आगश्चदि। 'अतो देश्च' (नियमानुसार) :—अले किं··· ···शुणी अदे। 'भविष्यति स्सिः'[1] (सूत्रानुसार) :—ता कहिं··· ···भविस्सिदि। 'अतो··· ···डादू' (नियमानुसार) —अहं पि··· ···पावेमि। 'इदानीयो दाणिं' (सूत्रानुसार) :—शुणध ··· ···धविले। 'तस्मात्ताः' (नियमानुसार) :—ता··· ···पविशामि। 'मोन्त्योण्णो वेदेतोः' (सूत्रानुसार) :—युत्तं··· णिमं। 'एवार्थे य्येव' (सूत्रानुसार) :—मम य्येव। 'हञ्जे चेटयाह्वाने' (नियमानुसार) :—चदुलिके। 'हीमाणहे··· ···निर्वेदे' (सूत्र के अनुसार) :—विस्मय दिखाते समय, उदात्तराघव (नाटक) में राक्षस (कहता है) :—हीमाणहे··· ···जणणी। निर्वेद (दिखाते समय), विक्रान्तभीम (नाटक) में राक्षस (कहता है) :—हीमाणहे··· ···दुव्वशिदेण। 'णं नन्वर्थे' (नियमानुसार) :—णं अवश··· ···लायाणो। 'अम्महे हर्षे' (सूत्रानुसार) :—अम्महे··· ···भव। 'ही ही विदूषकस्य' (सूत्रानुसार) :—ही ही ··· ···वयस्सस्स। 'शेषं प्राकृतवत' (सूत्रानुसार), मागधी भाषा में भी, 'दीर्घ··· ···वृत्तौ' इस सूत्र से आरम्भ करके 'तो··· ···मयुक्तस्य' (४·२६०) सूत्र के पूर्व तक जो सूत्र (और) उन (सूत्रों) के जो उदाहरण दिए हैं, उनमें से अमुक सूत्र और उदाहरण जैसे के वैसे मागधी पर लागू पड़ते हैं, (और) अमुक सूत्र मात्र इस प्रकार से (मागधी भाषा पर)लागू पड़ते है, ऐसा स्वयं हां विचार करके दिखाए।

ज्ञो ञ्ञः पैशाच्याम् ॥ ३०३ ॥

पैशाच्यां भाषायां ज्ञस्य स्थाने ञ्ञो भवति। पञ्ञा[1]। सञ्ञा। सव्वञ्ञो। ञानं। विञ्ञानं।

1. क्रम से :—प्रज्ञा। संज्ञा। सर्वज्ञ। ज्ञान। विज्ञान।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पैशाची भाषा में, ज्ञ (इस संयुक्त व्यञ्जन) के स्थान पर ञ्ञ होता है। उदा०—पञ्ञा··· ···विञ्ञानं।

राज्ञो वा चिञ् ॥ ३०४ ॥

पैशाच्यां राज्ञ इति शब्दे यो ज्ञकारस्तस्य चिञ् आदेशो वा भवति। राचिञा[1] लपितं, रञ्ञा लपितं। राचिञो धनं, रञ्ञो धनं। ज्ञ इत्येव। राजा।

पैशाची भाषा में, राज्ञ शब्द में जो ज्ञकार है उसको चिञ् ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—राचिञा··· ···धनं। (राजन् शब्द के रूपों में) ज्ञ (ऐसा संयुक्त व्यञ्जन होने पर ही (ऐसा आदेश होता है; ज्ञ न होने पर, यह आदेश नहीं होता है। उदा०—) राजा।

न्यण्योर्ञ्ञः ॥ ३०५ ॥

पैशाच्यां न्यण्योः स्थाने ञ्ञो भवति। कञ्ञका[2]। अभिमञ्ञू। पुञ्ञ-कम्मो। पुञ्ञाहं।

पैशाची भाषा में, न्य और ण्य इनके स्थान पर ञ्ञ होता है। उदा०—कञ्ञका··· ···पुञ्ञाहं।

णो नः ॥ ३०६ ॥

पैशाच्यां णकारस्य नो भवति। गुन[3]-गन-युत्तो। गुनेन।

पैशाची भाषा में, णकार का न होता है। उदा०—गुन··· ···गुनेन।

तदोस्तः ॥ ३०७ ॥

पैशाच्यां तकारदकारयोस्तो भवति। तस्य। भगवती[4]। पव्वती। सतं। दस्य। मतन-[5]परवसो। सतनं। तामोतरो। पतेसो। वतनकं। होतु। रमतु। तकारस्यापि तकारविधानमादेशान्तर-बाधनार्थम्। तेन पताका वेतिसो इत्याद्यपि सिद्धं भवति।

---

१. क्रम से :—राज्ञा लपितम्। राज्ञः धनम्।

२. क्रम से :—कन्यका। अभिमन्यु। पुण्यकर्मन्। पुण्याह।

३. क्रम से :—गुण–गण–युक्त। गुणेन।

४. क्रम से :—भगवती। पार्वती। शत।

५. क्रम से :—मदनपरवश। सदन। दामोदर। प्रदेश। वदन–क। √भू। √रम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पैशाची भाषा में, तकार और दकार इनका त होता है। उदा०—त (का त) :—भगवती··· ···सतं। द (का त) :—मतन··· ···रमतु। (तकार को होने वाले) अन्य आदेशों का बाध करने के लिए तकार का भी तकार होता है, ऐसा विधान यहाँ किया है। इसलिए पताका, वेतिसो इत्यादि (रूप) भी सिद्ध होते हैं।

लो ळः ॥ ३०८ ॥

पैशाच्यां लकारस्य ळकारो भवति। सीळं[1]। कुळं। जळं। सलिळं। कमळं।

पैशाची भाषा में, लकार का ळकार होता है। उदा०—सीळं··· ···कमळं।

शषोः सः ॥ ३०९ ॥

पैशाच्यां शषोः सो भवति। श। [2]सोभति। सोभनं। ससी। सक्को। सङ्खो। ष। [3]विसमो। विसानो। 'न कगचजादिषट्शम्यन्तसूत्रोक्तम्' (४.३२४) इत्यस्य बाधकस्य बाधनार्थोयं योगः।

पैशाची भाषा में, श और ष इनका स होता है। उदा०—श (का स) :—सोभति··· ···सङ्खो। ष (का स) :—विसमो विसानो। 'न कगचजा··· ···सूत्रोक्तं इस बाधक सूत्र का बाध करने के लिए (प्रस्तुत) नियम कहा हुआ है।

हृदये यस्य पः ॥ ३१० ॥

पैशाच्यां हृदयशब्दे यस्य पो भवति। हितपकं[4]। किंपि किंपि हितपके अत्थं चिन्तयमानी।

पैशाची भाषा में, हृदय शब्द में य का प होता है। उदा०—हितपकं··· ···चिन्तयमानी।

टोस्तुर्वा ॥ ३११ ॥

पैशाच्यां टोः स्थाने तुर्वा भवति। कुतुम्बकं [5]कुटुम्बकं।

---

१. क्रम से :—शील। कुल। जल। सलिल। कमल।

२. क्रम से :—√शुभ्। शोभन। शशिन्। शक्त। शङ्ख।

३. क्रम से :—विषम। विषाण।

४. क्रम से :—हृदय-क। कं अपि कं अपि हृदय के अर्थं चिन्तयन्ती।

५. कुटुम्ब-क।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पैशाची भाषा में, टु के स्थान पर तु विकल्प से आता है। उदा०—कुतुम्बकं, कुटुम्बकं।

क्त्वस्तूनः ॥ ३१२ ॥

पैशाच्यां क्त्वाप्रत्ययस्य स्थाने तून इत्यादेशो भवति। [1]गन्तून। रन्तून। हसितून। पठितून। कधितून।

पैशाची भाषा में, क्त्वा प्रत्यय के स्थान पर तून ऐसा आदेश होता है। उदा०—गन्तून··· ···कधितून।

द्धून-त्थूनौ ष्ट्वः ॥ ३१३ ॥

पैशाच्यां ष्ट्वा इत्यस्य स्थाने द्धून त्थून इत्यादेशौ भवतः। पूर्वस्यापवादः। नद्धून[2] नत्थून। तद्धून तत्थून।

पैशाची भाषा में, ष्ट्वा के स्थान पर द्धून और त्थून ऐसे आदेश होते हैं। पहले (यानी सूत्र ४.३१२ में कहे हुए) नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—नद्धून··· ···तत्थून।

र्यस्नष्टां रिय-सिन-सटाः क्वचित् ॥ ३१४ ॥

पैशाच्यां र्यस्नष्टां स्थाने यथासंख्यं रिय सिन सट इत्यादेशाः क्वचिद् भवन्ति। भार्या भारिया। स्नातम् सिनातं। कष्टं कसटं। क्वचिदिति किम्। [3]सुज्जो। सुनुसा। तिट्ठो।

पैशाची भाषा में, र्य, स्न, और ष्ट इन (संयुक्त व्यञ्जनों) के स्थान अनुक्रम से रिय, सिन और सट ऐसे आदेश क्वचित् होते हैं। उदा०—भार्या··· ··· ··· ··· कसटं। क्वचित् ऐसा क्यों कहा है? (कारण हमेशा ऐसे आदेश न होते, आगे कहे वर्णान्तर होते हैं। उदा०—) सुज्जो··· ···तिट्ठो।

क्यस्येय्यः ॥ ३१५ ॥

पैशाच्यां क्य-प्रत्ययस्य इय्य इत्यादेशो भवति। गिय्यते[4]। दिय्यते। रमिय्यते। पठिय्यते।

पैशाची भाषा में, क्य (प्रत्यय) को इय्य ऐसा आदेश होता है। उदा—गिय्यते··· ···पठिय्यते।

---

1. क्रम से :—√गम्। √रम्। √हस्। √पठ्। √कथ्।
2. क्रम से :—नष्ट्वा (√नश्)। तष्ट्वा (√तक्ष्) / दृष्ट्वा (√दृश्)
3. क्रम से :—सूर्य। स्नुषा। दृष्ट।
4. क्रम से :—√गै। √दा। √रम्। √पठ्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृगो डीरः ॥ ३१६ ॥

पैशाच्यां कृगः परस्य क्यस्य स्थाने डीर इत्यादेशो भवति। [1]पुधुमतंसने सव्वस्स य्येव समानं कीरते।

पैशाची भाषा में, कृ (धातु) के आगे आने वाले क्य (प्रत्यय) के स्थान पर डरि (= डित् ईर) ऐसा आदेश होता है। उदा०—पुधु··· ···कीरते।

यादृशादेर्दुस्तिः ॥ ३१७ ॥

पैशाच्यां यादृश इत्येवमादीनां दृ इत्यस्य स्थाने तिः इत्यादेशो भवति। [2]यातिसो। तातिसो। केतिसो। एतिसो। भवातिसो। अञ्ञातिसो। युम्हातिसो। अम्हातिसो।

पैशाची भाषा में, यादृश इत्यादि प्रकार के शब्दों में से दृ (अक्षर) के स्थान पर, ति ऐसा आदेश होता है। उदा०—यातिसो······अम्हातिसो।

इचेचः ॥ ३१८ ॥

पैशाच्यामिचेचोः स्थाने तिरादेशो भवति। वसु[3] आति। भोति। नेति। तेति।

पैशाची भाषा में, इच् और एच् इन (प्रत्ययों) के स्थान पर ति ऐसा आदेश होता है। उदा०—वसुआति······तेति।

आत्तेश्च ॥ ३१९ ॥

पैशाच्यामकारात् परयोः इचेचोः स्थाने तेश्चकारात् तिश्चादेशो भवति। लपते[4] लपति। अच्छते अच्छति। गच्छते गच्छति। रमते रमति। अदिति किम्। होमि[5]। नेति।

पैशाची भाषा में (धातु के अन्त्य) अकार के आगे आने वाले इच् और एच् इनके स्थान पर ते, और (सूत्र में से) चकार के कारण ति, ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—लपते···रमति। अकार के आगे आने वाले (इच् और एच् इनके स्थान पर) ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य स्वरों के आगे ये आदेश नहीं होते हैं। उदा०—) होति, नेति।

---

१. प्रथमदर्शने सर्वस्य एव सम्मानः क्रियते।

२. क्रमसेः—यादृश। तादृश। कीदृश। ईदृश। भवादृश। अन्यादृश। युष्मादृश। अस्मादृश।

३. क्रमसेः—√वसुआ (उदा०—सूत्र ४·११ देखिए)। √भू। √नी। √दा।

४. क्रमसेः—···लप्। √अच्छ (आस्—सूत्र ४·२१५ देखिए)। √गम्-गच्छ। रम्।

५. क्रमसेः—√हो—भू। √नी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भविष्यत्येय्य एव ॥ ३२० ॥

पैशाच्यां मिचेचोः स्थाने भविष्यति राय्य एव भवति, न तु स्सिः। तं [1]तद्धून चिन्तितं रञ्ञा का एसा हुवेय्य।

पैशाची भाषा में, इच् और एच् इन (प्रत्ययों) के स्थान पर, भविष्यकाल में ऐय्य ऐसा ही आदेश होता है, परंतु स्सि ऐसा आदेश मात्र नहीं होता है। उदा०— तं तद्धून······हुवेय्य।

अतो ङसेर्डातोडातू ॥ ३२१ ॥

पैशाच्यामकारात् परस्य ङसेर्डितौ आतो आतु इत्यादेशौ भवतः। ताव[2] च तीए तूरातो य्येव तिट्ठो। [2](अ) तुमातो तुमातु। ममातो ममातु।

पैशाची भाषा में (शब्द के अन्त्य) अकार के आगे आने वाले ङसि (प्रत्यय) को डित् आतो और डित् आतु ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—ताव च······ ममातु।

तदिदमोष्टा नेन स्त्रियां तु नाए ॥ ३२२ ॥

पैशाच्यां तदिदमोः स्थाने टाप्रत्ययेन सह नेन इत्यादेशो भवति। स्त्रीलिङ्गे तु नाए इत्यादेशो भवति। [3]तत्थ च नेन कत-सिनानेन। स्त्रियाम्। [4]पूजितो च नाए पातग्गकुसुमप्पतानेन। टेति किम्। एवं [5]चिन्तयन्तो गतो सो तारा समीपं।

पैशाची भाषा में, तद् और इदम् इन (सर्वनामों) के स्थान पर टा प्रत्यय के सह नेन ऐसा आदेश होता है; परंतु स्त्रीलिंग में मात्र नाए ऐसा आदेश होता है। उदा०—तत्थ च······सिनानेन। स्त्रीलिंग में:—पूजितो······प्पतानेन। टा (प्रत्यय) के सह ऐसा क्यों कहा है? (कारण टा प्रत्यय आगे न होने पर, प्रस्तुत नियम नहीं लगता है। उदा०—) एवं······समीपं।

---

१. तां दृष्ट्वा चिन्तितं राज्ञा का एषा भविष्यति।

२. क्रम से :—तावत् च तया दूराद् एव दृष्टः दूरात्।

२. (अ) युष्मद् के तुम आदेश के लिए सूत्र ३.९६ और अस्मद् के मम आदेश के लिए सूत्र ३.१११ देखिए।

३. तत्र च तेन / अनेन कृत-स्नानेन।

४. पूजितः च तया / अनया प्रत्यग्र-कुसुम-प्रदानेन।

५. एवं चिन्तयन् गतः सः तस्याः समीपम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शेषं शौरसेनीवत् ॥ ३२३ ॥

पैशाच्यां यदुक्तं ततोन्यच्छेषं पैशाच्यां शौरसेनीवद् भवति । अध[1] स-सरीरो भगवं मकरधजो एत्थ परिब्भमन्तो हुवेय्य । एवं विधाए भगवतीए कधं तापस वेसगहनं कतं । एतिसं अतिट्ठ पुरवं महाधनं तद्धून । भगवं यति मं वरं पयच्छसि राजं च दाव लोक । ताव च तीए तूरातोय्येव तिट्ठो सो आगच्छमानो राजा ।

पैशाची भाषा के बारे में (अबतक) जो कहा हुआ है, उसके अतिरिक्त शेष अन्य कार्य पैशाची भाषा में शौरसेनी भाषा के समान होता है। उदा॰—अध ससरीरो··· राजा ।

न कगचजादि-षट्शम्यन्त-सूत्रोक्तम् ॥ ३२४ ॥

पैशाच्यां कगचजतदपयवां प्रायो लुक् (१.१७७) इत्यारभ्य षट्-शमी-शाव-सुधा-सप्तपर्णेष्वादेश्छः (१.२६५) इति यावद् यानि सूत्राणि तैर्यदुक्तं कार्यं, तन्न भवति । मकरकेतू । [2]सगरपुत्तवचनं । विजयसेनेन लपितं । [3]मतनं । पापं । आयुधं । तेवरो[4] । एवमन्यसूत्राणामप्युदाहरणानि द्रष्टव्यानि ।

'कगचज······लुक्' इस सूत्र से आरंभ करके 'षट्······ष्वादेश्छः' इस सूत्र तक जो सूत्र कहे गए हैं, (और) उन सूत्रों में जो कार्य कहा है, वह कार्य पैशाची भाषा में नहीं होता है। उदा॰—मकरकेतू··· ···तेवरो । इसी प्रकार ही, अन्य सूत्रों के बारे में उदाहरण ले ।

चूलिकापैशाचिके तृतीयतुर्ययोराद्यद्वितीयौ ॥ ३२५ ॥

चूलिकापैशाचिके वर्गाणां तृतीयतुर्ययोः स्थाने यथासंख्यमाद्यद्वितीयौ भवतः । नगरम् नकरम् । मार्गणः मक्कनो । गिरितटम् किरितटं । मेघः मेखो । व्याघ्रः वक्खो । घर्मः खम्मो । राजा । राचा । जर्जरम् चच्चरं । जीमूतः चीमूतो । निर्झरः निच्छरो । झर्झरः छच्छरो । तडागम् तटाकम् । मण्डलम् मण्टलं । डमरुकः टमरुको । गाढं काढं । षण्ढः सण्ठो । ढक्का ठक्का । मदनः मतनो । कन्दर्पः कन्तप्पो । दामोदरः तामोतरो । मधुरम् मथुरं । बान्धवः

---

१. क्रम से :—अथ सशरीरः भगवान् मकरध्वजः अत्र परिभ्रमन् भविष्यति । एवं विधया भगवत्या कथं तापसवेषग्रहणं कृतम् । ईदृशं अदृष्टपूर्वं महाधनं दृष्ट्वा । भगवन् यदि मां (मह्यम्) वरं प्रयच्छसि, राजानं च तावत् लोकय । तावत् च तया दूरात् एव दृष्टः सः आगच्छन् राजा ।

२. सगरपुत्रवचन । ३. मदन । ४. देवर ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पन्थवो। धूली थूली। बालकः पालको। रभसः रफसो। रम्भा रम्फा। भगवती फकवती। नियोजितम् नियोचितं क्वचिल्लाक्षणिकस्यापि। पडिमा इत्यस्य स्थाने पटिमा। दाढा इत्यस्य स्थाने ताठा।

चूलिका पैशाचिक भाषा में (व्यञ्जन के) वर्ग में से तृतीय और चतुर्थ व्यञ्जनों के स्थान पर (उसी ही वर्ग में से) आद्य और द्वितीय व्यञ्जन अनुक्रम से आते हैं। उदा०—नगरम्……नियोचितं। क्वचित् व्याकरण के नियमानुसार (वर्णान्तरित शब्दों में) आये हुए (तृतीय और चतुर्थ) व्यञ्जनों के बारे में भी (ऐसा ही प्रकार होता है। उदा०–) (प्रतिमा शब्द से बने हुए) पडिमा शब्द के स्थान पर पटिमा (और दंष्ट्रा शब्द से बने हुए) दाढा शब्द के स्थान पर ताढा (एसे रूप होते हैं)।

रस्य लो वा ॥ ३२६ ॥

चूलिकापैशाचिके रस्य स्थाने लो वा भवति।

पनमथ[1] पनय-प्रकुप्पित-गोली-चलनग्ग-लग्ग-पतिबिम्बं।
तससु नख-तप्पनेसुं एकातस-तनु-थलं लुद्दं ॥ १ ॥
नच्चन्त[2]स्स य लीला-पातुक्खेवेन कम्पिता वसुथा।
उच्छलन्ति समुद्दा सइला निपतन्ति तं हलं नमथ ॥ २ ॥

चूलिका पैशाचिक भाषा में, र् के स्थान पर ल् विकल्प से आता है। उदा०— पनमथ …लुद्दं; नच्चन्तस्स……नमथ।

नादियुज्योरन्येषाम् ॥ ३२७ ॥

चूलिकापैशाचिकेपि अन्येषामाचार्याणां मतेन तृतीयतुर्ययोरादौ वर्तमानयोर्युजि-धातौ च आद्यद्वितीयौ न भवतः। गतिः गती। घर्मः घम्मो। जीमूतः। जीमूतो। झर्झरः झच्छरो। डमरुकः। डमरुको। ढक्का ढक्का। दामोदरः दामोदरो। बालकः बालको। भगवती भकवती। नियोजितम् नियोजितं।

चूलिका पैशाचिक भाषा में भी, अन्य आचार्यों के मतानुसार, आदि होने वाले, (व्यञ्जनों के वर्ग में से) तृतीय और चतुर्थ व्यञ्जनों के स्थान पर, तथैव युज् धातु में, (उसी ही वर्ग में से) आद्य और द्वितीय व्यञ्जन नहीं आते हैं। उदा०—गतिः…… नियोजितं।

---

१. प्रणमत प्रणय-प्रकुपित-गौरी-चरणाग्र-लग्न-प्रतिबिम्बनम्।
दशसु नख-दर्पणेषु एकादश-तनु-धरं रुद्रम् ॥ १ ॥

२. नृत्यतः च लीला-पादोत्क्षेपेण कम्पिता वसुधा।
उच्छलन्ति समुद्राः शैलाः निपतन्ति तं हरं नमत ॥ २ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शेषं प्राग्वत् ॥ ३२८ ॥

चूलिका पैशाचिके तृतीयतुर्ययोरित्यादि यदुक्तं ततोन्यच्छेषं प्राक्तनपैशाचिकवत् भवति। [1]नकरं। मक्कनो। अनयो र्नो णत्वं न भवति। णस्य च नत्वं स्यात्। एवमन्यदपि।

चूलिका पैशाचिक भाषा में, 'चूलिका······तुर्मयोः' (सूत्र ४·३२५) इत्यादि जो (कार्य) कहा है, उसके अतिरिक्ति शेष अन्य कार्य पहले कहे हुए (सूत्र ४·३०३-३२४) पैशाचिक (=पैशाची) भाषा के समान होता है। उदा०—नकरं, मक्कनो इन दोनों में न का ण नहीं होता है। तथैव ण का न मात्र होगा। इसी प्रकार अन्य भाग भी (जान लें)।

स्वराणां स्वराः प्रायोपभ्रंशे ॥ ३२९ ॥

अपभ्रंशे स्वराणां स्थाने प्रायः स्वरा भवन्ति। कच्चु[2] काच्च। वेण वीण। बाह बाहा बाहु। पट्ठि पिट्ठि पुट्ठि। तणु तिणु तृणु। सुकिदु सुकिओ सुकृदु। किन्नओ किलिन्नओ। लिह लीह लेह। गउरि गोरि। प्रायोग्रहणाद्यस्यापभ्रंशे विशेषो वक्ष्यते तस्यापि क्वचित् प्राकृतवत् शौरसेनीवच्च कार्यं भवति।

अपभ्रंश भाषा में स्वरों के स्थान पर प्रायः (अन्य) स्वर आते हैं। उदा० — कच्चु······गोरि। (सूत्र में से) प्रायः शब्द के निर्देश से (ऐसा दिखाया जाता है कि) जिन (शब्द इत्यादि) का (कुछ) विशेष अपभ्रंश भाषा में कहा हुआ है, उनका भी क्वचित् (माहाराष्ट्री) प्राकृत के समान तथा शौरसेनी (भाषा) के समान कार्य होता है।

स्यादौ दीर्घह्रस्वौ ॥ ३३० ॥

अपभ्रंशे नाम्नोन्त्यस्वरस्य दीर्घह्रस्वौ स्यादौ प्रायो भवतः।

सौ।

ढोल्ला[3] सामला धण चम्पावण्णी।

नाइ सुवण्णरेह कसवट्टइ दिण्णी ॥ १ ॥

---

१. क्रमसेः—नगर। मार्गण।

२. क्रमसे — कच्चित्। वीणा। वेणी। बाहु। पृष्ठ। तृण। सुकृत। क्लिन्न। रेखा। गौरी।

३. विटः श्यामलः धन्या चम्पकवर्णा।
इव सुवर्णरेखा कषपट्टके दत्ता ॥ १ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आमन्त्र्ये ।

ढोल्ला[१] मइँ तुहुँ वारिया मा कुरु दीहा माणु ।
निद्दए गमिही रत्तडी दडवड होइ विहाणु ॥ २ ॥

स्त्रियाम् ।

बिट्टीए [२]मइ भणिय तुहुँ मा करु वङ्की दिट्ठि ।
पुत्ति सकण्णी भल्लि जिवँ मारइ हिअइ पइट्ठि ॥ ३ ॥

जसि ।

एइ[३] ति घोडा एह थलि एइ ति निसिआ खग्ग ।
एत्थु मुणीसिम जाणि अइ जो न वालइ वग्ग ॥ ४ ॥

एवं विभक्त्यन्तरेष्वप्युदाहार्यम् ।

अपभ्रंश भाषा में, विभक्ति प्रत्यय आगे होने पर, संज्ञा के अन्त्य स्वर का दीर्घ और ह्रस्व स्वर प्रायः होता है । उदा०—सि (प्रत्यय) आगे होने परः—ढोल्ला··· दिण्णी ॥१॥ संबोधन में:—ढोल्ला मइँ···विहाणु ॥२॥ स्त्रीलिंग में:—बिट्टीए··· पइट्ठि ॥३॥ जस् (प्रत्यय) आगे होने परः—एइति····· वग्ग ॥४॥ इसी प्रकार अन्य विभक्तियों के बारे में भी उदाहरण लेना है ।

स्यमोरस्योत् ॥ ३३१ ॥

अपभ्रंशे अकारस्य स्यमोः परयोः उकारो भवति ।

दहमुहु[४] भुवणभयंकरु तोसिअसंकरु णिग्गउ रहवरि चडिअउ ।
चउमुहु छंमुहु झाइवि एक्कहि लाइवि णावइ दइवें घडिअउ ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, सि और अम् (प्रत्यय) आगे होने पर, (शब्द में से अन्त्य) अकार का उकार होता है । उदा०—दहमुहु······घडिअउ ॥१॥

सौ पुंस्योद्वा ॥ ३३२ ॥

अपभ्रंशे पुल्लिङ्गे वर्तमानस्य नाम्नोकारस्य सौ परे ओकारो वा भवति ।

---

१. विट मया त्वं वारितः मा कुरु दीर्घं मानम् ।
निद्रया गमिष्यति रात्रिः शीघ्रं (दडवड) भवति विभातम् ॥२॥

२. पुत्रि (बिट्टीए) मया भणिता त्वं मा कुरु वक्रां दृष्टिम् ।
पुत्रि सकर्णा भल्लिर्यथा मारयति हृदये प्रविष्टा ॥ ३ ॥

३. एते ते अश्वाः (घोडा) एषा स्थली एते ते निशिताः खड्गाः ।
अत्र मनुष्यत्वं (पौरुषं) ज्ञायते यः नापि वालयति वल्गाम् ॥ ४ ॥

४. दशमुखः भुवनभयंकरः तोषितशंकरः निर्गतः रथवरे (रथोपरि) आरूढः ।
चतुर्मुखं षण्मुखं ध्यात्वा एकस्मिन् लगित्वा इव दैवेन घटितः ॥ १ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगलिअ[1]-नेह-निवट्टाहं जोअण-लक्खु विजाउ।
वरिस-सएण विजो मिलइ सहि सोक्खहँ सो ठाउ॥ १॥
पुंसीति किम्।
[2]अङ्गहिँ अङ्गु न मिलिउ हलि अहरें अहरु न पत्तु।
पिअ जोअन्तिहे मुहकमलु एम्वइ सुरउ समत्तु॥ २॥

अपभ्रंश भाषा में, पुलिङ्ग में होने वाले संज्ञा के (अन्त्य) अकार का, सि (प्रत्यय) आगे होने पर, विकल्प से ओकार होता है। उदा०—अगलिअ·········ठाउ॥ १॥ पुंलिङ्ग में होने वाले (संज्ञा) के ऐसा क्यों कहा है? (कारण संज्ञा पुलिङ्गी न होने पर, अकार का विकल्प से ओकार नहीं होता है। उदा०—) अङ्गहिँ·····समत्तु॥२॥

एट्टि॥ ३३३॥

अपभ्रंशे अकारस्य टायामेकारो भवति।
जे महु दिण्णा[3] दिअहडा दइएँ पवसंतेण।
ताण गणन्तिएँ अंगुलिउ जज्जरिआउ नहेण॥ १॥

अपभ्रंश भाषा में, टा (प्रत्यय) आगे होने पर (शब्द में से अन्त्य) अकार का एकार होता है। उदा०—जे महु·····नहेण॥१॥

ङिनेच्च॥ ३३४॥

अपभ्रंशे अकारस्य ङिना सह इकार एकारश्च भवतः।
सायरु[4] उप्परि तणु धरइ तलि घल्लइ रयणाइं।
सामि सुभिच्चु वि परिहरइ संमाणेइ खलाइं॥ १॥
तले[5] घल्लइ।

अपभ्रंश भाषा में, (शब्द में से अन्त्य) अकार के (आगे आने वाले) ङि (प्रत्यय) के सह इकार और एकार होते हैं। उदा०—सायरु·····खलाइं॥१॥ तले घल्लइ।

1. अगलित-स्नेह-निर्वृत्तानां योजनलक्षमपि जायताम्।
वर्षशतेनापि यः मिलति सखि सौख्यानां स स्थानम्॥ १॥
2. अङ्गैः अङ्गं न मिलितं सखि (हलि) अधरेण अधरः न प्राप्तः।
प्रियस्य पश्यन्त्याः मुखकमलं एवं सुरतं समाप्तम्॥ २॥
3. ये मम दत्ताः दिवसाः दयितेन प्रवसता।
तान् गणयन्त्याः (मम) अङ्गुल्यः जर्जरिताः नखेन॥ १॥
4. सागरः उपरि तृणानि धरति तले क्षिपति (घल्लइ) रत्नानि।
स्वामी सुभृत्यमपि परिहरति संमानयति खलान्॥ १॥
5. तले क्षिपति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भिस्येद्वा ॥ ३३५ ॥

अपभ्रंशे अकारस्य भिसि परे एकारो वा भवति ।

गुणहिँ [1]न संपइ कित्ति पर फल लिहिआ भुञ्जन्ति ।
केसरि न लहइ बोड्डिअ विगय लक्खेँहिं घेप्पन्ति ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, भिस् (प्रत्यय) आगे होने पर, (शब्द में से अन्त्य) अकार का एकार विकल्प से होता है । उदा० —गुणहिँ... ...घेप्पन्ति ॥ १ ॥

ङसेर्हेहू ॥ ३३६ ॥

अस्येति पञ्चम्यन्तं विपरिणम्यते । अपभ्रंशे अकारात् परस्य ङसेर्हे हु इत्यादेशौ भवतः ।

वच्छहे गृण्हइ[2] फलइं जणु कडुपल्लव वज्जेइ ।
तो वि महद्दुमु सुअणु जिवँ ते उच्छंगि धरेइ ॥ १ ॥
वच्छहु[3] गृण्हइ ।

(सूत्र ४.३३१ में से) अस्य (= अकारस्य) यह (षष्ठ्यन्त पद अब इस प्रस्तुत सूत्र के बारे में) पञ्चम्यन्त (यानी अकारात्) ऐसा बदल करके लिया गया है । अपभ्रंश भाषा में, (शब्द में से अन्त्य) अकार के आगे आने वाले ङसि (प्रत्यय) को हे और हु ऐसे आदेश होते हैं । उदा० —वच्छहे... ...धरेइ ॥ १ ॥; वच्छहु गृण्हइ ।

भ्यसो हुं ॥ ३३७ ॥

अपभ्रंशे अकारात् परस्य भ्यसः पञ्चमीबहुवचनस्य हुं इत्यादेशो भवति ।

दूरुड्डाणें पडिउ [4]खलु अप्पणु जणु मारेइ ।
जिह गिरि सिंगहुं पडिअ सिल अन्नु वि चूरुकरेइ ॥ १ ॥

१. गुणैः न संपत् कीर्तिः परं (जनाः) फलानि लिखितानि भुञ्जन्ति ।
केसरी न लभते कपर्दिकामपि (बोड्डिअ) गजाः लक्षैः गृह्यन्ते ॥ १ ॥

२. वृक्षात् गृह्णाति फलानि जनः कटु पल्लवान् वर्जयति ।
ततः अपि महाद्रुमः सुजनः यथा तान् उत्सङ्गे धरति ॥

३. वृक्षात् गृह्णाति ।

४. दूरोड्डाणेन पतितः खलः आत्मानं जनं (च) मारयति ।
यथा गिरिशृङ्गेभ्यः पतिता शिला अन्यदपि चूर्णीकरोति ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में, (शब्द में से अन्त्य) अकार के आगे आने वाले भ्यस् (प्रत्यय) को यानी पञ्चमी बहु (= अनेक) वचनी प्रत्यय को हुँ ऐसा आदेश होता है। उदा०—दूरुड्डाणें······चूरुकरेइ ॥ १ ॥

ङसः सु-हो-स्सवः ॥ ३३८ ॥

अपभ्रंशे अकारात् परस्य ङसः स्थाने सु हो स्सु इति त्रय आदेशा भवन्ति।

जो गुण गोवइ [1]अप्पणा पयडा करइ परस्सु।
तसु हउँ कलिजुगि दुल्लहहो बलि किज्जउं सुअणस्सु ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, (शब्द में से अन्त्य) अकार के आगे आने वाले ङस् (प्रत्यय) के स्थान पर सु, हो, और स्सु ऐसे तीन आदेश होते हैं। उदा०—जो गुण······सुअणस्सु ॥ १ ॥

आमो हं ॥ ३३९ ॥

अपभ्रंशे अकारात् परस्यामो हमित्यादेशो भवति।

तणहँ तइज्जी[2] भङ्गि न वि ते अवड-यडि वसन्ति।
अह जणु लग्गिवि उत्तरइ अह सह सइं मज्जन्ति ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, (शब्द में से अन्त्य) अकार के आगे आने वाले आम् (प्रत्यय) को हं ऐसा आदेश होता है। उदा०—तणहँ······मज्जन्ति ॥ १ ॥

हुं चेदुद्भ्याम् ॥ ३४० ॥

अपभ्रंशे इकारोकाराभ्यां परस्यामो हुं हं चादेशौ भवतः।

दइवु[3] घडावइ वणि तरुहुं सउणिहँ पक्क फलाइं।
सो वरि सुक्खु पइट्ठण वि कण्णहिँ खल वयणाइं ॥ १ ॥

प्रायोधिकारात् क्वचित् सुपोपि हुं।

[4]धवलु विसूरइ सामि अहो गरुआ भरु पिक्खेवि।
हउँ किं न जुत्तउ दुहुँ दिसिहिं खण्डइँ दोण्णि करेवि ॥ २ ॥

---

१. यः गुणान् गोपयति आत्मीयान् प्रकटान् करोति परस्य।
तस्य अहं कलियुगे दुर्लभस्य बलिं करोमि सुजनस्य ॥

२. तृणानां तृतीया भङ्गी नापि (= नैव) तानि अवटतटे वसन्ति।
अथ जनः लगित्वा उत्तरति अथ सह स्वयं मज्जन्ति ॥

३. देवः घटयति वने तरूणां शकुनीनां (कृते) पक्वफलानि।
तद् वरं सौख्यं प्रविष्टानि नापि कर्णयोः खल वचनानि ॥

४. धवलः खिद्यति (विसूरइ) स्वामिनं गुरुं भारं प्रेक्ष्य।
अहं किं न युक्तः द्वयोर्दिशोः खण्डे द्वे कृत्वा ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में, (शब्द में से अन्त्य) इकार और उकार इनके आगे आने वाले आम् (प्रत्यय) को हुँ और हं ऐसे आदेश होते हैं। उदा—दइवु... ... ... खलवयणाइं ॥ १ ॥ प्रायः (शब्द) का अधिकार होने से, क्वचित् सुप् (प्रत्यय) को भी हुँ (ऐसा आदेश होता है। उदा०—) धवलु... ...करेवि ॥ २ ॥

ङसि-भ्यस्-ङीनां हेहुंहयः ॥ ३४१ ॥

अपभ्रंशे इदुद्भ्यां परेषां ङसि भ्यस् ङि इत्येतेषां यथासंख्यं हे हुं हि इत्येते त्रय आदेशा भवन्ति। ङसेर्हे।

गिरिहे सिलायलु[1] तरुहे फलु घेप्पइ नीसावँन्नु।
घरु मेल्लेप्पिणु माणुसहं तो वि न रुच्चइ रन्नु ॥ १ ॥
भ्यसो हुं। तरुहुँ वि वक्कलु[2] फलु मुणि वि परिहणु असणु लहन्ति।
सामिहुँ एत्ति उ अग्गलउं आयरु भिच्चु गृहन्ति ॥ २ ॥
ङेर्हि।
अह[3] विरलपहाउ जि कलिहि धम्मु ॥ ३ ॥

अपभ्रंश भाषा में (शब्द में से अन्त्य) इ और उ इनके आगे आने वाले ङसि, भ्यस् और ङि इन (प्रत्ययों) का अनुक्रम से हे, हुँ, हि ऐसे ये तीन आदेश होते हैं। उदा०—ङसि (प्रत्यय) को हे (ऐसा आदेशः—) गिरिहे......रन्नु ॥ १ ॥ भ्यस् (प्रत्यय) को हुं (ऐसा आदेशः—) तरुहुँ......गृह्णन्ति ॥ २ ॥ ङि (प्रत्यय) को हि (ऐसा आदेश):—अह बिरल......धम्मु ॥ ३ ॥

आट्टो णानुस्वारौ ॥ ३४२ ॥

अपभ्रंशे अकारात् परस्य टा-वचनस्य णानुस्वारावादेशौ भवतः। दइएं पवसन्तेण (४.३३३.१)।

अपभ्रंश भाषा में (शब्द के अन्त्य) अकार के आगे आने वाले टा-वचन को ण और अनुस्वार ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—दइएं पवसन्तेण।

एं चेदुतः ॥ ३४३ ॥

अपभ्रंशे इकारोकाराभ्यां परस्य टा-वचनस्य ए चकारात् णानुस्वारौ च भवन्ति। एं।

---

१. गिरेः शिलातलं तरोः फलं गृह्यते निःसामान्यम्।
गृहं मुक्त्वा मनुष्याणां तथापि न रोचते अरण्यम् ॥

२. तरुभ्यः अपि वल्कलं फलं मुनयः अपि परिधानं अशनं लभन्ते।
स्वामिभ्यः इयत् अधिकं (अग्गलउं) आदरं भृत्या गृह्णन्ति ॥

३. अथ विरलप्रभावः एव कलौ धर्मः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अग्गिएँ उण्हउ होइ जगु वाएँ सीअलु तेवँ।
जो पुणु अग्गि सीअला तसु उण्हत्तणु केवँ ॥ १ ॥
णानुस्वारौ।
विप्पिअ-²आरउ जइ वि पिउ तो वि तं आणहि अज्जु।
अग्गिण दड्ढा जइ वि घरु तो तें अग्गि कज्जु ॥ २ ॥
एवमुकारादप्युदाहार्यः।

अपभ्रंश भाषा में (शब्द के अन्त्य) इकार और उकार इनके आगे आने वाले टा-वचन को एं और (सूत्र में से) चकार के कारण ण और अनुस्वार (ऐसे ये आदेश) होते हैं। उदा०—एं (आदेश):—अग्गिएँ··· केवँ ॥१॥ ण और अनुस्वार (आदेश):—विप्पिअ-आरउ······कज्जु ॥ २ ॥ इसी प्रकार उकार के आगे (आने वाले टा-वचन को होने वाले आदेशों के) उदाहरण ले।

स्यम्-जस्-शसां लुक् ॥ ३४४ ॥

अपभ्रंशे सि अम् जस् शस् इत्येतेषां लोपो भवति। एइ ति घोडा एह थलि (४.३३०.४) इत्यादि। अत्र स्यम्जसां लोपः।

जिवँ जिवँ वंकिम ³लोअणहं णिरु सामलि सिक्खेइ।
तिवँ तिवँ वम्महु निअय-सर खर-पत्थरि तिक्खेइ ॥ १ ॥
अत्र स्यम् शसां लोपः ॥

अपभ्रंश भाषा में, सि, अम्, जस् और शस् इन (प्रत्ययों) का लोप होता है। उदा०—एइ ति······थलि, इत्यादि; यहाँ सि, अम् और जस् इन (प्रत्ययों) का लोप हुआ है। (तथा) जिवँ जिवँ तिक्खेइ ॥ १ ॥; यहाँ सि, अम् और शस् इन (प्रत्ययों) का लोप हुआ है।

षष्ठ्याः ॥ ३४५ ॥

अपभ्रंशे षष्ठ्या विभक्त्याः प्रायो लुग् भवति।
संगर⁴-सएहिं जु वण्णिज्जइ देक्खु अम्हारा कन्तु।
अइमत्तहं चत्तं कुसहं गय कुम्भइं दारन्तु ॥ १ ॥
पृथग्योगो लक्ष्यानुसारार्थः।

---

१. अग्निना उष्णं भवति जगत् वातेन शीतलं तथा।
यः पुनः अग्निना शीतलः तस्य उष्णत्वं कथम् ॥

२. विप्रियकारकः यद्यपि प्रियः तदापि तं आनय अद्य।
अग्निना दग्धं यद्यपि गृहं तदापि तेन अग्निना कार्यम् ॥

३. यथा यथा वक्रिमाणं लोचनयोः नितरां श्यामला शिक्षते।
तथा तथा मन्मथः निजक-शरान् खर-प्रस्तरे तीक्ष्णयति ॥

४. सङ्गरशतेषु यो वर्ण्यते पश्य अस्माकं कान्तम्।
अतिमत्तानां त्यक्ताङ्कुशानां गजानां कुम्भान् दारयन्तम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में, षष्ठी विभक्ति (प्रत्ययों) का प्रायः लोप होता है। उदा०—संगर-स एहिँ··· ···दारन्तु ॥ १ ॥ उदाहरणों के अनुसार (ऐसा लोप होता है) यह दिखाने के लिए, (सूत्र ४.३४४ से) पृथक् ऐसा (सूत्र ४.३४५ में प्रस्तुत) नियम कहा गया है।

आमन्त्र्ये जसो होः ॥ ३४६ ॥

अपभ्रंशे आमन्त्र्येर्थे वर्तमानान्नाम्नः परस्य जसो हो इत्यादेशो भवति। लोपापवादः।

तरुणहो [1]तरुणिहो मुणि उ मइँ करहु म अप्पहोँ घाउ ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, सम्बोधनार्थी होने वाली संज्ञा के आगे आने वाले जस् (प्रत्यय) को हो ऐसा आदेश होता है। (जस् प्रत्यय का) लोप होता है (सूत्र ४.३४४ देखिए) इस नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—तरुणहो··· ···घाउ ॥ १ ॥

भिस्सुपोर्हिं ॥ ३४७ ॥

अपभ्रंशे भिस्सुपोः स्थाने हिं इत्यादेशो भवति। गुणहिँ न सम्पइ कित्ति पर (४.३३५.१)। सुप्।

भाईरहि [2] जिवँ भारइ मग्गेँहिँ तिहिँ वि पयट्टइ ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, भिस् और सुप् इन (प्रत्ययों) के स्थान पर हिं ऐसा आदेश होता है। उदा०—(भिस् के स्थान पर हिं आदेश) :—गुणहिँ··· ···पर। सुप् (के स्थान पर हिं आदेश) :—भाईरहि··· ···पयट्टइ ॥ १ ॥

स्त्रियां जस्शसोरुदोत् ॥ ३४८ ॥

अपभ्रंशे स्त्रियां वर्तमानान्नाम्नः परस्य जसः शसश्च प्रत्येकमुदोतावादेशौ भवतः। लोपापवादौ। जसः। अंगुलिउ जज्जरियाउ नहेण (४.३३३.१)। शसः।

सुन्दर सव्वं गाउ [3] विलालिणीओ पेच्छन्ताण ॥ १ ॥
वचनभेदान्न यथासंख्यम्।

---

१. (हे) तरुणाः तरुण्यः (च) ज्ञातं मया कुरुत मा आत्मनः घातम्।

२. भागीरथी यथा भारते त्रिषु मार्गेषु अपि प्रवर्तते।

३. सुन्दरसर्वाङ्गीः विलासिनीः प्रेक्षमाणानाम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में, स्त्रीलिंग में होने वाली संज्ञा के आगे होने वाले जस् और शस् इन प्रत्ययों को प्रत्येक को उ और ओ ऐसे आदेश होते हैं। (जस् और शस् प्रत्ययों का ; लोप होता है (सूत्र ४.३४४ देखिए) इस नियम का अपवाद (ये दो आदेश होते हैं । उदा०—जस् को आदेश :—अंगुलिउ ‥ ‥नहेण। शस् (को आदेश) : -सुन्दर‥‥ ‥पेच्छन्ताप ॥ १ ॥ (आदेश कहते समय सूत्र में) भिन्न वचन प्रयुक्त किए जाने से (ये आदेश) अनुक्रम से नहीं होते हैं।

ट ए ॥ ३४९ ॥

अपभ्रंशे स्त्रियां वर्तमानान्नाम्नः परस्याष्टायाः स्थाने ए इत्यादेशो भवति।

निअ-[1]मुह-करहिँ वि मुद्ध कर अन्धारइ पडिपेक्खइ।
ससिमण्डलचन्दिमएँ पुणु काइँ न दूरे देक्खइ॥ १ ॥
जहिं [2]मरगयकन्तिएँ संवलिअं ॥ २ ॥

अपभ्रंश भाषा में, स्त्रीलिंग में होने वाली संज्ञा के आगे आने वाले टा (प्रत्यय) के स्थान पर ए ऐसा आदेश होता है। उदा०—निअमुह‥‥‥‥‥देक्खइ ॥ १ ॥ जहिँ‥‥‥संवलिअं ॥ २ ॥

ङस् ङस्योर्हे ॥ २५० ॥

अपभ्रंशे स्त्रियां वर्तमानान्नाम्नः परयोर्ङस् ङसि इत्येतयोर्हे इत्यादेशो भवति।

ङसः। तुच्छ[3]मज्झहे तुच्छजम्पिरहे।
तुच्छच्छरोमावलिहे तुच्छराय तुच्छयर-हासहे।
पियवयणु अलहन्ति अहे तुच्छकाय-वम्मह-निवासहे।
अन्नु जु तुच्छउँ तहे धणहे तं अक्खणह न जाइ।
कटरि थणंतरु मुद्धडहे जें मणु विच्चि ण माइ॥ १ ॥

---

१. निजमुखकरैः अपि मुग्धा करं अन्धकारे प्रतिप्रेक्षते।
शशिमण्डलचन्द्रिकया पुनः किं न दूरे पश्यति॥

२. यत्र (यस्मिन्) मरकतकान्त्या संवलितम्।

३. तुच्छमध्यायाः तुच्छजल्पनशीलायाः।
तुच्छाच्छरोमावल्याः तुच्छरागायाः तुच्छतर-हासायाः।
प्रियवचनमलभमानायाः तुच्छकाय-मन्मथ-निवासायाः।
अन्यद् यद् तुच्छं तस्या धन्यायाः तदाख्यातुं न याति।
आश्चर्यं स्तनान्तरं मुग्धायाः येन मनो वर्त्मनि न माति॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ङसे ।

फोडेन्ति[1] जे हियडउँ अप्पणउँ ताहँ पराई कवण घृण ।
रक्खे ज्जहु लोअहो अप्पणा बालहे जाया विसम थण ॥ २ ॥

अपभ्रंश भाषा में, स्त्रीलिंग में होने वाली संज्ञा के आगे आने वाले ङस् और ङसि इन (प्रत्ययों) को हे ऐसा आदेश होता है। उदा०—ङस् (का आदेश):—तुच्छमज्झहे……ण माइ ॥ ङसि (का आदेश) :—फोडेन्ति…विसम थण ॥२॥

भ्यसामोर्हुः ॥ ३५१ ॥

अपभ्रंशेस्त्रियां वर्तमानान्नाम्नः परस्य भ्यस आमश्च हु इत्यादेशो भवति ।

भल्ला[2] हुआ जु मारिआ बहिणि महारा कन्तु ।
लज्जेज्जन्तु वयंसिअहु जइ भग्गा घरु एन्तु ॥ १ ॥
वयस्याभ्यो वयस्यानां वेत्यर्थः ।

अपभ्रंश भाषा में, स्त्रीलिंग में होने वाली संज्ञा के आगे आने वाले भ्यस् और आम् इन (प्रत्ययों) को हु ऐसा आदेश होता है। उदा०— भल्ला……एन्तु ॥ १ ॥ (इस उदाहरण में, वयंसिअहु यानी)वयस्याभ्यः (सखीओं से ऐसी पंचमी विभक्ति) अथवा वयस्यानाम् (सखिओं के ऐसी षष्ठी विभक्ति), ऐसा अर्थ है।

ङेर्हि ॥ ३५२ ॥

अपभ्रंशे स्त्रियां वर्तमानान्नाम्नः परस्य ङेः सप्तम्येकवचनस्य हि इत्यादेशो भवति ।

वायसु[3] उड्डावन्तिअए पिउ दिट्ठउ सहस त्ति ।
अद्धा वलया महिहि गय अद्धा फुट्ट तड त्ति ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, स्त्रीलिंग में होने वाली संज्ञा के आगे आने वाले ङि को यानी सप्तमी एकवचनी प्रत्यय को हि ऐसा आदेश होता है। उदा०—वायसु…तडत्ति ॥२॥

---

१. स्फोटयतः यौ हृदयं आत्मीयं तयोः परकीया (परविषये) का घृणा ।
रक्षत लोकाः आत्मानं बालायाः जातौ विषमौ स्तनौ ॥

२. भव्यं (साधु) भूतं यन्मारितः भगिनि अस्मदीयः कान्तः ।
अलज्जिष्यत् वयस्याभ्यः यदि भग्नः गृहं ऐष्यत् ॥

३. वायसं उड्डापयन्त्या प्रियो दृष्टः सहसेति ।
अर्धानि वलयानि मह्यां गतानि अर्धानि स्फुटितानि तटिति ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्लीबे जस्-शसोरिं ॥ ३५३ ॥

अपभ्रंशे क्लीबे वर्तमानान्नाम्नः परयोर्जस्शसोः इं इत्यादेशो भवति ।

[1]कमलइँ मेल्लवि अलि उलइं करिगण्डाइँ महन्ति ।

असुलहमेच्छण जाहँ भलि ते ण वि दूर गणन्ति ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, नपुंसकलिंग में होने वाली संज्ञा के आगे आने वाले जस् और शस् इन (प्रत्ययों) को इं ऐसा आदेश होता है । उदा०—कमलइँ···गणन्ति ॥१॥

कान्तस्यात उं स्यमोः ॥ ३५४ ॥

अपभ्रंशे क्लीबे वर्तमानस्य ककारान्तस्य नाम्नो योकारस्तस्य स्यमोः परयोः उं इत्यादेशो भवति । अन्नु जु तुच्छउँ तहें धणहे (४.३५०.१) ।

[2]भग्गउँ देक्खिवि निअयबलु बलु पसरिअउँ परस्सु ।

उम्मिल्लइ ससिरेह जिवँ करि करवालु पियस्सु ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, नपुंसकलिंग में होने वाली ककारान्त संज्ञा का जो (अन्त्य) अकार, उसके आगे सि और अम् (प्रत्यय) होने पर; उस (अकार) को उं ऐसा आदेश होता है । उदा०— अन्नु ···धणहें; भग्गउँ·······पियस्सु ॥ १॥

सर्वादेर्ङसेर्हां ॥ ३५५ ॥

अपभ्रंशे सर्वादेरकारान्तात् परस्य ङसेर्हां इत्यादेशो भवति । जहां[3] होन्तउ[4] आगदो[5] । तहां[6] होन्त[4] उ आगदो[5] । कहां[7] होन्तउ[4] आगदो[5] ।

अपभ्रंश भाषा में, अकारान्त सर्वनामों (सर्वादि) के आगे आने वाले ङसि (प्रत्यय) को हां ऐसा आदेश होता है । उदा०—जहां······आगदो ।

किमो डिहे वा ॥ ३५६ ॥

अपभ्रंशे किमोकारान्तात् परस्य ङसे डिहे इत्यादेशो वा भवति ।

जइ[8] तहे तुट्टउ नेहडा मइँ सहुँ न वि तिल-तार ।

तं किहें वंकें हिं लोअणें हिं जोइज्जउँ सय-वार ॥ १ ॥

---

१. कमलानि मुक्त्वा अलिकुलानि करिगण्डान् कांक्षन्ति ।
असुलभं एष्टुं येषां निर्बन्धः (भलि) ते नापि (नैव) दूरं गणयन्ति ॥

२. भग्नकं दृष्ट्वा निजक-बलं बलं प्रसृतकं परस्य ।
उन्मीलति शशिलेखा यथा करे करवालः प्रियस्य ॥

३. यस्मात् । ४. भवान् । ५. आगतः ।

६. तस्मात् । ७. कस्मात् ।

८. यदि तस्याः त्रुट्यतु स्नेहः मया सह नापि तिलतारः (?) ।
तत् कस्माद् वक्राभ्यां लोचनाभ्यां दृश्ये (अहं) शतवारम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में, अकारान्त किम् (यानी क) इस सर्वनाम के आगे आने वाले ङसि (प्रत्यय) को डिहे ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा॰—जइ...सयबार॥१॥

ङेर्हि ॥ ३५७ ॥

अपभ्रंशे सर्वादेरकारान्तात् परस्य ङेः सप्तम्येकवचनस्य हिं इत्यादेशो भवति।

जहिँ कप्पिज्जइ[1] सरिण सरु छिज्जइ खग्गिण खग्गु।
तहिँ तेहइ भडघडनिवहि कन्तु पयासइ मग्गु ॥ १ ॥

एक्कहिँ[2] अक्खिहिँ सावणु अन्नहिँ भद्दवउ
माहउ महिअल सत्थरि गण्डत्थले सरउ।
अंगहिँ गिम्ह सुहच्छी-तिलवणि मग्गसिरु
तहेँ मुद्धहेँ मुहपंकइ आवासिउ सिसिरु ॥ २ ॥

हिअडा[3] फुट्टि तड त्ति करि कालक्खेवेँ काइं।
देक्खउँ हयविहि कहिँ ठवइ पइँ विणु दुक्खसयाइं ॥ ३ ॥

अपभ्रंश भाषा में, अकारान्त सर्वनाम के आगे आने वाले ङि (प्रत्यय) को यानी सप्तमी एकवचनी प्रत्यय को हिं ऐसा आदेश होता है। उदा॰—जहिँ...मग्गु ॥१॥ एक्कहि......सिसिरु ॥२॥; हिअडा......सयाइं ॥३॥

यत्तत्किंभ्यो ङसो डासुर्नवा ॥ ३५८ ॥

अपभ्रंशे यत्तत् किम् इत्येतेभ्योकारान्तेभ्यः परस्य ङसो डासु इत्यादेशो वा भवति।

कन्तु[4] महारउ हलि सहिए निच्छइं रूसइ जासु।
अत्थिहिँ सत्थिहिँ हत्थिहिँ वि ठाउ वि फेडइ तासु ॥ १ ॥

---

१. यत्र (यस्मिन्) कल्प्यते शरेण शरः छिद्यते खड्गेन खड्गः।
तस्मिन् तादृशे भट-घटा-निवहे कान्तः प्रकाशयति मार्गम् ॥

२. एकस्मिन् अक्षिणश्रावणः अन्यस्मिन् भाद्रपदः
माधवः (माधकः) महीतल-स्रस्तरे गण्डस्थले शरत्।
अङ्गेषु ग्रीष्मः सुखासिका-तिलवने मार्गशीर्षः
तस्याः मुग्धायाः मुखपंकजे आवासितः शिशिरः ॥

३. हृदयस्फुटतटिति (शब्दं) कृत्वा कालक्षेपेण किम्।
पश्यामि हतविधिः क्व स्थापयति त्वया विना दुःखशतानि ॥

४. कान्तः अस्मदीयः हला सखिके निश्चयेनरुष्यति यस्य (यस्मै)।
अर्थैः शस्त्रैः हस्तैरपि स्थानमपि स्फोटयति तस्य ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीविउ [1]कासु न वल्लहउँ धणु पुणु कासु न इट्ठु।
दोण्णि वि अवसर-निवडिअइं तिण सम गणइ विसिट्ठु ॥ २ ॥

अपभ्रंश भाषा में, अकारान्त होने वाले यद्, तद् और किम् (यानी ज, त और क) इन सर्वनामों के आगे आने वाले ङस् (प्रत्यय) को डासु ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—किन्नु……तासु ॥१॥; जीविउ……विसिट्ठु ॥२॥

स्त्रियां डहे ॥ ३५९ ॥

अपभ्रंशे स्त्रीलिंगे वर्तमानेभ्यो यत्तत्किभ्यः परस्य ङसो डहे इत्यादेशो वा भवति। [2]जहे केरउ[3]। [4]तहे केरउ[3]। [5]कहे केरउ[3]।

अपभ्रंश भाषा में, स्त्रीलिंग में होने वाले यद्, तद् और किम् (सर्वनामों) के आगे आने वाले ङस् (प्रत्यय) को डहे ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०— जहे……केरउ।

यत्तदः स्यमोर्ध्रुं त्रं ॥ ३६० ॥

अपभ्रंशे यत्तदोः स्थाने स्यमोः परयोर्यथासंख्यं ध्रुं त्रं इत्यादेशौ वा भवतः।

प्रंगणि[6] चिट्ठदि नाहु ध्रुं त्रं रणि करदि न भ्रन्ति ॥ १ ॥

पक्षे। तं[7] बोल्लिअइ जु निव्वहइ।

अपभ्रंश भाषा में, सि और अम् (प्रत्यय) आगे होने पर, यद् और तद् इनके स्थान पर अनुक्रम से ध्रुं और त्रं ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—प्रंगणि… भ्रंति ॥१॥ (विकल्प-) पक्षमें:—तं बोल्लिअइ जु निव्वहइ।

इदम इमुः क्लीबे ॥ ३६१ ॥

अपभ्रंशे नपुंसकलिंगे वर्तमानस्येदमः स्यमोः परयोः इमु इत्यादेशो भवति। इमु[8] कुलु तुह तणउ। इमु [9]कुलु देक्खु।

अपभ्रंश भाषा में, नपुंसकलिंग में होने वाले इदम् (सर्वनाम) को, आगे सि और अम् (प्रत्यय) होने पर, इमु ऐसा आदेश होता है। उदा०—इमु … देक्खु।

---

१. जीवितं कस्य न वल्लभकं धनं पुनः कस्य न इष्टम्।
दवे अपि अवसर-निपतिते तृणसमे गणयति विशिष्टः ॥

२. यस्याः। ३. कृते। ४. तस्याः। ५. कस्याः।

६. प्राङ्गणे तिष्ठति नाथः यद् तद् रणे करोति न भ्रान्तिम्।

७. तत् जल्प्यते यन्निर्वहति। ८. इदं कुलं तव तनय। ९. इदं कुलं पश्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एतदः स्त्री-पुं-क्लीबे एह एहो एहु ॥ ३६२ ॥

अपभ्रंशे स्त्रियां पुंसि नपुंसके वर्तमानस्यैतदः स्थाने स्यमोः परयो र्यथा संख्यं एह एहो एहु इत्यादेशा भवन्ति।

एह [1]कुमारी एहो नरु एहु मणोरह-ठाणु।
एहउँ वढ चिन्तन्ताहं पच्छइ होइ विहाणु॥ १॥

अपभ्रंश भाषा में, स्त्रीलिंग, पुंल्लिंग और नपुंसकलिंग में होने वाले एतद् (इस सर्वनाम) के स्थान पर, आगे सि और अम् (प्रत्यय) होने पर, अनुक्रम से एह, एहो, एहु ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—एह कुमारी……विहाणु ॥१॥

एइर्जस्-शसोः ॥ ३६३ ॥

अपभ्रंशे एतदो जस्-शसोः परयोः एइ इत्यादेशो भवति। एइ ति घोडा एह थलि (४.३३०.४)। एइ[2] पेच्छ।

अपभ्रंश भाषा में, जस् और शस् (प्रत्यय) आगे होने पर, एतद् (सर्वनाम) को एइ ऐसा आदेश होता है। उदा०—एइति……थलि; एइ पेच्छ।

अदस ओइ ॥ ३६४ ॥

अपभ्रंशे अदसः स्थाने जस्-शसो-परयोः ओइ इत्यादेशो भवति।

जइ[3] पुच्छह धर वड्डाइं तो वड्डा धर ओइ।
विहलिअ-जण-अब्भुद्धरणु कन्तु कुडीरइ जोइ॥ १॥

अमूनि वर्तन्ते पृच्छ वा।

अपभ्रंश भाषा में, जस् और शस् (प्रत्यय) आगे होने पर, अदस् (सर्वनाम) के स्थान पर ओइ ऐसा आदेश होता है। उदा०—जइ……जोइ ॥१॥ (यहाँ) अमूनि वर्तन्ते पृच्छ वा (वे घर हैं अथवा उनके बारे में पूछो, ऐसा अर्थ है।

इदम आयः ॥ ३६५ ॥

अपभ्रंशे इदम्-शब्दस्य स्यादौ आय इत्यादेशो भवति।

---

१. एषाकुमारी एष (अहं) नरः एतद् मनोरथ-स्थानम्।
एतद् मूर्खाणां चिन्तमानानां पश्चाद् भवति विभातम्॥

२. एतान् प्रेक्षस्व।

३. यदि पृच्छत गृहाणि महान्ति (वड्डाइं) तद् (एतः) महान्ति गृहाणि अमूनि।
विह्वलित-जनाभ्युद्धरणं कान्तं कुटीरके पश्य॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[1]आयइं लोअहों लोअणइं जाई सरइं न भन्ति।
अप्पिए दिट्ठइ मउलिअहिं पिए दिट्ठइ विहसन्ति॥ १॥
सोसउ[2] म सोसउ च्चिअ उअही वडवानलस्स किं तेण।
जं जलइ जले जलणो आएण वि किं न पज्जत्तं॥ २॥
आयहों दड्ढ[3] कलेवरहो जं वाहिउ तं सारु।
जइ उट्ठब्भइ तो कुहइ अह डज्झइ तो छारु॥ ३॥

अपभ्रंश भाषा में, विभक्ति प्रत्यय आगे होने पर, इदम् (इस सर्वनाम) शब्द को आय ऐसा आदेश होता है। उदा०—आयइं······विहसन्ति॥ १॥; सोसउ······पज्जत्तं॥२॥; आयहों······छारु॥३॥

सर्वस्य साहो वा॥ ३६६॥

अपभ्रंशे सर्वशब्दस्य साह इत्यादेशो वा भवति।

साहु[4] वि लोउ तडप्फडइ वड्डत्तणहों तणेण।
वड्डप्पणु परि पाविअइ हत्थि मोक्कलडेण॥ १॥

पक्षे। [5]सव्व वि।

अपभ्रंश भाषा में, सर्व (इस सर्वनाम) शब्द को साह ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—साहु······मोक्कलडेण॥१॥ (विकल्प–) पक्ष में:—सव्वुवि।

किमः काइं-कवणौ वा॥ ३६७॥

अपभ्रंशे किमः स्थाने काइं कवण इत्यादेशौ वा भवतः।

जइ[6] न सु आवइ दूइ घरु काइं अहो मुहु तुज्झु।
वयणु जु खण्डइ तउ सहिए सो पिउ होइ न मज्झु॥ १॥

---

१. इमानि लोकस्य लोचनानि जातिं स्मरन्ति न भ्रान्तिः।
अप्रिये दृष्टे मुकुलन्ति प्रिये दृष्टे विकसन्ति॥

२. शुष्यतु मा शुष्यतु एव (वा) उदधिः वडवानलस्य किं तेन।
यद् ज्वलति जले ज्वलनः एतेनापि किं न पर्याप्तम्॥

३. अस्य दग्धकलेवरस्य यद् वाहितं (=लब्धं) तत् सारम्।
यदि आच्छाद्यते ततः कुथ्यति अथ (यदि) दह्यते ततः क्षारः॥

४. सर्वोऽपि लोकः प्रस्पन्दते (तडप्फडइ) महत्त्वस्य कृते।
महत्त्वं पुनः प्राप्यते युक्तेन॥

५. सर्वः अपि।

६. यदि न स आयाति दूति गृहं किं अधो मुखं तव।
वचनं यः खण्डयति तव सखि के स प्रियो भवति न मम॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काइँ न दूरे देक्खइ। (४.३३६.१)।

[1]फोडेन्ति जे हि अडउँ अप्पणउँ ताहँ पराई करण घृण।
रक्खेज्जहु लोअहो अप्पणा बालहे जाया विसम थण ॥ २ ॥
[2]सुपुरिस कंगुहे अणुहरहिं भण कज्जें कवणेण।
जिवँ जिवँ वड्डत्तणु लहहिं तिवँ तिवँ नवहिं सिरेण ॥ ३ ॥

पक्षे।

जइ[3] ससणेही तो मुइअ अह जीवइ निन्नेह।
बिहिँ वि पयारेहिँ गइअ धण किं गज्जहि खल मेह ॥ ४ ॥

अपभ्रंश भाषा में, किम् (सर्वनाम) के स्थान पर काइं और कवण ऐसे आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०—जइ न…मज्झु ॥१॥ काइँ…देक्खइ; फोडेन्ति…थण॥२॥; सुपुरिस…सिरेण ॥३॥ (विकल्प–) पक्षमें:—जइ ससणेहो…मेह ॥४॥

युष्मदः सौ तुहुं ॥ ३६८ ॥

अपभ्रंशे युष्मदः सौ परे तुहुं इत्यादेशो भवति।

भमर[4] म रुण झुणि रण्णडइ सा दिसि जोइ म रोइ।
सा मालइ देसं तरिअ जसु तुहुँ मरहि विओइ ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, युष्मद् (सर्वनाम) को, सि (प्रत्यय) आगे होने पर, तुहुं ऐसा आदेश होता है। उदा०—भमर……विओइ ॥१॥

जस्-शसो स्तुम्हे तुम्हइं ॥ ३६९ ॥

अपभ्रंशे युष्मदो जसि शसि च प्रत्येकं तुम्हे तुम्हइं इत्यादेशौ भवतः। तुम्हे[5] जाणह। तुम्हे तुम्हइं पेच्छइ। वचनभेदो यथासंख्यनिवृत्त्यर्थः।

अपभ्रंश भाषा में, युष्मद् (सर्वनाम) को जस् और शस् (प्रत्यय) आगे होने पर, प्रत्येक को तुम्हे और तुम्हइं ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—तुम्हे…पेच्छइ। अनुक्रम की निवृत्ति करने के लिए (सूत्र में) वचन का भेद (किया) है।

---

१. सूत्र ४.३५० के नीचे श्लोक २ देखिए।
२. सत्पुरुषाः कङ्गोः अनुहरन्ति भण कार्येण केन।
यथा यथा महत्त्वं लभन्ते तथा तथा नमन्ति शिरसा ॥
३. यदि सस्नेहा तन्मृता अथ जीवति निःस्नेहा।
द्वाभ्यामपि प्रकाराभ्यां गत्तिका (=गता) धन्या किं गर्जसि खल मेघ ॥
४. भ्रमर मा रुणझुणशब्दं कुरु अरण्ये तां दिशं विलोकय मा रुदिहि।
सा मालती देशान्तरिता यस्याः त्वं म्रियसे वियोगे ॥
५. क्रमशः—यूयं जानीथ। युष्मा० प्रेक्षते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टाङ्यमा पइं तइं ॥ ३७० ॥

अपभ्रंशे युष्मदः टा ङि अम् इत्येतैः सह पइं तइं इत्यादेशौ भवतः ।

टा ।

पइँ [1]मुक्काहँ वि वरतरु फिट्टइ पत्तत्तणं न पत्ताणं ।
तुह पुणु छाया जइ होज्ज कहवि ता तेहिँ पत्तेहिं ॥ १ ॥
महु[2] हिअउँ तइं तारा तुहुँ स वि अन्नें विनडिज्जइ ।
पिअ काइं करउँ हउँ काइँ तुहुँ मच्छें मच्छु गिलिज्जइ ॥ २ ॥
ङिना । [3]पइँ मइँ बेहिँ वि रणगयहिं को जयसिरि तक्केइ ।
केसहिँ लेप्पिणु जमघरिणि भण सुहु को थक्केइ ॥ ३ ॥

एवं तइ । अमा ।

पइँ[4] मेल्लन्तिहेँ महु मरणु मइँ मेल्लन्तहो तुज्झु ।
सारस जसु जो वेग्गला सो वि कृदन्तहो सज्झु ॥ ४ ॥

एवं तइं ।

अपभ्रंश भाषा में, युष्मद् को टा, ङि, और अम् इन (प्रत्ययों) के साथ पइं और तइं ऐसे आदेश होते हैं । उदा०—टा (प्रत्यय) के सह:—पइँ मुक्काहँ···पत्तेहिं ॥१॥; महु·····गिलिज्जइ ॥२ ङि (प्रत्यय) के सह:—पइँ······थक्केइ ॥३॥ इसी प्रकार तइं (आदेश भी होता है) । अम् (प्रत्यय) के सह :—पइँ···मेल्लन्तिहेँ··· सज्झु ॥४॥ इसी प्रकार तइं (ऐसा आदेश भी होता है) ।

भिसा तुम्हेहिं ॥ ३७१ ॥

अपभ्रंशे युष्मदो भिसा सह तुम्हेहिं इत्यादेशो भवति ।

---

१. त्वया मुक्तानामपि वरतरो विनश्यति (फिट्टइ) पत्रत्वं न पत्राणाम् ।
तव पुनः छाया यदि भवेत् कथमपि तदा तैः पत्रैः (एव) ॥

२. मम हृदयं त्वया तया त्वं सापि अन्येन विनाट्यते ।
प्रिय किं करोम्यहं किं त्वं मत्स्येन मत्स्यः गिल्यते ॥

३. त्वयि मयि द्वयोरपि रणगतयोः को जयश्रियं तर्कयति ।
केशैर्गृहीत्वा यमगृहिणीं भण सुखं कस्तिष्ठति ॥

४. त्वां मुञ्चन्त्याः मम मरणं मां मुञ्चतस्तव ।
सारसः (यथा) यस्य दूरे (वेग्गला) सः अपि कृतान्तस्य साध्यः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[1]तुम्हेहिं अम्हेहिं जं किअउं दिट्ठउं बहुअजणेण ।
तं तेवड्डउ समरभरु निज्जिउ एक्क खणेण ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, युष्मद् (सर्वनाम) को भिस् (प्रत्यय) के सह तुम्हेहिं ऐसा आदेश होता है । उदा०—तुम्हेहिं ······खणेण ॥१॥

ङसि-ङस्भ्यां तउ तुज्झ तुध्र ॥ ३७२ ॥

अपभ्रंशे युष्मदो ङसिङस्भ्यां सह तउ तुज्झ तुध्र इत्येते त्रय आदेशा भवन्ति । [2]तउ होन्त[3] उ [4]आगदो । तुज्झ[2] होन्त[3] उ [4]आगदो । तुध्र[2] होन्त[3] उ आगदो[4] ।

ङसा ।

तउ[5] गुणसंपइ तुज्झ मदि तुध्र अणुत्तर खन्ति ।
जइ उप्पत्ति अन्न जण महिमंडलि सिक्खन्ति ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, युष्मद् (सर्वनाम) को ङसि और ङस् (प्रत्ययों) के सह तउ, तुज्झ और तुध्र ऐसे ये तीन आदेश होते हैं । उदा०—(ङसि प्रत्यय के सह):—तउ······आगदो । ङस् (प्रत्यय) के सह:—तउ गुण······सिक्खन्ति ॥ १ ॥

भ्यसाम्भ्यां तुम्हहं ॥ ३७३ ॥

अपभ्रंशे युष्मदो भ्यस् आम् इत्येताभ्यां सह तुम्हहं इत्यादेशो भवति । तुम्हहं[6] होन्तउ आगदो । तुम्हहं[7] केरउं धणु ।

अपभ्रंश भाषा में, युष्मद् (सर्वनाम) को भ्यस् और आम् (इन प्रत्ययों) के सह तुम्हहं ऐसा आदेश होता है । उदा०—तुम्हहं······धणु ।

तुम्हासु सुपा ॥ ३७४ ॥

अपभ्रंशे युष्मदः सुपा सह तुम्हासु इत्यादेशो भवति । तुम्हासु[8] ठिअं ।

अपभ्रंश भाषा में, युष्मद् (सर्वनाम) को सुप् प्रत्यय के सह तुम्हासु ऐसा आदेश होता है । उदा०—तुम्हासु ठिअं ।

---

१. युष्माभिः अस्माभिः यत् कृतं दृष्टं (कं) बहुकजनेन ।
दत् (तदा) तावन्मात्रः समरभरः निर्जितः एकक्षणेन ॥

२. त्वत् । ३. भवान् (भवन्) । ४. आगतः ।

५. तव गुणसम्पदं तव मतिं तव अनुत्तरां क्षान्तिम् ।
यदि उत्पद्य अन्यजनाः महीमण्डले शिक्षन्ते ॥

६. युष्मद् भवान् (भवन्) आगतः । ७. युष्माकं कृते धनम् । ८. युष्मसु स्थितम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सावस्मदो हउं ॥ ३७५ ॥

अपभ्रंशे अस्मदः सौ परे हउं इत्यादेशो भवति। तसु हउं कलिजुगि दुल्लहहो (४.३३८.१)।

अपभ्रंश भाषा में, अस्मद् (सर्वनाम) को सि (प्रत्यय) आगे होने पर हउं ऐसा आदेश होता है। उदा०—तसु......दुल्लहहो।

जस्-शसोरम्हे अम्हइं ॥ ३७६ ॥

अपभ्रंशे अस्मदो जसि शसि च परे प्रत्येकं अम्हे अम्हइं इत्यादेशौ भवतः।

अम्हे थोआ[1] रिउ बहुअ कायर एम्व भणन्ति।
मुद्धि निहालहि गयणयलु कइ जण जोण्ह करन्ति ॥ १ ॥

अम्बणु[2] लाइवि जे गया पहिअ पराया के वि।
अवस न सुअहिं सुहच्छिअहिं जिवँ अम्हइं तिवँ ते वि ॥ २ ॥

अम्हे देक्खइ[3]। अम्हइं देक्खइ। वचनभेदो यथासंख्यनिवृत्त्यर्थः।

अपभ्रंश भाषा में, अस्मद् (सर्वनाम) को जस् और शस् (प्रत्यय) आगे होने पर, प्रत्येक को अम्हे और अम्हइं ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—अम्हे......करन्ति ॥१॥; अम्बणु...ते वि ॥२॥; अम्हे...देक्खइ। अनुक्रम की निवृत्ति करने के लिए (सूत्र में) वचन-भेद (किया हुआ) है।

टाङ्यमा मइं ॥ ३७७ ॥

अपभ्रंशे अस्मदः टा ङि अम् इत्येतैः सह मइं इत्यादेशो भवति।

टा। मइं[4] जाणिउ पिअ विरहिअहं कवि धर होइ विआलि।
णवर मिअंकु वि तिह तवइ जिह दिणयरु खयगालि ॥ १ ॥

---

१. वयं स्तोकाः रिपवः बहवः कातराः एवं भणन्ति।
मुग्धे निभालय गगनतलं कति जनाः ज्योत्स्नां कुर्वन्ति ॥

२. अम्लत्वं लागयित्वा ये गताः पथिकाः परकीयाः केऽपि।
अवश्यं न स्वपन्ति सुखासिकायां यथा वयं तथा तेऽपि ॥

३. अस्मान् पश्यति।

४. मया ज्ञातं प्रिय विरहितानां कापि धरा भवति विकाले।
केवलं (परं) मृगाङ्कोऽपि तथा तपति यथा दिनकरः क्षयकाले ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ङिना । पइँ मइँ बेहिँ वि रणगयहिँ (४.३७०.३) । अमा । मइँ मेल्लन्तहोँ तुज्झु (४,३७०.४) ।

अपभ्रंश भाषा में, अस्मद् (सर्वनाम) को टा, ङि और अम् इन (प्रत्ययों) के सह मइं ऐसा आदेश होता है। उदा०—टा (प्रत्यय) के सह:—मइँ···खयगालि ॥ १ ॥; ङि (प्रत्यय) के सह :—पइँ···रणगयहिं । अम् (प्रत्यय) के सह :—मइँ···तुज्झ ।

अम्हेहिं भिसा ॥ ३७८ ॥

अपभ्रंशे अस्मदो भिसा सह अम्हेहिं इत्यादेशो भवति । तुम्हेहिँ अम्हेहिँ जं किअउँ (४.३७१.१) ।

अपभ्रंश भाषा में, अस्मद् (सर्वनाम) को भिस् (प्रत्यय) के सह अम्हेहिं ऐसा आदेश होता है । उदा०—तुम्हेहिँ······किअउँ ।

महु मज्झु ङसिङस्भ्याम् ॥ ३७९ ॥

अपभ्रंशे अस्मदो ङसिना ङसा च सह प्रत्येकं महु मज्झु इत्यादेशौ भवतः । महु[1] होन्तउ गदो । मज्झु[1] होन्तउ गदो ।

ङसा । महु[2] कन्तहोँ बे दोसडा हेल्लि म झंखहि आलु ।
देन्तहोँ हउं पर उव्वरिअ जुज्झन्तहोँ करवालु ॥ १ ॥

जइ[3] भग्गा पारक्कडा तो सहि मज्झु पिएण ।
अह भग्गा अम्हहं तणा तो तें मारि अडेण ॥ २ ॥

अपभ्रंश भाषा में, अस्मद् (सर्वनाम) को ङसि और ङस् (प्रत्ययों) के सह प्रत्येक को महु और मज्झु ऐसे आदेश होते हैं । उदा०—(ङसि प्रत्यय के सह):—महु······गदो । ङस् (प्रत्यय) के सह:—महु······करवालु ॥१॥; जइ भग्गा···मारिअडेण॥२॥

अम्हहं भ्यसाम्भ्याम् ॥ ३८० ॥

अपभ्रंशे अस्मदो भ्यसा आमा च सह अम्हहं इत्यादेशो भवति । [4]अम्हहं होन्तउ आगदो । आमा । अह भग्गा अम्हहं तणा (४.३७९.२) ।

---

१. मत् (अथवा मत्तः) भवान् गतः ।

२. मम कान्तस्य द्वौ दोषौ हे सखि मा पिधेहि अलीकम् ।
ददतः अहं परं उर्वरिता युध्यमानस्य करवालः ॥

३. यदि भग्नाः परकीयाः तदा (ततः) सखि मम प्रियेण ।
अथ भग्ना अस्माकं संबंधिनः तदा तेन मारितेन ॥

४. अस्मत् भवान् आगतः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में, अस्मद् (सर्वनाम) को भ्यस् और आम् (प्रत्ययों) के सह अम्हहं ऐसा आदेश होता है। उदा० —(भ्यस् प्रत्यय के सह):—अम्हहं······आगदो। आम् (प्रत्यय) के सह :—अह···तणा।

सुपा अम्हासु ॥ ३८१ ॥

अपभ्रंशे अस्मदः सुपा सह अम्हासु इत्यादेशो भवति। अम्हासु[1] ठिअं।

अपभ्रंश भाषा में, अस्मद् (सर्वनाम) को सुप् प्रत्यय के सह अम्हासु ऐसा आदेश होता है। उदा०—अम्हासु ठिअ।

त्यादेराद्यत्रयस्य संबंधिनो हिं न वा ॥ ३८२ ॥

त्यादीनामाद्यत्रयस्य सम्बन्धिनो बहुष्वर्थेषु वर्तमानस्य वचनस्यापभ्रंशे हिं इत्यादेशो भवति।

मुहकबरिबंध[2] तहे सोह धरहिं
नं मल्लजुज्झु ससि-राहु करहिं
तहे सहहिं कुरल भमर-उल-तुलिअ
नं तिमिर डिम्भ खेल्लन्ति मिलिअ ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, धातु को लगने वाले (प्रत्ययों) के आद्यत्रय से संबंधित (ऐसे) बहु (=अनेक) अर्थ में होने वाले वचन को (यानी बहुवचन को) हिं ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—मुहकबरि· मिलिअ ॥१॥

मध्यत्रयस्याद्यस्य हिः ॥ ३८३ ॥

त्यादीनां मध्यत्रयस्य यदाद्यं वचनं तस्यापभ्रंशे हि इत्यादेशो वा भवति।

बप्पीहा[3] पिउ पिउ भणवि कित्तउ रुअहि हयास।
तुह जलि मुहु पुणु वल्लहइ बिहुं विन पूरिअ आस ॥ १ ॥

आत्मनेपदे।

[4]बप्पीहा कइं बोल्लिएण निग्घिण वार इ वार।
सायरि भरिअइ विमलजलि लहहि न एक्कइ धार ॥ २ ॥

---

१. अस्मासु स्थितम्।

२. मुखकबरीबन्धौ तस्याः शोभां धरतः ननु मल्लयुद्धं शशि-राहू कुरुतः। तस्याः शोभन्ते कुरलाः भ्रमरकुलतुलिताः ननु तिमिरडिम्भाः क्रीडन्ति मिलिताः ॥

३. चातक पिबामि पिबामि (तथा प्रियः प्रियः इति) भणित्वा कियद्रोदिषि हताश। तव जले मम पुनर्वल्लभे द्वयोरपि न पूरिता आशा ॥

४. चातक किं कथनेन निर्घृण वारंवारम्। सागरे भृते विमलजलेन लभसे न एकामपि धाराम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम्याम् ।

[1]आयाहिँ जम्महिँ अन्नहिँ वि गोरि सु दिज्जहि कन्तु ।
गय मत्तहँ चत्तंकुसहं जो अब्भिडइ हसन्तु ॥ ३ ॥

पक्षे । रुअसि । इत्यादि ।

अपभ्रंश भाषा में, त्यादि (प्रत्ययों) में से मध्य-त्रय का जो आद्य वचन, उसको हि ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—बप्पीहा······आस ॥ १ ॥; आत्मनेपद में (हि ऐसा आदेश):—बप्पीहा कइँ······धारा ॥ २ ॥; विध्यर्थ में (हि ऐसा आदेश):—आयहिँ···हसन्तु ॥३॥ (विकल्प–) पक्षमें:—रुअसि, इत्यादि ।

बहुत्वे हुः ॥ ३८४ ॥

त्यादीनां मध्यत्रयस्य सम्बन्धि बहुष्वर्थेषु वर्तमानं यद् वचनं तस्यापभ्रंशे हु इत्यादेशो वा भवति ।

[2]बलिअब्भत्थणि महुमहणु लहुईहूआ सोइ ।
जइ इच्छहु वड्डत्तणउं देहु म मग्गहु को इ ॥ १ ॥

पक्षे । इच्छह । इत्यादि ।

अपभ्रंश भाषा में, त्यादि (प्रत्ययों) में से मध्य त्रय से संबंधित (और) बहु (=अनेक) अर्थ में होनेवाला जो (बहु–) वचन, उसको हु ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—बलि···कोइ ॥१ (विकल्प–) पक्षमें:—इच्छह, इत्यादि ।

अन्त्यत्रयस्याद्यस्य उं ॥ ३८५ ॥

त्यादीनां अन्त्यत्रयस्य यदाद्यं वचनं तस्यापभ्रंशे उं इत्यादेशो वा भवति ।

विहि[3] विणडउ पीडन्तु गह मं धणि करहि विसाउ ।
संपइ कड्ढउं वेस जिवँ छुड्डु अग्घइ व वसाउ ॥ १ ॥

बलि किज्जउं सुअणस्सु (४·३३८·१) । पक्षे । कड्ढामि । इत्यादि ।

अपभ्रंश भाषा में, त्यादि (प्रत्ययों) में से अन्त्य त्रय का जो आद्यवचन उसको उं ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—विहि······ववसाउ ॥१॥; बलि······ सुअणस्सु । (विकल्प–) पक्षमें:—कड्ढामि, इत्यादि ।

---

१. अस्मिन् जन्मनि अन्यस्मिन्नपि गौरि तं दद्याः कान्तम् ।
गजानां मत्तानां त्यक्ताङ्कुशानां यः संगच्छते हसन् ॥

२. बलेः अभ्यर्थने मधुमथनः लघुकीभूतः सोऽपि ।
यदि इच्छथ महत्त्वं (वड्डत्तणउं) दत्तमा मार्गयत कमपि ॥

३. विधिर्विनाटयतु ग्रहाः पीडयन्तु माधन्ये कुरु विषादम् ।
सम्पदं कर्षामि वेषमिव यदि अर्घति (=स्यात्) व्यवसायः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुत्वे हुं ॥ ३८६ ॥

त्यादीनामन्त्यत्रयस्य सम्बन्धि बहुष्वर्थेषु वर्तमानं यद् वचनं तस्य हुं इत्यादेशो वा भवति ।

खग्ग[1]वि सा हि उ जहिँ लहहुं पिय तहिँ देसहिँ जाहुं ।
रणदुब्भिक्खें भग्गाइं विणु जुज्झें न वलाहुं ॥ १ ॥

पक्षे । लहिमु । इत्यादि ।

अपभ्रंश भाषा में, त्यादि (प्रत्ययों) में से अन्त्य त्रय से संबंधित बहु (=अनेक) अर्थ में होने वाला जो (बहु/अनेक) वचन, उसको हुं ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा० --खग्ग······वलाहुं ॥१॥ (विकल्प--) पक्षसे:--लहिमु, इत्यादि ।

हिस्वयोरिदुदेत् ॥ ३८७ ॥

पञ्चम्यां हि स्वयोरपभ्रंशे इ उ ए इत्येते त्रय आदेशा वा भवन्ति ।

इत् ।

कुञ्जर[2] सुमरि म सल्लइ उ सरला सास म मेल्लि ।
कवल जि पाविय विहि वसिण ते चरि माण म मेल्लि ॥ १ ॥

उत् ।

भमरा[3] एत्थु वि लिम्बडइ केँ वि दियहडा विलम्बु ।
घणपत्तलु छायाबहुलु फुल्लइ जाम कयम्बु ॥ २ ॥

एत् ।

प्रिय[4] एम्वहिँ करे सेल्लु करि छड्डुहि तुहुँ करवालु ।
जं कावालिय बप्पुडा लेहिँ अभग्गु कवालु ॥ ३ ॥

पक्षे । सुमरहि । इत्यादि ।

अपभ्रंश भाषा में, आज्ञार्थ में हि और स्व इन (प्रत्ययों) को इ, उ और ए ऐसे ये तीन आदेश विकल्प से होते हैं। उदा०--इ (इत् ऐसा आदेश):--कुञ्जर······

---

१. खड्गविसाधितं यत्र लभामहे तत्र देशे यामः ।
रणदुर्भिक्षेण भग्नाः विना युद्धेन न वलामहे ॥

२. कुञ्जर स्मर मा सल्लकीः सरलान् श्वासान् मा मुञ्च ।
कवलाः ये प्राप्ताः विधिवशेन तांश्चर मानं मा मुञ्च ॥

३. भ्रमर अत्रापि निम्बके कति (चित्) दिवसान् विलम्बस्व ।
घनपत्रवान् छाया बहुलो फुल्लति यावत् कदम्बः ॥

४. प्रिय इदानीं कुरु भल्लं करे त्यज त्वं करवालम् ।
येन कापालिका वराकाः लान्ति अभग्नं कपालम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेल्लि ॥१॥ उ (उन् ऐसा आदेश):—भमरा…कयम्बु ॥२॥ ए (एत् ऐसा आदेश):-प्रिय……कवालु ॥३॥ (विकल्प-) पक्षमें:—सुमरहि, इत्यादि।

वत्स्र्यति स्यस्य सः ॥ ३८८ ॥

अपभ्रंशे भविष्यदर्थविषयस्य त्यादेः स्यस्य सो वा भवति।

दिअहा[1] जन्ति झडप्पडहिं पडहिं मनोरह पच्छि।
जं अच्छइ तं माणि अइ होसइ करतु म अच्छि ॥ १ ॥

पक्षे। होहिइ।

अपभ्रंश भाषा में, भविष्यार्थक त्यादि (प्रत्ययों) में से स्य (प्रत्यय) को स (ऐसा आदेश) विकल्प से होता है। उदा०—दिअहा…अच्छि ॥१॥ (विकल्प—) पक्षमें:—होहिइ।

क्रियेः कीसु ॥ ३८९ ॥

क्रिये इत्येतस्य क्रियापदस्यापभ्रंशे कीसु इत्यादेशो वा भवति।

सन्ता[2] भोग जु परिहरइ तसु कंतहो बलि कीसु।
तसु दइवेण वि मुण्डियउं जसु खल्लिहडउं सीसु ॥ १ ॥

पक्षे। साध्यमानावस्थात् क्रिये इति संस्कृतशब्दादेष प्रयोगः। बलि किज्जउं सुअणस्सु (४.३३८.१)।

अपभ्रंश भाषा में, क्रिये इस क्रियापद को कीसु ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—सन्ताभोग……सीसु ॥१॥ (विकल्प-) पक्षमें:—साध्यमान अवस्था में से क्रिये इस संस्कृत शब्द से यह (यानी आगे दिया हुआ) प्रयोग होता है। उदा०—बलि……सुअणस्सु।

भुवः पर्याप्तौ हुच्चः ॥ ३९० ॥

अपभ्रंशे भुवो धातोः पर्याप्तावर्थे वर्तमानस्य हुच्च इत्यादेशो भवति।

अइतुंगत्तणु[3] जं थणहं सो छेयउ न हु लाहु।
सहि जइ केवँइ तुडिवसेँण अहरि पहुच्चइ नाहु ॥ १ ॥

---

१. दिवसा यान्ति वेगैः (झडप्पडहिं) पतन्ति मनोरथाः पश्चात्।
यदास्ते तन्मान्यते भविष्यति (इति) कुर्वन् मा आस्स्व ॥

२. सतो भोगान् यः परिहरति तस्य कान्तस्य बलिं क्रिये।
तस्य दैवेनैव मुण्डितं यस्य खल्वाटं शीर्षम् ॥

३. अपितुङ्गत्वं यत् स्तनयोः सच्छेदकः न खलु लाभः।
सखि यदि कथमपि त्रुटिवशेन अधरे प्रभवति नाथः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में, पर्याप्ति अर्थ में होने वाले भू (यानी प्र+भू इस) धातु को हुच्च ऐसा आदेश होता है। उदा०—अइतुंगत्तणु······नाहु ॥१॥

ब्रूगो ब्रुवो वा ॥ ३९१ ॥

अपभ्रंशे ब्रूगोर्धातोर्ब्रुव इत्यादेशो वा भवति। ब्रुवह[1] सुहासिउ किं पि। पक्षे।

इत्तउं[2] ब्रोप्पिणु सउणि ठिउ पुणु दूसासणु ब्रोप्पि।
तो हउं जाणउं एहो हरि जइ महु अग्गइ ब्रोप्पि ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, ब्रू धातु को ब्रुव ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—ब्रुवह······किंपि। (विकल्प–) पक्षमें:—इत्तउं······ब्रोप्पि ॥१॥

व्रजेर्वुञः ॥ ३९२ ॥

अपभ्रंशे व्रजतेर्धातोर्वुञ इत्यादेशो भवति। वुञइ। वुञेप्पि। वुञेप्पिणु।

अपभ्रंश भाषा में, व्रजमि (√व्रज्) धातु को वुञ ऐसा आदेश होता है। उदा०—वुञइ······वुञेप्पिण।

दृशेः प्रस्सः ॥ ३९३ ॥

अपभ्रंशे दृशेर्धातोः प्रस्स इत्यादेशो भवति। प्रस्सदि।

अपभ्रंश भाषा में, दृश् धातु को ऐसा आदेश होता है। उदा०—प्रस्सदि।

ग्रहेर्गृण्हः ॥ ३९४ ॥

अपभ्रंशे ग्रहेर्धातोर्गृण्ह इत्यादेशो भवति। पढ[3] गृण्हेप्पिणु व्रतु।

अपभ्रंश भाषा में, ग्रह् धातु को गृण्ह ऐसा आदेश होता है। उदा०—पढ······व्रतु।

तक्ष्यादीनां छोल्लादयः ॥ ३९५ ॥

अपभ्रंशे तक्षि प्रभृतीनां धातूनां छोल्ल इत्यादय आदेशा भवन्ति।

जिवँ तिवँ तिक्खा[4] लेवि कर जइ ससि छोल्लि ज्जन्तु।
तो जइ गोरिहे मुहकमलि सरिसिम का वि लहन्तु ॥ १ ॥

---

१. ब्रूत सुभाषितं किमपि।

२. इयत् उक्त्वा शकुनिः स्थितः पुनर्दुःशासन उक्त्वा।
तदा अहं जानामि एष हरिः यदि ममाग्रतः उक्त्वा ॥

३. पठ गृहीत्वा व्रतम्।

४. यथा तथा तीक्ष्णान् लात्वा करान् यदि शशी अतक्षिष्यत।
तदा जगति गौर्या मुखकमलेन सदृशतां कामपि अलप्स्यत ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदिग्रहणाद् देशीषु ये क्रियावचना उपलभ्यन्ते ते उदाहार्याः ।

चूडुल्लउ[1] चुण्णीहोइ सइ मुद्धि कवोलि निहित्तउ ।
सासानल-जाल-झलक्कि अउ वाह-सलिल-संसित्तउ ॥ २ ॥

[2]अब्भडवंचिउ बे पयइं पेम्मु निअत्तइ जावँ ।
सव्वासण-रिउ-सम्भवहो कर परिअत्ता तावँ ॥ ३ ॥

हिअइ[3] खुडुक्कइ गोरडी गयणि छुडुक्कइ मेहु ।
वासारत्ति पवासुअहं विसमा संकडु एहु ॥ ४ ॥

अम्मि[4] पओहर वज्जमा निच्चु जे सम्मुह थन्ति ।
महु कन्तहो समरंगणइ गयघड भज्जिउ जन्ति ॥ ५ ॥

पुत्तें[5] जाएँ कवणु गुणु अवगुणु कवणु मुएण ।
जा बप्पीकी भूंहडी चंपिज्जइ अवरेण ॥ ६ ॥

तं तेत्तिउ[6] जलु सायरहो सो तेवडु वित्थारु ।
तिसहे निवारणु पलु वि न वि पर धुट्ठुअइ असारु ॥ ७ ॥

अपभ्रंश भाषा में, तक्ष् प्रभृति धातुओं को छोल्ल इत्यादि आदेश होते हैं । उदा०—जिवँ······लहन्तु ॥१॥ (सूत्र में तासि शब्द के आगे) आदि शब्द का निर्देश होने के कारण, देशी भाषाओं में जो क्रिया वाचक शब्द उपलब्ध होते हैं, वे उदाहरण स्वरूप में (यहाँ) लेते हैं । उदा०—चूडुल्लउ···असारु ॥२-७॥ तक ।

---

१. कङ्कणं चूर्णीभवति स्वयं मुग्धे कपाले निहितम् ।
श्वासानल-ज्वाला-संतप्तं बाष्प-जल-संसिक्तम् ॥

२. अनुगम्य द्वे पदे प्रेम निवर्तते यावत् ।
सर्वाशनरिपुसंभवस्य कराः परिवृत्ताः तावत् ॥

३. हृदये शल्यायते गौरी गगने गर्जति मेघः ।
वर्षारात्रे प्रवासिकानां विषमं संकटमेतत् ॥

४. अम्ब पयोधरौ वज्रमयौ नित्यं यौ संमुखौ तिष्ठतः ।
मम कान्तस्य समरांगणके गजघटाः भंक्तुं यातः ॥

५. पुत्रेण जातेन कोगुणः अवगुणः कः मृतेन ।
यत् पैतृकी (बप्पीकी) भूमिः आक्रम्यतेऽपरेण ॥

६. तत् तावत् जलं सागरस्य स तावान् विस्तारः ।
तृषो निवारणं पलमपि नापि (नैव) परं शब्दायते असारः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनादौ स्वरादसंयुक्तानां कखतथपफां गघदधबभाः ॥३९६॥

अपभ्रंशे पदादौ वर्तमानानां स्वरात् परेषामसंयुक्तानां कखतथपफां स्थाने यथासंख्यं गघदधबभाः प्रायो भवन्ति ।

कस्य गः ।

जं दिट्ठउं सोमग्गहणु[1] असइहिँ हसिउं निसंकु ।
पिअमाणुस विच्छोह-गरु गिलि गिलि राहु मयंकु ॥ १ ॥

खस्य घः ।

अम्मीए सत्थावत्थेहिं सुघिं[2] चिन्तिज्जइ माणु ।
पिए दिट्ठे हल्लोहलेण को चेअइ अप्पाणु ॥ २ ॥

तथपफानां दधबभाः ।

सबधु[3] करेप्पिणु कधिदु मइँ तसु पर सभलउं जम्मु ।
जासु न चाउ न चारहडि न य पम्हट्ठउ धम्मु ॥ ३ ॥

अनादाविति किम् । सबधु करेप्पिणु । अत्र कस्य गत्वं न भवति । स्वरादिति किम् । गिलि गिलि राहु मयंकु । असंयुक्तानामिति किम् । एक्कहिं अक्खिहिं सावणु (४.३५७.२) । प्रायोधिकारात् क्वचिन्न भवति ।

जइ[4] केवँइ पावीसु पिउ अकिआ कुड्ड करीसु ।
पाणिउ नवइ सरावि जिवँ सव्वंगें पइसीसु ॥ ४ ॥
उअ[5] कणि आरु पफुल्लिअउ कंचणकंतिपयासु ।
गोरी वयणविणिज्जिअउ नं सेवइ वणवासु ॥ ५ ॥

अपभ्रंश भाषा में अपदादि (यानी पद के आरम्भ में न) होने वाले, स्वर के आगे होने वाले, (और) असंयुक्त (ऐसे) क ख त थ प और फ इनके स्थान पर अनुक्रम से ग घ द ध ब और भ (ये वर्ण) प्रायः आते हैं। उदा०—क के स्थान पर ग :—जं दिट्ठउं‥‥मयंकु ॥ १ ॥ ख के स्थान पर घ :—अम्मीए

1. यद् दृष्टं सोमग्रहणमसतीभिः हसितं निःशंकम् ।
प्रियमनुष्यविक्षोभकरं गिल गिल राहो मृगांकम् ॥
2. अम्ब स्वस्थावस्थैः सुखेन चिन्त्यते मानः ।
प्रिये दृष्टे व्याकुलत्वेन (हल्लोहलेण) कश्चेतयति आत्मानम् ।
3. शपथं कृत्वा कथितं मया तस्य परं सफलं जन्म ।
यस्य न त्यागः न च आरभटी न च प्रमृष्टः धर्मः ॥
4. यदि कथंचित् प्राप्स्यामि प्रियं अकृतं कौतुकं करिष्यामि ।
पानीयं नवके शरावे यथा सर्वाङ्गेण प्रवेक्ष्यामि ॥
5. पश्य कर्णिकारः प्रफुल्लितकः काञ्चनकान्तिप्रकाशः ।
गौरीवदनविनिर्जितकः ननु सेवते वनवासम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

············अप्पाणु ॥ २ ॥ त थ प और फ इनके स्थान पर द ध ब और भ :— सबधु··· ···धम्मु ॥ ३ ॥ (सूत्र में) अनादि होने वाले, ऐसा क्यों कहा है ? (कारण यदि क इत्यादि अनादि न हो, तो यह नियम नहीं लगता है। उदा०—) सबधु करेप्पिणु; यहाँ (क अनादि न होने के कारण) क का ग नहीं हुआ है। स्वर के आगे होने वाले, ऐसा क्यों कहा है ? (कारण क इत्यादि स्वर के आगे न हो, तो यह नियम नहीं लगता है। उदा०—) गिलि··· ···मयंकु। असंयुक्त होने वाले, ऐसा क्यों कहा है ? (कारण क इत्यादि संयुक्त हो, तो यह नियम नहीं लगता है। उदा०—) एक्कहिं··· ···सावणु। प्रायः का अधिकार होने से, क्वचित् (क इत्यादि के स्थान पर ग इत्यादि) नहीं आते हैं। उदा०—जइ केवइँ··· ··· ··· वणवासु ॥ ४ ॥ और ॥ ५ ॥

मोनुनासिको वो वा ॥ ३९७ ॥

अपभ्रंशेनादौ वर्तमानस्यासंयुक्तस्य मकारस्य अनुनासिको वकारो वा भवति। कवँलु[1] कमलु। भवँरु भमरु। लाक्षणिकस्यापि। [2]जिवँ। तिवँ। जेवँ। तेवँ। अनादावित्येव। [3]मयणु असंयुक्तस्येत्येव। तसु पर सलभउ जम्मु (४.३९६.३)।

अपभ्रंश भाषा में, अनादि होने वाले (और) असंयुक्त (ऐसे) मकार का अनुनासिक (—युक्त) वकार (= वँ) विकल्प से होता है। उदा०—कवँलु ··· ···भमरु। व्याकरण के नियमानुसार आने वाले (मकार) का भी (वँ) होता है। उदा०—जिवँ··· ··· ··· ···तेवँ। (मकार) अनादि होने पर ही (ऐसा वँ होता है; मकार अनादि न हो, तो उसका वँ नहीं होता है। उदा०—) मयणु। (मकार) असंयुक्त होने पर ही (ऐसा वँ होता है; मकार संयुक्त होने पर, उसका वँ नहीं होता है। उदा०—) तसु··· ···जम्मु।

वाधो रो लुक् ॥ ३९८ ॥

अपभ्रंशे संयोगादधो वर्तमानो रेफो लुग् वा भवति। जइ केवँइ पावीसु पिउ (४.३९६.४)। पक्षे। जइ भग्गा पारक्कडा तो सहि मज्झु प्रियेण (४.३७९.२)।

अपभ्रंश भाषा में, संयुक्त व्यञ्जन में अनन्तर (यानी दूसरा अवयव) होने वाला रेफ (वैसा ही रहता है अथवा) विकल्प से उसका लोप होता है। उदा०—जइ केवँइ·····पिउ। (विकल्प-) पक्ष में:—जइ भग्गा····· प्रियेण।

---

१. क्रमसे:—कमल। भ्रमर।

२. क्रमसे:—जिम (यथा) तिम (तथा)। जेम (यथा)। तेम (तथा)। (सूत्र ४·४०१ देखिए)। ३. मदन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभूतोपि क्वचित् ॥ ३९९ ॥

अपभ्रंशे क्वचिदविद्यमानोपि रेफो भवति ।

व्रासु[1] महारिसि एँउ भणइ जइ सुइ सत्थु पमाणु ।
मायहँ चलण नवन्ताहं दिवि दिवि गंगाण्हाणु ॥ १ ॥

क्वचिदिति किम् । वासेण[2] वि भारह खम्भि बद्ध ।

अपभ्रंश भाषा में, (मूल शब्द में) रेफ न होने पर भी क्वचित् रेफ आता है । उदा०—व्रासु······गंगाण्हाणु ॥ १ ॥ (सूत्र में) क्वचित् ऐसा क्यों कहा है ? (कारण कभी-कभी ऐसा रेफ नहीं आता है । उदा०—) वासेण······बद्ध ।

आपद्-विपत्-संपदां द इः ॥ ४०० ॥

अपभ्रंशे आपद् विपद् सम्पद् इत्येतेषां दकारस्य इकारो भवति । अणउ[3] करन्तहो पुरि सहो आवइ आवइ । विवइ । सम्पइ । प्रायोधिकारात् । गुणहिँ न सम्पय कित्ति पर (४.३३५.१) ।

अपभ्रंश भाषा में, आपद्, विपद् और संपद् इन (शब्दों) के (अन्त्य) दकार का इकार होता है । उदा०—अणउ······आवइ; विवइ; संपइ । प्रायः का अधिकार होने से (कभी-कभी इन शब्दों में अन्त्य दकार का इकार नहीं होता है । उदा०—) गुणहिँ······पर ।

कथं यथातथां थादेरेमेहेधा डितः ॥ ४०१ ॥

अपभ्रंशे कथं यथा तथा इत्येतेषां थादेरवयवस्य प्रत्येकं एम इम इह इध इत्येते डितश्चत्वार आदेशा भवन्ति ।

केम[4] समप्पउ दुट्ठु दिणु किध रयणी छुडु होइ ।
नव वहुदंसणलाल सउ वहइ मणोरह सोइ ॥ १ ॥
ओ गोरीमुह[5] निज्जिअउ वद्दलि लुक्कु मियंकु ।
अन्नु वि जो परि हविय तणु सो किवँ भवँइ निसंकु ॥ २ ॥

---

१. व्यासः महर्षिः एतद् भणति यदि श्रुतिशास्त्रं प्रमाणम् ।
मातृणां चरणौ नमतां दिवसे दिवसे गंगास्नानम् ॥

२. व्यासेनापि भारतस्तम्भे बद्धम् ।

३. क्रमसेः—अनयं कुर्वतः पुरुषस्य आपद् आयाति । विपद् । संपद् ।

४. कथं समाप्यतां दुष्टं दिनं कथं रात्रिः शीघ्रं (छुडु) भवति ।
नववधूदर्शनलालसकः वहति मनोरथान् सोऽपि ॥

५. ओ गौरीमुखनिर्जितकः वार्दले निलीनः मृगांकः ।
अन्योऽपि यः परिभूततनुः स कथं भ्रमति निःशंकम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बिंबाहरि [1]तणु रयणवणु किह ठिउ सिरिआणंद ।
निरुवमरसु पिएं पिअवि जणु सेसहँ दिण्णी मुद्द ॥ ३ ॥
भण[2] सहि निहुअउँ तेवँ मइं जइ पिउ दिट्ठु सदोसु ।
जेवँ न जाणइ मज्झु मणु पक्खावडिअं तासु ॥ ४ ॥

जिवँ जिवँ वं किम लोअणहं । तिवँ तिवँ वम्महु निअयसर (४.३४४.१)।

मइँ जाणिउँ प्रिय विरहिअहं क वि धर होइ विआलि ।
नवर मिअंकु वि तिह तवइ जिह दिणयरु खयगालि ॥ ५ ॥
(४.३७७.२)

एवं तिधजिधावुदाहार्यौ ।

अपभ्रंश भाषा में, कथं, यथा और तथा इन (शब्दों) के थादि अवयव को प्रत्येक को एम, इम, इह और इध ऐसे ये चार डित् आदेश होते हैं । उदा०— केम समप्पउ……॥ १ से ४ ॥ तक । जिवँ जिवँ………निअयसर; मइँ जाणिउँ…… खयगालि ॥५॥ इसीप्रकार तिध और जिध (आदेशों) के उदाहरण ले ।

याद्दक-ताद्दक्-कीद्दगीद्दशानां दादेर्डेहः ॥ ४०२ ॥

अपभ्रंशे याद्दगादीनां दादेरवयवस्य डित् एह इत्यादेशो भवति ।

मइं [3]भणिअउ बलिराय तुहुं केहउ मग्गण एहु ।
जेहु तेहु न वि होइ वड सइं नारायणु एहु ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, याद्दक् इत्यादि (यानी याद्दक्, ताद्दक्, कीद्दक् और ईद्दक् इन शब्दों) के द-आदि (यानी द्दक् इस) अवयव को डित् एह ऐसा आदेश होता है । उदा० —मइं……एहु ॥ १ ॥

अतां डइसः ॥ ४०३ ॥

अपभ्रंशे याद्दगादीनामदन्तानां याद्दशताद्दश कीद्दशेद्दशानां दादेरवयवस्य डित् अइस इत्यादेशो भवति । जइसो । तइसो । कइसो । अइसो ।

अपभ्रंश भाषा में, अदन्त (= अकारान्त) याद्दक् इत्यादि शब्दों के (यानी)

---

१. बिम्बाधरे तन्व्याः रदनव्रणः कथं स्थितः श्रीआनन्द ।
निरुपमरसं प्रियेण पीत्वा इव शेषस्य दत्ता मुद्रा ॥

२. भण सखि निभृतकं तथा मयि यदि प्रियः दृष्टः सदोषः ।
यथा न जानाति मम मनः पक्षापतितं तस्य ॥

३. मया भणितः बलिराजत्वं कीद्दग् मार्गणः एषः ।
याद्दक् ताद्दग् नापि भवति मूर्ख स्वयं नारायण एषः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यादृश, तादृश, कीदृश और ईदृश इन (शब्दों) के द-आदि (यानी दृश इस) अवयव को डित् अइस ऐसा आदेश होता है। उदा०—जइसो……अइसो।

यत्रतत्रयोस्त्रस्य डिदेत्थ्वत्तु ॥ ४०४ ॥

अपभ्रंशे यत्र तत्र शब्दयोस्त्रस्य एत्थु अत्तु इत्येतौ डितौ भवतः।

जइ[1] सो घडदि प्रयावदी केत्थु वि लेप्पिणु सिक्खु।
जेत्थ वितेत्थु विएत्थु जगि भण तो तहि सारिक्खु ॥ १ ॥

जत्तु[2] ठिदो। तत्तु ठिदो।

अपभ्रंश भाषा में, यत्र और तत्र इन शब्दों में से त्र (इस अवयव) को डित् एत्थु और अत्तु ऐसे (आदेश) होते हैं। उदा०जइसो… …सारिक्खु ॥ १ ॥; जत्तु… …ठिदो।

एत्थु कुत्रात्रे ॥ ४०५ ॥

अपभ्रंशे कुत्र अत्र इत्येतयोस्त्र शब्दस्य डित् एत्थु इत्यादेशो भवति। केत्थु वि लेप्पिणु सिक्खु। जेत्थु वि तेत्थु वि एत्थु जगि (४.४०४.१)।

अपभ्रंश भाषा में, कुत्र और अत्र इन शब्दों में से त्र शब्द को डित् एत्थु ऐसा आदेश होता है। उदा०—केत्थु वि… …एत्थु जगि।

यावत्तावतोर्वादेर्म उं महिं ॥ ४०६ ॥

अपभ्रंशे यावत्तावदित्यव्ययोर्वकारादेरवयवस्य म उं महिं इत्येते त्रय आदेशा भवन्ति।

जाम[3] न निवडइ कुम्भयडि सहि चवेड चडक्क।
ताम समत्तहं मयगलहं पइ पइ वज्जइ ढक्क ॥ १ ॥
[4]तिलहं तिलत्तणु ताउं पर जाउं न नेह गलन्ति।
नेहि पणट्ठइ ते ज्जि तिल फिट्ट वि खल होन्ति ॥ २ ॥
[5]जामहिं विसमी कज्जगइ जीवहं मज्झे एइ।
तामहिं अच्छउ इयरु जणु सुअणु वि अन्तरु देइ ॥ ३ ॥

---

१. यदि स घटयति प्रजापतिः लात्वा शिक्षाम्।
यत्रापि अत्र जगति भण तदा तस्याः सदृक्षीम् ॥

२. क्रम से :—यत्र स्थितः। तत्र स्थितः।

३. यावत् न निपतति कुम्भतटे सिंह चपेटा—चटात्कारः।
तावत् समस्तानां मदकलानां (गजानां) पदे पदे ढक्का ॥

४. तिलानां तिलत्वं तावत् परं यावत् न स्नेहाः गलन्ति।
स्नेहे पनष्टे ते एव तिलाः तिला भ्रष्ट्वा खलाः भवन्तिः ॥

५. यावद् विषमा कार्यगतिः जीवानां मध्ये आयाति।
तावत् आस्तामितरः जनः सुजनोऽप्यन्तरं ददाति ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में, यावत् और तावत् इन अव्ययों में से वकारादि (यानी वत् इत) अवयव को म, उं, और महिं ऐसे ये तीन आदेश होते है। उदा०—जाम ... ...णन्त रु देइ ॥ १ । से ॥ ३ ॥ तक।

वा यत्तदोतोर्डेवडः ॥ ४०७ ॥

अपभ्रंशे यद् तद् इत्येतयोरत्वन्तयोर्यावत्तावतोर्वकारादेरवयवस्य डित् एवड इत्यादेशो वा भवति। जेवडु[1] अन्तरु रावण रामहँ तेवडु अन्तरु पट्टण-गामहँ। पक्षे। जेत्तुलो। तेत्तुलो।

अपभ्रंश भाषा में, अतु प्रत्ययान्त यद् और तद् इनके (यानी) यावत् और तावत् इनके वकारादि (यानी वत् इस) अवयव को डित् एवड ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—जेवडु... ...पट्टणगामहँ। (विकल्प—) पक्षमें:— जेत्तुलो, तेत्तुलो।

वेदं किमोर्यादेः ॥ ४०८ ॥

अपभ्रंशे इदम् किम् इत्येतयोरत्वन्तयोरियत् कियतोर्यकारादेरवयवस्य डित् एवड इत्यादेशो वा भवति। एवडु अन्तरु[2]। केवडु अन्तरु। पक्षे। एत्तुलो। केत्तुलो।

अपभ्रंश भाषा में, अतु प्रत्ययान्त इदम् और किम् इनके (यानी) इयत् और कियत् इनके मकारादि (यानी यत् इस) अवयव को डित् एवड ऐसा आदेश विकल्प से होता है। उदा०—एवडु... ...अन्तरु। (विकल्प—) पक्ष में:— एत्तुलो केत्तलो।

परस्परस्यादिरः ॥ ४०९ ॥

अपभ्रंशे परस्परस्यादिरकारो भवति।

ते मुग्गडा[3] हराविआ जे परिविट्ठा ताहं।
अवरोप्परु जोहन्ताहं सामिउ गंजिउ जाहं ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, परस्पर (इस शब्द) के आदि (= आरम्भ में) अकार आता है। उदा०—ते मुग्गडा... ...जाहं ॥ १ ॥

कादिस्थैदोतोरुच्चारलाघवम् ॥ ४१० ॥

अपभ्रंशे कादिषु व्यञ्जनेषु स्थितयोः रा ओ इत्येतयोरुच्चारणस्य लाघवं

---

१. यावद् अन्तरं रावणरामयोः तावत् अन्तरं पट्टणग्रामयोः।

२. अन्तरम्।

३. ते मुद्गाः हारिताः ये परिविष्टाः तेषाम्।
परस्परं युध्यमानानां स्वामी पीडितः येषाम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लाघवं प्रायो भवति । सुघें चिन्ति ज्जइ माणु (४.३९६.२)। तसु हुउँ कलि जुगि दुल्लहों (४.३३८.१)।

अपभ्रंश भाषा में, क् इत्यादि व्यञ्जनों में स्थित रहने वाले ए और ओ इन (स्वरों) का उच्चारण प्राय: लघु (= ह्रस्व) होता है। उदा०—सुधें··· ··· माणु; तसु··· ···दुल्लहहों।

पदान्ते उं-हुं-हिं-हंकाराणाम् ॥ ४११ ॥

अपभ्रंशे पदान्ते वर्तमानानां उं हुं हिं हं इत्येतेषां उच्चारणस्य लाघवं प्रायो भवति। अन्नु जु तुच्छउँ तहें धणहे (४.३५०.१)। बलि किज्जउँ सुअणस्सु (४.३३८.१) दइउ घडा वइ वणि तरुहुँ (४.३४०.१)। तरुहुँ वि वक्कलु (४.३४१.२)। खग्ग विसाहिउ जहिँ लहहुं (४.३८६.१)। तणहँ तइज्जी भंगि न वि (४.३३९.१)।

अपभ्रंश भाषा में, पद के अन्त में होने वाले उं, हुं, हिं और हं इनका उच्चारण प्राय: लघु होता है। उदा०—अन्नु··· ···धणहे; बलि··· ···सुअणस्सु; दइउ ··· ··· ···तरुहुँ; तरुहुँ वि वक्कलु; खग्ग··· ······ लहहुँ तणहँ ··· ··· ··· न वि।

म्हो म्भो वा ॥ ४१२ ॥

अपभ्रंशे म्ह इत्यस्य स्थाने म्भ इति मकाराक्रान्तो भकारो वा भवति। म्ह इति पक्ष्मश्मष्मस्मह्मां म्हः (२.७४) इति प्राकृतलक्षणविहितोत्र गृह्यते। संस्कृते तदसम्भवात्। [1]गिम्भो। सिम्भो।

बम्भ[2] ते विरला के वि नर जे सव्वंगछइल्ल।
जे वंका ते वञ्चयर जे उज्जुअ ते बइल्ल ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, म्ह के स्थान पर म्भ ऐसा मकार से युक्त भकार विकल्प से आता है। (इस) प्राकृत व्याकरण में 'पक्ष्म··· ···म्हः' सूत्र से कहा हुआ म्ह यहाँ लिया है; कारण संस्कृत में (ऐसा) म्ह सम्भावना नहीं है। उदा०—गिम्भो, सिम्भो; बम्भते··· ···बइल्ल ॥ १ ॥

---

१. क्रम से :— ग्रीष्म। श्लेष्मन्।

२. ब्रह्मन् ते विरलाः केऽपि नराः ये सर्वाङ्गच्छेकाः।
ये वक्राः ते वञ्च (क) तराः ये ऋजवः ते बलीवर्दाः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्यादृशोऽन्नाइसावराइसौ ॥ ४१३ ॥

अपभ्रंशे अन्यादृश-शब्दस्य अन्नाइस अवराइस इत्यादेशौ भवतः। अन्नाइसो। अवराइसो।

अपभ्रंश भाषा में, अन्यादृश शब्द को अन्नाइस और अवराइस ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—अन्नाइसो। अवराइसो।

प्रायसः प्राउ-प्राइव-प्राइम्व-पग्गिम्वाः ॥ ४१४ ॥

अपभ्रंशे प्रायस् इत्येतस्य प्राउ प्राइव प्राइम्व पग्गिम्व इत्येते चत्वार आदेशा भवन्ति।

[1]अन्ने ते दीहर लोअण अन्नु तं भुअजुअलु
अन्नु सु घण थण हारु तं अन्नु जि मुहकमलु।
अन्नु जि केसकलावु सु अन्नु जि प्राउ विहि
जेण णि अम्बिणि घडिअ स गुण लायण्णणिहि ॥ १ ॥
प्राइव[2] मुणिहँ वि भंतडी ते मणि अडा गणन्ति।
अखइ निरामइ परमपई अज्ज वि लउ न लहन्ति ॥ २ ॥
अंसु[3]जलें प्राइम्व गोरिअहे सहि उव्वत्ता नयणसर।
ते संमुह संपेसिआ देन्ति तिरिच्छी घत्त पर ॥ ३ ॥
एसी[4] पिउ रूसेसुँ हउँ रुट्ठी मइँ अणुणेइ।
पग्गिम्व एइ मणोरहइं दुक्करु दइउ करेइ ॥ ४ ॥

अपभ्रंश भाषा में, प्रायस् (इस) अव्यय को प्राउ, प्राइव, प्राइम्व, और पग्गिम्व ऐसे ये चार आदेश होते हैं। उदा०—अन्ने ... ...करेइ ॥ १ ॥ से ॥ ४ ॥ तक।

---

१. अन्ये ते दीर्घे लोचने अन्यत् तद् भुजयुगलम्
अन्यः स घनस्तनभारः तद् अन्यदेव मुखकमलम्।
अन्य एव केशकलापः सः अन्य एव प्रायो विधिः
येन नितम्बिनी घटिता सा गुणलावण्यनिधिः ॥
२. प्रायो मुनीनामपि भ्रान्तिः ते मणीन् गणयन्ति।
अक्षये निरामये परमपदे अद्यापि लयं न लभन्ते ॥
३. अश्रुजलेन प्रायः गौर्याः सखि उद्वृत्ते नयनसरसी।
ते सम्मुखे सम्प्रेषिते दत्तः तिर्यग् घातं परम् ॥
४. एष्यति प्रियः रोषिष्यामि अहं रुष्टां मां अनुनयति।
प्रायः एतान् मनोरथान् दुष्करः दयितः कारयति ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वान्यथो नुः ॥ ४१५ ॥

अपभ्रंशे अन्यथाशब्दस्य अनु इत्यादेशो वा भवति ।

विरहाणल[1] जालकरालिअउ पहिउ को वि बुड्डिवि ठिअउ ।

अनु सिसिरकालि सीअलजलहु धूमु कहन्तिउ उट्ठिअउ ॥ १ ॥

पक्षे । अन्नह ।

अपभ्रंश भाषा में, अन्यथा शब्द को अनु ऐसा आदेश विकल्प से होता है । उदा०—विरहाणल··· ··· ···उट्ठिअउ ॥ १ ॥ (विकल्प—) पक्ष में :— अन्नह ।

कुतसः कउ कहन्तिहु ॥ ४१६ ॥

अपभ्रंशे कुतः शब्दस्य कउ कहन्तिहु इत्यादेशौ भवतः ।

[2]महु कन्तहो गुट्ठट्ठिअहो कउ झुम्पडा वलन्ति ।

अह रिउरुहिरें उल्हवइ अह अप्पणें न भन्ति ॥ १ ॥

धूमु कहन्तिहु उट्ठिअउ (४.४१५.१) ।

अपभ्रंश भाषा में, कुतस् शब्द को कउ और कहन्तिहु ऐसे आदेश होते हैं । उदा०—महु··· ···न भन्ति ॥ १ ॥ धूमु··· ···उट्ठिअउ ।

ततस्तदोस्तोः ॥ ४१७ ॥

अपभ्रंशे ततस् तदा इत्येतयोस्तो इत्यादेशो भवति ।

जइ[3] भग्गा पारक्कडा तो सहि मज्झु पिएण ।

अह भग्गा अम्हहं तणा तो तें मारिअडेण ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, ततस् और तदा इन (दो शब्दों) को तो ऐसा आदेश होता है । उदा०—जइ भग्गा··· ···मारिअडेण ॥ १ ॥

एवं-परं-समं-ध्रुवं-मा-मनाक एम्व परसमाणु ध्रुवु मं मणाउं ॥ ४१८ ॥

अपभ्रंशे एवमादीनां एम्वादय आदेशा भवन्ति ।

एवम एम्व ।

---

१. विरहानलज्वालाकरालितः पथिकः कोऽपि मङ्क्त्वा स्थितः ।
अन्यथा शिशिरकाले शीतलजलात् धूमः कुतः उत्थितः ॥

२. मम कान्तस्य गोष्ठस्थितस्य कुतः कुटीरकाणि ज्वलन्ति ।
अथ रिपुरुधिरेण आर्द्रयति (विध्यापयति–टीका) अथ आत्मना न भ्रान्तिः ॥

३. यह श्लोक पीछे आया हुआ ४.३७९.२ है ।

पिय [1]संगमि कउ निद्दडी पिअहो॑ परो क्खहो॑ केम्व ।
मइँ बिन्नि वि विनासिआ निद्दा न एम्व न तेम्व ॥ १ ॥

परमः परः । गुणहि॑ न संपइ कित्ति पर (४.३३५.१) ।

सममः समाणुः ।

कन्तु[2] जु सीहहो॑ उवमि अइ तं महु खण्डिउ माणु ।
सीहु निरक्खय गय हणइ पिउ पयरक्ख समाणु ॥ २ ॥

ध्रुवमो ध्रुवुः ।

चञ्चलु[3] जीविउ ध्रुवु मरणु पिअ रूसिज्जइ काइं ।
हो सहि॑ दिअहा रूसणा दिव्वइँ वरिस-सयाइं ॥ ३ ॥

मोमं । मं धणि करहि विसाउ (४.३८५.१) । प्रायोग्रहणात् ।

माणि[4] पणट्ठइ जइ न तणु तो देसडा चइज्ज ।
मा दुज्जण करपल्लवे॑हिं दंसिज्जन्तु भमिज्ज ॥ ४ ॥

लोणु[5] विलिज्जइ पाणिएँण अरि खल मेह म गज्जु ।
वालिउ गलइ सु झुंपडा गोरि तिम्मइ अज्जु ॥ ५ ॥

मनाको मणाउं ।

विहवि[6] पणट्ठइ वंकुडउ रिद्धिहि॑ जण सामन्नु ।
किं पि मणाउं महु पिअहो ससि अणु हरइ न अन्नु ॥ ६ ॥

अपभ्रंश भाषा में, एवं इत्यादि (यानी एवम्, परम्, समम्, ध्रुवम्, मा और मनाक् इन) शब्दों को एम्व इत्यादि (यानी एम्व, पर, समाणु, ध्रुवु, मं और मणाउं)

---

१. प्रियसंगमे कुतो निद्रा प्रियस्य परोक्षस्य कथम् ।
मया द्वे अपि विनाशिते निद्रा न एवं न तथा ॥

२. कान्तः यत् सिंहेन उपमीयते तन्मम खण्डितः मानः ।
सिंहः नीरक्षकान् गजान् हन्ति प्रियः पदरक्षैः समम् ॥

३. चञ्चलं जीवितं ध्रुवं मरणं प्रिय रुष्यते किम् ।
भविष्यन्ति दिवसा रोषयुक्ताः (रूसणा) दिव्यानि वर्षशतानि ॥

४. माने प्रनष्टे यदि न तनुः ततः देशं त्यजेः ।
मा दुर्जनकरपल्लवैः दर्श्यमानः भ्रमेः ॥

५. लवणं विलीयते पानीयेन अरे खल मेघ मा गर्ज ।
ज्वलितं गलति तत् कुटीरकं गौरी तिम्यति अद्य ॥

६. विभवे प्रनष्टे वक्रः ऋद्धौ जनसामान्यः ।
किमपि मनाक् मम प्रियस्य शशी अनुसरति मान्यः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऐसे आदेश होते हैं। उदा०—एवम् को एम्व (आदेश):—पियसंगमि···तेम्व ॥१॥ परम् को पर (आदेश):—गुणहिँ··· ······पर। समम् को समाणु (आदेश):—कन्तु······समाणु ॥ २ ॥ ध्रुवम् को ध्रुवु (आदेश):—चञ्चलु······सयाइं ॥ ३ ॥ मा (शब्द) को मं (आदेश):—मं धणि······विमाउ। प्रायः का ग्रहण (अधिकार) होने से, (कभी मा को म ऐसा आदेश होता है अथवा मा वैसा ही रहता है। उदा०—) माणि······भमिज्ज ॥ ४ ॥ लोणु······ अज्जु ॥ ५ ॥ मनाक् को मणाउं (आदेश):—विहवि······न अन्नु ॥ ६ ॥

किलाथवादिवासहनहेः किराहवइ दिवे सहुं नाहिं ॥ ४१९ ॥

अपभ्रंशे किलादीनां किरादय आदेशा भवन्ति। किलस्य किरः।

किर[1] न खाइ न पिअइ न विद्दवइ धम्मि न वेच्चइ रूअडउ।
इह किवणु न जाणइ जह जमहो खणेंण पहुच्चइ दूअडउ ॥ १ ॥

अथवो हवइ। अहवइ[2] न सुवंसह एह खोडि। प्रायोधिकारात्।

जाइ[3]ज्जइ तहिं देसडइ लब्भइ पियहो पमाणु।
जइ आवइ तो आणिअइ अहवा तं जि निवाणु ॥ २ ॥

दिवो दिवे। दिवि दिव गंगाण्हाणु ॥ (४.३९९.१)।

सहस्य सहुं।

जउ [4]पवसन्तें सहुं न गय न मुअ विओएँ तस्सु।
लज्जिज्जइ सन्देसडा दिन्तेहिँ सुहयजणस्सु ॥ ३ ॥

नहेर्नाहिं।

एत्तहे[5] मेह पि अंति जलु एत्तहे वडवानल आवट्टइ।
पेक्खु गहीरिम सायरहो एक्क वि कणिअ नाहिं ओहट्टइ ॥ ४ ॥

---

१. किल न खादति न पिबति न विद्रवति धर्मे न व्ययति रूपकम्।
इह कृपणो न जानाति यथा यमस्य क्षणेन प्रभवति दूतः ॥

२. = अथवा न सुवंशानां एष दोषः।

३. यायते (गम्यते) तस्मिन् देशे लभ्यते प्रियस्य प्रमाणम्।
यदि आगच्छति तदा आनीयते अथवा तत्रैव निर्वाणम् ॥

४. यतः प्रवसता सहनगता न मृता वियोगेन तस्य।
लज्ज्यते संदेशान् ददतीभिः (अस्माभिः) सुभगजनस्य ॥

५. इतः मेघाः पिबन्ति जलं इतः वडवानलः आवर्तते।
प्रेक्षस्व गभीरिमाणं सागरस्य एकापि कणिका नहि अपभ्रश्यते ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में, किल इत्यादि (शब्दों) को (यानी किल अथवा दिवा, सह, और नहि इनको) किर इत्यादि (यानी किर, अहवइ, दिवे, सहुं और नाहि ऐसे) आदेश होते हैं। उदा०—किल को किर (आदेश):—किर न ······ दुअडउ ॥ १ ॥ अथवा को अहवइ (आदेश):—अहवइ ······ खोडि ॥ प्रायः का अधिकार होने से (अथवा शब्द का कभी अहवा ऐसा भी वर्णान्तर होता है। उदा०–) जाइज्जइ··· निवाणु ॥ २ ॥ दिवा को दिवे (आदेश):—दिवि ········ ण्हाणु। सह को सहुं (आदेश):—जउ पवसंतें ······ जणस्सु ॥३॥ नहि को नाहि (आदेश):—एत्तहें ··· ओहट्टइ ॥ ४ ॥

एम्वहिं पच्चालिउ एत्तहे ॥ ४२० ॥

अपभ्रंशे पश्चादादीनां पच्छइ इत्यादय आदेशा भवन्ति। पश्चातः पच्छइ। पच्छइ होइ विहाणु (४.३६२.१)। एवमेवस्य एम्वइ। एम्वइ सुरउ समत्तु (४.३३२.२)। एवस्य जिः।

जाउ[1] म जन्तउ पल्लवह देक्खउँ कइ पय देइ।
हि अइ तिरच्छी हउँ जि पर पिउ डम्बरइँ करेइ ॥ १ ॥

इदानीम एम्वहिं।

हरि [2]नच्चाविउ पंगणइ विम्हइ पाडिउ लोउ।
एम्वहिं राहप ओहरहं जं भावइ तं होउ ॥ २ ॥

प्रत्युतस्य पच्चलिउ।

सावस[3]लोणी गोरडी नवखी कवि विसगण्ठि।
भडु पच्चलिउ सो मरइ जासु न लग्गइ कण्ठि ॥ ३ ॥

इतस एत्तहे। एत्तहें मेह पिअन्ति जलु (४.४१९.४)।

अपभ्रंश भाषा में, प्रश्चात् इत्यादि (यानी पश्चात्, एवमेव, एव, इदानीम्, प्रत्युत और इतस् इन शब्दों) को पच्छइ इत्यादि (यानी पच्छइ, एम्वइ, जि, एम्वहिं, पच्चलिउ और एत्तहे ऐसे ये) आदेश होते हैं। उदा०—पश्चात् को पच्छइ (आदेश):- पच्छइ ······ विहाणु। एवमेव को एम्वइ (आदेश):—एम्वइ···...समत्तु। एव को

---

१. यातु मा यान्तं पल्लवत द्रक्ष्यामि कति पदानि ददाति।
हृदये तिरश्चीना अहमेव परं प्रियः आडम्बराणि करोति ॥
२. हरिः नर्तितः प्राङ्गणे विस्मये पातितः लोकः।
इदानीं राधापयोधरयोः यत् (प्रति) भाति तद् भवतु ॥
३. सर्वसलावण्या गौरी नवा कापि विषग्रन्थिः।
भटः प्रत्युत स म्रियते यस्य न लगति कण्ठे ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जि (आदेश):—जाउ……करेइ ॥ १ ॥ इदानीम् को एम्वहिं (आदेश):—हरि… होउ ॥ २ ॥ प्रत्युत को पच्चलिउ (आदेश):—सावसलोणी……कण्ठि ॥ ३ ॥ इतस् को एत्तहे (आदेश):—एत्तहे……जलु ।

विषण्णोक्तवर्त्मनो वुन्न-वुत्त-विच्चं ॥ ४२१ ॥

अपभ्रंशे विषण्णादीनां वुन्नादय आदेशा भवन्ति ।
विषण्णस्य वुन्नः ।

मइँ[1] वुत्तउँ तुहुँ धुरु धरहि कसरेहिं विगुत्ताइं ।
पइँ विणु धवल न चडइ भरु एम्वइ वुन्नउ काइं ॥ १ ॥

उक्तस्य वुत्तः । मइँ वुत्तउं (४.४२१.१) । वर्त्मनो विच्चः । जें मणु विच्चि न माइ (४.३५०.१) ।

अपभ्रंश भाषा में, विषण्ण इत्यादि (यानी विषण्ण, उक्त और वर्त्मन् इन शब्दों) को वुन्न इत्यादि (यानी वुन्न, वुत्त और विच्च ऐसे) आदेश होते हैं । उदा०—विषण्ण को वुन्न (आदेश):—मइँ……काइं ॥ १ ॥ उक्तको वुत्त (आदेश):—मइं वुत्तउं । वर्त्मन् को विच्च (आदेश):—जेंमणु……माइ ।

शीघ्रादीनां वहिल्लादयः ॥ ४२२ ॥

अपभ्रंशे शीघ्रादीनां वहिल्लादय आदेशा भवन्ति ।
(शीघ्रस्य वहिल्लः ।)

एक्कु[2] कइअह वि न आवही अन्नु वहिल्लउ जाहि ।
मइँ मित्तडा प्रमाणि अउ पइँ जेहउ खलु नाहि ॥ १ ॥

झकटस्य घंघलः ।

जिवँ सुपुरिस[3] तिवँ घंघलइं जिवँ नइ तिवँ वलणाइं ।
जिवँ डोंगर तिवँ कोट्टरइं हिआ विसूरहि काइं ॥ २ ॥

अस्पृश्य संसर्गस्य विट्टालः ।

---

१. मया उक्तं त्वं धुरं धर गलिवृषभैः (कसरेहिं) विनाटिताः ।
त्वया विना धवल नारोहति भरः इदानीं विषण्णः किम् ॥

२. एकं कदापि नागच्छसि अन्यत् शीघ्रं यासि ।
मया मित्रप्रमाणितः त्वया यादृशः (त्वं यथा) खलः नहि ॥

३. यथा सत्पुरुषाः तथा कलहाः यथा नद्यः तथा वलनानि ।
यथा पर्वताः तथा कोटराणि हृदय खिद्यसे किम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जे [1]छड्डेविणु रयणनिहि अप्पउ तडि घल्लन्ति ।
तहं संखहं विट्टालु परु फुक्किज्जन्त भमन्ति ॥ ३ ॥

भयस्य द्रवक्कः ।

दिवेहिं[2] विढत्तउं खाहि वढ संचि म एक्कु वि द्रम्मु ।
को वि द्रवक्कउ सो पडइ जेण समप्पइ जम्मु ॥ ४ ॥

दृष्टे द्रेहिः ।

एक्कमेक्कउं[3] जइ वि जोएदि हरि सुट्ठु सव्वायरेण ।
तो वि द्रेहि जहिं कहिं वि राही ।
को सक्कइ संवरेवि दड्ढनयणा नेहिं पलुट्टा ॥ ५ ॥

गाढस्य निच्चट्टः ।

विहवे[4] कस्सु थिरत्तणउं जोव्वणि कस्सु मरट्टु ।
सो लेखडउ पठावि अइ जो लग्गइ निच्चट्टु ॥ ६ ॥

साधारणस्य सड्ढलः ।

कहिं[5] ससहरु कहिं मयरहरु कहिं बरिहिणु कहिं मेहु ।
दूरठिआहं वि सज्जणहं होइ असड्ढलु नेहु ॥ ७ ॥

कौतुकस्य कोड्डः ।

कुञ्जरु[6] अन्नहं तरुअरहं कुड्डेण घल्लइ हत्थु ।
मणु पुणु एक्कहिं सल्लइहिं जइ पुच्छह परमत्थु ॥ ८ ॥

---

१. ये मुक्त्वा रत्ननिधिं आत्मानं तटे क्षिपन्ति ।
तेषां शंखानां अस्पृश्य संसर्गः केवलं फूत्क्रियमाणाः भ्रमन्ति ॥

२. दिवसैः अर्जितं खाद मूर्ख संचिनु मा एकमपि द्रम्मम् ।
किमपि भयं तत् पतति येन समाप्यते जन्म ॥

३. एकैकं यद्यपि पश्यति हरि सुष्ठु सर्वादरेण ।
तदापि (तथापि) दृष्टिः यत्र क्वापि राधा ।
कः शक्नोति संवरीतुं दग्धनयने स्नेहेन पर्यस्ते ॥

४. विभवे कस्य स्थिरत्वं यौवने कस्य गर्वः ।
स लेखः प्रस्थाप्यते यः लगति गाढम् ॥

५. कुत्र शशधरः कुत्र मकरधरः कुत्र बर्ही कुत्र मेघः ।
दूरस्थितानामपि सज्जनानां भवति असाधारणः स्नेहः ॥

६. कुञ्जरः अन्येषु तरुवरेषु कौतुकेन घर्षति हस्तम् ।
मनः पुनः एकस्यां सल्लक्यां यदि पृच्छथ परमार्थम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रीडायाः खेड्डः ।

खेड्डयं [1]कयम म्हेहिं निच्छयं किं पयम्पह ।
अणुरत्ताउ भत्ताउ अम्हे मा चय सामिअ ॥ ९ ॥

रम्यस्य रवण्णः ।

सरिहिँ न[2] सरे हिँ न सरवरेँ हिँ न वि उज्जाण वणेहिं ।
देस रवण्णा होन्ति वढ नि वसन्तेहिँ सुअणेहिं ॥ १० ॥

अद्भुतस्य ढक्करिः ।

हि अडा[3] पइं एँहु बोल्लि अउ महु अग्गइ सयंवार ।
फुट्टि सुं पिए पवसन्ति हउँ भण्डय ढक्करि सार ॥ ११ ॥

हे सखीत्यस्य हेल्लिः ।

हेल्लि म झंखहि आलु । (४.३७९.१) ।

पृथक् पृथगित्यस्य जुअं जुअः ।

एक्क कुडुल्ली[4] पंचहिँ रुद्धी तहँ पंचहँ वि जुअं जुअ बुद्धी ।
बहिणुए तं घरु कहि किवँ नंद उ जेत्थु कुडुम्बउँ अप्पण छन्दउँ ॥१२॥

मूढस्य नालिअ-वढौ ।

जो पुणु[5] मणि जिखसफसिहू अउ चिंतइ देइ न द्रम्मु न रूअउ ।
रइवसभमिरु करग्गुल्लालिउ धरहिँ जि कोंतु गुणइ सो नालिउ ॥१३॥

---

१. क्रीडा कृता अस्माभिः निश्चयं किं प्रजल्पत ।
अनुरक्ताः भक्ताः अस्मान् मा त्यज स्वामिन् ॥

२. सरिद्भिः न सरोभिः न सरोवरैः नापि उद्यानवनैः ।
देशाः रम्याः भवन्ति मूर्ख निवसद्भिः सुजनैः ॥

३. हृदय त्वया एतद् उक्तं मम अग्रतः शतवारम् ।
स्फुटिष्यामि प्रियेण प्रवसता (सह) अहं भण्ड अद्भुतसार ॥

४. एका कुटी पञ्चभिः रुद्धा तेषां
पञ्चानामपि पृथक्-पृथक् बुद्धिः ।
भगिनि तद् गृहं कथय कथं नन्दतु
यत्र कुटुम्बं आत्मच्छन्दकम् ॥

५. यः पुनः मनस्येव व्याकुलीभूतः
चिन्तयति ददाति न द्रम्मं न रूपकम् ।
रतिवशभ्रमणशीलः कराग्रोल्लालितं
गृहे एव कुन्तं गणयति स मूढः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिजे॑हिं विढत्तउ खाहि वढ (४.४२२.४)।
नवस्य नवरवः। नवरवी कवि विसगण्ठि (४.४२०.३)।
अवस्कन्दस्य दडवडः।

[1]चलेहिं चलन्तेहिं लोअणें हिं जे तइं दिट्ठा बालि।
तहिं मयरद्धयदडवडउ पडइ अपूरइ कालि॥ १४॥

यदेश्छुडुः। छुडु अग्घइ ववसाउ (४.३८५.१)।
सम्बन्धिनः केर-तणौ।

गयउ[2] सु केसरि पिअहु जलु निच्चिन्तइं हरिणाइं।
जसु केरएँ हुंकार डएं मुहहुं पडन्ति तृणाइं॥ १५॥

अह भग्गा अम्ह हुं तणा (४.३७९.२)।
मा भैषीरित्यस्य मब्भीसेति स्त्रीलिङ्गम्।

[3]सत्थावत्थहं आलवणु साहु वि लोउ करेइ।
आदन्नहं मब्भीसडी जो सज्जणु सो देइ॥ १६॥

यद् यद् दृष्टं तत्तदित्यस्य जाइट्ठिआ।

जइ-[4]रच्चसि जाइट्ठिअए हिअडा मुद्धसहाव।
लोहें फुट्टणएण जिवँ घणा सहे सइ ताव॥ १७॥

अपभ्रंश भाषा में, शीघ्र[5] इत्यादि शब्दों को वहिल्ल[5] इत्यादि आदेश होते हैं। उदा०—(शीघ्र को वहिल्ल ऐसा आदेश):—एक्कु······माहिं ॥१॥ झकटको घंघल (आदेश):—जिवं······काइं ॥२॥ अस्पृश्य संसर्ग (शब्द) को विट्टाल (आदेश):—जे छड्डेविणु···भमन्ति ॥३॥ भय को द्रवक्क (आदेश):—दिवेँहिँ···जम्मु ॥४॥ आत्मीय को अप्पण (आदेश):—फोडेन्ति··· ··अप्पणउँ। दृष्टि (शब्द) को द्रेहिं (आदेश):—एक्कमेक्कउं···पलुट्टा ॥५॥ गाढ (शब्द) को निच्चट्ट (आदेश):—

१. चलाभ्यां चलद्भ्यां लोचनाभ्यां ये त्वया दृष्टाः बाले।
तेषु मकरध्वजावस्कन्दः पतति अपूर्णे काले॥
२. गतः स केसरी पिबत जलं निश्चिन्तं (निश्चितं) हरिणाः।
यस्य संबंधिना हुँकारेण मुखेभ्यः पतन्ति तृणानि॥
३. स्वस्थावस्थानां आलपनं सर्वोऽपि लोकः करोति।
आर्तानां मा भैषीः (इति) यः सज्जनः स ददाति॥
४. यदि रज्यसे यद् यद् दृष्टं तस्मिन् हृदयमुग्धस्वभाव।
लोहेन स्फुटता यथा घनः (=तापः) सहिष्यते तावत्॥
५. ये शब्द आगे दिए गए हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विहुवे…निच्चट्टु ॥६॥ साधारण (शब्द) को सड्ढल (आदेश):—कहिँ…नेहु ॥७॥ कौतुक (शब्द) को कोड्ड (आदेश):—कुञ्जरु……परमत्थु ॥८॥ क्रीडा (शब्द) को खेड्ड (आदेश):—खेड्डयं…सामिअ ॥९॥ रम्य (शब्द) को रवण्ण (आदेश):—सरिहिँ…सुअणेहिं ॥१०॥ अद्भुत (शब्द) को ढक्करि (आदेश):—हिअडा……ढक्करिसार ॥११। हे सखि (इन शब्दों) को हेल्लि (आदेश):—हेल्लि……आलु ॥ पृथक्-पृथक् (इन शब्दों) को जुअंजुअ (आदेश):—एक्क कुडुल्ली……छन्दउँ ॥ १२ ॥ (शब्द) को नालिअ और वड (ऐसे दो आदेश):—जो पुणु……नालिउ ॥ १३ ॥ दिवेँहिँ……वढ ॥ नव (शब्द) को नवख (आदेश):—नवखी……विसगण्ठि ॥ अवस्कंद (शब्द) को दडवड (आदेश):—चलेँहिँ……कालि ॥ ४॥ यदि (शब्द को छुडु (आदेश):—छुडु……ववसाउ ॥ संबंधिन् (शब्द) को केर और तण (ऐसे दो आदेश):—गयउ……तृणाइं ॥१५॥ अह…… तणा ॥ मा भैषी: (इन शब्दों) को मब्भीसा ऐसा स्त्रीलिंगी शब्द (आदेश होता है):—मत्थावत्थहँ……देइ ॥ १६ ॥ यद् यद् दृष्टं तद् तद् (इस शब्द समूह) को जाइट्ठिआ (आदेश):—जइ रच्चसि……ताव ॥१७॥

हुहुरुघुग्घादयः शब्दचेष्टानुकरणयोः ॥ ४२३ ॥

अपभ्रंशे हुहुर्वादयः शब्दानुकरणे घुग्घादयश्चेष्टानुकरणे यथासंख्यं प्रयोक्तव्याः ।

मइँ[1] जाणिउँ बुड्डीसु हउँ-पेम्मद्रहि हुहुरुत्ति ।
नवरि अचिन्तिय संपडिय विप्पियनाव झड त्ति ॥ १ ॥

आदि ग्रहयान् ।

खज्जइ[2] नहि कसरक्के हिं पिज्जइ नउ घुण्टेहिं ।
एम्वइ होइ सुहच्छडी पिएँ दिट्ठे नयणेहिं ॥ २ ॥ इत्यादि ।

अज्ज[3] वि नाहु महु ज्जि घरे सिद्धत्था वंदेइ ।
ताउँ जि विरहु गवक्खेहिं मक्कड-घुग्घिउ देइ ॥ ३ ॥

आदि ग्रहणात् ।

---

१. मया ज्ञातं मङ्क्ष्यामि अहं प्रेमह्रदे हुहुरुशब्दं कृत्वा ।
केवलं अचिन्तिता संपतिता विप्रय-नौः झटिति ॥

२. खाद्यते नहि कसरत्कशब्दं कृत्वा पीयते न तु घुट् शब्दं कृत्वा ।
एवमेव भवति सुखासिका प्रिये दृष्टे नयनाभ्याम् ॥

३. अद्यापि नाथः मम एव गृहे सिद्धार्थान् वदन्ते ।
तावदेव विरहः गवाक्षेषु मर्कटचेष्टां ददाति ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिरि जर[1] खण्डी लोअडी गलि मणियडा न वीस।
तो वि गोट्ठडा कराविआ मुद्धएँ उट्ठबईस ॥ ४ ॥ इत्यादि।

अपभ्रंश भाषा में, हुहुरु इत्यादि (शब्द) शब्दानुकरण दिखाने के लिए, और घुग्घ इत्यादि (शब्द) चेष्टानुकरण दिखाने के लिए अनुक्रम से प्रयुक्त करे। उदा०-- मइँ······झडत्ति ॥१॥ (सूत्र में) आदि शब्दों के निर्देश के कारण (इस प्रकार के अन्य शब्दानुकारी शब्द जानना है। उदा०--) खज्जइ······नयणोंहि ॥ २ ॥; इत्यादि। (घुग्घ का उदाहरण):--अज्जवि······देइ ॥३॥ (सूत्र में) आदि शब्द के निर्देश के कारण (इसी प्रकार के अन्य चेष्टानुकरणी शब्द जानना है। उदा०--) सिरि······उट्ठबईस ॥४॥ इत्यादि।

घइमादयोनर्थकाः ॥ ४२४ ॥

अपभ्रंशे घइमित्यादयो निपाता अनर्थकाः प्रयुज्यन्ते।

[2]अम्मडि पच्छायावडा पिउ कलहिअउ विआलि।
घइं विवरीरी बुद्धडी होइ विणासहों कालि ॥ १ ॥

आदिग्रहणात् खाइं इत्यादयः।

अपभ्रंश भाषा में, घइं इत्यादि निपात निरर्थक (विशेष अर्थ अभिप्रेत न होते) प्रयुक्त किए जाते हैं। उदा०--अम्मडि······कालि ॥१॥ (सूत्र में) आदि शब्द के निर्देश के कारण खाइं इत्यादि शब्द भी (निरर्थक प्रयुक्त किए जाते हैं ऐसा जानना है)।

तादर्थ्ये केहिं-तेहिं-रेसि-रेसिं-तणेणाः ॥ ४२५ ॥

अपभ्रंशे तादर्थ्ये द्योत्ये केहिं तेहिं रेसि रेसिं तणेण इत्येते पञ्च निपाताः प्रयोक्तव्याः।

ढोल्ला[3] एँह परिहासडी अइ भण कवणहिँ देसि।
हउँ झिज्जउँ तउ केहिँ पिअ तुहुँ पुणु अन्नहि रेसि ॥ १ ॥

एवं तेहिं-रेसिभावुदाहार्यौ। वड्डत्तणहों तणेण (४·३६६·१)।

---

१. शिरसि जराखण्डिता लोमपुटी (कम्बलं) गले मणयः न विंशतिः।
ततः अपि (तथापि) गोष्ठस्थाः कारिताः मुग्धया उत्थानोपवेशनम् ॥

२. अम्ब पश्चात्तापः प्रियः कलहायितः विकाले।
घइं (नूनं) विपरीता बुद्धिः भवति विनाशस्य काले ॥

३. विट एष परिहासः अयि भण कस्मिन् देशे।
अहं क्षीणा तव कृते प्रिय त्वं पुनः अन्यस्याः कृते ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में, तादर्थ्य (= उसके लिए ऐसा अर्थ) दिखाने के समय केहिं, तेहिं, रेसि, रेसिं और तणेण ये पांच निपात प्रयुक्त करे। उदा०—ढोल्ला···रेसि ॥१॥ इसी प्रकार तेहिं और रेसिं इनके उदाहरण ले। (तणेण का उदाहरण):— वड्डत्तण्हों तणेण।

पुनर्विनः स्वार्थे डुः ॥ ४२६ ॥

अपभ्रंशे पुनर्विना इत्येताभ्यां परः स्वार्थे डुः प्रत्ययो भवति।

सुमरिज्जइ[1] तं वल्लहउं जं वीसरइ मणाउं।
जहि पुणु सुमरणु जाउं गउं तहो नेहहो कइं नाउं ॥ १ ॥

विणु जुज्झें न वलाहुं। (४.३८६.१)।

अपभ्रंश भाषा में, पुनर् (पुनः) और बिना इनके आगे स्वार्थे डित् उ प्रत्यय आता है। उदा०—सुमरिज्जइ······नाउं ॥१॥, विणु······वलाहुं ॥

अवश्यमो डें-डौ ॥ ४२७ ॥

अपभ्रंशे वश्यमः स्वार्थे डें ड इत्येतौ प्रत्ययौ भवतः।

जिब्भिन्दिउ[2] नायगु वसि करहु जसु अधिन्नइं अन्नइं।
मूलि विणट्ठइ तुंबिणिहे अवसें सुक्कहिं पण्णइं ॥ १ ॥

अवस न सुअहिं सुहच्छिअहिं (४.३७६.२)।

अपभ्रंश भाषा में, अवश्यम् (शब्द) को स्वार्थे डित् एं और डित् अ ऐसे प्रत्यय लगते हैं। उदा —जिब्भिन्दिउ······पण्णइं ॥१॥; अवस······सुहच्छिअहिं ॥

एकशसो डिः ॥ ४२८ ॥

अपभ्रंशे एकशश्शब्दात् स्वार्थे डिर्भवति।

एक्कसि[3] सीलकलंकिअहं देज्जहिं पच्छित्ताइं।
जो पुणु खण्डइ अणुदिअहु तसु पच्छित्तें काइं ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, एकशस् (शब्द) के आगे स्वार्थे डि (= डित् इ) प्रत्यय आता है। उदा०—एक्कसि······काइं ॥१॥

१. स्मर्यते तद् वल्लभं यद् विस्मर्यते मनाक्।
यस्य पुनः स्मरणं जातं गतं तस्य स्नेहस्य किं नाम ॥

२. जिह्वेन्द्रियं नायकं वशे कुरुत यस्य अधीनानि अन्यानि।
मूले विनष्टे तुम्बिन्याः अवश्यं शुष्यन्ति पर्णानि ॥

३. एकशः शीलकलंकितानां दीयन्ते प्रायश्चित्तानि।
यः पुनः खण्डयति अनुदिवसं तस्य प्रायश्चित्तेन किम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अडडडुल्लाः स्वार्थिक-कलुक् च ॥ ४२९ ॥

अपभ्रंशे नाम्नः परतः स्वार्थे अडड डुल्ल इत्येते त्रयः प्रत्ययाः भवन्ति तत्सन्नियोगे स्वार्थे कप्रत्ययस्य लोपश्च ।

विरहाण[1] लजालकरालिअउ पहिउ पंथिजं दिट्ठउ ।
तं मेलविसव्वहिं पंथिअहिं सो जि किअउ अग्गिट्ठउ ॥ १ ॥

डड। महु कन्तहो बेदोसडा (४.३७१.१) । डुल्ल । एक्क कुडुल्ली पञ्चहिं रुद्धी (४.४२२.१२) ।

अपभ्रंश भाषा में, संज्ञा के आगे स्वार्थे अ, डड (डित् अड) और डुल्ल (डित् उल्ल) ऐसे ये तीन प्रत्यय आते हैं, और उनके सांनिध्य मे स्वार्थे क (प्रत्यय) का लोप होता है। उदा०—(अ प्रत्यय का उदाहरण):—विरहाणल···अग्गिट्ठउ ॥१॥ डड (=अड) (प्रत्यय का उदाहरण):—महु······दोसडा ॥ डुल्ल (=उल्ल) (प्रत्यय का उदाहरण):—एक्क······रुद्धी ॥

योगजाश्चैषाम् ॥ ४३० ॥

अपभ्रंशे अडडडुल्लानां योगभेदेभ्यो ये जायन्ते डडअ इत्यादयः प्रत्ययास्तेपि स्वार्थे प्रायो भवन्ति । डडअ । फोडेन्ति जे हिडउं अप्पणउं (४.३५०.२) । अत्र किसलय (१.२६९) इत्यादिना य-लुक् । डुल्लअ । चूडुल्लउ चुन्नी होइसइ (४.३९५.२) । डुल्लडड ।

सामिप[2] सलज्जु पिउ सीमासन्धिहिं वासु ।
पेक्खिवि वाहबलुल्लडा धण मेल्लइ नीसासु ॥ १ ॥

अत्रामि स्यादौ दीर्घह्रस्वौ (४.३३०) इति दीर्घः । एवं बाहुबुलडउ । अत्र त्रयाणां योगः ।

अपभ्रंश भाषा में, अ, डड (डित् अड) और उल्ल (डित् उल्ल) इनके भिन्न-भिन्न (ऐसे परस्पर–) संयोग से बने हुए जे डित् अडअ (डडअ) इत्यादि प्रत्यय होते हैं, वे भी प्रायः स्वार्थे (प्रत्यय) होते हैं। उदाहरणार्थः—डडअ (प्रत्यय):—फोडेन्ति·····अप्पणउं, यहाँ (= इस उदाहरण में) 'किसलय' इत्यादि सूत्रानुसार (हृदय शब्द में से) य का लोप हुआ है। डुल्लअ (=उल्लअ):—चूडुल्लउ चुन्नीहोइसइ ।

---

१. विरहानलज्वालाकरालितः पथिकः पथि यद् दृष्टः ।
तद् मिलित्वा सर्वैः पथिकैः स एव कृतः अग्निष्ठः ॥

२. स्वामिप्रसादं सलज्जं प्रियं सीमासन्धौ वासम् ।
प्रेक्ष्य बाहुबलकं धन्या मुञ्चति निश्वासम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुल्लडइ (उल्लअड)—सामिपसाउ······नीसासु ॥१॥; यहाँ (= इस उदाहरण में), (बाहुबलुल्लडा शब्द में), 'स्यादौ दीर्घ ह्रस्वौ' सूत्र के अनुसार, द्वितीया एक वचन में (अन्त्य ह्रस्व स्वर का) दीर्घस्वर हुआ है। इसी प्रकार—बाहु-बलुल्लडइ (ऐसा भी होगा); यहाँ (= इस शब्द में) (उल्ल, अड और अ इन) तीनों प्रत्ययों का संयोग है।

स्त्रियां तदन्ताड्डीः ॥ ४३१ ॥

अपभ्रंशे स्त्रियां वर्तमानेभ्यः प्राक्तन-सूत्र-द्वयोक्त-प्रत्ययान्तेभ्यो डीः प्रत्ययो भवति।

पहिआ[1] दिट्ठी गोरडी दिट्ठी मग्गु निअंत।
अंसूसासेँहिँ कञ्चुआ तिन्तुव्वाण करन्त ॥ १ ॥

एक्क कुडुल्ली पञ्चहिँ रुद्धी (४.३७१.१)।

अपभ्रंश भाषा में, पीछले दो सूत्रों में (= ४२९-४३० में) कहे हुए प्रत्ययों से अन्त होनेवाले (और) स्त्रीलिंग में होनेवाले शब्दों के आगे डित् ई प्रत्यय आता है। उदा०—पहिआ······करन्त ॥१॥; एक्क······रुद्धी।

आन्तान्ताड्डाः ॥ ४३२ ॥

अपभ्रंशे स्त्रियां वर्तमानादप्रत्ययान्तप्रत्ययान्तात् डा-प्रत्ययो भवति। ड्यपवादः।

पिउ आइउ[2] सुअ वत्तडी झुणि कन्नडइ पइट्ठ।
तहोँ विरहोँ नासन्तअहो धूलडिआ वि न दिट्ठ ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, प्रत्ययों से अन्त होनेवाले अथवा प्रत्ययों से अन्त न होनेवाले (तथा) स्त्रीलिंग में होनेवाले शब्दों के आगे डित् आ (डा) प्रत्यय आता है। (स्त्रीलिंग में होनेवाली संज्ञाओं को) डित् ई (डी) प्रत्यय लगता है (सूत्र ४·४३१ देखिए) इस नियम का अपवाद प्रस्तुत नियम है। उदा०—पिउ आइउ···न दिट्ठ ॥१॥

अस्येदे ॥ ४३३ ॥

अपभ्रंशे स्त्रियां वर्तमानस्य नाम्नो यो कारस्तस्य आकारे प्रत्यये परे इकारो भवति। धूलडिआ वि न दिट्ठ (४.४३२.१)। स्त्रियामित्येव। झुणि कन्नडइ पइट्ठ (४.४३२.१)।

---

१. पथिक दृष्टा गौरी दृष्टा मार्गमवलोकयन्ती।
अश्रूच्छ्वासैः कञ्चुकं तिमितोद्वानं (=आर्द्रशुष्कं) कुर्वंती ॥

२. प्रियः आयातः श्रुतावार्ता ध्वनिः कर्णं प्रविष्टः।
तस्य विरहस्य नश्यतः धूलिरपि न दृष्टा ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा में स्त्रीलिंग में होने वाली संज्ञा का जो (अन्त्य) अकार, उसका, आकार प्रत्यय आगे होने पर, इकार होता है। उदा०—धूलडिआ ... ...दिट्ठ। स्त्रीलिंग में होने वाली ही (संज्ञा के बारे में यह नियम लगता है; संज्ञा स्त्रीलिंग में न होने पर, यह नियम नहीं लगता है। उदा०—झुणि... ... पइट्ठ।

युष्मदादेरीयस्य डारः ॥ ४३४ ॥

अपभ्रंशे युष्मदादिभ्यः परस्य ईय-प्रत्ययस्य डार इत्यादेशो भवति।

सन्देसें[1] काइँ तुम्हारेण जं संगहो न मिलिज्जइ।

सुइणन्तरि पिएँ पाणिएँण पिअ पिआस किं छिज्जइ ॥ १ ॥

देक्खु अम्हारा कन्तु (४.३४५.१)। बहिणि महारा कन्तु (४.३५१.१)।

अपभ्रंश भाषा में, युष्मद् इत्यादि (सर्वनामों) के आगे आने वाले ईय (प्रत्यय) को डित् आर (डार) ऐसा आदेश होता है। उदा०—सन्देसें... ... छिज्जइ ॥ १ ॥; देक्खु... ...कन्तु; बहिणि... ...कन्तु।

अतोर्डेत्तुलः ॥ ४३५ ॥

अपभ्रंशे इदं किं यत् तदे तद्भ्यः परस्य अतोः प्रत्ययस्य डेत्तुल इत्यादेशो भवति। एत्तुलो। केत्तुलो। जेत्तुलो। तेत्तुलो। एत्तुलो।

अपभ्रंश भाषा में, इदम्, किम्, यद्, तद् और एतद् इन (सर्वनामों) के आगे आने वाले अतु प्रत्यय को डेत्तुल (डित् एत्तुल) ऐसा आदेश होता है। उदा०—एत्तुलो... ...एत्तुलो।

त्रस्य डेत्तहे ॥ ४३६ ॥

अपभ्रंशे सर्वादेः सप्तम्यन्तात् परस्य त्र-प्रत्ययस्य डेत्तहे इत्यादेशो भवति।

एत्तहे[2] तेत्तहे वारि घरि लच्छि विसंठुल धाइ।

पिअपब्भट्ठ व गोरडी निच्चल कहिँ वि न ठाइ ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, सप्तम्यन्त (होने वाले) सर्वादि (= सर्वनामों) के आगे आने वाले त्र प्रत्यय को डित् एत्तहे (डेत्तहे) ऐसा आदेश होता है। उदा०—एत्तहे... ...ठाइ ॥ १ ॥

---

१. सन्देशेन किं युष्मदीयेन यत् संगाय न मिल्यते।
स्वप्नान्तरे पीतेन पानीयेन प्रिय पिपासा किं छिद्यते ॥

२. अत्र तत्र द्वारे गृहे लक्ष्मीः विसंष्ठुला धावति।
प्रिय प्रभ्रष्टा इव गौरी निश्चला क्वापि न तिष्ठति ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्वतलोः प्पणः ॥ ४३७ ॥

अपभ्रंशे त्वतलोः प्रत्यययोः प्पण इत्यादेशो भवति । वड्डप्पणु परिाविअइ (४.३६६.१)। प्रायोधिकारात् । वड्डत्तणहों तणेण (४.३६६.१)।

अपभ्रंश भाषा में, त्व और तल् इन दो प्रत्ययों को प्पण ऐसा आदेश होता है। उदा०—वड्डप्पणु··· ···पाविअइ। प्रायः का अधिकार होने से, (कभी कभी प्पण ऐसा आदेश न होते, त्तण आदेश होता है। उदा०—) वड्डत्तणहो तणेण।

तव्यस्य इएव्वउं एव्वउं एवा ॥ ४३८ ॥

अपभ्रंशे तव्य-प्रत्ययस्य इअव्वउं एव्वउं एवा इत्येते त्रय आदेशा भवन्ति।

एँउ[1] गृण्हेप्पिणु ध्रुं मइं जइ प्रिउ उव्वारिज्जइ।
महु करिएव्वउँ किं पि ण वि मरिएव्वउँ पर देज्जइ ॥ १ ॥
देसु [2]च्चाडणु सिहि कढणु घणकुट्टणु जं लोइ।
मंजिट्ठएँ अइरत्तिए सव्वु सहेव्वउं होइ ॥ २ ॥
[3]सोएवा पर वारिआ पुप्फवईहिँ समाणु।
जग्गेवा पुणु को धरइ जइ सो वेउ पमाणु ॥ ३ ॥

अपभ्रंश भाषा में, तव्य प्रत्यय को इएव्वउं, एव्वउं, और एवा ऐसे ये तीन आदेश होते हैं। उदा०—एँ उ··· ···देज्जइ ॥ १ ॥; देसुच्चाडणु··· ···होइ ॥२॥; सोएवा··· ···पमाणु ॥ ३ ॥

---

१. एतद् गृहीत्वा यद् मया यदि प्रियः उद्वार्यते (त्यज्यते)।
मम कर्तव्यं किमपि नापि मर्तव्यं परं दीयते ॥

२. देशोच्चाटनं शिखिक्वथनं घनकुट्टनं यद् लोके।
मञ्जिष्ठया अतिरक्तया सर्वं सोढव्यं भवति ॥

३. स्वपितव्यं परं वारितं पुष्पवतीभिः समानम्।
जागरितव्यं पुनः कः धरति यदि स वेदः प्रमाणम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्त्व-इ-इउ-इवि-अवयः ॥ ४३९ ॥

अपभ्रंशे क्त्वा प्रत्ययस्य इ इउ इवि अवि इत्येते चत्वार आदेशा भवन्ति ।

इ ।

हिअडा[1] जइ वेरिअ घणा तो किं अब्भि चडाहुं ।
अम्हहं बे हत्थडा जइ पुणु मारि मराहुं ॥ १ ॥

इउ ।

गयघड भज्जिउ जन्ति ॥ (४.३९५.५) ।

इवि ।

रक्खइ[2] सा विसहारिणी बेकर चुम्बिवि जीउ ।
पडिविम्बिअमुंजालु जलु जेहिँ अडोहिउ पीउ ॥ २ ॥

अवि ।

बाह[3] विच्छोडवि जाहि तुहुँ हउं तेवँइ को दोसु ।
हिअयट्ठिउ जइ नीसरहि जाणउँ मुञ्ज सरोसु ॥ ३ ॥

अपभ्रंश भाषा मे, क्त्वा-प्रत्यय को इ, इउ, इवि, और अवि ऐसे ये चार आदेश होते हैं। उदा०—इ (आदेश):—हिअडा··· ···मराहु ॥ १ ॥ इउ (आदेश):—गयघड··· ··· ···जन्ति ॥ इवि (आदेश) :—रक्खइ··· ···पीउ ॥ २ ॥ अवि (आदेश) :—बाह··· ···सरोसु ॥ ३ ॥

एप्प्येप्पिण्वेव्येविणवः ॥ ४४० ॥

अपभ्रंशे क्त्वा-प्रत्ययस्य एप्पि एप्पिणु एवि एविणु इत्येते चत्वार आदेशा भवन्ति ।

जेप्पि[4] असेसु कसायबलु देप्पिणु अभउ जयस्सु ।
लेवि महव्वय सिवु लहहिं झाएविणु तत्तस्सु ॥ १ ॥

---

१. हृदि यदि वैरिणो घनाः ततः किं अभ्रे (आकाशे) आरोहामः ।
अस्माकं द्वौ हस्तौ यदि पुनः मारयित्वा म्रियामहे ॥

२. रक्षति सा विषहारिणी द्वौ करौ चुम्बित्वा जीवम् ।
प्रतिबिम्बितमुञ्जालं जलं याभ्यामनवगाहितं पीतम् ॥

३. बाहू विच्छोट्य याहि त्वं भवतु तथापि को दोषः ।
हृदयस्थितः यदि निःसरसि जानामि मुञ्जः सरोषः ।

४. जित्वा अशेषं कषायबलं दत्वा अभयं जगतः ।
लात्वा महाव्रतं शिवं लभन्ते ध्यात्वा तत्त्वस्य (तत्त्वम्) ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृथग्योग उत्तरार्थः ।

अपभ्रंश भाषा में, क्त्वा प्रत्यय को एप्पि, एप्पिणु, एवि और एविणु ऐसे ये चार आदेश होते हैं। उदा०—जेप्पि……तत्तस्सु ॥१॥ (सूत्र ४·४३९ से) प्रस्तुत नियम पृथक् कहने का कारण यह है कि इसका उपयोग अगले (सूत्र ४·४४१ में) ही ।

तुम एवमणाणहमणहिं च ॥ ४४१ ॥

अपभ्रंशे तुमः प्रत्ययस्य एवं अण अणहं अणहिं इत्येते चत्वारः, चकारात् एप्पि एप्पिणु एवि एविणु इत्येते, एवं चाष्टावादेशा भवन्ति ।

देवं दुक्करु[1] निअयधणु करण न तउ पडिहाइ ।
एम्वइ सुहु भुंजणहँ मणु पर भुंजणहिँ न जाइ ॥ १ ॥
जेप्पि[2] चएप्पिणु सयल धर लेविणु तवु पालेवि ।
विणु सन्तें तित्थेसरेण को सक्कइ भुवणे वि ॥ २ ॥

अपभ्रंश भाषा में, तुम् प्रत्यय को एवं अण, अणहं और अणहिं ऐसे ये चार (आदेश), (और सूत्र में से) चकार के कारण एप्पि, एप्पिणु एवि और एविणु ऐसे ये (चार आदेश), इसी प्रकार (कुल) आठ आदेश होते हैं। उदा०—देवं…… जाइ ॥१॥; जेप्पि……भुवणे वि ॥२॥

गमेरेप्पिण्वेप्प्योरेर्लुग् वा ॥ ४४२ ॥

अपभ्रंशे गमेर्धातोः परयोरेप्पिणु एप्पि इत्यादेशयोरेकारस्य लुग् भवति वा ।

गम्पिणु [3]वाणारसिहिँ नर अरु उज्जेणिहिँ गम्पि ।
मुआ परावहिँ परम पउ दिव्वन्तरइं म जम्पि ॥ १ ॥

पक्षे ।

---

१. दातुं दुष्करं निजकधनं कर्तुं न तपः प्रतिभाति ।
एवमेव सुखं भोक्तुं मनः परं भोक्तुं न याति ॥

२. जेतुं त्यक्तुं सकलां धरां लातुं तपः पालयितुम् ।
विना शान्तिना तीर्थेश्वरेण कः शक्नोति भुवनेऽपि ॥

३. गत्वा वाराणसीं नराः अथ उज्जयिनीं गत्वा ।
मृताः प्राप्नुवन्ति परमपदं दिव्यान्तराणि मा जल्प ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गंग [1]गमेप्पिणु जो मुअइ जो सिवतित्थ गमेप्पि ।
कीलदि तिदसावासगउ सो जमलोउ जिणेप्पि ॥ २ ॥

अपभ्रंश भाषा में, गम् धातु के आगे आने वाले एप्पिणु और एप्पि इन (आदेशों में से) (आदि) एकार का लोप विकल्प से होता है । उदा०—गंपिणु……जम्पि ॥१॥ (विकल्प-) पक्षमें:—गंग……जिणेप्पि ॥२॥

तृनोणअः ॥ ४४३ ॥

अपभ्रंशे तृनः प्रत्ययस्य अणअ इत्यादेशो भवति ।

हत्थि [2]मारणउ लोउ बोल्लणउ पडहु वज्जणउ सुणउ भसणउ ॥ १ ॥

अपभ्रंश भाषा में, तृन् प्रत्यय को अणअ (ऐसा) आदेश होता है । उदा०—हत्थि……भसणउ ॥१॥

इवार्थे नं-नउ-नाइ-नावइ-जणि-जणवः ॥ ४४४ ॥

अपभ्रंशे इवशब्दस्यार्थे नं नउ नाइ नावइ जणि जणु इत्येते षट् भवन्ति ।

नं ।

नं मल्लजुज्झु ससिराहु करहिं (४.३८२.१) ।

नउ ।

रविअत्थमणि[3] समाउलेण कण्ठि विइण्णु न छिण्णु ।
चक्कें खंडु मुणालि-अहे नउ जीवग्गलु दिण्णु ॥ १ ॥

नाइ ।

वलया[4] वलि निवडण भएँण धण उद्धब्भुअ जाइ ।
वल्लहविरहमहादहहो थाह गवेसइ नाइ ॥ २ ॥

---

१. गंगां गत्वा यः म्रियते यः शिवतीर्थं गत्वा ।
क्रीडति त्रिदशावासगतः स यमलोकं जित्वा ॥

२. हस्ती मारयिता लोकः कथयिता पटहः वादयिता शुनकः भषिता ।

३. रव्यस्तमने समाकुलेन कण्ठे वितीर्णः न छिन्नः ।
चक्रेण खण्डः मृणालिकायाः जीवार्गलः दत्तः ॥

४. वलयावलीनिपतनभयेन धन्या ऊर्ध्वभुजा याति ।
वल्लभविरहमहाह्लदस्य स्ताघं गवेषतीव ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नावइ।

पेक्खेविणु[1] मुहु जिणवरहो दीहरनयण सलोणु।
नावइ गुरुमच्छरभरिउ जलणि पवीसइ लोणु॥ ३॥

जणि।

चम्पय[2]कुसुमहो मज्झि सहि भसलु पइट्ठउ।
सोहइ इंदनीलु जणि कणइ वइट्ठउ॥ ४॥

जणु।

निरुवमरसु पिएं पिएवि जणु (४.४०१.३)।

अपभ्रंश भाषा में, इव शब्द के अर्थ में नं, नउ, नाइ, नावइ, जणि और जणु ऐसे ये छः (शब्द) आते हैं। उदा०—नं (शब्द):—नं मल्लजुज्झु······करहिं॥ नउ (शब्द):—रविअत्थमणि······दिण्णु॥ १॥ नाइ (शब्द):—वलयावलि···नाइ॥२॥ नावइ (शब्द):—पेक्खेविणु······लोणु॥३॥ जणि (शब्द):—चम्पय···बइट्ठउ॥४॥ जणु (शब्द):—निरुवम······जणु॥

लिङ्गमतन्त्रम्॥ ४४५॥

अपभ्रंशे लिङ्गमतन्त्रं व्यभिचारि प्रायो भवति। गय कुम्भइं दारन्तु (४.३४५.१)। अत्र पुल्लिङ्गस्य नपुंसकत्वम्।

अब्भा[3] लग्गा डुंगरिहिं पहिउ रडन्तउ जाइ।
जो एहो गिरिगिलणमणु सो किं धणहे धणाइ॥ १॥

अत्र अब्भा इति नपुंसकस्य पुंस्त्वम्।

पाइ[4] विलग्गी अन्त्रडी सिरु ल्हसिउं खन्धस्सु।
तो वि कटारइ हत्थडउ बलि किज्जउं कन्तस्सु॥ २॥

---

१. प्रेक्ष्य मुखं जिनवरस्य दीर्घनयनं सलावण्यम्।
गुरुमत्सरभरितं ज्वलने प्रविशति लवणम्॥

२. चम्पककुसुमस्य मध्ये सखि भ्रमरः प्रविष्टः।
शोभते इन्द्रनीलः इव कनके उपवेशितः॥

३. अभ्राणि लग्नानि पर्वतेषु पथिकः (आ) रटन् याति।
यः एषः गिरिग्रसनमनाः स किं धन्यायाः धनानि (घृणायते ?)॥

४. पादे विलग्नं अन्त्रं शिरः स्रस्तं स्कन्धात्।
तथापि (तदापि) कटारिकायां हस्तः बलिः क्रियते कान्तस्य॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अंत्रडी इति नपुंसकस्य स्त्रीत्वम् ।

सिरि[1] चडिआ खन्ति प्फलइं पुणु डालइं मोडन्ति ।
तो वि महद्दुम सउणाहं अवराहिउ न करन्ति ॥ ३ ॥

अत्र ढीलइं इत्यत्र स्त्रीलिंगस्य नपुंसकत्वम् ।

अपभ्रंश भाषा में, (शब्द के) लिंग नियमरहित (अनिश्चित) और प्रायः व्यभिचारी (यानी बदलने वाले, उदा०—स्त्रीलिंग का नपुंसकलिंग होना इत्यादि) होते हैं। उदा०—गय ...दारन्तु; यहाँ (कुम्भ शब्द के) पुल्लिग का नपुंसकलिंग हुआ है। अब्भा......घणाइ ॥ १ ॥; यहाँ अब्भा शब्द में, नपुंसकलिंग का पुल्लिग हुआ है। पाइ......कन्तस्सु ॥२॥; यहाँ पर अंत्रडी (शब्द) में नपुंसकलिंग का स्त्रीलिंग हुआ है। सिरि......करन्ति ॥३॥; यहाँ डालइं (शब्द) में स्त्रीलिंग का नपुंसकलिंग हुआ है।

शौरसेनीवत् ॥ ४४६ ॥

अपभ्रंशे प्रायः शौरसेनीवत् कार्यं भवति ।

सीसि सेहरु[2] खणु विणिम्मविदु खणु कण्ठि पालंबु किदु रदिए ।
विहिदु खणु मुण्डमालिएँ जं पणएण तं नमहु कुसुमदामकोदण्ड कामहो॥१॥

अपभ्रंश भाषा में, प्रायः शौरसेनी (भाषा) के समान कार्य होता है। उदा०—सीसि......कामहो ॥१॥

व्यत्ययश्च ॥ ४४७ ॥

प्राकृतादि भाषालक्षणानां व्यत्ययश्च भवति। यथा मागध्यां तिष्ठश्चिष्ठः (४·२९८) इत्युक्तं तथा प्राकृतपैशाची शौरसेनीष्वपि भवति। चिष्ठदि। अपभ्रंशे रेफस्याधो वा लुगुक्तो मागध्यामपि भवति। शद[3]-माणुश-मंश-भालके कुम्भ-शहश्र-वशाहे शंचिदे, इत्याद्यन्यदपि द्रष्टव्यम्। न केवलं भाषालक्षणानां त्याद्यादेशानामपि व्यत्ययो भवति। ये वर्तमाने काले प्रसिद्धास्ते भूतेपि भवन्ति। अह पेच्छइ[4] रहुतणओ। अथ प्रेक्षांचक्रे इत्यर्थः। आभासइ[5]

---

१. शिरसि आरूढाः खादन्ति फलानि पुनः शाखा मोटयन्ति ।
तथापि (तदापि) महाद्रुमाः शकुनीनां अपराधितं न कुर्वन्ति ॥

२. शीर्षे शेखरः क्षण विनिर्मापितं क्षणं कण्ठे प्रालम्बं कृतं रत्याः ।
विहितं क्षणं मुण्डमालिकीयां यत् प्रणयेन तद् नमत् कुसुमदामकोदण्डं कामस्य ॥

३. शत-मानुष-मांस-भारकः कुम्भ-सहस्र-वसाभिः संचितः ।

४. अथ प्रेक्षते रघुतनयः ।

५. आभाषेत रजनीचरान् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रयणीअरे। आबभाषे रजनीचरानित्यर्थः। भूते प्रसिद्धा वर्तमानेपि। सोहीअ[1] एस वण्ठो। शृणोत्येष वण्ठ इत्यर्थः।

तथा प्राकृत इत्यादि भाषाओं के लक्षणों का व्यत्यय (= परस्पर बदल) होता है। उदा०--मागधी (भाषा) में 'तिष्ठश्चिष्ठ' ऐसा जो कहा हुआ है, उसके समान (माहाराष्ट्री--) प्राकृत, पैशाची और शौरसेनी (इन भाषाओं) में भी होता है। उदा०--चिष्ठदि। अपभ्रंश भाषा में, (संयोग में) आगे रहने वाला रेफ वैसा ही रहता है अथवा उसका लोप होता है (ऐसा कहा हुआ) नियम मागधी भाषा में भी लागू होता है। उदा०-शद-माणुश······शंचिदे; इत्यादि। इसी प्रकार अन्य उदाहरण देखे। केवल भाषाओं के लक्षणों में ही व्यत्यय होता है ऐसा नहीं तो,त्यादि (=धातुओं को लगने वाले) प्रत्ययों के आदेशों का ही व्यत्यय होता है (इसका अभिप्राय ऐसा है:--) जो आदेश वर्तमान काल के इस रूप में प्रसिद्ध हैं, वे (आदेश) भूतकाल में भी होता है। उदा०--अह पेच्छइ रहुतणओ (यानी) अथ प्रेक्षांचक्रे, ऐसा अर्थ है, आभासइ रयणीअरे (यानी) रजनी चरान् आबभाषे ऐसा अर्थ है। (जो आदेश) भूतकाल के (इस रूप में) प्रसिद्ध हैं, (वे आदेश) वर्तमानकाल में भी होते हैं। उदा०--सोहीअ एस वण्ठो (यानी) शृणोति एषः वण्ठः, ऐसा अर्थ है।

शेषं संस्कृतवत् सिद्धम् ॥ ४४८ ॥

शेषं यदत्र प्राकृतादिभाषासु अष्टमे नोक्तं तत् सप्ताध्यायीनिबद्धसंस्कृतदेव सिद्धम्।

हेट्ठ[2]ट्ठियसूरनिवारणाय छत्तं अहो इव वहन्ती।
जयइस-सेसा वराह-सास-दूरुक्खया पुहवी ॥ १ ॥

अत्र चतुर्थ्या आदेशो नोक्तः स च संस्कृतवदेव सिद्धः। उक्तमपि क्वचित् संस्कृतवदेव भवति। यथा प्राकृते उरस्-शब्दस्य सप्तम्येकवचनान्तस्य उरे उरम्मि इति प्रयोगौ भवतस्तथा क्वचिदुरसीत्यपि भवति। एवम्। सिरे[3] सिरम्मि सिरसि। सरे सरम्मि[4] सरसि। सिद्धग्रहणं मंगलार्थम्। ततो ह्यायुष्मच्छ्रोतृकताभ्युदयश्चेति।

---

१. अशृणोत् एष वण्ठ।

२. अधः स्थितसूर्यनिवारणाय छत्रं अधः इव वहन्ती।
जयति स-शेषा वराहश्वासदूरोत्क्षिप्ता पृथिवी॥

३. √शिरस्।

४. सरस्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(प्राकृत इत्यादि भाषाओं के बारे में) शेष (कार्य) यानी जो इस आठवें (अध्याय) में प्राकृत इत्यादि भाषाओं के बारे में नहीं कहा हुआ है, वह (पहले) सात अध्यायों में ग्रथित हुए संस्कृत (भाषा) के समान सिद्ध होता है। (इसका अभिप्राय ऐसा है):—हेट्ठ······पुहवी ।।१।। यहाँ चतुर्थी (भिभक्ति) का आदेश नहीं कहा है; वह (इस श्लोक में) संस्कृत के समान ही सिद्ध होता है। (प्राकृत इत्यादि भाषाओं के बारे में इस आठवें अध्याय में जो कुछ कार्य कहा भी है, वह (कार्य) भी क्वचित् संस्कृत के समान ही होता है। उदा०—जैसे (महाराष्ट्री) प्राकृत में सप्तमी (विभक्ति) एकवचनी प्रत्यय से अन्त होने वाले उरस् शब्द के उरे और उरम्भि ऐसे प्रयोग होते हैं, वैसे ही क्वचित् उरसि ऐसा भी (संस्कृत-समान) प्रयोग होता है। इसी प्रकार (अन्य कुछ शब्दों के बारे में भी होता है। उदा०—) सिरे सिरम्भि, सिरसि, सरे सरम्भि, सरसि। (सूत्र में) सिद्ध शब्द का निर्देश मंगलार्थ के लिए है। उस कारण से (निश्चित रूप में) आयु,श्रोतृकला और अभ्युदय (ये सब प्राप्त होते हैं।)

इत्याचार्य श्रीहेमचन्द्रविरचितायां सिद्धहेमचन्द्राभिधानस्वोपज्ञ-
शब्दानुशासनवृत्तावष्टमस्याध्यायस्य चतुर्थः पादः समाप्तः।
(आठवे अध्याय'का चतुर्थ पाद समाप्त हुआ।)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हेमचन्द्रकृत प्राकृत व्याकरण
प्रथम पाद
टिप्पणियाँ

१·१ अथ······कारार्थश्च—संस्कृत में अथ अव्यय के अनेक उपयोग होते हैं। इस सूत्र में अनन्तर (= बाद में, आनन्तर्य) और (नये विषय का) आरंभ (अधिकार) इन दो अर्थों में अथ शब्द प्रयुक्त है। प्रकृतिः संस्कृतम्—हेमचंद्र के मतानुसार, प्राकृत शब्द प्रकृति शब्द से साधित है और प्रकृति (=मूल) शब्द से संस्कृत भाषा अभिप्रेत होती है। अभिप्राय यह कि प्राकृत भाषा का मूल संस्कृत भाषा है। तत्र भवं······प्राकृतम्—प्रकृति शब्द से प्राकृत शब्द कैसे बनता है यह बात यहाँ कही है। 'तत्र भवः' (पाणिनि सूत्र ४·३·५३) अथवा 'तत आगतः' (पाणिनि सूत्र ४·३·७४) इन सूत्रों के अनुसार, प्रकृति शब्द को प्रत्यय लगकर प्राकृत शब्द सिद्ध हुआ है। प्रकृति होने वाले संस्कृत से निर्माण हुआ अथवा प्रकृति होने वाले संस्कृत से निर्गत हुआ, वह प्राकृत। प्राकृतम्—प्रस्तुत व्याकरण में 'महाराष्ट्री प्राकृत' ऐसा शब्द हेमचंद्र ने नहीं प्रयुक्त किया है। तथापि प्राकृत शब्द से उसको महाराष्ट्री प्राकृत अभिप्रेत है। प्राकृत मंजरी, भूमिका, पृष्ठ ३ पर कहा है:—तत्र तु प्राकृतं नाम महाराष्ट्रोद्भवं विदुः। महाराष्ट्री प्राकृत के बारे में दंडिन् कहता है:—महाराष्ट्राश्रयां भाषां प्रकृष्टं प्राकृतं विदुः। संस्कृतानन्तरं······क्रियते—संस्कृत के अनंतर यानी संस्कृत व्याकरण के अनंतर प्राकृत (व्याकरण) का आरंभ किया जाता है। हेमचंद्र कृत सिद्धहेमशब्दानुशासन नामक व्याकरण के कुल आठ अध्याय हैं; पहले सात अध्यायों में संस्कृत भाषा का व्याकरण है; प्रस्तुत आठवें अध्याय में प्राकृत/महाराष्ट्री इत्यादि प्राकृत भाषाओं का व्याकरण है। संस्कृत के व्याकरण के अनंतर प्राकृत व्याकरण का प्रारंभ होने से, पाठक को संस्कृत व्याकरण का (थोड़ा बहुत) ज्ञान है, ऐसा यहाँ गृहीत है। संस्कृतानन्तरं······ज्ञापनार्थम्—संस्कृत के अनंतर प्राकृत का प्रारंभ क्यों इस प्रश्न का उत्तर यहाँ दिया है। प्राकृत यानी प्राकृत का शब्द संग्रह तत्सम (= संस्कृत-सम), तद्भव (= संस्कृत-भव), और देशी/देश्य शब्द, ऐसा तीन प्रकार का है। तत्सम शब्दों का विचार पीछे दिये हुए संस्कृत व्याकरण में होने के कारण, वह यहाँ फिर से करने का कारण नहीं है, ऐसा हेमचंद्र इस सूत्र के अगले वृत्ति में 'संस्कृत समं तु संस्कृतलक्षणेनैव गतार्थम्' इन शब्दों में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहता है। देश्य शब्दों का विचार हेमचंद्र यहाँ नहीं करता है। क्योंकि देशीनाममाला नामक अपने ग्रंथ में हेमचंद्र के कहने के अनुसार "जे लक्खणे ण सिद्धाण पसिद्धा सक्कयाहिहाणेसु, ण य ग उणलक्खणासत्तिसंभवा" ऐसे देशी शब्द होते हैं। देशी शब्द के बारे में मार्कंडेय कहता है:—लक्षणैरसिद्धं नत्तद्देशप्रसिद्धं······। यदाह भोजदेव:—देशे देशे नरेन्द्राणां जनानां च स्वके स्वके। भङ्ग्या प्रवर्तते यस्माद् तस्माद्देश्यं निगद्यते ॥ इसके विपरीत, सिद्ध और साध्यमान ऐसे संस्कृत शब्द ही प्राकृत के मूल हैं। स्वाभाविकत: प्राकृत का यह लक्षण देश्य शब्दों को लागू ही नहीं पड़ता है। इसलिए सिद्ध और साध्यमान ऐसे दो प्रकार के संस्कृत शब्दों से बने हुए प्राकृत का ही विचार हेमचंद्र प्रस्तुत व्याकरण में करता है। सिद्ध-साध्यमान—सिद्ध यानी व्याकरण दृष्टि के अनुसार बना हुआ शब्द का पूर्ण रूप। उदा०—शिरोवेदना। शब्द का ऐसा पूर्ण रूप बनने के पहले शब्द की जो स्थिति होती है वह साध्यमान अवस्था होती है। उदा०—शिरोवेदना यह संधि होने के पहले होने वाली शिरस्–वेदना स्थिति। संस्कृतसम—संस्कृत के जो शब्द जैसे के वैसे प्राकृत में आते हैं, वे संस्कृतसम शब्द। उदा०—चित्त, वित्त, देव इत्यादि। संस्कृतलक्षण—संस्कृत व्याकरण। प्रकृति:······संज्ञादय:—प्रकृति यानी शब्द का मूल रूप। उदा०—राम, केशव इत्यादि। प्रत्यय यानी विशिष्ट हेतु से शब्द के मूल रूप के आगे रखे जाने वाले वर्ण अथवा शब्द। उदा०—सु, औ इत्यादि। लिङ्ग यानी शब्द का लिंग। शब्द पुल्लिग में, स्त्रीलिंग में, किंवा नपुंसक लिंग में होते हैं। उदा०—देव (पुल्लिग), देवी (स्त्रीलिंग), वन (नपुंसकलिंग)। कारक यानी वाक्य में जो क्रिया से संबंधित होता है वह। संस्कृत में कर्ता, कर्म, करण, संप्रदान, अपादान और अधिकरण ऐसे ये छ: कारक हैं। समास यानी अनेक पद एकत्र आकर अर्थ के दृष्टि से होने वाला एक पद। उदा०—राम का मंदिर शब्द इकट्ठा करके राममंदिर समास बनता है। संज्ञा यानी शास्त्र के पारिभाषिक शब्द। एकाध शास्त्र में कुछ विशिष्ट शब्द विशिष्ट अर्थों में प्रयुक्त किए जाते हैं; वे सब संज्ञाएँ होती हैं। बहुतपुष्कल अर्थ संक्षेप से कहने के लिए संज्ञाओं का उपयोग होता है। उदा०—गुण; वृद्धि इत्यादि। लोकात्—प्राकृत के वर्ण प्राय: संस्कृत मे से लिए हैं। संस्कृत के जो वर्ण प्राकृत में नहीं होते हैं (और जो अधिक वर्ण प्राकृत में होते हैं) उनकी जानकारी लोगों से–लोगों के भाषा में प्रयोग से—कर लेनी है। त्रिविक्रम भी ऐसा ही कहता है:—ऋलृवर्णाभ्यां ऐकारौकाराभ्यां असंयुक्त-ङ ञ-काराभ्यां शषाभ्यां द्विवचनादिना च रहित: शब्दोच्चारो लोकव्यवहाराद् एव उपलभ्यते (१·१·१)। ऋ ॠ······ वर्णसमाम्नाय:—संस्कृत के जो वर्ण प्राकृत में नहीं होते हैं, वे वर्ण होने वाले संस्कृत शब्द योग्य विकार होकर प्राकृत में आते हैं। उदा०—ऋ को इ इत्यादि विकार होते हैं। देखिए ऋ के विकार के लिए १·१२६-१४४, लृ के विकार के लिए १·१४५,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऐ के विकार के लिए १·१४८-१५५ और औ के विकार के लिए १·१५६-१६४। ङ् और ञ् ये व्यञ्जन प्राकृत में संपूर्णतः नहीं ऐसा नहीं है; कारण हेमचन्द्र ही आगे कहता है:—ङञौ······भवत एव। श और ष् व्यञ्जनों का (माहाराष्ट्री) प्राकृत में प्रायः स् होता है (देखिए सूत्र १·२६०)। (मागधी भाषा में श् और ष् व्यञ्जनों का उपयोग दिखाई देता है (सूत्र ४·२८८,२९८ देखिए)। विसर्जनीय—विसर्ग। वस्तुतः विसर्ग स्वतन्त्र *वर्ण नहीं* है;अन्त्य र् अथवा स् इन व्यञ्जनों का वह एक विकार है। प्लुत—उच्चारण करने के लिए लगने वाले काल के अनुसार स्वरों के ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत ऐसे तीन प्रकार किए जाते हैं। जिसके उच्चारण के लिए एक मात्र (= अक्षिस्पदन प्रमाणः कालः) काल लगता है, वह स्वर ह्रस्व। जिसके उच्चारण के लिए दो मात्रा-काल लगता है वह दीर्घ स्वर और जिसके उच्चारण के लिए तीन मात्राएँ लगती हैं, वह प्लुत स्वर होता है। वर्णसमाम्नाय--वर्णसमूह या वर्णमाला/प्राकृत के वर्ण आगे जैसे कहे जा सकते हैं:—स्वर –ह्रस्वः-अ, इ, उ, ए;ओ। दीर्घः--आ, ई, ऊ, ए, ओ। (कुछ वैयाकरणों के मतानुसार प्राकृत में ऐ और औ ये स्वर भी होते हैं)। व्यञ्जनः—क् ख् ग् घ् (ङ्) (कवर्ग); च् छ् ज् झ् (ञ्) (चवर्ग); ट् ठ् ड् ढ् ण् (ट-वर्ग); त् थ् द् ध् न् (त वर्ग); प् फ् ब् भ् म् (प वर्ग); य् र् ल् व् (अन्तस्थ); स् (ऊष्म); ह् (महाप्राण)। ङञौ······भवत एव—माहाराष्ट्री प्राकृत में ङ् और ञ् ये व्यञ्जन स्वतंत्र रूप में नहीं होते हैं। (मागधी-पैशाची में ञ् का वापर दिखाई देता है। सूत्र ४·२९३-२९४, ३०४-३०५ देखिए)। मात्र ये व्यञ्जन अपने वर्ग में से व्यञ्जन के साथ संयुक्त हो, तो वे प्राकृत में चलते हैं; तथापि ऐसे संयोगों में भी ङ् और ञ् प्रथम अवयव ही होने चाहिए। उदा०—अङ्क, चञ्चु। एदौतौ--ऐत् और औत्। यानी ऐ और औ स्वर। यहाँ ऐ और औ के आगे तकार जोड़ा है। जिस वर्ण के आगे (या पीछे) तकार जोड़ा जाता है, उस वर्ण का उच्चारण करने के लिए जितना काल लगता है उतना ही समय लगने वाले सवर्ण वर्णों का निर्देश उस वर्ण से होता है। व्यवहारतः तो ऐत् यानी ऐ और औत् यानी औ ऐसे समझने में कुछ हरकत नहीं है। इसी तरह आगे भी अत् (१·१८), आत् (१·६७), इत् (१·८५), ईत् (१·९९), उत् (१·८२), ऊत् (१·७६), ऋत् (१·१२६), एत् और ओत् (१·७) इत्यादि स्थलों पर जाने। कैतवम्···कोरवा-- यहाँ प्रथम संस्कृत शब्द और तुरन्त उसके बाद उसका प्राकृत में से वर्णान्तरित रूप दिया है। वर्णान्तर देते समय हेमचंद्र ने भिन्न पद्धतियाँ प्रयुक्त की हैं। कभी वह प्रथम संस्कृत शब्द और अनंतर उसका वर्णान्तरित रूप देता है। उदा०—सूत्र १·३७, ४३ इत्यादि। कभी वह प्रथम प्राकृत में से वर्णान्तरित रूप देता है और अनंतर क्रम से उसके संस्कृत प्रति शब्द देता है। उदा०--सूत्र १·२६, ४४ इत्यादि। कभी वह फकत प्राकृत में से वर्णान्तरित रूप देता है; उसका संस्कृत प्रतिशब्द नहीं देता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदा०—सूत्र १·१७३,१७७, १८० इत्यादि। अस्वरं······न भवति—संयुक्त व्यञ्जन में (उदा०—अक्क, चित्त्, दुद्ध) पहले अवयव के रूप में अस्वर यानी स्वर-रहित व्यञ्जन होता है और वह प्राकृत में चलता है; परंतु स्वर-रहित केवल व्यञ्जन (उदा०—सरित्, वाच् इनमें से त्, च् के समान) प्राकृत में अन्त्य स्थान में नहीं हो सकता है। संक्षेप में कहे तो प्राकृत में व्यञ्जन से अन्त होने वाले यानी व्यञ्जनान्त शब्द नहीं होते हैं। द्विवचन—संस्कृत में शब्द और धातु के रूप एक-, द्वि- और बहु-ऐसे तीन वचनों में होते हैं। प्राकृत में द्विवचन नहीं होता है; इसलिए किसी भी शब्द के द्विवचनी रूप प्राकृत में नहीं होते हैं। द्विवचन का कार्य अनेक वचन से (सूत्र ३·१३० देखिए) किया जाता है। चतुर्थी बहुवचन—प्राकृत में चतुर्थी विभक्ति प्रायः लुप्त हुई है। चतुर्थी विभक्ति का कार्य षष्ठी विभक्ति के द्वारा (सूत्र ३·१३१ देखिए) किया जाता है। तथापि यहाँ 'चतुर्थी बहुवचन प्राकृत में नहीं है' इस कहने का अभिप्राय यह है कि प्राकृत में क्वचित् चतुर्थी विभक्ति के एकवचन के रूप दिखाई देते हैं (सूत्र ४·४४८·१ देखिए)। परंतु चतुर्थी बहुवचन के रूप तो नहीं पाए जाते हैं।

१·२ बहुलम्—यानी बाहुलक। बहुलयानी तांत्रिक दृष्टि से:—क्वचित् प्रवृत्तिः क्वचिदप्रवृत्तिः क्वचिदविभाषा क्वचिदन्यदेव। शिष्टप्रयोगा—ननुसृत्य लोके विज्ञेयमेतद् बहुलग्रहेषु॥ प्रवृत्ति यानी योग प्रकार से नियम की कार्यप्रवृत्ति; उसका अभाव यानी अप्रवृत्ति, विभाषा यानीविकल्प;क्वचित् नियम में कहे हुए से कुछ भिन्न कार्य (अन्यत) होता है; ये सब बहुल शब्द से सूचित होते हैं। अब, प्राकृत बहुल है; इसलिए प्राकृत व्याकरण के नियमों को अनेक अपवाद,विकल्प इत्यादि होते हैं। अधिकृतं वेदितव्यम्—'बहुलम्' सूत्र अधिकार-सूत्र है ऐसा जाने। जिस सूत्र में से (एक या अनेक) पद आगे आने वाले अनेक सूत्रों के पदों से संबंधित होते हैं, वह अधिकार सूत्र होता है। अधिकार एक प्रदीर्घ अनुवृत्ति है; किंतु अनुवृत्ति से उसका क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। जिस शब्द का अधिकार होता है वह शब्द अगले सूत्रों में अनुवृत्ति से आता है, और उन सूत्रों का अर्थ करते समय वह शब्द आध्याहृत लिया जाता है।

१·३ आर्षम् प्राकृतम्—आर्ष शब्द ऋषि शब्द से साधित है। आर्ष प्राकृत शब्द से हेमचंद्र को अर्धमागधी नामक प्राकृत भाषा अभिप्रेत है (सूत्र ४·२८७ देखिए)। अर्धमागधी श्वेतांबर जैनों के आगम ग्रंथों की भाषा है। अर्धमागधी में (माहाराष्ट्री-) प्राकृत के सर्वनियम विकल्प से लागू पड़ते हैं।

१·४ वृत्तौ—वृत्ति में, यहाँ समास में, ऐसा अर्थ है। वृत्ति यानी मिश्र पद्धति से बना हुआ शब्द। वृत्ति का अर्थ स्पष्ट होने के लिए स्पष्टीकरण आवश्यक होता है। संस्कृत में पाँच वृत्तियाँ हैं; उनमें से समास एक वृत्ति है। समासे······भवतः—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समास में किमान दो पद होते हैं। समास में से पहले पद का अन्त्य दीर्घ किंवा ह्रस्व स्वर बहुलत्व से ह्रस्व अथवा दीर्घ होता है। उदा०—अन्तावेई समास में, अन्त इस पहले पद का अन्त्य स्वर दीर्घ हुआ है। सत्तावीसा इस समास में भी यही प्रकार है। वारीमई—वारिणि मतिः यस्य सः, अथवा वारि इति मतिः।

१·५ संस्कृतोक्तः संधिः सर्वः—प्राकृत में विसर्ग नहीं है तथा व्यञ्जनान्त शब्द नहीं है। इसलिए उनकी संधियों का स्वतंत्र विचार प्राकृत में नहीं है। अतः केवल स्वर-संधि का विचार आवश्यक है। संधि—जिनका परम निकट सांनिध्य हुआ है ऐसे वर्णों का संधान/मिलाप यानी संधि। पदयोः—दो पदों में। विभक्ति प्रत्यय अथवा धातु को लगने वाले प्रत्यय लगकर बना हुआ शब्द यानी पद। उदा०—रामेण; करोति। वासेसी शब्द में वास में से अन्त्य अ और अगला इ, विसमायवो शब्द में विसम शब्द में से अन्त्य अ और अगला आ, दहीसरो शब्द में दहि शब्द में से अन्त्य इ और अगला ई, और साऊ अयं शब्द में सा उ शब्द में से अन्त्य उ और अगला उ, इनकी संधि हुई है। दहीसरो—दधिप्रधानः ईश्वरः। व्यवस्थितविभाषया—विभाषा यानी विकल्प। अब, जिसके लिए विकल्प कहा है, उसके सर्व उदाहरणों को लागू न पड़ते केवल कुछ उदाहरणों को निश्चित रूप से लागू पड़ने वाला और कुछ उदाहरणों को अवश्य रूप से लागू न पड़ने वाला विकल्प यानी व्यवस्थित विभाषा। बहुलाधिकारात्—बहुल का अधिकार होने से। बहुल के लिए १·२ सूत्र के ऊपर की टिप्पणी देखिए। काही—काहिइ शब्द में 'हि' में से इ और अगला इ इनकी संधि 'ही' ऐसी हुई। काहिइ रूप के लिए सूत्र ३·१६६ देखिए। बीओ—बिइओ शब्द में से 'बि' में से इ और अगला इ इनकी 'बी' ऐसी संधि हुई है।

१·६ इवर्णस्य उ वर्णस्य—ये शब्द सूत्र में से युवर्णस्य शब्द का अनुवाद करते हैं। इवर्ण यानी इ और ई ये वर्ण। उवर्ण यानी उ और ऊ ये वर्ण। अस्वेवर्णे परे—विजातीय (अस्व) वर्ण (= यहाँ स्वर) आगे होने पर। अ-आ, इ-ई और उ-ऊ ये सजातीय स्वरों के युगुल हैं और वे परस्पर में विजातीय होते हैं। उदा०—अ और इ विजातीय होते हैं। अब दिए हुए उदाहरणों में:—वि अवयासो और वंदामि अज्ज यहाँ पिछले इ और अगले अ की संधि नहीं हुई है। श्लोक १—दानव-श्रेष्ठ के खून से लिप्त हुआ और नाखुनों के प्रभा-समूह से अरुण हुआ विष्णु, संध्या (-रूपी) वधू से आलिंगित और बिजली के निकट संबंध में होने वाले नूतन मेह जैसा, शोभा देता है। इस श्लोक में, सहइ और उइन्दो, ०प्पहावलि और अरुणो०, बहु और अव ऊढो शब्द समूह में पिछले और अगले विजातीय स्वरों की संधि नहीं हुई है। श्लोक २—उदर में छिपे हुए रक्त कमल के पीछे लगे हुए भ्रमरों के पंक्ति-समान। इस श्लोक पंक्ति में, गूढ़ और उअर इनकी गूढोअर और तामरस तथा अणुसारिणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इनकी तामर साणुसारिणी, ऐसी संधि हुई है। पुहवीसो—यहाँ पुहवी में से ई और ईसमें से ई इन सजातीय स्वरों की संधि हुई है।

१·७ एकार-ओकारयोः—ए और ओ इन स्वरों का। एकाध वर्ण का निर्देश करते समय, उसके आगे 'कार' शब्द जोड़ा जाता है। उदा०—एकार। स्वर—स्वयं राजन्ते इति स्वराः। स्वरों का उच्चारण स्वयं पूर्ण होता है। श्लोक १—नाखून के क्षतों से युक्त ऐसे अंग पर कंचुक परिधान करने वाले वधू के संदर्भ में (वे नखक्षतों) मदनबाणों के संतत धाराओं से किये गये जख्मों के समान दिखाई देते हैं। इस श्लोक में ०ल्लिहणे शब्द में ये ए और अगला आ इनकी संधि नहीं हुई है। श्लोक २—गज के बच्चे के दाँतों की कांति जिसको उपमा देने में अधुरी/अपूर्ण (अपज्जत्त) पड़ती है, ऐसा यह (तेरा) ऊरु-युगल अब कुचला हुआ कमल-दंठल के दंड के समान विरस, ऐसा हमें दिखाई देता है। इस श्लोक में, ०लक्खिमो शब्द में से ओकार की अगले स्वर के साथ संधि नहीं हुई है। अहो अच्छरिअं—यहाँ हो में से ओकार की अगले स्वर के साथ संधि नहीं हुई है। श्लोक ३—अर्थ का विचार करने में तरल (बेचैन) हुए, अन्य (सामान्य) कवियों को बुद्धियों को भ्रम होता है। (परंतु) कवि श्रेष्ठों के मन में (मात्र) अर्थ बिना सायास आते हैं। इस श्लोक में, अत्थालोअण शब्द में अत्थ और आलोअण तथा कइन्दाणं शब्द में कइ और इन्द इनकी संधि हुई है।

१·८ व्यञ्जन—स्वरेतर वर्ण। स्वर के साहाय्य के बिना व्यञ्जनों का पूर्ण उच्चारण नहीं होता है। व्यञ्जनों के उच्चारण के लिए अर्धमात्रा इतना काल लगता है (व्यञ्जनं चार्धमात्रिकम्)। उद्वृत्त—व्यञ्जन का लोप होने के बाद शेष/अवशिष्ट रहने वाला स्वर उद्वृत्त कहा जाता है। उदा०—गति शब्द में सूत्र १·१७७ के अनुसार त् व्यञ्जन का लोप होने पर जो इ स्वर शेष रहता है वह उद्वृत्त है। श्लोक १—यह श्लोक विन्ध्यवासिनी देवी को उद्देश्यकर है। उसका अर्थ अच्छी तरह स्पष्ट नहीं होता है। संभवतः ऐसा अर्थ है:—बलि दिए जाने वाले महापशु (= मनुष्य) के दर्शन से निर्माण हुए संभ्रम ये एक दूसरे पर आरूढ, तेरे चित्र में से देवता आकाश में ही गंध-द्रव्य का गृह करते हैं। (यह श्लोक गउडवह, ३१९ है। वहाँ टीकाकार कहता है:—महापशुः मनुष्यः, परस्परं आरूढा अन्योन्योत्कलित—शरीराः, गन्धकुटी गन्धद्रव्यगृहम्; कौलनार्यः चित्र-न्यस्त-देवता-विशेषाः। कौलनार्यः यानी शाक्तपंथी नारी ऐसा भी अर्थ होगा)। इस श्लोक में, गंध-उडि शब्द में, उ इस उद्वृत्त स्वर की पिछले स्वर से संधि नहीं हुई है। अतएव......मिश्रपदत्वम्—समास में दूसरा पद कभी स्वतंत्र माना जाता है तो कभी संपूर्ण सामासिक शब्द एक ही पद माना जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·९ तिबादीनाम्—इस शब्द में सूत्र के त्यादेः शब्द का अनुवाद है। त्यादि किंवा तिबादि यानी धातु को लगने वाले काल और अर्थों के प्रत्यय। 'तिप् तस् … …महिङ्' (पाणिनि सूत्र ३.४.७८) ऐसे ये प्रत्यय हैं। उनमें से आदि ति अथवा तिप् शब्द से त्यादि किंवा तिबादि (= तिप् + आदि) संज्ञा बनी है। होइ इह—यहाँ होइ इस धातु रूप में से इ और अगला इ इनकी सन्धि नहीं हुई है।

१·१० लुग् (लुक्)—लोप। प्रसंगवशात् उच्चारण में प्राप्त हुए वर्ण इत्यादि के श्रवण का अभाव (अदर्शन) यानी लोप। ति असीसो—ति अस + ईस। ति अस में से अन्त्य अ का लोप हुआ है। नीसासू सासा—नीसास + ऊसासा। नीसास में से अन्त्य अ का लोप हुआ है।

१·११ अन्त्य—अन्तिम। शब्द में वर्णों के स्थान निश्चित करते समय, पहले वर्णों का विच्छेद करके, उच्चारण के क्रम के अनुसार, उनके स्थान निश्चित किए जाते हैं। उदा०—केशव = क् + ए + श + अ + व + अ। यहाँ क् आदि है, और अ अन्त्य है; शेष वर्ण अनादि अथवा मध्य होते हैं। मरुत् शब्द में त् अन्त्य व्यञ्जन है। समासे भवति—समास में पहले पद का अन्त्य व्यञ्जन कभी अन्त्य माना जाता है तो कभी वह अन्त्य नहीं माना जाता है; तब उस उस मानने के अनुसार योग्य वर्णान्तर होता है। उदा०—स०—भिक्षु समास में, द् अन्त्य मानने पर, उसका प्रस्तुत सूत्र के अनुसार लोप होकर, स–भिक्खु ऐसा वर्णान्तर होगा। यदि द् अन्त्य माना नहीं, तो सूत्र २.७७ के अनुसार, सद्–भिक्षु का सब्भिक्खु ऐसा वर्णान्तर होगा। सभिक्खू, एअगुणा—यहाँ पहले पद के अन्त्य व्यञ्जन का लोप हुआ है। सज्जणो तग्गुणा—यहाँ पहले पद का अन्त्य न मान कर वर्णान्तर किया हुआ है।

१·१२ श्रद्—यह एक अव्यय है; वह प्रायः धा धातु के पूर्व आता है। उद्—धातु के पीछे आने वाला उद् शब्द एक उपसर्ग है।

१·१३ निर् दुर—धातु के पूर्व आने वाले ये दो उपसर्ग हैं। वा—यह अव्यय विकल्प दिखाता है। दुक्खिओ—दुःखित शब्द में, दुर् में से र् का विसर्ग हुआ है।

१·१४ अन्तरो … … न भवति—अन्तर्, निर्, और दुर् के अन्त्य र् के आगे आने वाला स्वर उस र् में संपृक्त होता है। अन्तर्—यह एक अव्यय है और वह धातु अथवा संज्ञा से जुड़ कर आ सकता है। अन्तोवरि—(अन्तर् + उपरि)—यहाँ अंतर् शब्द के र् के आगे स्वर होने भी र् का लोप हुआ है।)

१·१५–२१ इन सूत्रों में कहा हुआ विचार आगे जैसा कहा जा सकता है :—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विद्युत् शब्द छोड़ कर, अन्य कुछ व्यञ्जनान्त स्त्रीलिंगी शब्दों में, अन्त में आ स्वर मिलाकर अनन्तर वर्णान्तर होता है। उदा०—सरित् + आ = सरिता = सरिआ (सूत्र १.१७७ के अनुसार)। इसी प्रकार पाडिवआ, सम्पदा (सूत्र १.१४)। यही प्रकार रेफान्त शब्दों के बारे में होता है। उदा०—गिरा, धुरा, पुरा (सूत्र १.१६)। इसी तरह छुहा (सूत्र १.१७), दिसा (सूत्र १.१९), अच्छरसा (सूत्र १.२०), और क उहा (सूत्र १·२१) ये वर्णान्तर होंगे। अब, जो व्यञ्जनान्त शब्द प्राकृत में पुलिंगी होते हैं, उनमें से कुछ के अन्त में अ स्वर मिला कर वर्णान्तर होता है। उदा०—शरद् + अ = शरद = सरअ। इसी प्रकार भिसओ (सूत्र १.१८), पाउसो (सूत्र १.१९), और दीहा उस (सूत्र १.२०)।

१·१५ स्त्रियाम्—स्त्रीलिंग में। ईषत्स्पृष्टतरयश्रुति—सूत्र १.१८० देखिए।

१·१६ रेफ—र् वर्ण। आदेश—एकाध वर्ण अथवा शब्द के स्थान पर आने वाला अन्य वर्ण किंवा शब्द।

१.२० दीहाऊ, अच्छरा—दीर्घायुस् और अप्सरस् शब्दों में अन्त्य स् का लोप होकर ये रूप बने हुए हैं।

१·२२ धणू—धनुस् शब्द के अन्त्य व्यञ्जन का लोप होकर यह शब्द बना है।

१·२३ अनुस्वार—स्वर के पश्चात् । जिसका उच्चारण होता है वह अनुस्वार। उदा०—जल शब्द में, अन्त्य अ स्वर के पश्चात् अनुस्वार का उच्चारण है। जलं······पेच्छ—पिछला शब्द (कर्म होने से) द्वितीया विभक्ति में है, यह दिखाने के लिए पेच्छ ऐसा आज्ञार्थी रूप यहाँ प्रयुक्त किया है। पेच्छ शब्द दृश् धातु का आदेश (सूत्र ४.१८१ देखिए) है। अनन्त्य—अन्त्य न होने बाला।

१.२४ सक्खं, जं, तं, वीसुं, वीसुं, पिहं, सम्मं—इन शब्दों में अन्त्य व्यञ्जनों का अनुस्वार हुआ है। इहं, इहयं—सच कहे तो यहाँ अन्त्य व्यञ्जन का अनुस्वार नहीं हुआ है। इहं शब्द में ह के ऊपर अनुस्वारागम हुआ है। इहयं शब्द में पहले इह शब्द के आगे स्वार्थे क (य) प्रत्यय आया, अनन्तर उसके ऊपर अनुस्वारागम हुआ है। आलेट्ठुअं—सूत्र २.१६४ देखिए। आश्लेष्टुम् के आगे स्वार्थे क (अ) आकर अनुस्वार का स्थान बदला हुआ है।

१.२६ आगमरूपोनुस्वार:—आगम स्वरूप में आने वाला अनुस्वार। संयुक्त व्यञ्जनों के सन्दर्भ में, अनुस्वारागम के बारे में ऐसा कहा जा सकता है:—संयुक्त व्यञ्जन में एक अवयव का लोप होने पर, उसके स्थान पर (कभी) अनुस्वार आता है। उदा०—वक्र—वक्क—व० क—वम् क—वं क। अणिउँतयं, अइमुंतयं—सूत्र १.१७८ देखिए। क्वचिच्छन्दः पूरणेपि—आवश्यक मात्रा (अथवा गण) पूर्ण करते समय। उदा०—देवं नाग सुवण्ण शब्द में छन्द के लिए 'व' अक्षर पर अनुस्वार आया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·२७ क्त्वाया:······ण सु—क्त्वा प्रत्यय पूर्वकाल वाचक धातु साधित अव्यय साधने के लिए है। क्त्वा के सूत्र २·१४६ के अनुसार जो आदेश होते हैं, उनमें से तूण और तुआण आदेशों में ण होता है। स्यादि (सि + आदि)—यानी शब्दों को लगने वाले विभक्ति प्रत्यय। स्यादि संज्ञा के लिए सूत्र ३·२ ऊपर की टिप्पणी देखिए। विभक्ति प्रत्ययों में तृतीया एकवचन और षष्ठी अनेक वचन इनमें ण होता है; और सप्तमी के अनेक वचनी प्रत्यय में सु होता है। का ऊणं······काऊआण—कर धातु के पूर्वकालवाचक धातु साधित अव्यय (सूत्र २·१४६, ४·२१४ देखिए)। वच्छेणं वच्छेण—वच्छ शब्द के तृतीया ए० व०। करिअ—कर धातु का पूर्वकाल वाचक धातु साधित अव्यय (सूत्र २·१४६, ३·१४७ देखिए)। अग्गिणो—अग्गि शब्द का प्रथमा अनेक वचन (सूत्र ३·२२-२३ देखिए)।

१.२९ इआणि··· ···दाणि—ये इदानीम् शब्द के वर्णान्तरित रूप है।

१·३० अनुस्वारस्य वर्गे परे—अनुस्वार के आगे वर्गीय व्यञ्जन होने पर। यहाँ वर्ग का अर्थ वर्गीय व्यञ्जन है। व्यञ्जनों के वर्गों के लिए सूत्र १·१ ऊपर की टिप्पणी देखिए। प्रत्यासत्ति—सांनिध्य, सामीप्य। वर्गस्यान्त्य:—(उस उस) वर्ग में से अन्त्य व्यञ्जन (यानी ङ्, ञ्, ण्, न्, और म्)।

१·३१-३६ प्राकृत में शब्द का लिंग प्राय: संस्कृत समान हैं। तथापि कुछ शब्दों के लिंग प्राकृत में बदले हुए हैं। उनका विचार इन सूत्रों में है।

१·३१ पुंसि—पुल्लिंग में।

१·३२ सान्तम् नान्तम्—स् और न् इन व्यञ्जनों से अन्त होने वाले शब्दों के शब्दों के रूप। उदा०—यशस्; जन्मन्।

१·३३ अच्छीइं--यह नपुंसकलिंगी रूप है। सूत्र ३·२६ देखिए। अञ्जल्यादि पाठात्--अञ्जल्यादि यानी अञ्जलि शब्द आदि में प्रथम होने वाला शब्दों का एक विशिष्ट समूह, वर्ग अथवा गण। इस गण में आने वाले शब्द सूत्र १.३५ ऊपर की वृत्ति में दिए गए हैं। एसा अच्छी--अच्छी रूप स्त्रीलिंगी है, यह दिखाने के लिए स्त्रीलिंगी सर्वनाम 'एसा' प्रयुक्त किया है। चक्खूइं; नयणाइं, लोअणाइं, वयणाइं—ये सर्व नपुंसकलिंगी रूप हैं। विज्जूए—स्त्रीलिंगी रूप है। कुलं, छंदं, माहप्पं, दुक्खाइं, भायणाइं--ये नपुंसकलिंगी रूप हैं। नेत्ता··· ···सिद्धम्--हेमचन्द्र का मत ऐसा दिखाई देता है कि नेत्र और कमल ये शब्द संस्कृत में पुंल्लिंगी और नपुंसकलिंगी हैं।

१·३४ क्लीबे--नपुंसकलिंग में। गुणा, देवा, बिन्दुणो खग्गो, मण्डलग्गो, कररुहो, रुक्खा--ये सब पुल्लिंगी रूप हैं। विहवेहिं गुणाइं मग्गन्ति--विभवै: गुणान् मार्गयन्ति, ऐसो भी संस्कृत छाया दी गई है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·३५ एसा गरिमा··· ···एस अञ्जली—यहाँ शब्द का स्त्रीलिंग तथा पुल्लिग दिखाने के लिए अनुक्रम से एसा और एस ये सर्वनाम के स्त्रीलिंगी और पुल्लिगी रूप प्रयुक्त किए हैं। गड्डा, गड्डो--सूत्र २·३५ देखिए। इमेति तन्त्रेण--सूत्र में इमा (इमन्) ऐसा प्रत्यय कह कर नियम दिए जाने के कारण। त्वादेशस्य संग्रहः-- संस्कृत में भाव वाचक नाम साधने का 'त्व' प्रत्यय है। उदा०--बाल बालत्व। इस त्व प्रत्यय को प्राकृत में इमा (डिमा) और त्तण ऐसे आदेश होते हैं। (सूत्र २.१५४ देखिए)। उदा०---पीणिमा, पीणत्तण। तथा, संस्कृत में पृथु इत्यादि कुछ शब्दों को इमन् प्रत्यय लगाकर भाववाचक नाम साधे जाते हैं। उदा०—पृथु प्रथिमन्। अब, प्रस्तुत सूत्र में जो इमा शब्द प्रयुक्त किया है, वह त्व का आदेश इस स्वरूप में आने वाला इमा (डिमा) और पृथु इत्यादि शब्दों को लगने वाला इमा (इमन्), इन दोनों का ही ग्रहण (संग्रह) करता है।

१·३६ बाहु--यह शब्द संस्कृत में पुल्लिगी है।

१·३७ संस्कृत लक्षण—संस्कृत व्याकरण। डो··· ···भवति--डो ऐसा आदेश होता है। डो यानी डित् ओ। डित् शब्द का अभिप्रायः है जिसमें ड् इत् है वह। डो में ड् इत् इत् है। विशिष्ट प्रयोजन साधने के लिए शब्द के आगे या पीछे इत् वर्ण जोडे जाते हैं। इत् वर्ण वर्ण यानी जो वर्ण आता है और अपना कार्य करके जाता है; इस लिए शब्द के अन्तिम रूप में इत् वर्ण नहीं होता है। अब, जिसमें ड् इत् ऐसा डित् प्रत्यय (अथवा आदेश) जिस शब्द के आगे आता है, उस शब्द के 'भ' के 'टि' का लोप होता है। भ यानी प्रत्यय लगाने के पूर्व होने वाला शब्द का रूप (अंग)। टि यानी शब्द में अन्त्य स्वर के साथ अगले सर्व वर्ण। संक्षेप में, डित् प्रत्यय अथवा आदेश लगते समय, शब्द के अंग में से अन्त्य स्वर के साथ अगले सर्व वर्णों का लोप होता है। उदा०--सर्वतः + डो = सव्वत् = ओ = सव्वदो = सव्वओ। सिद्धावस्था--सूत्र १·१ ऊपर की टिप्पणी देखिए। कुदो--ऐसा वर्णान्तर शौरसेनी भाषा में भी होता है।

१·३८ यथासंख्यम्—अनुक्रम से। अभेदनिर्देशः सर्वादेशार्थः—'निष्प्रती ओत्परी ऐसा इस सूत्र में अभेद से किया हुआ निर्देश यह दिखाने के लिए है कि आदेश संपूर्ण शब्द को होता है।

१·३९ यह अधिकार सूत्र है। 'प्रावरणे अङ्ग्वाऊ' (सूत्र १·१७५) इस सूत्र के अन्त तक उसका अधिकार है।

१·४० त्यदादि--त्यद् इत्यादि सर्वनामों को त्यदादि संज्ञा है। उसमें त्यद्, तद्, यद्, एतद् इत्यादि सर्वनाम आते हैं। अव्यय—तीनों लिंगों, सब विभक्तियों और वचनों में जिसका रूप विकार न पाकर वैसा ही रहता है वह अव्यय। अम्हे—अम्ह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(√अस्मद्) सर्वनाम का प्रथमा अ० व० । इमा—इम (√इदम्) सर्वनाम का स्त्रीलिंगी प्रथमा ए० व० । अहं—अम्ह सर्वनाम का प्रथमा ए० व० । एत्थ—सूत्र २·१६१, १·५७ देखिए ।

१·४१ अपि—इस अव्यय के पि, वि, अवि ऐसे वर्णान्तर होते हैं ।

१·४२ इति—इस अव्यय के त्ति, ति, इअ ऐसे वर्णान्तर होते हैं । इअ—सूत्र १·९१ देखिए ।

१·४३ प्राकृतलक्षण—प्राकृतव्याकरण । याद्याः (य् + आद्याः)—य् इत्यादि । यानी सूत्र में कहे हुए य् र् व् इत्यादि वर्ण । उपरि अधो वा—संयुक्त व्यञ्जन में प्रथम अवयव अथवा द्वितीय अवयव होना । इस सूत्र में, य् इत्यादि व्यञ्जनों के आगे दिए हुए संयुक्त व्यञ्जन विचार में लिए हैं:—श्य, श्र, र्श, श्व, श्श; ष्य, र्ष, ष्व, ष्ष; स्य, स्र, स्व, स्स । तेषामादे······भवति—संयुक्त व्यञ्जन में से एक अवयव का लोप होने पर, उसके निकट पूर्व ह्रस्व स्वर दीर्घ होता है । उस कारण से शब्द की मात्राएँ कायम रहती हैं । उदा०–पश्यति-पस्सइ-पासइ । न दीर्घानु···द्वित्वाभावः–'अनादौ द्वित्वम्' (सूत्र २·८९) सूत्रानुसार, संयुक्त व्यञ्जन में से एक अवयव का लोप होने के बाद शेष बाकी अनादि व्यञ्जन का द्वित्व होता है । उदा०—अर्क—अ० क् अ—अक्क्अ–अक्क । परंतु संयुक्त व्यञ्जन के निकट पूर्व दीर्घ स्वर हो, तो यह द्वित्व नहीं होता है; ऐसा 'दीर्घानुस्वारात्' (सूत्र २·९२) सूत्र में कहा है । उदा०—ईश्वर = इसर । अब, प्रस्तुत स्थान पर, श्य इत्यादि संयुक्त व्यञ्जन में, एक अवयव का लोप होने पर, निकटपूर्व स्वर दीर्घ होता है; इसलिए यहाँ दिए हुए उदाहरणों में स्वभावतः द्वित्व का अभाव है ।

१·४४-१२५ प्राकृत में अ, आ, इ, ई, उ, ऊ वर्ण होते हैं । तथापि वे जिन शब्दों में होते हैं, उनमें से कुछ संस्कृत शब्दों का वर्णान्तर होते समय, इन स्वरों में भी कुछ विकार होते हैं । उनमें से अ के विकार सूत्र ४४-६६, आ के विकार सूत्र ६५-८३, इ के विकार सूत्र ८५-९८, ई के विकार सूत्र ९९-१०६, उ के विकार सूत्र १०७-११७, और ऊ के विकार सूत्र ११८-१२५ इन सूत्रों में कहे हुए हैं ।

१·४४ आकृतिगणो····· भवति—समान रूप होने वाले शब्द समूह का गण किया जाता है । उनमें से एक शब्द से उस गण को नाम दिया जाता है । उदा०—समृद्धयादिगण; समृद्ध्यादि आकृतगण है । जिस गण के कुछ शब्द वाङ्मयीन प्रयोग से निश्चित किए जाते हैं वह आकृतिगण । इसलिए यहां समृद्ध्यादि गण के शब्द कहते समय, न दिए हुए ऐसे अस्पर्श इत्यादि शब्द भी इस गण में अंतर्भूत होते हैं, और उन्हें यहाँ दिया हुआ नियम लगता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·४५ दक्षिण–इस शब्द के वर्णान्तर में आने वाले ह में लिए सूत्र २·७२ देखिए।

१·४६ सिविण—स्वप्न शब्द के इस स्वर भक्ति के लिए सूत्र २·१०८ देखिए। सिमिण––इसमें से म के लिए सूत्र १·२५९ देखिए। दिंण्ण—इस रूप के लिए सूत्र। २·४३ देखिए।

१·४७ पिक्क पक्क––मराठी भाषा में :—पक्का, पिका, पिक (ला)। इंगाल––मराठी में :––इंगल, इंगली। णिडाल––मराठी में :––निढक।

१·४९ छत्तिवण्ण––स के छ के लिए सूत्र १·२६५ देखिए।

१·५० मयट् प्रत्यय––विकार, प्राचुर्य, इत्यादि दिखाने के लिए संस्कृत में मयट् (मय) प्रत्यय जोडा जाता है। उदा०––विष विषमय। विसमइओ— विसमइ के आगे स्वार्थे क (अ) प्रत्यय आया है।

१·५२ कथं सुणओ––सुणओ वर्णान्तर श्वन् शब्द में आदि अ का उ होकर बना हुआ दिखाई देता है। परन्तु श्वन् शब्द मात्र सूत्र में नहीं कहा है। इसलिए यह रूप कैसे बनता है ऐसा प्रश्न यहाँ है। सा साणो––सूत्र ३·५६ देखिए।

१·५३ अस्य णकारेण सहितस्य––णकार से सहित अ का। सूत्र में से खण्डित शब्द में णकार है, परन्तु सूत्र में से वन्द्र शब्द में णकार नही है। सूत्र में से अनेक शब्दों में से एक ही शब्द में से वर्णों का इसी प्रकार का निर्देश हेमचन्द्र सूत्र १·९२ ऊपर की वृत्ति में करना है। अब, णकार का सम्बन्ध सिर्फ खण्डित शब्द के साथ लेना नहीं ऐसा कहे, तो 'बुन्द्रं वुन्द्रं' इस उदाहरण के बदले पाठ भेद से होने वाले 'वुद्रं वन्द्रं' यह उदाहरण लेकर णकार में नकार अन्तर्भूत है, ऐसा मानना होगा। त्रिविक्रम मात्र कहता है:––'चण्डखण्डिते णा वा' (१·२·१९):—चण्डखण्डितशब्दयोर्णकारेण सहितस्यादेर्वर्णस्य उद् भवति।

१·५४ वकारकारस्य—व् से संपृक्त होने वाले का।

१·५५ पकारथकारयोरकारस्य––प् और थ् व्यञ्जनों में से संपृक्त रहने वाले अकार का। युगपत्—एकदम, एक समय।

१·५६ ज्ञस्यणत्वे कृते—ज्ञ का ण किए जाने पर। प्राकृत में ज्ञ के वर्णान्तर ण (सूत्र २·४२) और ज (सूत्र २·८३) होते हैं। ज्ञ का ण ऐसा वर्णान्तर किए जाने पर, इस सूत्र का नियम लगता है।

१·५८ अच्छेरं······अच्छरीअं—आश्चर्य शब्द के प्राकृत में अनेक वर्णान्तर होते हैं। उदा०—सूत्र २·६६ नुसाद् र्य का र, और सूत्र २·६७ नुसार र्य के रिअ, अर, और रिज्ज होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·६१ विश्लेष—(शब्दशः) वियोग/संयुक्त व्यञ्जन में से दो अवयवों के बीच में स्वर डालकर व्यञ्जन पृथक् करना यानी संयुक्त व्यञ्जन दूर करना यानी विश्लेष। इसको ही स्वर भक्ति ऐसा भी कहा जाता है। स्वर भक्ति के लिए सूत्र २·१००-११५ देखिए।

१·६३ ओप्पेइ—मराठी में:-ओपणे।

१·६५ नञः परे—नञ् के आगे। संस्कृत में नञ् (न) यह निषेधदर्शक अव्यय है।

१·६७ तलवेण्टं··· ···तालवोण्टं—सूत्र १·१३९, २·३१ देखिए। बाम्हणो, पुव्वाण्हो–यहाँ म्ह इस संयुक्त व्यञ्जन के पीछे आ दीर्घ स्वर ह्रस्व न होते, वह वैसा ही रहा हुआ दिखता है। उसका कारण प्राकृत में व्यवहारतः म्ह संयुक्त व्यञ्जन न होने, (ख; भ इत्यादि के समान) म् का हकार से युक्त रूप है। दवग्गी··· सिद्धम्–दवग्गी और चडू शब्दों में प्रस्तुत सूत्र से आ का अ हुआ है; ऐसे कहने का कारण नहीं है। कारण दवाग्नि और चटु इन दो शब्दों से ही वे सिद्ध हुए हैं।

१·६८ घञ्·····आकारः—घञ् प्रत्यय के निमित्त से (मूल शब्द में) वृद्धि होकर आया हुआ आकार। संस्कृत में घञ् एक कृत् प्रत्यय है; वह लगते समय, धातु में से स्वर में वृद्धि होती है। अ, इ-ई, उ-ऊ, ऋ-ॠ और ऌ इनके अनुक्रम से आ, ऐ, औ, आर् और आल् होना यानी वृद्धि होना।

१·६९ मरहट्ठ—महाराष्ट्र शब्द में वर्ण व्यत्यय होकर यह शब्द बना है। सूत्र २·११९ देखिए।

१·७४ संखायं······सिद्धम्—स्त्यै धातु से बने हुए स्त्यान शब्द में आ का ई होता है। परन्तु सं + स्त्यै धातु से साधे हुए संखाय शब्द में आ का ई दिखाई नहीं देता है। कारण सूत्र ४·१५ नुसार संस्त्यै धातु को संखा ऐसा आदेश होने पर, संखाय रूप सिद्ध हुआ है।

१·७५ सुण्हा—इसमें से 'ण्हा' के लिए सूत्र २·७५ देखिए।

थुवओ—इसमें से थ के लिए सूत्र २·४५ देखिए।

१·७८ गेज्झ—ज्झ के लिऐ सूत्र २·२६ देखिए।

१·७९ दारं बारं—द्वार में से व् के लोप के लिए सूत्र २·७९ देखिए।

द् का लोप और द् का ब् होकर बार रूप बना है।

कथं नेरइओ नारइओ—नारकिक शब्द में, आ का विकल्प से ए होकर, नेरइओ और नारइओ रूप न बने हों; तो वे कैसे बने हैं, ऐसा प्रश्न यहाँ है।

१·८१ मात्रट्-प्रत्यये—मात्रट (= मात्र) प्रत्यय में। मात्रच् (मात्र) एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिमाप-वाचक तद्धित प्रत्यय है। एत्तिअ–इस रूप के लिए सूत्र २·१५७ देखिए। मात्र-शब्दे–केवल किंवा। सिर्फ अर्थ दिखाने वाला मात्र शब्द है।

१·८२ ओल्ल––मराठी मेः–ओल, ओला।

१·८४ दीर्घस्य······ह्रस्वो भवति–दीर्घ स्वर के आगे संयुक्त व्यञ्जन होने पर, वह दीर्घस्वर ह्रस्व होता है। प्राकृत में यह एक महत्त्वपूर्ण नियम है। नरिन्दो, अहरुट्ठं–ए और ओ स्वरों के आगे संयुक्त व्यञ्जन आने पर, वे ह्रस्व होते हैं। इन ह्रस्व ए और ओ के स्थान पर अनेकदा अनुक्रम से ह्रस्व इ और ह्रस्व उ लिखे जाते हैं। अतएव यहाँ नरिन्दो, अहरुट्ठं रूप दिए हैं। आयास (आकाश)–यहाँ संयुक्त व्यञ्जन न होने से, दीर्घस्वर ह्रस्व होने का प्रश्न निर्माण नहीं होता है। ईसर–ईश्वर शब्द में से संयुक्त व्यञ्जन के एक अवयव का लोप हुआ और पिछला दीर्घ स्वर वैसा ही रह गया। ऊसव–(उत्सव-उस्सव-ऊसव) यहाँ संयुक्त व्यञ्जन के एक अवयव का लोप होने पर, पिछला स्वर दीर्घ हुआ है।

१·८८ हलद्दी––मराठो में:–हळदी, हळद। बहेडओ–मराठी में बेहडा। पथिशब्द······भविष्यति–हेमचंद्र के मतानुसार पन्थ शब्द भी संस्कृत में है; वह पथिन् शब्द का समानार्थक है; और उस शब्द से 'पन्थं किर देसित्ता' में से पंथं शब्द द्वितीया एकवचन का रूप है।

१·८९ सढिल––मराठी में सढक। निर्मित शब्दे······सिद्धेः–निम्मिअ और निम्माअ शब्द निर्मित शब्द में इ का विकल्प से आ होकर बने हुए हैं क्या, इस प्रश्न का उत्तर यहाँ है।

१·९२ जीहा––सूत्र २·५७ के अनुसार जिह्वा शब्द का वर्णान्तर जिब्भा हुआ; अनन्तर ब् का लोप होकर जीभा; बाद में सूत्र १·१८७ नुसार भ का ह होकर जीहा शब्द बना, ऐसा भी कहा जा सकता है।

१·९३ निर् उपसर्गस्य––निर् उपसर्ग का जिन अव्ययों का धातु से योग होता है उन्हें उपसर्ग कहते हैं। उपसर्ग धातु के पीछे जोड़े जाते हैं। प्र, परा, सम्, अनु, अव, निर्, दुर्, अभि, वि, अधि, अति इत्यादि उपसर्ग होते हैं। निस्सहाइँ–सूत्र १·२६ देखिए।

१·९४ नावुपसर्गे––नि उपसर्ग में। णुमज्जइ–यह शब्द निमज्जति शब्द का वर्णान्तर है। (णुमज्ज ऐसा नि+सद् धातु का आदेश भी है। सूत्र ४·१२३ देखिए)।

१·९५ उच्छू––मराठी में ऊस।

१·९६ जहुट्ठिलो जहिट्ठिलो––र् के ल् के लिए सूत्र १·२५४ देखिए।

१·९७ कृग् धातोः––कृ धातु का।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·१०० कम्हारा—श्म के म्ह के लिए सूत्र २·७४ देखिए।

१·१०२ जुण्ण—मराठी में जुना।

१·१०४ तीर्थ—इस शब्द में सूत्र २·७२ के अनुसार ह् आता है।

१·१०८ अवरिं उवरिं—यहाँ अन्त्य रि के ऊपर अनुस्वारागम हुआ है।

१·११४ ऊसुओ··· ···ऊसरइ—इन उदाहरणों में, संयुक्त व्यञ्जन में से एक अवयव का लोप होकर पिछला स्वर दीर्घ हुआ है, ऐसा भी कहा जा सकता है।

१·११५ सदृश नियम सूत्र १·१३ में देखिए।

१·११६ सदृश नियम सूत्र १·८५ में देखिए।

१·१२१ भुमया—सूत्र २·१६७ देखिए।

१·१२४ कोहण्डोकोहाली—इस वर्णान्तर के लिए सूत्र २·७३ देखिए। कोहली, कोप्परं, थोरं, मोल्लं—मराठी में—कोहका, कोपर; थोर, मोल।

१·१२६-१४१ प्राकृत में ऋ, ॠ और ऌ स्वर नहीं होते हैं। प्राकृत में उन्हें कौन से विकार होते हैं, यह इन सूत्रों में कहा है।

१·१२६ तणं—मराठी में तण। कृपादिपाठात्—कृपादि शब्दों के गण में समावेश होने के कारण कृपादिगण के शब्द सूत्र १·१२८ ऊपर की वृत्ति में दिए गए हैं। परन्तु वहाँ द्विधाकृतम् शब्द मात्र नहीं दिया गया है।

१·१२८ दिट्ठी—मराठी में दिठी। विञ्चुओ—मराठी में विंचू।

१·१२९ पृष्ठशब्देनुत्तरपदे—पृष्ठ शब्द समास में उत्तर पद न होने पर (यानी वह समास में प्रथम पद होने पर)।

१·१३० सिंग—हिंदी में सींग; मराठी में शिंग। धिट्ठ—मराठी में धीट।

१·१३१ पाउसो—मराठी में पाउस।

१·१३३ ऋतो वेन सह—(वृषभ शब्द में) व् के सह ऋ का। वसहो—सूत्र १·१२६ देखिए।

१·१३४ गौणशब्दस्य—(समास में) गौण शब्द का तत्पुरुष समास में पहला पद गौण होता है। माउसिआ पिउसिआ—इन शब्दों में से 'सिआ' वर्णान्तर के लिए सूत्र २·१४२ देखिए।

१·१३५ मातृशब्दस्य गौणस्य—सूत्र १·१३४ ऊपर की टिप्पणी देखिए। माईणं—माइ (√मातृ) शब्द का षष्ठी अनेक वचन।

१·१४१ रिज्जू उज्जू—मराठी में उजु। द्वित्व के लिए सूत्र २·९८ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·१४२ क्विप् टक् सक्—ये कृत् प्रत्यय होते हैं। सर्वनाम के अनन्तर अथवा 'स' के बाद आने वाले दृश् धातु को ये प्रत्यय लगाकर, दृश्, दृश और दृक्ष इन शब्दों से अन्त होने वाले शब्द सिद्ध होते हैं। उदा०-ईदृश्, ईदृश, ईदृक्ष; सदृश्, सदृश, सदृक्ष। टक्······गृह्यते-इस सूत्र में कौन सा क्विप् प्रत्यय अभिप्रेत है, वह यहाँ कहा है।

१·१४६-४७ ए स्वर प्राकृत में हैं। ए स्वर होने वाले संस्कृत शब्द प्राकृत में आते समय कभी उनमें विकार होते हैं। वे इन सूत्रों में कहे हुए हैं।

१·१४६ वेदनादिषु—वेदनादि शब्द इसी सूत्र में दिए गए हैं।

महमहिअ—यह शब्द महमह धातु का क० भू० धा० वि० है। महमह धातु प्रसृ धातु का आदेश है (सूत्र ४·७८ देखिए)।

१·१४८-१५५प्राकृत में प्रायः ऐ स्वर नहीं है। इस ऐ को होने वाले विकार इन सूत्रों में कहें हुए हैं।

१·१४९ सिन्धवं सणिच्छरो—सैन्धव और शनैश्चर शब्दों में पहले ऐ का ए हुआ (सूत्र १·१४८ देखिए); यह ए सूत्र १·८४ के अनुसार ह्रस्व होता है; इस ह्रस्व ए के स्थान पर ह्रस्व इ आई है, ऐसा भी कहा जा सकता है।

१·१५० सिन्नं—सूत्र १·१४९ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

१·१५३ देव्वं दइव्वं—इन शब्दों में से द्वित्व के लिए सूत्र २·९९ देखिए।

१·१५४ उच्च······सिद्धम्—उच्चैः और नीचैः शब्दों के वर्णान्तर उच्चअं और नीचअं होते हैं। तो फिर उच्च और नीच शब्दों के वर्णान्तर कौन से होते हैं? उत्तर है-उच्च शब्द का उच्च और नीच शब्द का नीच, नयि ऐसे वर्णान्तर होते हैं।

१·१५६-५८ प्राकृत में ओ स्वर होता है। तथापि कुछ संस्कृत शब्द प्राकृत में आते समय उनके ओ में कभी विकार होते हैं। वे विकार इन सूत्रों में कहे हुए हैं।

१·१५६ अग्नुन्नं, पउट्ठो, आउज्जं—इन शब्दों में से ओ सूत्र १·८४ के अनुसार ह्रस्व होता है; अनन्तर ह्रस्वओ के स्थान पर ह्रस्व उ लिखा जाता है। पवट्ठो,आवज्जं-यहाँ क और त का व हुआ है।

१·१५९-६४ औ स्वर प्राकृत में नहीं है। प्राकृत में औ से होने वाले वर्णान्तर इन सूत्रों में कहे हुए है।

१·१५९ जोव्वणं—यहाँ के द्वित्व के लिए सूत्र २·१८ देखिए।

१·१६० सुंदेरं—सूत्र २·६३ देखिए। सुंदरिअं—सूत्र २·१०७ देखिए। सुन्देरं······सुद्धोअणी—इन शब्दों में औ का ओ हुआ है (सूत्र १·१५९) आगे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयुक्त व्यञ्जन होने से यह ओ ह्रस्व हो जाता है और इस ह्रस्व ओ के स्थान पर ह्रस्व उ लिखा गया है, ऐसा भी कहा जा सकता है।

१·१६१ कुच्छेअयं––सूत्र १·१६० के ऊपर की 'सुंदेरं······सुद्धोअणी' ऊपर की टिप्पणी देखिए।

१·१६४ नावा––मराठी में नाव।

१·१६५-७५ इन सूत्रों में संकीर्ण स्वर विकार कहे हुए हैं।

१·१६६ थेरो––मराठी में थेर (डा)। वेइल्लं–द्वित्व के लिए सूत्र २·९८देखिए। मुद्धविअइल्लपसूण पुंजा––यहाँ विअइल्ल शब्द में ए नहीं हुआ है।

१·१६७ केलं केली––मराठी में केल केली। हिंदी में केला।

१·१७० पूतर––'अधम; जलजन्तुर्वा' ऐसा अर्थ त्रिविक्रम देता है।

बोरं बोरी––मराठी में बोर, बोरी। पोप्फलं पोप्फली–मराठी के पोफल, पोफली।

१·१७१ मोहो—यहाँ मऊह (सूत्र १·१७७) में उद्वृत्त स्वर का पिछले स्वर से संधि होकर मो हुआ, ऐसा भी कहा जा सकता है। लोणं—मराठी में लोण, लोणा। चोग्गुणो, चोत्थो, चोत्थी, चोद्दह, चोद्दसी, चोव्वारो–इन शब्दों में प्रथम त् का लोप (सूत्र १·१७७) होकर फिर उ इस उद्वृत्त स्वर का पिछले स्वर से संधि होकर चो हुआ है, ऐसा भी कहा जा सकता है। सोमालो–इस शब्द में र के ल के लिए सूत्र १·२५४ देखिए।

१·१७३ ऊज्झाओ––दीर्घ ऊ होता है ऐसा कहकर यह वर्णान्तर दिया गया है। (ऊ के आगे ज्झ संयुक्त व्यञ्जन होने से, उज्झाओ ऐसा भी वर्णान्तर कभी-कभी दिखाई देता है)।

१·१७४ णुमण्णो—सूत्र १·९४ के नीचे णुमण्णो (न्नो) शब्द निमग्न शब्द का वर्णान्तर इस रूप में दिया था। पर यहाँ मात्र णुमण्णो शब्द निष्पण्ण का आदेश है ऐसा कहा है।

१·१७५ पंगुरणं––मराठी में पांग (घ) रुण।

१·१७६-२७१ इन सूत्रों में अनादि असंयुक्त व्यञ्जनों के विकार कहे हुए हैं।

१·१७६ यह अधिकार सूत्र है। प्रस्तुत प्रथम पाद के अन्त तक इस सूत्र का अधिकार है।

१·१७७ स्वर के अगले अनादि असंयुक्त क् ग् च् ज् त् द् प् य् व् इन व्यञ्जनों का लोप होता है; यह एक महत्त्वपूर्ण वर्णान्तर है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रायो लुग् भवति–इस सन्दर्भ में मार्कंडेय का कथन लक्षणीय है :—'प्रायो-ग्रहपतश्चात्र कैश्चित् प्राकृतकोविदैः। यत्र नश्यति सौभाग्यं तत्र लोपो न मन्यते॥" (प्राकृत सर्वस्व, २.२)। ऐसा कुछ प्रकार प् के बारे में हेमचन्द्र सूत्र १.२३१ ऊपर की वृत्ति में कहना है। विउहो–विबुध में से ब् का व् होकर, फिर व् का लोप हुआ, ऐसा यहाँ समझना है। समासे··· ···विवक्ष्यते—समास में दूसरा पद भिन्न है ऐसा विवक्षा हो सकती है। इसलिए सम्पूर्ण समास एक ही पद माना जाय, तो दूसरे पद का आदि व्यञ्जन अनादि होगा; परन्तु दूसरा पद भिन्न माना जाय, तो उसका आदि व्यञ्जन आदि ही माना जाएगा। इस मन्तव्य के अनुसार, उस व्यञ्जन के वर्णान्तर, साहित्य में जैसा दिखाई देगा वैसा, होंगे। उदा०—जलचर समास में च आदि माना जाय तो जलचर वर्णान्तर होगा; च अनादि माना जाय, तो जलयर ऐसा वर्णान्तर होगा। इन्धं—सूत्र २.५० देखिए। कस्य गत्वम्—(माहाराष्ट्री) प्राकृत में कभी क का ग होता है। उस सन्दर्भ में हेमचन्द्र सूत्र ४.४४७ का निर्देश करता है। अर्धमागधी प्राकृत में प्रायः क का ग होता है।

१.१७८ अनुनासिक—मुख और नासिका के द्वारा जिसका उच्चारण होता है वह अनुनासिक। अब, इस कथनानुसार, म् का अनुनासिक होने पर, उद्वृत्त स्वर का उच्चारण सानुनासिक (अनुनासिक के साथ) होगा; यह उच्चारण उस अक्षर के ऊपर ँ चिह्न रख कर दिखाया जाता है। उदा०—यमुना—जउँणा।

१.१७९ इस सूत्र के अनुसार प् का लोप न हो, तो सूत्र १.२३१ के अनुसार प् का व् होता है।

१.१८० कगचजे··· ···र्भवति—सूत्र १.१७७ के अनुसार, क् ग् इत्यादि व्यञ्जनों का लोप होने पर, उद् वृत्त स्वर अ और आ (अवर्ण) होने और यदि उनके पीछे अ और आ स्वर होंगे (अवर्णात् परः), तो उन उद्वृत्त अ और आ का होने वाला उच्चारण लघुतर प्रयत्न से उच्चारित य् व्यञ्जन के समान सुनाई देता है; इस श्रवण को य–श्रुति कहते हैं। और इसलिए इन अ और आ के स्थानों पर कभी-कभी य और या लिखे जाते हैं। अवर्णा···पियइ—अ और आ स्वर पीछे होने पर, उद् वृत्त होने वाले अ और आ की य–श्रुति होती है, इस नियम का अपवाद है, ऐसा हेमचन्द्र मान्य करते दिखाई देता है; इसलिए उसने 'पियइ' उदाहरण दिया है।

१.१८१ खुज्जो खप्परं खलिओ—मराठी में खुजा; खापर; खील, खिल। खासिअं—हिंदी में खांसी।

१.१८२ गेंदुअं—हिंदी में गेंद।

१.१८३ चिलाओ—र् के ल् के लिए सूत्र १.२५४ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·१८६ फलिहो—ट् के ल् के लिए सूत्र १.१९७ देखिए।

१·१८७ वर के अगले अनादि असंयुक्त ख् ध् थ् ध् भ् इनका प्रायः ह् होता है, यह वर्ण विकार का एक महत्त्वपूर्ण नियम है। मुहं–हिंदी मे मुह। मिहुणं–मराठी में मेहुण। बहिरो–मराठी में बहिरा, बहिर (ट)। हिंदी में बहरा।

१·१८८ डॉ० प० ल० वैद्य जी के मतानुसार, यह सूत्र १·२०८ के बाद आना चाहिए था। (कारण तब १·२०४-२०८ सूत्रों में कहे गए न के विकारों के अनन्तर प्रस्तुत का थ विकार आया होता)। परन्तु हेमचन्द्र ने ऐसा किया दिखाइ देता है:– सूत्र १·१८७ में थ का एक विकार कहा, उससे भिन्न ऐसा थ का विकार तुरंत प्रस्तुत सूत्र में कहा। ऐसा ही प्रकार हेमचन्द्र ने ख के बारे में सूत्र १·१८९ में किया है।

१·१८९ संकलं––शृङ्खल शब्द में ङ्ख संयुक्त व्यञ्जन होने से, सूत्र १·१८७ के अनुसार यहां ख का ह नहीं होता है।

–१·१९० पुन्नामाइँ—इस रूप के लिए सूत्र ३·२६ देखिए।

१·१९१ छालो—यह पुल्लिंगी रूप है। छाली–यह स्त्रीलिंगी रूप है।

१·१९२ दूहवो––दुर्भग शब्द में, सूत्र १·११५ के अनुसार रेफ का लोप होकर, पिच्छला ह्रस्व उ स्वर दीर्घ ऊ होकर, दूभग शब्द बनता है। अब प्रस्तुत सूत्रानुसार, ग का व होकर दूहव वर्णान्तर होता हैं। दूहव शब्द के साम्याभास से, सुभग शब्द के बारे में भी ऐसा ही प्रकार होकर, सूहव वर्णान्तर होता है; ऐसा दिखाई देता है।

१·१९३ पिसल्लो–-मराठी में पिसाळ।

१·१९५ स्वर के अगले अनादि असंयुक्त ट का ड होता है, यह एक महत्त्वपूर्ण वर्णान्तर है। घडोघडइ–मराठी में घडा, घडण।

१·१९८ ण्यन्ते च पटिधातौ––ये शब्द सूत्र में से पाटौ शब्द का अनुवाद करते हैं। पट् धातु के प्रेरक/प्रयोजश रूप में, ऐसा उनका अर्थ है।

ण्यन्त––संस्कृत में णि (णिच्) प्रत्यय धातु को जोड़कर प्रेरक धातु का रूप साधा जाता है। इसलिए ण्यन्त यानी प्रेरक प्रत्ययान्त (धातु)। फालेइ फाडेइ—हेमचन्द्र के मतानुसार, ये शब्द पाटयति शब्द के वर्णान्तर हैं। तथापि डॉ० वैद्य जी के मतानुसार, ये वर्णान्तर स्फाल् और स्फट् धातुओं के प्रेरक रूपों से साधे गए हैं। फाडेइ–मराठी में फाडणे। हिंदी में फाड़ना।

१·१९९ स्वर के अगले अनादि असंयुक्त ठ का ढ होता है। कुढारो–मराठी में कुऱ्हाड। पढइ–हिंदी में पढना। मराठी में पढणे। चिट्ठइ ठाइ–चिट्ठ और ठा ये स्था धातु के आदेश है (सूत्र ४·१६ देखिए)।

१·२०२ स्वर के अगले अनादि असंयुक्त ड का ल होता है। गुलो–मराठी में गूळ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·२०३ वेलू--मराठी में वेकू।

१·२०६ वहेडओ हरडई मडयं--मराठी में बेहडा, हिरडा, मडे (मटे)। पइट्ठा-मराठी में पैठा, पैठ।

१·२०७ इः स्वप्नादौ······बलात्—वेतस शब्द में सूत्र १·४६ के अनुसार, त में से अ का इ होने पर ही, त का ड होता है, ऐसा प्रस्तुत सूत्र कहता है। यदि वेतस शब्द में अ का इ न हो, तो त का ड न होवे, वे अस ऐसा वर्णान्तर होता है। इसका अभिप्रायः–प्रस्तुत सूत्र में से 'इत्व होने पर ही' इन शब्दों की व्यावृत्ति के सामर्थ्य से, वेतस शब्द में 'इः स्वप्नादौ' इस सूत्र के अनुसार इकार नहीं होता है, जब वैसा नहीं होता है तो वे अस वर्णान्तर हो जाता है।

१·२०८ अणिउंतयं--सूत्र १·१७८ देखिए।

१·२०९ अत्र केचिद्नोच्यते—यहाँ हेमचन्द्र के पूर्ववर्ती एक वैयाकरण वररुचि के कहे हुए एक नियम का प्रतिवाद है, ऐसा दिखाई देता है। 'ऋत्वादिषु तो दः' (प्राकृत प्रकाश, २·७) इस वररुचि के सूत्र में कहा है कि स्वर के अगले अनादि असंयुक्त त का द प्राकृत में होता है। हेमचन्द्र के मतानुसार, ऐसा न का द होना यह (माहाराष्ट्री) प्राकृत का वैशिष्ट्य नहीं हैं; वह शौरसेनी और मागधी भाषाओं का वैशिष्ट्य है। इसलिए हेमचन्द्र यहाँ कहता है कि प्रस्तुत स्थल में प्राकृत के विवेचन में न का द होना यह वर्णान्तर नहीं कहा गया हैं। न पुन·· ···इत्यादि-(माहाराष्ट्री) प्राकृत में अनादि असंपृक्त त का द न होने के कारण, ऋतु, रजत इत्यादि शब्दों के रिउ, रमय इत्यादि रूप होते हैं। परन्तु उदू, रयदं इत्यादि वर्णान्तर मात्र नहीं होते हैं। क्वचित्······सिद्धम्--मानो माहाराष्ट्री प्राकृत में क्वचित् कुछ शब्दों में त का द हुआ है ऐसा दिखाई पड़ता हो (भावेऽपि), तो भी वह 'व्यत्ययश्च' (सूत्र ४·४४७) सूत्र से सिद्ध होगा। दिही······वक्ष्यामः—धृति शब्द से त का द होकर फिर वर्ण विपर्यय होकर दिही वर्णान्तर होता है क्या, इस प्रश्न का उत्तर नहीं है। धृति शब्द को दिही ऐसा आदेश होता है, ऐसा हम आगे (सूत्र २·१ ः में) कहने वाले हैं, ऐसा हेमचन्द्र कहता है। डॉ० वैद्य जी धृतिका वर्णान्तर आगे दिए पद्धतिनुसार सूचित करते हैं:—धृति = द् + ह् + ऋ + ति = द + ह + इ (ऋका इ होकर) + इ (त् का लोप होने पर) = द् + इ हि + इ = द् + हि (वर्ण व्यत्यय होकर) = दिहि।

१·२१० सत्तरी—मराठी में, हिंदी में सत्तर।

१·२११ अलसी—मराठी में अलशी। सालाहणो—सूत्र १.८ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·२१३ स्वार्थेलकारे परे—स्वार्थ अर्थ में आने वाला लकार आगे होने पर स्वार्थे लकार के लिए सूत्र २·१७३ देखिए। पीवलं—मराठी में पिवला। पीअलं—हिंदी में पीला।

१.२१४ काहलो—र के ल के लिए १·२५४ देखिए।

माहुलिंगं—मराठी में महालुंग।

१.२१५ मेढी—मराठी में मेढा।

१·२१७-२२५ सूत्र १·१७७ के अनुसार जब द् का लोप नहीं होता है तब होने वाले द् के विकार इन सूत्रों में कहे हुए है, ऐसा डॉ० वैद्य जी का कहना है। परन्तु उनका यह वचन सम्पूर्णतः सत्य नहीं है। कारण सूत्र १·१७८ अनादि द् का विकार कहेता है; परन्तु सूत्र १.२१७ में अनादि तथा आदि द् के विकार कहे हैं; सूत्र १·२१८ में और सूत्र १·२२३ में भी आदि द् के ही विकार कहे हुए हैं।

१·२१७ डोला—मराठी में डोला, डोला (रा)। हिन्दी में डोली। डण्ड—हिन्दी में डण्डा। डर—हिन्दी में डर। डोहल—मराठी मे डोहला, डोहाला। डोहल में द के ल लिए सूत्र १·२२१ देखिए।

१·२१८ डसइ—मराठी में डसणे। हिंदी में डसना।

१·२१९ संख्यावाचक शब्दों में मराठो में द का र होता है। उदा०—एकादश–अकरा, द्वादश–बारा, त्रयोदश–तेरा। हिन्दी में ग्यारह, बारह, तेरह।

१·२२० कदलीशब्दे अद्रुमवाचिनी—वृक्ष-वाचक कदली शब्द न होने पर यानी कदली शब्द का अर्थ हस्ति–पताका (हाथी के गण्डस्थल के ऊपर होने वाली पताका) होने पर।

१·२२१ पलित्त—मराठी में पलिता।

१·२२२ कलम्ब—मराठी में कलम्ब।

१·२२४ कवट्टिओ—यहाँ ट्ट के लिए सूत्र २·२९ देखिए।

१·२२८ स्वर के अगले अनादि असंयुक्त न का ण होना. यह एक महत्त्वपूर्ण वर्णान्तर है।

१·२२९ वररुचि के मतानुसार, न् कहीं भी हो, सर्वत्र उसका ण् हो जाता है (नो णः सर्वत्र। प्राकृत प्रकाश, २.४२)।

१·२३० लिम्बो—मराठी में लिंब। ण्हाविओ–मराठी में न्हावी।

१·२३१ सूत्र १·१७७ के अनुसार अनादि असंयुक्त प् का लोप होता है। सूत्र १·१७९ के अनुसार, अ और आ इन स्वरों के आगे आने वाले प् का लोप नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है। उस प् का व् होता है, ऐसा इस सूत्र में कहा हुआ है। अनादि असंयुक्त प् का व् होना एक महत्त्वपूर्ण वर्णान्तर है।

महिवालो--हिंदी में महियाल। एत्तेन पकारस्य......तत्र कार्यः--प् के बारे में लोप और व कार ये विकार प्राप्त होने पर, जो वर्णविकार श्रुतिसुखद (कान को मधुर लगने वाला) हो, वह कीजिए।

१.२३२-३३ इन दो सूत्रों में आदि प् के विकार कहे हुए हैं।

१.२३२ ण्यन्ते पटिधातौ—सूत्र १.१९८ ऊपर की टिप्पणी देखिए। फलिहो फलिहा फालिहद्दो—यहाँ र के ल के लिए सूत्र १.२५४ देखिए। फणसो-मराठी में फणस।

१.२३५ पारद्धी--मराठी में, हिंदी में पारध।

१.२३६ अनादि असंयुक्त फ और भ का ह होना यह एक महत्त्वपूर्ण वर्णान्तर है।

१.२३७ अलाऊ--यहाँ अनादि ब् का लोप हुआ है।

१.२३८ बिसतन्तु--यहाँ बिस शब्द नपुंसकलिंग में होने के कारण, ब का भ नहीं होता है।

१.२४० अनादि असंयुक्त भ का ह होता है (सूत्र १.१८७ देखिए) इस नियम का प्रस्तुत नियम अपवाद रूप में माना जा सकता है।

१.२४२ यहाँ आदि असंयुक्त म् का विकार कहा हुआ है।

१.२४४ भसलो—यहाँ र के ल के लिए सूत्र १.२५४ देखिए।

१.२४५ आदि असंयुक्त य का ज होना यह एक महत्त्वपूर्ण वर्णान्तर है। जम-हिंदी में जम।

१.२४६ युष्मच्छब्देऽर्थपरे—तू-तुम ऐसा द्वितीय पुरुषी अर्थ होने वाले युष्मद् (सर्वनाम) शब्द में। जुम्हदम्हपयरणं-युष्मद् और अस्मद् (सर्वनामों) का विचार करने वाला प्रकरण।

१.२४७ लट्ठी--मराठी में लाठी।

१.२४८ अनीय-तीय-कृद्यःप्रत्येषु--अनीय एक कृत् प्रत्यय है। वह धातु को जोड़कर वि० क० धा० वि० सिद्ध किया जाता है। उदा०--कृ+अनीय=करणीय। तीय--द्वि और त्रि इन संख्यावाचक शब्दों को पूरणार्थ में लगने वाला तीय प्रत्यय है। उदा०--द्वि+तीय=द्वितीय; तथा तृतीय। कृद्य--कृत् य यानी कृत् होने वाला य प्रत्यय। यह प्रत्यय धातु को लगाकर वि० क० धा० वि० सिद्ध किया जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदा०–मा+य=मेय। अन्य 'य' प्रत्ययों से इस य का भिन्नत्व दिखाने के लिए यहाँ कृद् य ऐसा कहा गया है। बिइज्ज–मराठी में बीज।

१·२५० डाह्––डिन् आह्। डित् के लिए सूत्र १·३७ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

१.२५४ अनादि असंयुक्त र का ल होना एक महत्त्वपूर्ण वर्णान्तर है। चरण-शब्दस्य पदार्थवृत्तेः—पाव/पाद अर्थ में चरण शब्द प्रयुक्त किए जाने पर, उसमें र का ल होता है। भ्रमरे स-सन्नियोगे एव—सूत्र १.२४४ के अनुसार भ्रमर शब्द में म का स होता है; अब, इस 'स' के सान्निध्य होने पर ही भ्रमर शब्द में र का ल होता है।

आर्षे··· ···द्यपि—आर्ष प्राकृत में द्वादशांग शब्द से दुवाल संग वर्णान्तर होता है। यहाँ र का ल नहीं हुआ है; द का ल हुआ है; इसलिए यह उदाहरण सच कहे तो तो सूत्र १·२२१ के नीचे आना आवश्यक था।

१·२५५ थोर—मराठी में थोर। सूत्र १·१२४ के अनुसार स्थूल का पहले थोल वर्णान्तर होता है; अनन्तर प्रस्तुत सूत्रानुसार ल का र होकर थोर वर्णान्तर सिद्ध होता है। कथं थूल भद्दो—यदि स्थूल शब्द में ल का र होता है, तो थूल भद्द वर्णान्तर कैसे होता है, ऐसा प्रश्न यहाँ है। उसका उत्तर स्थूरस्य··· ···भविष्यति' इस अगले वाक्य में है।

१·२५८ शबर शब्द में, सूत्र १.२३७ के अनुसार ब का व होता है। अब इस व का म होता है, ऐसा प्रस्तुत सूत्र में कहता है।

१·२६० श और ष का स होना एक महत्त्वपूर्ण वर्णान्तर है। सद्द—मराठी में साद। सुद्धं—ग्रामीय मराठी में सुद, सुद्ध।

१.२६१ णकारान्तो ह :—णकार से युक्त ह यानी ण्ह। सुण्हा—मराठी मे सून।

१·२६२ दह—मराठी में दहा।

१·२६३ छावो—मराठी में छावा।

१·२६७–२७१ इन सूत्रों में वर्ण लोप और सवर्ण लोप प्रक्रियाओं के उदाहरण दिए हैं।

१·२६७ राउलं—मराठी में राउल।

१·२६८ पारो—मराठी में पार।

१·२६९ सहिआ—सहृदयाः। 'हिअस्स'—हृदयस्य। इन दो भी शब्दों में स्वर के सह य् का लोप हुआ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१·२७० उम्बरो—मराठी में उंम्बर।

१·२७१ अडो—मराठी में आड। देउलं—मराठी में देऊल।

पहले पाद के समाप्ति-सूचक वाक्य के अनन्तर कुछ पाण्डुलिपियों में अगला श्लोक दिखाइ देता हैं :—

यद् दोर्मंडल-कुण्डलीकृत-धनुर्दंण्डेन सिद्धाधिप
क्रीतं वैरिकुलात् त्वया किल दलत्-कुन्दावदातं यशः।
भ्रान्त्वा त्रीणि जगन्ति खेद विवशं तन्मालवीनां व्यधा—
दापाण्डौ स्तनमण्डले च धवले गण्डस्थले च स्थितम्॥

(पहला पाद समाप्त)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वितीय पाद

इस पाद में सूत्र १-९७ और १००-११५ में संस्कृत में संयुक्त व्यञ्जन प्राकृत में आते समय जो वर्णविकार होते हैं वे कहे गए हैं। संयुक्त व्यञ्जनों के बारे में स्वर-भक्ति, समानीकरण अथवा सुलभीकरण प्रक्रियाएँ प्रयुक्त की जाती हैं।

जब दो या अधिक व्यञ्जन बीच में स्वर न आते एकत्र आते हैं, तब संयुक्त व्यञ्जन बन जाता है। उदा०—क्य, र्त, स्व, त्स्न्यं इत्यादि। इन व्यञ्जनों के बीच में अधिक स्वर डालकर संयुक्त व्यञ्जन दूर करने की पद्धति को स्वरभक्ति कहते हैं। उदा०—रत्न-रतन, कृष्ण-किसन इत्यादि। सूत्र २·१००-११५ में स्वरभक्ति का विचार किया गया है।

सभी संयुक्त व्यञ्जनों के संदर्भ में स्वरभक्ति नहीं प्रयुक्त की जाती है। कुछ संयुक्त व्यञ्जनों के बारे में अन्य कुछ पद्धतियाँ प्रयुक्त की जाती हैं। कारण संस्कृत में से सब प्रकार के संयुक्त व्यञ्जन प्राकृत में नहीं चलते हैं। इसका अभिप्राय ऐसा हैः—(१) प्राकृत में केवल दोही अवयवों से बने संयुक्त व्यञ्जन चलते हैं। उदा०—धम्म, कम्भ इत्यादि। (२) प्राकृत में शब्द के अनादि स्थान में ही संयुक्त व्यञ्जन चलता है। (३) प्राकृत में संयुक्त व्यञ्जन कुछ विशिष्ट पद्धति से ही बनते हैं :—(अ) व्यञ्जनों का द्वित्व होकर :—उदा०—(१) क्क ग्ग च्च ज्ज ट्ट ड्ड त्त प्प ब्ब (यहाँ वर्ग में से पहले और तीसरे व्यञ्जन का द्वित्व है)। ण्ण न्न म्म (यहाँ वर्ग में से कुछ अनुनासिक द्वित्व है। ल्ल व्व (यहाँ अंतस्थ का द्वित्व है)। स्स (यहाँ ऊष्म का द्वित्व है। (अ) वर्ग में से दूसरे और चौथे व्यञ्जन के पूर्व वर्ग में से पहले और तीसरे व्यञ्जन आकर उसका द्वित्व होता है। उदा०—क्ख ग्घ च्छ ज्झ ट्ठ ड्ढ त्थ द्ध प्फ ब्भ। (इ) वर्ग में से अनुनासिक प्रथम अवयव और दूसरा अवयव उसी वर्ग में से व्यञ्जन। उदा०—ङ्क ङ्ख ङ्ग ङ्घ; ञ्च ञ्छ ञ्ज ञ्झ; ण्ट ण्ठ ण्ड ण्ढ; न्त न्थ न्द न्ध; म्प म्फ म्ब म्भ।

(व्यवहारतः म्ह ण्ह ल्ह संयुक्त व्यञ्जन होते, उस उस वर्ण के हकार युक्त रूप हैं। शौरसेनी इत्यादि भाषाओं में चलने वाले संयुक्त व्यञ्जनों के लिए सूत्र ४·२६६, २८९, २९२-२९३, २९५, २९८, ३०३, ३१५, २९१, ३९१, ३९८, ४१४ देखिए।)

संस्कृत में से संयुक्त व्यञ्जन का प्राकृत में उपयोग करने के लिए, समानीकरण यह एक प्रधान पद्धति है। समानीकरण में संयुक्त व्यञ्जन में से एक अवयव का लोप होकर शेष व्यञ्जन का द्वित्व होता है। समानीकरण से आये हुए द्वित्व में से एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवयव का लोप किया और पिछला ह्रस्व होने वाला स्वर दीर्घ किया, तो सुलभीकरण होता है। उदा०—व्याघ्र वग्ध-वाध ; सूत्र २·२-८८ में प्राधान्यतः समानीकरण की चर्चा है। तथापि सुलभीकरण की स्वतन्त्र चर्चा नहीं है। (सुलभीकरण के संकीर्ण उदाहरण सूत्र २·२१, २२, ५७, ७२, ८८, ९२ के नीचे दिखाई देते हैं।

संयुक्त व्यञ्जनों के विकार कहते समय हेमचन्द्र ने उनकी रचना क ख इत्यादि वर्णानुक्रम से की है।

२·१ यह अधिकार सूत्र है। इसका अधिकार सूत्र २·११५ तक यानी सूत्र २·११४ के अन्त तक है। संयुक्तस्य—संयुक्त व्यञ्जन का।

२·२ संयुक्तस्य को भवति—संयुक्त व्यञ्जन का क होता है। यानी संयुक्त व्यञ्जन में से एक अवयव का लोप होकर, क् व्यञ्जन रहता है (अथवा आता है)। यह क् व्यञ्जन अनादि हो, तो सूत्र २·८९ के अनुसार उसका द्वित्व होता है। उदा०—शक्त-स क-सक्क। आगे आने वाले सूत्रों में ऐसा ही प्रकार जाने।

२·३ खो भवति—ख होता है। सूत्र २·२ ऊपर की टिप्पणी देखिए। यह ख अनादि हो, तो उसका द्वित्व सूत्र २·९० के अनुसार होता है। किन्तु यह (शेष) ख यदि प्राकृत में शब्द के आरम्भ में हो, तो उसका द्वित्व न होते ख वैसा ही रहता है। उदा०—क्षय-खअ। आगे आने वाले उदाहरणों में भी ऐसा ही जाने।

२·४ नाम्नि संज्ञायाम्—नामवाचक शब्द में। पोक्खरिणी—मराठी में पोखरण।

२·८ खम्भो—मराठी में खांब।

२·१५ भुक्त्वा, ज्ञात्वा, श्रुत्वा, बुद्ध्वा—ये शब्द संस्कृत में, भुज्, ज्ञा, श्रु और बुध् धातुओं के पू० का० धा० अ० है। उनमें त्व और द्‌व संयुक्त व्यञ्जन हैं। श्लोक १—सकल पृथ्वी का भोग लेकर, अन्यों को अशक्य ऐसा तप करके, विद्वान् शान्ति (-नाथ जिन तत्व) जानकर श्रेष्ठ मोक्षपद में (सिवं) पहुँच गया।

२·१६ विञ्चुओ—मराठी में विंचू।

२·१७ खीरं—मराठी में खीर।

२·१८ लाक्षणिकस्यापि······भवति—प्राकृत व्याकरण के अनुसार क्ष्मा शब्द को क्षमा ऐसा आदेश होता है (सूत्र २·१०१ देखिए)। उसमें से ख का छ होता है।

२·२० छण—मराठी में सण।

२·२४ य्य—य के द्वित्व से बनने वाला य्य ऐसा संयुक्त व्यञ्जन (माहाराष्ट्री) प्राकृत में नहीं है, उसका ज्ज ऐसा वर्णान्तर होता है। चौर्यसमत्वात् भारिआ—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भार्या शब्द चौर्य शब्द के समान होने से, उसमें स्वरभक्ति होकर भारिया ऐसा वर्णान्तर होता है। चौर्यसम शब्दों में स्वरभक्ति होती है (सूत्र २·१०७ देखिए)। कज्जं—मराठी में काज।

२·२६ मज्झं—मराठी में माज (-धर), माझ (-गाव)। गुज्झं—मराठी में गूज।

२·२९ मट्टिआ—हिन्दी में मिट्टी। पट्टण—मराठी में पाहण।

२·३० वट्टुल—मराठी में वाटोला, वाटोले। रायवट्टयं—राजवार्तिक। उमा स्वाती के तत्त्वार्थाधिगम सूत्र के ऊपर के वार्तिक ग्रन्थ का नाम राजवार्तिक है। वर्त्मन् शब्द का वर्णान्तर भी वट्ट होता है; इसीलिए यहाँ राज वर्त्मन् ऐसा भी संस्कृत प्रति शब्द होगा।

कत्तरी—मराठी में कातरी।

२·३३ चउत्थो—मराठी में, हिन्दी में चौथा।

२·३४ लट्ठी मुट्ठी दिट्ठी—मराठी में लाठी, मूठ, दिठी।

पुट्ठो—मराठी में पुट्ठा (घोड़े का)।

२· ६ कवड्डो—मराठी में कवडी। हिन्दी में कौडी।

२·४० वुड्ढो—मराठी में बुड्ढा। हिन्दी में बूढा।

२·४१ अन्ते वर्तमानस्य—अन्त में होने वाले का। ऐसा कहने का कारण श्रद्धा सब्द में से आदि श्र को यह नियम लागू न हो। अद्ध—हिन्दी में आधा।

२·४५ हत्थो, पत्थरो, आत्थि—मराठी में हात; फत्तर। पत्थर, पाथर (बट); आथी। हिन्दी में हाथ।

२·४७ पल्लट्टो—मराठी में पालट। पर्यस्त में से र्य के ल्ल के लिए सूत्र २.६८ देखिए।

२·५० पक्षे सोपि—विकल्प-पक्ष में वह ण्ह भी होता है।

इन्धं—सूत्र १.१७७ देखिए।

२·५१ भप्पो भस्सो—इस पुल्लिग के लिए सूत्र १.३२ देखिए। अप्पा अप्पाणो—इन रूपों के लिए सूत्र ३.५६ देखिए। अत्ता—आत्मन् शब्द में से त्म इस संयुक्त व्यञ्जन में सूत्र २·७८ के अनुसार म् का लोप और सूत्र २.८९ के अनुसार शेष त् का द्वित्व होकर अत्ता वर्णान्तर हुआ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२·५४ भिप्फो--आगे संयुक्त व्यञ्जन होने के कारण सूत्र १.८४ के अनुसार 'भी' में से दीर्घ ई ह्रस्व इ हुई है।

२·५५ सिलिम्हो—श्लेष्मन् शब्द में अन्त्य न् का लोप (सूत्र १.९१ के अनुसार) फिर स्वर भक्ति से सिलि, बाद में सूत्र २·७४ के अनुसार ष्म का म्ह होकर, सिलिम्ह वर्णान्तर सिद्ध हुआ।

२·५६ मयुक्तो बः—म् से युक्त ब यानी म्ब।

२·५९ उब्भं उद्‌र्ध्वं--आगे संयुक्त व्यञ्जन होने से सूत्र १·८४ के अनुसार दीर्घ ऊ का ह्रस्व उ हुआ। उब्भ--मराठी में उभ (ट), उभा।

२·६० कम्हारा—श्म के म्ह के लिए सूत्र ·७४ देखिए।

२·६३ चौर्य समत्वात्--सूत्र २.२४ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

२·६४ धिज्जं--धैर्य शब्द से धेज्ज (सूत्र १·१४८, २·२४ के अनुसार)। फिर धेज्ज में से ह्रस्व ए के स्थान पर ह्रस्व इ आकर धिज्ज वर्णान्तर हुआ है। सूरो ··· ···भेदात्--सूर्य शब्द से ही प्रस्तुत नियमानुसार सूर और सुज्ज वर्णान्तर नहीं होते क्या, इस प्रश्न का उत्तर इस वाक्य में है।

२·६५ पर्यन्ते··· ···रो भवति--पर्यन्त शब्द में सूत्र १·५८ के अनुसार, 'प' में से अ का ए होने पर उस एकार के अगले र्य कार होता है।

पज्जन्तो--यहाँ सूत्र २·२४ के अनुसार र्य का ज्ज हुआ है।

२·६६ आश्चर्ये··· ···रो भवति--सूत्र २·६५ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

अच्छरिअं--सूत्र २·६७ देखिए।

२·६७ यहाँ कहे हुए र्य के आदेशों का भिन्न स्पष्टीकरण ऐसा दिया जा सकता है :—रिअ, रीअ (स्वर भक्ति से); अर (स्वर भक्ति और वर्णव्यत्यय से); रिज्ज (र्य का ज्ज होकर तत्पूर्व 'रि' का आगम हुआ)।

२·६८ पलिअंको--पल्यङ्क शब्द में स्वरभक्ति हुई।

२·६९ भयस्सई भयप्फई--यहाँ भय आदेश के लिए सूत्र २·१३७ देखिए।

२·७१ काहावण—इस वर्णान्तर के लिए हेमचन्द्र 'कर्षापण' ऐसा संस्कृत शब्द सूचित करता है।

२·७२ दक्खिणो—सूत्र २·३ देखिए।

२·७४ मकाराक्रान्तो हकारः—मकार से युक्त हकार यानी म्ह। रस्सी—हिंदी में रस्सी। मराठी में रस्सी (सेच)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२·७५ णकाराक्रान्तो हकारः—णकार से युक्त हकार यानी ण्ह। विप्रकर्ष—संयुक्त व्यञ्जन में बीच में स्वर डालकर संयुक्त व्यञ्जन दूर करने की पद्धति, स्वरभक्ति। सूत्र २·१००-११५ देखिए। कसणो कसिणो—इनमें से स्वरभक्ति के लिए सूत्र २·१०४, १ ० देखिए।

२·७६ लकाराक्रान्तोहकारः—लकार से युक्त हकार यानी ल्ह।

२·७७-७९ संयुक्त व्यञ्जन में से किस अवयव का लोप होता है, वह इन सूत्रों में कहा है।

२·७७ ऊर्ध्वं स्थितानाम्—संयुक्त व्यञ्जन में पहले यानी प्रथम अवयव होने वालों का। दुद्धं—मराठी में दूध। मोग्गरो—मराठी में मोगर। णिच्चलो—मराठी में निचल। ≍ क, ≍ प—क और ख् व्यञ्जनों के पूर्व जो वर्ण अर्ध विसर्ग के समान उच्चारा जाता है, उसको जिह्वामूलीय कहते हैं। और वह ≍ क और ≍ख ऐसा दर्शाया जाता है। तथा प् और फ् व्यञ्जनों के पूर्व जो वर्ण अर्ध विसर्ग के समान उच्चारा जाता है उसे उपध्मानीय कहते हैं। और वह ≍ प, ≍ फ ऐसा दर्शाया जाता है। सच कहे तो ये दोनों भी स्वतन्त्र वर्ण नहीं होते हैं; वे विसर्ग के उच्चारण के प्रकार होते हैं। (मागधी भाषा में जिह्वामूलीय वर्ण है (सूत्र ४·२९६ देखिए)। ≍क का उदाहरण हेमचन्द्र ने नहीं दिया है। वह होगा:—अन्त ≍करण= अन्तक्करण।

२·७८ अधोवर्तमानानाम्—संयुक्त व्यञ्जन में बाद में, अनंतर, यानी द्वितीय अवयव होने वालों का। कुड्डं—मराठी में कूड।

२·७९ ऊर्ध्वमधश्च स्थितानाम्—सूत्र २·७७-७८ के ऊपर की टिप्पणी देखिए। वक्कलं—मराठी में वाकल। सद्दो—मराठी में साद।

पक्कं पिक्कं—मराठी में पक्का, पिका, पिक (ला)। चक्कं—मराठी में चाक। रत्ती—मराठी में रात, राती। अत्र द्व···लोपः—द्व इत्यादि के समान ऐसे कुछ संयुक्त व्यञ्जनों में, भिन्न नियमों के अनुसार, एक ही समय पहले और दूसरे अवयव का लोप प्राप्त होता है। उदा०—द्व इस संयुक्त व्यञ्जन में, सूत्र २·७७ के अनुसार द् का लोप प्राप्त होता है, और सूत्र २·७९ के अनुसार व् का भी लोप प्राप्त होता है। जब ऐसे दोनों भी अवयवों के लोप प्राप्त होते हैं (उभय-प्राप्ती) तब वाङ्मय में जैसा दिखाई देगा वैसा, किसी भी एक अवयव का लोप करे। उदा०—उद्विग्न शब्द में द् का लोप करके उव्विग्ग प्राप्त होता है, तो काव्य शब्द में य् का लोपकरके कव्व ऐसा वर्णान्तर होता है मल्लं—मराठी में माल। दारं—मराठी में दार।

२·८० द्रशब्दे···भवति—प्राकृत मे प्रायः संयुक्त व्यञ्जन में से रेफ का लोप होता है (सूत्र २·७९ देखिए)। परन्तु द्र इस संयुक्त व्यञ्जन में रेफ का लोप विकल्प से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है। स्थितिपरिवृत्तौ--स्थितिपरिवृत्ति होने पर। स्थितिपरिवृत्ति यानी वर्ण व्यत्यास, वर्ण व्यत्यय अथवा शब्द में वर्णों के स्थानों की अदला-बदली। इस स्थितिपरिवृत्ति के लिए सूत्र २·११६-१२४ देखिए। वोद्रहीओ--वोद्रही (देशी-तरुणी) शब्द का प्रथमा अनेकवचन। वोद्रह--(देशी) तरुण (तारुण्य)।

२·८६ ह्रस्वात्···धाई—धात्री शब्द से धाई वर्णान्तर कैसे होता है वह यहाँ कहाँ है। रेफ का लोप होने के पहले, (धत्री में से ध इस) ह्रस्व स्वर से (धा ऐसा दीर्घ स्वर होकर) धाई शब्द बना है। इस सन्दर्भ में सूत्र २·७१ देखिए। सच कहे तो यहाँ सूत्र २·८८ में से राई शब्द के समान प्रक्रिया होती है, ऐसा कहा जा सकता है।

२·८२ निक्खं--मराठी में तिख (ट)। हिंदी में तीखा। तीक्ष्ण शब्द में से ण् का लोप होकर सूत्र २·३ के अनुसार क्ष का क्ख हुआ है। तिण्हं—तीक्ष्ण में से क् का लोप (सूत्र २·७७ के अनुसार) होने के बाद, सूत्र २·७५ के अनुसार ष्ण का ण्ह हुआ है।

२·८३ ज्ञः संबंधिनो···लुग्--ज्ञसे (ज्ञ = ज् + ञ् + अ) संबंधित होने वाले ञ् का लोप। सव्वण्णू–इस समान शब्दों में से ज्ञ के ण्ण के लिए सूत्र १·१५६ देखिए।

२·८४ मज्झण्हो--ण्ह के लिए सूत्र २·७५ देखिए।

२·८५ पृथग्योगा्द्··· ···निवृत्तम्--सूत्र २·८० मे विकल्प-बोधक 'वा' शब्द है। उसकी अनुवृत्ति अगले २·८१–८४ सूत्रों में है। अब सच कहे तो इस २·८५ सूत्र में कहा हुआ दशार्ह शब्द सूत्र २·८४ में ही कहा जा सकता था; परन्तु वैसा न करके, दशार्ह शब्द के लिए सूत्र २.८५ यह स्वतन्त्र सूत्र कहा है। इसका कारण सूत्र २·८४ मे आने वाली 'वा' की अनुवृत्ति दशार्ह शब्द के लिए नहीं चाहिए। इसलिए सूत्र २·८५ में नियम भिन्न/अलग करके कहा जाने के कारण (पृथग्-योगात्), सूत्र २·८५ में 'वा' शब्द की निवृत्ति होती है।

२·८६ मासू--मस्रू शब्द में से संयुक्त व्यञ्जन में पहले स् का लोप होकर, पिछला अ स्वर दीर्घ हुआ है।

२·८७ हरि अन्दो--हरिश्चन्द्र शब्द में श्च् का लोप होने के बाद केवल 'अ' स्वर मात्र शेष रहा है।

२·८८ राई--इस वर्णान्तर का और एक स्पष्टीकरण ऐसा है:—रात्रि-रत्ति-राति (सुलभीकरण)—राइ (सूत्र १·१७७ के अनुसार त् का लोप)।

२·८९–९३ संयुक्त व्यञ्जनों के वर्णान्तर करते समय किस नियम का पालन हो, उसकी सूचना इन सूत्रों में दी गई है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२·८९ पदस्य अनादौ वर्तमानस्य—पद में अनादि स्थान पर होने वाला का। प्राकृत में पद के आदि स्थान पर प्रायः संयुक्त व्यञ्जन नहीं होता है। शेष—संयुक्त व्यञ्जन में से एकाध अवयव का लोप होने पर जो व्यञ्जन रह जाता है वह शेष व्यञ्जन होता है। आदेश—आदेश के स्वरूप में आने वाला व्यञ्जन यहाँ अभिप्रेत है। उदा० —कृत्ति शब्द में व्यञ्जन को 'च' आदेश होता है (सूत्र २.१२ देखिए)। नग्ग—मराठी में नागडा; हिन्दी में नंगा। जक्ख—मराठी में जाख।

२·९० द्वितीय··· ···इत्यर्थः—वर्गीय व्यञ्जनों में से द्वितीय और चतुर्थ (तुर्य) व्यञ्जनों का द्वित्व करते समय, उनके पूर्व का व्यञ्जन आकर यानी द्वितीय व्यञ्जन के पूर्व पहला व्यञ्जन और चतुर्थ व्यञ्जन के पूर्व तृतीय व्यञ्जन आकर, उनका द्वित्व होता है। उदा०—क्ख, ट्ठ, ग्घ, ब्भ, इत्यादि। वग्घो—मराठी में वाघ। घस्य नास्ति—घ ऐसा आदेश (कहीं भी कहा) नहीं है; इसलिए आदेश रूप घ का द्वित्व नहीं होता है।

२·९२ दीर्घा······परयोः—व्याकरण के नियमानुसार आए हुए और वैसे न आए हुए (यानी मूलतः दीर्घ होने वाले) जो दीर्घ (स्वर) और अनुस्वार, उनके आगे। कंसालो—कंस + आल। यह आल मत्वर्थी प्रत्यय है (सूत्र २·१५९ देखिए।)

२·९३ रेफः······नास्ति—सूत्र २·७९ के अनुसार, रेफ का सर्वत्र लोप होने के कारण, वह रेफ शेष व्यञ्जन के स्वरूप में कभी नहीं होता है। द्र इस संयुक्त व्यञ्जन में मात्र (सूत्र २·७० देखिए) वह संयुक्त व्यञ्जन का द्वितीय अवयव, इस स्वरूप में हो सकता है।

२·९४ आदेशस्य णस्य—धृष्टद्युम्न शब्द में म्न को ण आदेश है ऐसा हेमचन्द्र कहता है। म्न के ण्ण के लिए सूत्र २·४२ देखिए।

२·९७ समास में दूसरे पद के आदि व्यञ्जन विकल्प से आदि अथवा अनादि माना जाता है। इसलिए उसका द्वित्व विकल्प से होता है। उदा०—ग्गाम,गाम।

२·९८ मूल संस्कृत शब्दों में से संयुक्त व्यञ्जन न होते हुए भी, वे शब्द प्राकृत में आते समय, उनमें से कुछ अनादि व्यञ्जनों का द्वित्व हो जाता है। उदा०—तैलादि गण के शब्द।

२·९९ सूत्र २·९८ ऊपर की टिप्पणी देखिए। सेवादि गण के शब्दों में यह द्वित्व विकल्प से होता है।

२·१००-११५ इन सूत्रों में स्वरभक्ति विप्रकर्ष विश्लेष का विचार है। स्वरभक्ति से अ, इ, उ अथवा ई ये स्वर प्रायः आते हैं।

२·१०० सारङ्गं—मराठी में सारंग। शारंगी-पाणि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२·१०१ रयणं—(√रत्न)—हिन्दी में रतन।

२·१०२ अग्गी—हिन्दी मराठी में आग।

२·१०४ किया—आर्ष प्राकृत में क्रिया शब्द में स्वरभक्ति न होते, किया ऐसा वर्णान्तर होता है।

२·१०५ व्यवस्थितविभाषया—सूत्र १·५ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

२·१०६ अम्बिलं—मराठी में आंबील।

२·११३ उकारान्ता ङीप्रत्ययान्ताः—ई (ङी।) इस (स्त्रीलिंगी) प्रत्यय से अन्त होने वाले उकारान्त शब्द। उदा०—तनु + ई = तन्वी। स्रुघ्नम्—यह एक प्राचीन गाँव का नाम है।

२·११६-१२४ इस सूत्रों में वर्णव्यत्यय। वर्णव्यत्यास स्थिति परिवृत्ति प्रक्रिया कही है। इस प्रक्रिया में शब्द में से वर्णों के स्थान की अदला-बदली होती है। उदा०—वाराणसी-वाणारसी।

२·११६ एसो करेणू—करेणू शब्द का पुल्लिंग दिखाने के लिए एसो यह पुल्लिंगी सर्वनाम का रूप प्रयुक्त किया है।

२·११८ अलचपुरं—आधुनिक एलिचपूर नगर।

२·१२० हरए—ह्रद-ह्-रद (स्वरभक्ति से)-हरय (य-श्रुति से)। हरय शब्द का प्रथमा एकवचन हरए।

२·१२२ लघुक······भवति—लघुक शब्द में, पहले ही घ का ह (सूत्र १-१८७ देखिए) किए जाने पर, विकल्प से वर्णव्यत्यय होता है। हलुअं-मराठी में हलु।

२·१२३ स्थानी—जिसके स्थान पर (यानी जिसके बदले) आदेश कहा जाता है वह वर्ण अथवा शब्द।

२·१२४ य्ह—यह य् व्यञ्जन का हकारयुक्त रूप है।

२·१२५-१४४ इन सूत्रों में कुछ संस्कृत शब्दों को प्राकृत में होने वाले आदेश कहे हैं। उनमें से कुछ शब्दों का भाषा शास्त्रीय स्पष्टीकरण देना संभव है। अन्य आदेश मात्र नये अथवा देश्य शब्द हैं। कुछ शब्दों का भाषाशास्त्रीय स्पष्टीकरण आगे दिया है।

२·१२५ थोक्क—स्तोक (सूत्र २·४५ के अनुसार) थोक-क् का द्वित्व होकर थोक्क। थोव—थोक शब्द में क् का व् होकर थोव। थेव—थोव शब्द में ओ का ए होकर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२·१२९ गौणस्य—सूत्र १·१३४ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

२·१३० इत्थी—इ का आदि वर्णागम होकर यह शब्द बना है।

२·१३१ दिही—सूत्र १·२०९ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

२·१३२ मञ्जर—मराठी में मांजर। मार्जार—मज्जर-मञ्जर। मञ्जर में से म का व होकर वञ्जर।

२·१३६ तट्ठ—त्रस्त शब्द में स्त का ट्ठ होकर।

२·१३८ अवहोआसं—उभयपार्श्व अथवा उभयावकाश ऐसा भी संस्कृत प्रतिशब्द हो सकता है। सिप्पी—मराठी में सिंप, शिंपी, शिंपली।

२·१४२ माउसिआ—मराठी में मावशी।

२·१४४ घरो—मराठी में, हिंदी में घर।

२·१४५-१६३ इन सूत्रों में कुछ प्रत्ययों को होने वाले आदेश कहे हैं।

२·१४५ शीलधर्म······भवन्ति—अमुक करने का शील (स्वभाव), अमुक करने का धर्म और अमुक के लिए साधु (अच्छा) इस अर्थ मे कहे हुए प्रत्यय को इर ऐसा आदेश होता है। केचित्···न सिध्यन्ति—धातु से कर्तृवाचक शब्द साधने का तृन् प्रत्यय है। उस तृन् प्रत्यय को ही केवल इर ऐसा आदेश होता है, ऐसा कुछ प्राकृत वैयाकरण कहते हैं। परन्तु उनका मत मान्य किया तो शील इत्यादि दिखाने वाले नमिर (नमनशील), गमिर (गमनशील) इत्यादि शब्द नहीं सिद्ध होंगे।

२·१४६ क्त्वाप्रत्ययस्य······भवन्ति—धातु से पूर्वकाल वाचक धातु साधित अव्यय सिद्ध करने का क्त्वा प्रत्यय है। उसको तुम्, अत्, तूण और तुआण ऐसे आदेश होते हैं। ये प्रत्यय धातु को लगने से पहले धातु के अन्त्य अ का इ अथवा ए होता है (सूत्र ३·१५७ देखिए)। दट्ठुं—सूत्र ४.२१३ के अनुसार क्त्वा प्रत्यय के पूर्व दृश् धातु का 'तुम्' में से त के सह दैट्ठ होकर दट्ठुं रूप बनता है। मोत्तुं—सूत्र ४.२१२ के अनुसार क्त्वा प्रत्यय के पूर्व मुच् धातु को मोत् ऐसा आदेश होकर यह रूप सिद्ध होता है। भमिअ रमिअ—यहाँ अत् (अ) आदेश के पूर्व धातु के अन्त्य अ का इ हुआ है। घेत्तूण—सूत्र ४.२१० के अनुसार क्त्वा प्रत्यय के पूर्व ग्रह् धातु को घेत् आदेश होकर यह आदेश होकर यह रूप बनता है। काऊण—सूत्र ४.२१४ के अनुसार, क्त्वा प्रत्यय के पूर्व कर (√कृ) धातु को का आदेश होकर यह रूप बनता है। भेत्तुआण—क्त्वा प्रत्यय के पूर्व भिद् धातु को भेत् ऐसा आदेश होता है, ऐसा हेमचन्द्र ने नहीं कहा है; तथापि ऐसा आदेश होता है, यह प्रस्तुत उदाहरण से दिखाई देता है। सोउआण—सूत्र ४.२३७ के अनुसार, श्रु धातु में से उ का गुण होकर सो होता है; उसको प्रत्यय लग कर सो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ आण रूप सिद्ध होता है। वन्दि त्तु—क्त्वा प्रत्यय के पूर्व बन्द में से अन्त्य अ का इ हुआ; उसके आगे तुम् में से अनुस्वार का लोप और त् का द्वित्व हुआ है। वन्दित्ता—वन्दित्वा इस सिद्ध संस्कृत रूप में सूत्र २.७९ के अनुसार, व् का लोप होकर यह रूप सिद्ध हुआ है।

२·१४७ इदमर्थस्य प्रत्ययस्य—तस्य इदम् (उसका/अमुक का यह) इस अर्थ में आने वाले प्रत्यय का। उदा०—पाणिनेः इदं पाणिनीयम्।

२·१४८ डित् इक्कः—डित् के लिए सूत्र १·३७ के ऊपर की टिप्पणी देखिए।

२·१४९ अञ्—युष्मद् और अस्मद् सर्वनामों के आगे इदमर्थ में आने वाला प्रत्यय।

२·१५० वते प्रत्ययस्य—वत् (वति) प्रत्यय का। 'तत्र तस्येव' (पाणिनि सूत्र ४.१.११६) यह सूत्र और 'तेन तुल्यं क्रिया चेद् वतिः' (पाणिनि सूत्र ४.१.११५) यह सूत्र 'वत् प्रत्यय का विधान करते हैं।

२·१५१ सव्वं गिओ—यहाँ इक आदेश में से क् का लोप हुआ है।

२·१५२ इकट्—इकट् शब्द में ट् इत् है। सूत्र १·३७ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

२·१५३ अप्पणयं—आत्मन् शब्द के अप्प (सूत्र २·५१) इस वर्णान्तर के आगे णय आदेश आया है।

२·१५४ त्व-प्रत्ययस्य—त्व-प्रत्यय को। त्व यह भाववाचक संज्ञा साधने का प्रत्यय है। उदा०—पीन-पीनत्व। डिमा—डित् इमा। इम्न··· ···नियतत्वात्—सूत्र १·३५ ऊपर की टिप्पणी देखिए। पृथु इत्यादि शब्दों से भाववाचक संज्ञा सिद्ध करने का इमन् ऐसा प्रत्यय है। पीनता इत्यस्य··· ···न क्रियते—संस्कृत में भाववाचक संज्ञा साधने का ता (तल्) ऐसा और एक प्रत्यय है। यह प्रत्यय पीन शब्द को लग कर प्राकृत में (पीनता =) पीणया ऐसा रूप होता है। त का द होकर होने वाला पीणदा वर्णान्तर दूसरे यानी शौरसेनी भाषा में होता है, प्राकृत में नहीं। इसलिए यहाँ तल् (ता) प्रत्यय का दा नहीं किया है। यहाँ यह ध्यान में रखिए:—वररुचि (प्राकृत प्रकाश, ४.२२) तल् प्रत्यय का दा कहता है।

२·१५५ डेल्ल—डित् एल्ल।

२·१५६ डावादेरतोः परिमाणार्थस्य—परिमाण। इस अर्थ में होने वाले डावादि अतु प्रत्यय को। क्तवतु, ड्वतुप्, ड्मतुप्, मतुप्, और वतुप् इन सर्व प्रत्ययों को पाणिनि ने अतु संज्ञा दी है। इनमें से वत् (वतु वतुप्) यह प्रत्यय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिमाण इस अर्थ में यद्, तद्, एतद्, किम् और इदम् इन सर्वनामों को लगता है। उदा०––यावत्, तावत्, एतावत् कियत् और इयत्।

२·१५७ अतोर्डावतोः––सूत्र २·१५६ ऊपर की टिप्पणी देखिए। डित...एद्दह–ये शब्द सूत्र में से डेत्तिअ, डेत्तिल और डेद्दह इन शब्दों का अनुवाद करते हैं। एत्तिअ इत्यादि डित् आदेश होते हैं।

२·१५८ कृत्वस्––(अमुक) बार यह अर्थ दिखाने के लिए संख्यावाचक शब्दों के आगे कृत्वस् प्रत्यय आता है। कथं... ...भविष्यति––कृत्वस् प्रत्यय को हुत्त आदेश होता है। अब, पियहुत्तं यह वर्णान्तर जैसे हुआ, इस प्रश्न का उत्तर ऐसा है:–पियहुत्तं शब्द में हुत्तं शब्द कृत्वस् का आदेश नहीं है; अभिमुख इस अर्थ में जो हुत्त शब्द है वह प्रिय शब्द के आगे आकर पिवहुत्तं वर्णान्तर होगा।

२·१५९ मतोः स्थाने––मतु (= मत्) प्रत्यय के स्थान पर। मत् (मतु, मतुप्) यह एक स्वामित्व बोधक प्रत्यय है। उदा०––श्रीमत्। आलु––मराठी में आलु। उदा०––दयालु। लज्जालुआ––लज्जालु शब्द के आगे स्त्रीलिंगी आ प्रत्यय आया है। सोहिल्लो छाइल्लो––सूत्र १·१० के अनुसार शब्द में से अन्त्य स्वर का लोप हुआ है। आल–मराठी में आल। उदा०–केसाल; इत्यादि। वन्त मन्त––ये दोनों भी प्रत्यय मराठी में होते हैं। उदा०–धनवंत, श्रीमंत।

२·१६० तसः प्रत्ययस्य स्थाने––तस् प्रत्यय के स्थान पर। पंचमी विभक्ति का अपादान अर्थ दिखाने के लिए सर्वनामों के आगे तस् प्रत्यय जोड़ा जाता है।

२·१६१ त्रप्-प्रत्ययस्य––स्थल अथवा स्थान दिखाने के लिए सर्वनामों को त्र (त्रप्) प्रत्यय जोड़ा जाता है। उदा०–यद्-यत्र, तद्-तत्र।

२·१६२ दा-प्रत्ययस्य––अनिश्चित काल दिखाने के लिए 'एक' शब्द के आगे दा प्रत्यय जोड़ा जाता है। उदा०––एक-दा।

२·१६३ भवेर्थे––भव इस अर्थ में। अमुक स्थान में हुआ। उत्पन्न हुआ (भव) इस अर्थ में। डितौ प्रत्ययौ–डित् होने वाले दो प्रत्यय। इल्ल और उल्ल ये दो डित् प्रत्यय हैं।

२·१६४-१७३ इन सूत्रों में प्राकृत के स्वार्थे प्रत्यय कहे हुए हैं।

२·१६४ स्वार्थे कः––एकाध शब्द का मूल का/स्वतः का अर्थ (स्व + अर्थ = स्वार्थ) न बदलते, वही, वही स्व-अर्थ कहने वाला क-प्रत्यय है। प्राकृत में यह स्वार्थे क प्रत्यय नाम, विशेषण, अव्यय, तुमन्त इत्यादि विविध शब्दों को लगता है। इस क का प्राकृत में य अथवा अ ऐसा वर्णान्तर होता है। कप्––कुत्सा दिखाने के लिए क (कप्) प्रत्यय लगाया जाता है। उदा०––अश्व-क। (पाणिनि के व्याकरण में यह प्रत्यय कन् ऐसा है)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यावदादिलक्षणः कः--यावादिभ्यः कन् (पाणिनि सूत्र ४·२·४१) यह सूत्र भाव इत्यादि शब्दों के लिए क (कन्) प्रत्यय कहता है। उदा०--याव-क।

२·१६५ संयुक्तो लः--संयुक्त ल यानी ल्ल। सेवादित्वात्--सेवादि शब्दों में अन्तर्भाव होने के कारण। सेवादि शब्दों के लिए सूत्र २·६६ देखिए।

२·१६६ अवरिल्लो--सूत्र १·१०८ के अनुसार उपरि शब्द का अवरि ऐसा वर्णान्तर होता है; उसके आगे स्वार्थे ल्ल आया है।

२·१६७ डमया--डित् अमया। डित् के लिए सूत्र १·१७ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

२·१६८ डिअम्--डित् इ अम्।

२·१६९ डयं डिअम्--डित् अयं और डित् इअं।

२·१७० डालिअ--डित् आलिअ।

२·१७२ भावे त्वतल्--भाववाचक संज्ञा साधने के लिए त्व और तल (ता) ऐसे प्रत्यय होते हैं। म उ अ त्त याइ--पहले मृदुक शब्द को त्त (त्व) प्रत्यय लग कर म उ अत्त रूप बना; फिर उसे ता (आ) प्रत्यय लगकर म उ अत्तया ऐसा शब्द बना। आतिशायिकात्त्वातिशायिकः--अतिशय का अतिशय दिखाने के लिए तम-वाचक शब्द के आगे फिर 'तर' प्रत्यय रखा जाता है। उदा०--ज्येष्ठ-तर।

२·१७३ विज्जुला--मराठी में, हिन्दी में बिजली। पविल--मराठी में पिवला। हिन्दी में पीला। अन्धल--मराठी में अधला। कथं जमलं ······ भविष्यति--जमल शब्द में स्वार्थे ल प्रत्यय है क्या, इस प्रश्न का उत्तर यहाँ है।

२·१७४ निपात्यन्ते--निपात इस स्वरूप में आते हैं। (निपातन--व्युत्पत्ति देने का प्रयत्न न करते, अधिकृत ग्रन्थों में जैसे शब्द दिखाई देते हैं वैसे ही वे देना)। यहाँ दिए हुए निपातों में से अनेक शब्द देशी हैं; तथापि उनमें से कुछ का मूल संस्कृत तक लिया जा सकता है। उदा०--विउस्सग्ग--संस्कृत व्युत्सर्ग शब्द में स्वरभक्ति होकर। मुव्वहइ--संस्कृत उद्वहति शब्द में म् का आदिवर्णागम हुआ। सक्खिण--साक्षिन् शब्द के अन्त में अ स्वर संयुक्त किया गया। जम्मण--जन्मन् शब्द के अन्त में अ मिलाया गया। इत्यादि। अतएव······अभिधेयः--प्राकृत में वर्णान्तरित शब्द कौन से और कैसे प्रयुक्त करे; इसकी सूचना इस वाक्य में दी है।

२·१७५-२१८ इन सूत्रों में अव्यय और उनके उपयोग दिए हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२·१७५ यह अधिकार सूत्र है। सूत्र २·२१८ के अन्त तक उसका अधिकार है।

२·१७६ श्लोक १—अयि, अशक्त अथवा भक्ति अवयवों से व्यभिचारिणी स्त्री बार-बार सोती है, अथवा-भक्ति अवयवों से व्यभिचारिणी स्त्री बार-बार अति सोती है।

२·१८० श्लोक १—अरेरे, वह मेरे चरणों में नत हुआ, मगर मैंने उसका माना नहीं, अब यह बात) होगी अगर न होगी, ऐसे शब्द बोलने वाली यह (स्त्री) निश्चित रूप से तुम्हारे लिए पसीने से तर व्याकुल होती है।

२·१७२ मिव पिव विव—इन शब्दों में म्, प् और व् इनका आदि वर्णागम होकर ये शब्द बने, ऐसा भी कहा जा सकता है। व—इव शब्द में आदि वर्ण का लोप होकर। व्व—व् का द्वित्व होकर।

२·१८४ सेवादित्वात्-सूत्र २·९१ देखिए।

२·१८६ इर—फिर शब्द में आदि क् का लोप होकर इर हुआ, ऐसा कहा जा सकता है। हिर—इर शब्द में आदि ह् आकर हिर शब्द बना, ऐसा कहा जा सकता है।

२·१८७ णिव्वडन्ति—पृथक् स्पष्टं भू इसका णिव्वड शब्द आदेश है (सूत्र ४·६२ देखिए)।

२·१९० नओर्थे—नञ् के अर्थ में। नञ् (न) यह नकारवाचक अव्यय है। अमुणन्ती—ज्ञा धातु को मुण आदेश होता है (सूत्र ४·७ देखिए); उससे मुणन्ती यह शब्द स्त्रीलिंगी वर्तमान काल वाचक धातु साधित विशेषण है; उसका नकारार्थी रूप है अमुणन्ती।

२·१९१. काहीअ—इस रूप के लिए सूत्र ३·१६२ देखिए।

२·१९३ श्लोक १—भय से वेव्वे, निवारण करते समय वेव्वे, खेद-विषाद करते समय वेव्वे, ऐसे बोलने वाली, तेरी, हे सुन्दर स्त्री, वेव्वे का अर्थ हम भला क्या जानें। उल्लविरी—उल्लाविर शब्द का स्त्रीलिंगी रूप। उल्लाविर के लिए सूत्र २·१४५ देखिए। श्लोक २—जोर से बड़-बड़ करने वाली तथा विषाद-खेद करने वाली और डरी हुई तथा उद्विग्न; ऐसे उस स्त्री ने जो कुछ वेव्वे ऐसा कहा, वह हम नहीं भूलेंगे। उल्लावेन्ती—उल्लावेन्त इस व० का० धा० वि० का (सूत्र ३·१८१ देखिए)। स्त्रीलिंगी रूप। विम्हरिमो—सूत्र ३·१४४ देखिए।

१·१९७ हुं—मराठी में हूं।

२·१९९ मुणिआ—मुण (सूत्र ४·७ देखिए) धातु के क० भू० धा० वि० का स्त्रीलिंगी रूप।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२·२म्० थू—मराठी मे थू।

२·२०१ रे हिअय मडहसरिआ—रे हृदय मृतक सदृश; अथवा:—रे हृदय मडह (= अल्प)—सरित्। पहले वर्णान्तर के लिए 'मडय—सरिसा' ऐसे शब्द आवश्यक थे। सडह शब्द अल्प अर्थ में देशी शब्द है।

२·२०२ हरे—अरे शब्द में ह् का आदिवर्णागम होकर हरे शब्द बना, ऐसा कहा जा सकता है।

२·२०३ ओ—मराठी में ओ। तत्तिल्ल—यह तत्पर के अर्थ मे देशी शब्द है। विकल्पे···सिद्धम्—उत यह एक विकल्प दिखाने वाला अव्यय है; सूत्र १·७७२ के अनुसार उसका ओ होता है। इसलिए विकल्प दिखाने वाला ओ अव्यय उत को होने वाले आदेश से सिद्ध हुआ है।

१·२०४ श्लोक १—धूर्त लोग तरुण स्त्रियों का हृदय चुराते हैं (हरण करते हैं), तथापि भी वे उनके द्वेष के पात्र नहीं होते हैं; यह आश्चर्य है। अन्य जनों से (कुछ) अधिक होने वाले ये धूर्तजन कुछ रहस्य जानते हैं। श्लोक २—(अच्छा !)। यह सुप्रभात हुई। आज हमारा जीवित सफल हुआ। तेरे जाने के बाद केवल वह (स्त्री) खिन्न नहीं होगी। सप्फलं—सूत्र २·७७ देखिए। जीअं—जीवित शब्द में सूत्र १ २७१ के अनुसार 'वि' का लोप हुआ। जूरिहिइ—सूत्र ३·१६६ देखिए। श्लोक ३—उसके ही वे ही गुण अब; अरेरे, धीरज नष्ट करते हैं, रोमांच बढ़ाते हैं, और पीड़ा देते हैं। अहो, यह भला किस तरह होता है ? रणरणय—यह शब्द पीडा इत्यादि अर्थों में देशी शब्द है। श्लोक ४—अरेरे, उसने मुझे ऐसा कुछ किया कि में वह किसको (भला) कैसे कहूँ ? साहेमि—साह शब्द कथ् धातु का आदेश हैं। (सूत्र ४·२ देखिए)।

२·२०५ पेच्छसि—पेच्छ शब्द दृश् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१८१ देखिए)।

२·२०६ मुच्चइ—मुच्च शब्द मुंच (√मुच्) धातु का कर्मणि अंग है।

२·२०८ पारिज्जइ—पारिज्ज शब्द पार धातु का कर्मणि अंग है। और पार धातु शक् धातु का आदेश है (सूत्र ४·८६ देखिए)।

२·२११ श्लोक १—निर्मल पाचू के पात्र में रखे हुए शंख शुक्ति के समान, कमलिनी के पत्र के ऊपर निश्चल और हलचल रहित बलाका शोभती है। रेहइ—रेह शब्द राज् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१०० देखिए)। पक्षे पुलआदय:—पश्य (=देख) इस अर्थ का उअ अव्यय न प्रयुक्त हो, तो पुलअ इत्यादि जो दृश् धातु के आदेश होते हैं (सूत्र ४·१८१ देखिए), उनके आज्ञार्थी रूप प्रयुक्त हो सकते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२·२१२ इहरा—इतरथा—इअरहा (और वर्णव्यत्यय से) इहरा ऐसा कहा जा सकता है।

२·२१८ पिवि—सूत्र १·४१ देखिए।

इस द्वितीय पाद के समाप्ति सूचक वाक्य के अनन्तर कुछ पाण्डुलिपियों में अगला श्लोक दिखाई देता है:—

द्विषत्पुरक्षोद विनोदहेतो—
भवादवामस्य भवद्-भुजस्य।
अयं विशेषो भुवनैकवीर
परं न यत्काममपाकरोति॥

(द्वितीय पाद समाप्त)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय पाद

३·१ वीप्सार्थात् पदात्—ये शब्द सूत्र में से वीप्स्यात् शब्द का अनुवाद करते हैं। जिस पद की पुनरावृत्ति की जाती है उसे वीप्स्यपद कहते हैं। स्यादेः स्थाने—विभक्ति प्रत्यय के स्थान पर। स्यादि (=सि+आदि) यानी सि जिनके आदि है, वे यानी विभक्ति प्रत्यय। विभक्ति प्रत्ययों की तान्त्रिक संज्ञाएं निम्न के अनुसार हैं,—

विभक्ति	एकवचन	बहु (अनेक) वचन
प्रथमा	सि	जस्
द्वितीया	अम्	शस्
तृतीया	टा	भिस्
(चतुर्थी)	(ङे)	(भ्यस्)
पंचमी	ङसि	भ्यस्
षष्ठी	ङस्	आम्
सप्तमी	ङि	सुप्

३·२ डी—डित् ओ। सूत्र १·३७ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

३·३ एतत्तदोकारात्—एतद् और तद् के अकार के आगे। एय (अ) और त इन स्वरूपों में ये सर्वनाम अकारान्त होते हैं।

३·४ वच्छा एए—वच्छा यह प्रथमा अ० व० है यह दिखाने के लिए एए यह एतद् सर्वनाम का प्रथमा अ० व० प्रयुक्त किया है। सूत्र ३·४, १२ के अनुसार वच्छा रूप होता है। वच्छे पेच्छ—सूत्र ३·४, १४ के अनुसार वच्छे रूप बनता है। वच्छे यह द्वितीया विभक्त का रूप है, यह दिखाने के लिए पेच्छ इस क्रियापद का प्रयोग है। पिछले शब्द का/शब्दों की द्वितीया विभक्ति दिखाने के लिए पेच्छ क्रियापद का ऐसा उपयोग आगे सूत्र ३·५ १४, १६, १८, ३६, ५०, ५३, ५५, १०७-१०८; १२२, १२४ में किया गया है।

३·६ वच्छेण—सूत्र ३·६, १३ देखिए। वच्छण—सूत्र ३·६, १२ देखिए।

३·७ सानुनासिक—सूत्र १·१७८ ऊपर की टिप्पणी देखिए। वच्छेहि-हिँ-हिं-सूत्र ३·७, १५ देखिए। छाही—सूत्र १·२४९ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३.८ दो दु—इस स्वरूप में ये प्रत्यय शौरसेनी भाषा में प्रयुक्त किए जाते हैं। इसलिए 'दकार करणं भाषान्तरार्थम्' ऐसा हेमचन्द्र ने आगे कहा है। प्राकृत में मात्र ये प्रत्यय ओ और उ इन स्वरूपों में लगते हैं।

वच्छत्तो—सूत्र ३.१२ के अनुसार होने वाले दीर्घ स्वर का ह्रस्व स्वर यहाँ सूत्र १.८४ के अनुसार होता है। वच्छाओ… …वच्छा—सूत्र ३.१२ देखिए।

३.९ भ्यसः—प्राकृत में चतुर्थी विभक्ति न होने से, यहाँ भ्यस् शब्द से पञ्चमी बहुवचन का भ्यस् प्रत्यय अभिप्रेत है। दो दु—सूत्र ३.८ ऊपर की टिप्पणी देखिए। वच्छाओ… वच्छेसुंतो—सूत्र ३.१३, १५ देखिए।

३.१० संयुक्तः सः—संयुक्त स यानी स्स।

३.११ ङित् सकारः—ये शब्द सूत्र में से ङे शब्द का अनुवाद करते हैं।

संयुक्तो मिः—संयुक्त मि यानी म्मि। देवं… …ङिः—यहाँ देवे देवेम्मि, ते तम्मि ऐसे सप्तमी एकवचन के रूप न देते, देवं… …तम्मि ऐसे रूप दिए हैं। उनमें देवं और तं ये रूप द्वितीया एक वचन के हैं। इसलिए यहाँ सूत्र ३.१३५ के अनुसार; अम् के स्थान पर ङि है ऐसा समझना है।

३.१२ ङसिनैव… …एत्वबाधनार्थम्—प्रस्तुत सूत्र में ङसि ऐसा कहा है। ङसि शब्द से त्तो, दो और दु ये आदेश सूत्र ३.८ के अनुसार संगृहीत होते ही हैं। फिर पुनः इस सूत्र में त्तो, दो, और दु ये आदेश क्यों कहे हैं?

उत्तर—त्तो, दो और दु ये आदेश सूत्र ३.९ के अनुसार भ्यस् प्रत्यय को भी होते हैं। भ्यस् प्रत्यय के पूर्व शब्द के अन्त्य अ का ए होता है (सूत्र ३.१५ देखिए); इस ए का बाध त्तो, दो, और दु इन प्रत्ययों के पूर्व तो, यह बताने के लिए त्तो, दो और दु इनका निर्देश प्रस्तुत सूत्र में किया है।

३.१३ वा भवति—विकल्प पक्ष में सूत्र ३.१५ लगना है।

३.१४ वच्छेसु—'सु' यह सप्तमी अनेक वचन का प्रत्यय है।

३.१६ गिरीहिं… …महूहिं कयं—पिछले शब्द तृतीया विभक्ति में हैं, यह दिखाने के लिए कयं शब्द प्रयुक्त किया है। कयं का ऐसा उपयोग आगे सूत्र ३.२३, २४, २७, २९; ५१, ५२, ५५, १०९-११०, १२४ में है। गिरीओ… …महूहो आगओ—पिछले शब्द पञ्चमी विभक्ति में हैं, यह सूचित करने के लिए आगओ शब्द प्रयुक्त किया है। आगओ का ऐसा उपयोग आगे सूत्र ३.२९, ३०, ५०, ९७, १११, १२४ में है। गिरीसु… …महूसु ठिअं—पिछले शब्द सप्तमी विभक्त्यन्त है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है, वह दिखाने के लिए ठिअं शब्द प्रयुक्त किया गया है। ठि अं का ऐसा उपयोग आगे सूत्र ३.२९, १०१, ११५-११६, १२९ में है। 'जलोल्लि आइं—जल + उल्लिआइं।

३.१७ चतुर उदन्तस्य—उ (उत्) से अन्त होने वाले चतुर् शब्द का यानी चतुर् शब्द के च उ इस अंग का।

३.१८ गिरिणो तरुणो—सूत्र ३.२२ देखिए। जस् शस्··· ···निवृत्यर्थम्—जस् शस्' (सूत्र ३.१२) इस सूत्र से, शस् प्रत्यय के सन्दर्भ में वाङ्मयनि उदाहरणों के अनुसार दीर्घ होता है यह नियम कहने का है। 'जस् शसोर्णो वा' (सूत्र ३.२२) यह सूत्र शस् को णो आदेश कहता है। इसलिए णो के बारे में प्रतिप्रसव का अर्थ है, ऐसी शंका यदि हो, तो वह मिटाने के लिए 'लुप्ते शसि' यह प्रस्तुत सूत्र कहा है। प्रतिप्रसव—एकाध नियम के कहे हुए अपवाद का अपवाद (यानी मूल नियम की कार्यवाही) यानी प्रतिप्रसव।

३.१९ अक्लीबे—नपुंसकलिंग न होने पर।

३.२० इदुत··· ···सम्बध्यते—सूत्र ३.१६ में इदुतः ऐसा षष्ठयन्त पद है। वह अनुवृत्ति से प्रस्तुत ३.२० सूत्र में आता ही है। केवल यहाँ वह षष्ठयन्त न रहने, आवश्कता के अनुसार पञ्चम्यन्त भी होता है। इसलिए यहाँ इदुतः ऐसे पञ्चम्यन्त पद का सम्बन्ध प्रस्तुत सूत्र में है। पुंसि—पुल्लिग में। अउ डितौ—सूत्र में से डउ और डओ पदों का अनुवाद; अर्थ है—डित् होने वाले अउ और अओ ये आदेश। अग्गउ··· ··· ···चिट्ठन्ति—पिछले शब्दों का प्रथमा अनेक वचन दिखाने के लिए चिट्ठन्ति शब्द प्रयुक्त किया है, और चिट्ठइ का ऐसा उपयोग ३.९ में, और चिट्ठह का उपयोग सूत्र ३.९१ में है। पक्षे··· ···वा उणो—सूत्र ३.२२ देखिए। शेषे··· ···वाऊ—सूत्र ३.१२४ देखिए। बुद्धीओ घेणूओ—सूत्र ३.२७ देखिए। दहीइं महूइं—सूत्र ३.२६ देखिए।

३.२१ डित् अवो—ये शब्द सूत्र में से डवो शब्द का अनुवाद हैं। सहुणो—सूत्र ३.२२ देखिए।

३.२२ गिरिणो··· ···रेहन्ति पेच्छ—रेहन्ति और पेच्छ ये शब्द पिछले शब्द अनुक्रम से प्रथमान्त और द्वितीयान्त हैं यह दिखाते हैं।

३.२३ गिरिणो आगओ विआरो—पिछले शब्दों की पंचमी अथवा षष्ठी दिखाने के लिए आगओ और विआरो शब्द प्रयुक्त हैं।

हिलुकौ निषेत्स्येते—इकारान्त और उकारान्त शब्दों के बारे में ङसि प्रत्यय के लुक् और हि इन आदेशों का निषेध आगे सूत्र ३.१२६-१२७ में किया जाएगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बुद्धीअ··· ···समिद्धी—पिछले शब्दों की तृतीया और षष्ठी लद्ध और समिद्धी इन शब्दों से सूचित होती है।

३.२५ स्वरादिति··· ···निवृत्त्यर्थम्—सूत्र ३.१६ में से इदुतः पद की अनुवृत्ति चालू है ही; तथापि वह प्रस्तुत ३.२५ सूत्र में आवश्यक नहीं है; इसलिए इदुतः पद की निवृत्ति करने के लिए प्रस्तुत सूत्र में 'स्वरात्' ऐसा शब्द प्रयुक्त किया है।

३.२६ उन्मीलन्ति··· ···जेम वा—पिछले शब्दों की प्रथमा अथवा द्वितीया दिखाने के लिए यहाँ के क्रियापद प्रयुक्त हैं।

३.२८ एसा हसन्तीआ—हसन्तीआ शब्द का प्रथमा एकवचन सूचित करने के लिए 'एसा' शब्द प्रयुक्त किया गया है।

३.२९ मुद्धाअ··· ···ठिअं—कयं, मुहं और ठिअं ये शब्द अनुक्रम से तृतीया, षष्ठी और सप्तमी दिखाने के लिए प्रयुक्त हैं। मुद्धा आ ऐसा रूप न होने के कारण सूत्र ३.३० में दिया है। क—प्रत्यये··· ··· ···कमलि आए—स्वार्थे क प्रत्यय लगाने के बाद मुद्धा शब्द का मुद्धिआ और कमला शब्द का कमलिआ ऐसा रूप होता है। बुद्धीअ··· ···ठिअं वा—यहाँ कयं शब्द तृतीया दिखाने के लिए, ठियं शब्द सप्तमी सूचित करने लिए और विहवो, धणं, दुद्धं तथा भवणं ये शब्द षष्ठी दिखाने के लिए प्रयुक्त हैं।

३.३० मालाअ··· ···आ—कयं, मुहं, ठिअं और आगओ ये शब्द माला शब्द की अनुक्रम से तृतीया, सप्तमी और पंचमी दिखाते है।

३.३१ ङीः—ई (ङी) प्रत्यय। आप्—आ (आप्) प्रत्यय। ई और आ प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिंगी रूप सिद्ध किए जाते हैं। उदा०—साहण (साधन)—साहणी; साहणा।

३.३३ किम्, यद्, तद् इन सर्वनामों के स्त्रीलिंगी अंग प्रायः का; जा और ता ऐसे होते हैं। सि, अम्, आम् ये प्रत्यय छोड़कर, अन्य प्रत्ययों के पूर्व उनके स्त्रीलिंगी अंग की; जी, ती, ऐसे दीर्घ ईकारान्त होते हैं।

३.३५ डा—डित् आ। ससानणन्दा दुहिआ—प्राकृत में ऋ और ॠ स्वर नहीं है; इसलिए स्वसृ, ननन्दृ, दुहितृ इन ऋकारान्त शब्दों को डा प्रत्यय जोडा जाता है। गउआ—गवय शब्द को डा प्रत्यय लगा है।

३.३८ चप्फलया—मिथ्या भाषी इस अर्थ में चप्फल/चप्फलय शब्द देशी है।

३.३९ हे पिअरं—सूत्र ३.४० देखिए।

३.४१ अम्मो—अम्मा यह देशी शब्द माता अर्थ में है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३·४३ क्विबन्तस्य—क्विप् प्रत्यय से अन्त होने वाला का। क्विप् यह एक कृत् प्रत्यय है। वह पहले लगता है फिर उसका लोप होता है।

३·४४ ऋकारान्त शब्दों के उकारान्त अंग उकारान्त संज्ञा के समान चलते हैं।

३·४५ ऋकारान्त शब्दों के आर से अन्त होने वाले अंग अकारान्त शब्द के समान चलते हैं। लुप्तस्याद्यपेक्षया—विभक्ति प्रत्ययों के पूर्व शब्द के अन्त्य ऋ का आर होता है। अब लागे आने वाले विभक्ति प्रत्ययों का लोप हुआ (लुप्त-स्यादि) और यह शब्द समास में गया, तथापि लुप्त हुए स्यादि की अपेक्षा से यह आर आदेश वैसा ही रहता है। उदा०—भत्तार-विहिअं।

३·४६ बाहुलकात्—बाहुलके/बहुलत्व के कारण। मातुरिद्······वन्दे—मातृ शब्द के इकारान्त और उकारान्त अंग ये इकारान्त और उकारान्त स्त्रीलिंगी संज्ञा के समान चलते हैं।

३·४७ ऋकारान्त संज्ञा के अन्त में अर आदेश आने पर, वह संज्ञा अकारान्त शब्द के समान चलती है।

३·४९ राज० शब्द का रायाण अंग अकारान्त शब्द से समान चलता है।

३·५० राइणो··धणं—पिछले शब्दों की षष्ठी दिखाने के लिए धणं शब्द प्रयुक्त है। धणं का ऐसा उपयोग आगे सूत्र ३·५३, ५५, ५६, ११३-११४,१२४ में है।

३·५२ राइणो······धणं—राइणो यह प्रथमा, द्वितीया, पंचमी और षष्ठी है यह दिखाने के लिए चिट्ठन्ति······धणं शब्द प्रयुक्त हैं।

३·५६ आत्मन् शब्द का अप्पण अंग अकारान्त संज्ञा के समान चलता है। उदा०—अप्पाणो······अप्पाणेसु। विकल्प से होने वाला अप्प अंग राजन् शब्द के समान चलता है। उदा०—अप्पा······अप्पेसु। रायाणो······रायाणेसु—ये रूप राजन् शब्द के रायाण अंग के हैं। विकल्प पक्ष में सूत्र ३·४९-५५ में कहे हुए राजन् शब्द के रूप होते हैं। एवम्—इसी तरह अन्य नकारान्त संज्ञाओं के रूप होते हैं। उदा०—जुवाणो······सुकम्माणे।

अब तक कहा हुआ संज्ञाओं का रूप विचार निम्न के अनुसार कहा जा सकता है :—

अकारान्त पुल्लिंगी वच्छ शब्द

विभक्ति	ए० व०	अ० व०
प्रथम	वच्छो	वच्छा
द्वितीय	वच्छं	वच्छे; वच्छा
तृतीय	वच्छेण-णं	वच्छेहि-हिँ-हिँ
पंचम	वच्छत्तो, वच्छओ, वच्छाउ, वच्छाहि, वच्छाहितो; वच्छा	वच्छत्तो, वच्छाओ, वच्छाउ; वच्छाहि, वच्छेहि, वच्छाहितो, वच्छेहितो, वच्छासुंतो, वच्छेसुंतो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ष० वच्छस्स	वच्छाण-णं
स० वच्छे, वच्छम्मि	वच्छेसु-सुं
सं० वच्छ, वच्छो, वच्छा	वच्छा

(सूत्र ३.१-१५, १९, ३८ और सूत्र १.२७ देखिए)

अकारान्त नपुंसकलिंगी वण शब्द

प्र०, द्वि० वणं	वणाणि, वणाइं, वणाइँ
सं० वण	वणाणि, वणाइं, वणाइँ

(सूत्र ३.५, २६-२६, ३७ देखिए)।

अन्य रूप वच्छ के समाम।

आकारान्त स्त्रीलिंगी माला शब्द

प्र० माला	मालाउ, मालाओ, माला
द्वि० मालं	मालाउ, मालाओ, माला
तृ० मालाअ-इ-ए	मालाहि-हिं-हिँ
पं० मालाअ-इ-ए, मालत्तो, मालाओ, मालाउ	मालत्तो, मालाओ, मालाउ, मालहिंतो, मालासुंतो
ष० मालाअ-इ-ए	मालाण-णं
स० मालाअ-इ-ए	मालासु-सुं
सं० माले, माला	मालाउ, मालाओ, माला

(सूत्र ३.४, ६-९, २७, २९-३०, ३६, ४१, १२४, १२६-१२७, १.२७ देखिए)

इकारान्त पुल्लिंगी गिरि शब्द

प्र० गिरी	गिरी, गिरओ, गिरउ, गिरिणो
द्वि० गिरिं	गिरी, गिरिणो
तृ० गिरिणा	गिरीहि-हिं-हिँ
पं० गिरिणो, गिरित्तो, गिरीओ, गिरीउ, गिरीहिंतो	गिरित्तो, गिरीओ, गिरीउ, गिरीहिंतो, गिरीसुंतो
ष० गिरिणो, गिरिस्स	गिरीण-णं
स० गिरिम्मि	गिरीसु-सुं
सं० गिरि, गिरी	गिरी, गिरओ, गिरउ, गिरिणो

(सूत्र ३.५-१२, १६, १८-२०, २२, २४, १२४; १.२७ देखिए)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इकारान्त नपुंसकलिंगी दहि शब्द

प्र० दहि	दहीणि, दहीइं, दहीइँ
द्वि० दहि	दहीणि, दहीइं, दहीइँ
सं० दहि	दहीणि, दहीइं, दहीइँ

(सूत्र ३·५, २५-२६, ३७, १२४ देखिए)

अन्य रूप गिरि के समान।

टिप्पणी :—प्र० ए० व० में दहि ऐसा रूप दिखाई देता है। कुछ के मतानुसार, प्र० ए० व० में दहिँ ऐसा रूप होता है।

इकारान्त स्त्रीलिंगी बुद्धि शब्द

प्र० बुद्धी	बुद्धीउ, बुद्धीओ, बुद्धी
द्वि० बुद्धि	बुद्धीउ, बुद्धीओ, बुद्धी
तृ० बुद्धीअ-आ-इ-ए	बुद्धीहि-हिं-हिँ
पं० बुद्धीअ-आ-इ-ए, बुद्धित्तो, बुद्धीउ, बुद्धीहिंतो	बुद्धित्तो, बुद्धीओ, बुद्धीउ, बुद्धीहिंतो, बुद्धीसुंतो
ष० बुद्धीअ-आ-इ-ए	बुद्धीण-णं
स० बुद्धीअ-आ-इ-ए	बुद्धीसु-सुं
सं० बुद्धि, बुद्धी	बुद्धीउ, बुद्धीओ, बुद्धी

(सूत्र ३·४, ७-९, १६, १८-१९, २७, २९, ३६, ४९, १२४; १·२७ देखिए)

टिप्पणी :—दीर्घ ईकारान्त सही शब्द बुद्धि के समान चलता है।

उकारान्त पुल्लिंगी तरु शब्द

प्र० तरू	तरू, तरउ, तरओ, तरवो, तरुणो
द्वि० तरुं	तरू, तरुणो
तृ० तरुणा	तरूहि-हिं-हिँ
पं० तरुणो, तरुत्तो, तरूओ, तरूउ, तरूहिंतो	तरुत्तो, तरूओ, तरूउ, तरूहिंतो, तरूसुंतो
ष० तरुणो, तरुस्स	तरूण-णं
स० तरुम्मि	तरूसु-सुं
सं० तरु, तरू	तरू, तरउ, तरओ, तरवो, तरुणो

(सूत्र ३·५-१२, १६, १८-२४, ३८, १२४; १·२७ देखिए)

उकारान्त नपुंसकलिंगी महु शब्द

प्र०, द्वि० महु	महूणि, महूइं, महूइँ
सं० महु	महूणि, महूइं, महूइँ

अन्य रूप तरु के समान।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टिप्पणी :—प्र० ए० व० में महु ऐसा रूप दिखाइ देता है। कुछ के मतानुसार प्र० ए० व० में महुँ ऐसा भी रूप होता है।

ह्रस्व उकारान्त स्त्रीलिंगी धेणु शब्द

इसके रूप बुद्धि के समान होते हैं।

दीर्घ ऊकारान्त बहू शब्द

इसके रूप बुद्धि के समान होते हैं।

पिअरपिउ (पितृ) शब्द

प्र०	पिआ, पिअरो	पिअरा, पिउणो, पिअवो, पिअओ, पिऊउ, पिऊ
द्वि०	पिअरं	पिउणो, पिऊ, पिअरे, पिअरा
तृ०	पिउणा, पिअरेण-णं	पिऊहि-हिं-हिँ, पिअरेहि-हिं-हिँ
पं०	(वच्छ और तरु इनके समान)	
ष०	पिउणो, पिउस्स, पिअरस्स	पिऊण-णं, पिअराण-णं
स०	पिउम्मि, पिअरे, पिअरम्मि	पिऊसु-सुं, पिअरेसु-सुं
सं०	पिअ, पिअरं	पिअरा, पिउणो, पिअवो, पिऊओ, पिऊउ, पिऊ

(सूत्र ३·३९-४०, ४४, ४७-४८; १·२७ देखिए)

दायार/दाउ (दातृ) शब्द

प्र०	दाया, दायारो	दायारो, दाऊओ, दायवो, दायओ, दायऊ, दाऊ
द्वि०	दायारं	दायारे, दायारा, दाउणो, दाऊ
तृ०-स०	(वच्छ और तरु के समान)	
सं०	दाय, दायार	(प्रथमा के समान)

(सूत्र ३·३९-४०, ४४-४५, ४७-४८ देखिए)

माआ/माअरा (मातृ) शब्द

माआ और मायरा ये अंग माला के समान चलते हैं। माइ और माउ ये अंग अनुक्रम से बुद्धि और धेणु के समान चलते हैं।

राय (राजद् शब्द

प्र०	राया	राया, रायाणो, राइणो
द्वि०	रायं, राइणं	राए, राया, रायाणो, राइणो
तृ०	रण्णा, राइणा, राएण-णं	राएहि-हिं-हिँ, राईहि-हिं-हिँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पं०	रण्णो, राइणो रायत्तो, रायाओ, रायाउ, रायाहि, रायाहिंतो, राया	रायत्तो, रायाओ, रायाउ, राएहि, रायाहिंतो, राएहिंतो, रायासुंतो, राएसुंतो, राइत्तो, राईओ, राईउ, राईहिंतो, राईसुंतो।
ष.	राइणो, रण्णो रायस्स	राईण-णं, रायाण-णं
स.	राइम्मि, रायम्मि, राए	राईसु-सुं, राए-सुं
सं.	राय, राया	(प्रथमा के समान)

(सूत्र ३.४९.५५ देखिए)

अप्प/अप्पाण (आत्मन्) शब्द

अप्प अंग के रूप राजन् के समान होते हैं। अप्पाण अंग के रूप वच्छ के समान होते हैं (सूत्र ३.५६)। तृतीया एक वचन में अप्पणिआ और अप्पणइआ ऐसे अधिक रूप हैं (सूत्र ३.५७)।

३.५८ सर्वादेरदन्तात्—अकारान्त (अदन्त) सर्वादिका। सर्वादि यानी सर्व, यद्, तद्, किम् इत्यादि सर्वनाम। यद्, तद्, किम्, और एतद् इनके ज, त, क और एअ/एय ऐसे अकारान्त अंग होते हैं।

३.५९ अमुम्मि—अदस् सर्वनाम का सप्तमी ए० व० (सूत्र ३.८८ देखिए)।

३.६० काए⋯ ⋯ती—ये रूप स्त्रीलिंगी आकारान्त और ईकारान्त अंगों के है।

३.६१ डेसिं—डित् एसिं। सव्वाण⋯ ⋯काण—ये रूप अकारान्त संज्ञा के समान हैं।

३.६३ कित⋯ ⋯भ्यामपि—आकारान्त किम् यानी का, और आकारान्त तद् यानी ता।

३.६४ किमादिभ्य: ईदन्तेभ्य:—ईकरान्त किम् इत्यादि यानी की, जी, ती। कीअ⋯ ⋯तीए—सूत्र ३.२९ देखिए।

३.६५ श्लोक १—यदा सहृदयों से लिए जाते हैं तदा वे गुण होते हैं। पक्षे कहिं⋯ ⋯कत्थ सूत्र ३.५९–६० देखिए।

३.६८ डिणो डीस—डित् इणो और डित् ईस।

३.७० सलक्ष्यानुसारेण—व्याकरणीय नियमों के उदाहरणों के अनुसार।

३.७१ कत्तो कदो—सूत्र २.१६० देखिए।

३.७४ सिंस—सूत्र ३.५९ देखिए। स्स—सूत्र ३.१० देखिए।

३.७७ इमं⋯ ⋯इमेहि—इम अंग से बने हुए रूप हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३.८२ एत्तो एत्ताहे—त्तो और एत्ताहे प्रत्यय लगते समय, एत (द्) सर्वनाम में से त का लोप होता (सूत्र ३.८३ देखिए)।

३.८३ एतदस्त्थे परे—एतद् के आगे त्थ होने पर। त्थ के लिए सूत्र ३.५९ देखिए।

३.८७ अदसो··· ···न भवति—इसका भावार्थ यह है कि सब लिंगों में अदस् सर्वनाम का प्रथमा ए० व० अह ऐसा होता है।

३.८८ अदस् सर्वनाम का अमु ऐसा अंग होता है और वह उकारान्त संज्ञा के समान चलता है।

३.८९ ङ्यादेशे म्मौ—सूत्र ३.५९ के अनुसार ङि प्रत्यय को म्मि ऐसा आदेश होता है।

३.९०–९१ दिट्ठो, चिट्ठह—ये शब्द पिछले शब्दों को प्रथमा विभक्ति दिखाते हैं।

३.९२–९३ वन्दामि पेच्छामि—ये शब्द पिछले शब्दों की द्वितीया विभक्ति दिखाते हैं।

३.९४–९५ जंपिअं मुत्तं—ये शब्द पिछले शब्दों की तृतीया विभक्ति दिखाने के लिए हैं।

३.१०४ पक्षे स एवास्ते—विकल्प पक्ष में ब्भ यह स्वयं होता ही है।

३.१०६ भणामो—यह शब्द पिछले शब्दों की प्रथमा दिखाता है।

अब सर्वनाम रूप विचार (सूत्र ३.५८–११७) निम्न के अनुसार एकत्र किया जा सकता है :—

पुल्लिंगी सव्व (सर्व) सर्वनाम

प्र० सव्वो	सव्वे
द्वि० सव्वं	सव्वे, सव्वा
तृ० सव्वेण णं	सव्वेहि-हिं-हिँ
पं० सव्वत्तो इत्यादि वच्छ की तरह	
ष० सव्वस्स	सव्वेसिं, सव्वाण-णं
स० सव्वस्सि, सव्वम्मि, सव्वत्थ, सव्वहिं	सव्वेसु-सुं

(सूत्र ३.५८–६१, १२४; १.२७)

यद्, तद्, किम्, एतद्; इदम् इन सर्वनामों के ज, त, क, एअ (एय); इन ये अकारान्त अंग पुल्लिंगी सव्व के तरह चलते हैं। उनके जो अधिक रूप होते हैं, वे निम्न के अनुसार :—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुल्लिगी त (तद्) सर्वनाम

प्र०	स, सो	णे
द्वि०	णं	णे, णा
तृ०	तिणा, णेण	णहि
पं०	तम्हा, तो	
ष०	तास, से	तास, सिं
स०	ताहे, ताला, तइआ	णेसु-सुं

पुल्लिगी इम (इदम्) सर्वनाम

प्र०	अयं	
द्वि०	इणं, णं	णे, णा
तृ०	इमिणा, णेण	एहि, णेहि
ष०	अस्स, से	सिं
स०	अस्सि, इह	एसु

पुल्लिगी ज (यद्) सर्वनाम

एकवचन में :—तृ० जिणा, पं० जम्हा, ष० जास
स० जाहे, जाला, जइआ

पुल्लिगी एअ (एय) (एतद्) सर्वनाम

एकवचन में :—प्र० एस, एसो, इणं, इणमो, तृ० एदिणा, एदेण पं० एत्तो, एताहे ष० से स० अयम्भि, ईयम्भि, एत्थ

पुल्लिगी क (किम्) सर्वनाम

तृ०	किणा	
पं०	कम्हा, किणो कीस	
ष०	कास	कास
स०	काहे, काला, कइआ	

स्त्रीलिंग में सव्व का सव्वा, इदम् का इमा, ज का जा अथवा जी, त का ता अथवा ती, किम् का अथवा की ऐसे अंग होते हैं। इनमें से आकारान्त अंग माला के समान चलते हैं। प्रथमा ए० व०, द्वितीया ए० व० और अ० व० छोड़कर अन्यत्र जी, की, और ती इनके रूप ईकारान्त स्त्रीलिंगी संज्ञा के समान होते हैं। इनके जो अधिक रूप हैं वे ऐसे होते हैं :—

प्र०	इमिआ; एस, एसा; सा	
द्वि०	णं	
तृ०	णाए	णाहि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ष० से; कास, किस्सा, कीसे; सव्वेसिं; तेसिं, सिं
तास, तिस्सा, तीसे; जिस्सा, जीसे
स० काहि; जाहि; ताहि

नपुंसक लिंग में सव्व इत्यादि अकारान्त अंग प्रथमा और द्वितीया इनमें वण की तरह, और तृतीया से सप्तमी तक अपने-अपने पुल्लिंगी सर्वनामों के समान चलते हैं। कुछ के अधिक रूप ऐसे होते हैं :—

एकवचन :—प्रथमा :—इदं, इणं, इणमो; एस; किं
द्वितीया :—इदं, इणं, इणमो; किं

अदस् सर्वनाम

तीनों भी लिंगों में अदस् का अमु ऐसा अंग होता है और वह उकारान्त संज्ञा के समान चलता है। उनके अधिक रूप ऐसे :—

तीनों भी लिंगों में :—प्र० ए० व० :—अह।
पुल्लिंगी सप्तमी ए० व० :—अयम्मि, इयम्मि

युष्मद् और अस्मद् सर्वनाम

इन दोनों भी सर्वनामों के रूप अनियमित हैं। वे ऐसे हैं :—

युष्मद् सर्वनाम

प्र. तं, तुं, तुवं, तुह, तुमं	भे, तुब्भे, तुज्झ, तुम्ह, तुम्हे, उय्हे तुम्हे, तुज्झे
द्वि. तं, तुं, तुमं, तुव तुह, तुमे, तुए	वो, तुज्झ, तुब्भे, तुम्हे, उम्हे, भे, तुम्हे, तुज्झे
तृ० भे, दि, दे, ते, तइ, तए, तुमं तुमइ, तुमए, तुमे तुमाइ	भे, तुब्भेहिं, उज्झेहि, उय्येहिं, तुय्येहिं, उय्येहिं, तुम्हेहिं, तुज्झेहिं

पं० तइत्तो, तुवत्तो, तुमत्तो, तुहत्तो, तुब्भत्तो, तुब्भत्तो, तुम्हत्तो, उम्हत्तो, तुम्हत्तो, तुम्हत्तो, तुज्झत्तो; तइओ, इ; तइउ, इ; तुज्झत्तो, इ
तई हि, इ; तईहितो, इ; तुम्ह, तुब्भ,
तुम्ह, तुज्झ, तहितो

ष० तइ, तु, ते, तुम्हं, तुह, तुहं, तुव, तुम, तु, वो, भे, तुब्भ, तुब्भं, तुब्भाण, तुवाण, तुमे, तुमो, तुमाइ, दि, दे, इ, ए, तुब्भ, उब्भ, उम्ह, तुम्ह, तुज्ज, उम्ह, उज्झ	तुमाण, तुहाण, उम्हाण, तुब्भाणं, तुवाणं, तुमाणं तुहाणं, उम्हाणं, तुम्ह, तुज्झ, तुम्हं, तुज्झं, तुम्हाण, तुम्हाणं, तुज्भाण, तुज्झाणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स०	तुमे, तुमए, तुमाइ, तइ, तए, तुम्मि, तुवम्मि, तुमम्मि, तुहम्मि, तुब्भम्मि, तुज्झम्मि, तुम्हम्मि	तुसु, तुवेसु, तुमेसु, तुहेसु, तुब्भेसु, तुम्हेसु, तुज्झेसु, तुवसु, तुमसु, तुहसु, तुब्भसु, तुम्हसु, तुज्झसु, तुब्भासु, तुम्हासु, तुज्झासु

अस्मद् सर्वनाम

प्र०	मि, अम्मि, अम्हि, हं, अहं, अहयं	अम्ह, अम्हे, अम्हो, मो, वयं, भे
द्वि०	णे, णं, मि, अम्मि, अम्ह, मम्ह, मं, ममं, मिमं, अहं	अम्हे, अम्हो, अम्ह, णे
तृ०	मि, मे, ममं, ममए, ममाइ, मइ, मए, मयाइ, णे	अम्हेहि, अम्हाहि, अम्ह, अम्हे, णे
पं०	मइत्तो, ममत्तो, महत्तो, मज्झत्तो, इ; मत्तो	ममत्तो, अम्हत्तो, ममाहितो, अम्हाहितो, ममासुंतो, अम्हासुंतो, ममेसुंतो, मम्हेसुंतो
ष०	से, मइ, मम, मह, महं, मज्झ, मज्झं, अम्ह, अम्हं	णे, णो, मज्झ, अम्ह, अम्हं, अम्हे, अम्हो, अम्हाण, ममाण, महाण, मज्झाण, अम्हाणं, ममाणं, महाणं, मज्झाणं
स०	मि, मइ, ममाइ, मए, मे, अम्हम्मि, ममम्मि, महम्मि, मज्झम्मि	अम्हेसु, ममेसु, महेसु, मज्झेसु, अम्हसु, ममसु, महसु, मज्झसु, अम्हासु

३·११८-१२३ इन सूत्रों में संख्यावाचक शब्दों का रूप विचार है। वह निम्न के अनुसार होता है :—

संख्यावाचक 'द्वि'

दुवे, दोण्णि, दुण्णि, वेण्णि, विण्णि (प्र०, द्वि०); दोहिं, बोहिं (तृ०); दोहितो, वेहितो (पं०); दोण्हं, वेण्हं (ष); दोसु, वेसु (स)

संखयावाचक 'त्रि'

तिण्णि (प्र०द्वि०); तीहिं (तृ); तीहितो (पं०); तिण्हं (ष); तीसु (स)

संख्यावाचक 'चतुर्'

चत्तारो, चउरो, चत्तारि (प्र०, द्वि०); चउहि, चऊहि (तृ); च उहितो, च ऊहितो (पं); च ऊण्हं (ष); च उसु, चऊसु (स)

३·१२४ यह अतिदेश सूत्र है। अब तक कहे हुए रूपों के अलावा होने वाले अन्य रूप अकारान्त शब्द के समान होते हैं। इस अतिदेश का अधिक स्पष्टीकरण वृत्ति में है।

३·१२५ जस्···णो—णो आदेश के लिए सूत्र ३·२२-२३ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३·१२६ ङसेर्लुग्—सूत्र ३·८ देखिए।

३·१२७ भ्यसो ङसेश्च हिः—सूत्र ३·८-९ देखिए।

३·१२८ ङेर्डे—सूत्र ३·११ देखिए।

३·१३० सर्वासां···त्यादीनाम्—विभक्ति यानी शब्दशः विभाग, या भिन्न करना। प्रथमा इत्यादि को प्रायः विभक्ति शब्द लगाया जाता है। तथैव धातुको लाये जाने वाले काल और अर्थ के प्रत्ययों के बारे में भी विभक्ति शब्द प्रयुक्त किया जाता है। (विभक्तिश्च/सुप्तिङन्तौ विभक्तिसंज्ञौ स्तः। पाणिनि सूत्र १·४·१०४ ऊपर सिद्धांत कौमुदी)। द्विवचनस्य···भवति—प्राकृत में द्विवचन हीं न होने से, उसके बदले बहु (अनेक) वचन प्रयुक्त किया जाता है।

३·१३१ प्राकृत में चतुर्थी विभक्ति न होने से, उसके बदले षष्ठी विभक्ति प्रयुक्त की जाती है। अपवाद के लिए सूत्र ३·१३२-१३३ देखिए।

३·१३२ तादर्थ्य······वचनस्य—ङे यह चतुर्थी एकवचन का प्रत्यय हैं। प्रायः तादर्थ्य दिखाने के लिए चतुर्थी प्रयुक्त की जाती है।

३·१३४ द्वितीया, तृतीया, पंचमी और सप्तमी इन विभक्तियों के बदले हीं क्वचित् षष्ठी प्रयुक्त की जाती हैं।

३·१३५ तृतीया विभक्ति के बदले सप्तमी विभक्ति का उपयोग विमल सूरिकृत पउमचरिय नामक ग्रन्थ में बहुत है।

३·१३८ क्यङन्तस्य······लुग् भवति—संज्ञाओं से धातु सिद्ध करने के लिए क्यङ् और क्यङ्ष् ऐसे दो प्रत्यय हैं। उन प्रत्ययों से संबंधित होने वाले 'य' का विकल्प से लोप होता है। लोहित इत्यादि कुछ शब्दों को क्यङ्ष् प्रत्यय लगता है। उदा०—लोहित—लोहितायति-ते। सदृश आचार दिखाने के लिए क्यङ् प्रत्यय जोड़ा जाता है। उदा०—(काकः) श्येनायते (√श्येन) (श्येन के समान आचार करता है)। दमदमा—एक प्रकार का वाद्य है।

३·१३९-१८० इन सूत्रों में धातु रूप विचार है। इस संदर्भ में अगली बातें याद में रखें:—(१) प्राकृत में व्यञ्जनान्त धातु नहीं हैं; सब धातु स्वरान्त होते हैं; बहुसंख्य धातु अकारान्त होते हैं। (२) धातु का गण भेद और परस्मैपद—आत्मनेपद ऐसा प्रत्यय भेद नहीं है। (३) वर्तमान; भूत और भविष्य ये तीन काल हैं; उनके संस्कृत के समान अन्य प्रकार नहीं हैं। भूतकालीन धातु रूपों का उपयोग अत्यन्त कम है, प्रायः कर्मणि भूतकाल वाचक धातु साधित विशेषण के उपयोग से भूतकाल का कार्य किया जाता है। (४) आज्ञार्थ, विध्यर्थ और संकेतार्थ होते हैं। विध्यर्थ के बदले विध्यर्थी कर्मणि धातु साधित विशेषण का उपयोग अधिक दिखाई देता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३·१३९ त्यादीनां विभक्तीनाम्—त्यादि के लिए सूत्र १·९ के ऊपर की टिप्पणी तथा विभक्ति के लिए सूत्र ३·१३० के ऊपर की टिप्पणी देखिए। परस्मैपदानामात्मनेपदानां च—संस्कृत में परस्मैपद और आत्मनेपद ऐसे धातु के दो पद हैं और उनके लिए प्रत्यय भी भिन्न होते हैं। ऐसा पद-प्रत्यय-भेद प्राकृत में नहीं है। धातु को लगने वाले प्रत्यय एक ही प्रकार के हैं। प्रथमत्रयस्य—पहले तीनों के यानी तृतीय पुरुष तीन वचनों के। आद्य वचनम्—एकवच, द्विवचन और बहुवचन ऐसे तीन वचन हैं, उनमें से पहला वचन यानी एकवचन। इच् एच्—इनमें च् वर्ण इत् है। धातु के अन्तिम रूप में यह च् नहीं आता है। चकारौ विशेषणार्थौ—सि, से, मि, न्ति, न्ते और इरे इन प्रत्ययों की तरह, इ और ए ये प्रत्यय इत्-रहित क्यों नहीं कहे, इस प्रश्न का उत्तर यहाँ है। पैशाची भाषा के सन्दर्भ में सूत्र ४·३१८ में इन इत्-सहित प्रत्ययों का उपयोग होने वाला है।

३·१४० द्वितीयस्य त्रयस्य—प्रथम पुरुष के तीन वचनों का। आद्यवचनस्य—एकवचन का।

३·१४१ तृतीयस्य त्रयस्य—प्रथम पुरुष के तीन वचनों का। आद्यस्य वचनस्य—एकवचन का। मिवेः स्थानीयस्य मेः—मिप् (प्रथमपुरुषी एकवचनी प्रत्यय) के स्थान पर आने वाले मि प्रत्यय का।

३·१४२ आद्यत्रयं—यानी प्रथमत्रय (सूत्र ३·१३९ देखिए) यानी तृतीय पुरुष के तीन वचन। बहुषु······वचनस्य—बहु में होने वाले वचन का यानी बहुवचन का। हसिज्जन्ति रमिज्जन्ति—ये कर्मणि रूप हैं (सूत्र ३·१६० देखिए)। क्वचिद्······एकत्वेपि—क्वचित् एकवचन में भी इरे प्रत्यय लगता है।

३·१४३ मध्यमस्य त्रयस्य—यानी द्वितीयस्य त्रयस्य (सूत्र ३·१४० देखिए) यानी द्वितीय पुरुष के तीन वचनों का। बहुषु वर्तमानस्य—बहुवचन का। हच्—इस शब्द में च् वर्ण इत् है। जं······रोइत्था—यहाँ तृतीय पुरुष एकवचन में रोइत्था प्रयुक्त है। हच् इति······विशेषणार्थः—सूत्र ३·१३९ ऊपर की टिप्पणी देखिए। ४-२६८ के अनुसार ह् का ध् होता है।

१३·१४५ यौ···वुक्तौ—एच् ओर से ये आदेश सूत्र ३·१३९-१४० में कहे हुए हैं।

सूत्र ३·१३९-१४४ में कहे हुए वर्तमान काल के प्रत्यय निम्न के अनुसार होते हैं:—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्तमानकाल-प्रत्यय

पुरुष	एकवचन	अनेकवचन
प्रथम	मि	मो, मु, म
द्वितीय	सि, से	इत्था, ह
तृतीय	इ, ए	न्ति, न्ते, इरे

ये प्रत्यय धातु को लगते समय होने वाले बदल ऐसे हैं:—(सूत्र ३.१४१-१४३, १४५, १५४, १५५, १५८ देखिए): —(१) मि प्रत्यय के पूर्व धातु के अन्त्य अ का आ विकल्प से होता है। (२) मो, मु, म इन प्रत्ययों के पूर्व धातु के अन्त्य अ का आ और इ विकल्प से होते हैं। (३) से और ए ये प्रत्यय केवल अकारान्त धातु को लगते हैं। (४) सब प्रत्ययों के पूर्व धातु के अन्त्य अ का ए विकल्प से होता है।

(टिप्पणी:—(१) क्वचित् मि प्रत्यय में से इ का लोप होकर केवल म् रहता है। उदा०—हस + मि = हसं। (२) इरे प्रत्यय कभी तृतीय पुरुष एकवचन में भी लगता है। (३) इत्था प्रत्यय क्वचित् अन्य पुरुषों में भी लगता है।)

ऊपर के प्रत्यय लगकर होने वाले धातु के रूप ऐसे—

वर्तमानकाल : हस धातु

पुरुष	एकवचन	अ० वचन
प्र० पु०	हसमि, हसामि, हसेमि	हसमो, हसामो, हसिमो, हसेमो, हसमु, हसामु, हसिमु, हसेमु, हसम, हसाम, हसिम, हसेम
द्वि० पु०	हससि, हसेसि, हससे, हसेसे	हस इत्था, हसित्था, हसेइत्था, हसेत्था, हसह, हसेह
तृ० पु०	हसइ, हसेइ, हसए, हसेए	हसन्ति, हसेन्ति, हसन्ते, हसेन्ते, हसइरे, हसिरे, हसेइरे

वर्तमानकाल : हो धातु

पुरुष	एकवचन	अ० वचन
प्र० पु०	होमि	होमो, होमु, होम
द्वि० पु०	होसि	होइत्था, होह
तृ० पु०	होइ	होन्ति (हुन्ति) होन्ते, होइरे

३·१४६ सिना ·····भवति—द्वितीय पुरुषी तीन वचनों में से एकवचन के सि इस आदेश के सह अस् धातु को सि आदेश होता है।

३·१४७ मिमोम—मि के लिए सूत्र ३·३४१ और मो तथा म के लिए सूत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३·१४४ देखिए। पक्षे······अम्हो—विकल्प पक्ष में सूत्र ३·१४८ के अनुसार अत्थि ऐसा आदेश होता है।

३·१४८ अस्ते······भवति—सर्व पुरुषों में और वचनों में अस् धातु को अत्थि ऐसा आदेश होता है।

वर्तमानकाल : अस धातु

प्रथम	एकवचन	ब० वचन
प्रथम	म्हि, अत्थि	म्हो, म्ह, अत्थि
द्वितीय	सि, अत्थि	अत्थि
तृतीय	अत्थि	अत्थि

३·१४९-१५३ इन सूत्रों में प्रेरक (प्रयोजक) धातु सिद्ध करने की प्रक्रिया कही हुई हैं।

३·१४९ णेः स्थाने—णि के स्थानपर। प्रेरक धातु साधने के लिए धातु को लगाए जाने वाले प्रत्यय को णि ऐसी संज्ञा है।

३·१५० गुर्वादिः—जिसमें आदि स्वर गुरु यानी दीर्घ है उसका।

३·१५१ भ्रमेः—√भ्रमि—भ्रम्। एकाध धातु का निर्देश करते समय, उसको इ (इक्) जोड़ा जाता है (इक्श्तिपौ धातुनिर्देशे। पाणिनि सूत्र ३·३·१०८)। भामेइ······भमावेइ—ये रूप सूत्र ३·१४९ के अनुसार होते हैं।

३·१५२ णेः स्थाने······परत :—क्त प्रत्यय और कर्मणि प्रत्यय आगे होने पर, णि प्रत्यय का लोप अथवा आवि ऐसा आदेश होता है। उदा०—कर+आवि+अ (क्त-प्रत्यय)=करावि अ। कर+आवि+ज्ज (कर्मणि प्रत्यय=कराविज्ज। णि के अ और ए इन आदेशों का लोप होता है, तबः—कर+०+अ (क्त-प्रत्यय)= कार+०+अ=कारिअ। कर+०+ज्ज (कर्मणि प्रत्यय)=कार+०+ज्ज= कारिज्ज। क्त—धातु से कर्मणि भूतकाल वाचक धातु साधित विशेषण सिद्ध करने वाले प्रत्यय को क्त यह तान्त्रिक संज्ञा है। उदा०—गम्–गत। भावकर्मविहित प्रत्यय--धातु से कर्मणि और भावे अंग सिद्ध करने के लिए कहा हुआ क्य यह प्रत्यय। कारीअइ···हसाविज्जइ· ये प्रयोजक धातुओं के कर्मणि रूप हैं।

३·१५३ आदेरकारस्य—धातु में से आदि लकारका। प्रेरक धातु निम्न के अनुसार सिद्ध किए जाते हैं :—(१) अ, ए, आव और आवे वे प्रेरक धातु सिद्ध करने के प्रत्यय हैं। (२) अ और ए ये प्रत्यय लगते समय अथवा उनका लोप हो तो धातु में से आदि अकार का आ होता है। उदा०—कर–कार (३) धातु का आदि स्वर दीर्घ हो, तो अवि ऐसा प्रत्यय विकल्प से लगता है। उदा०—सोस—कोसिअ, सोसविक। (४) आगे क्त प्रत्यय अथवा कम'णि प्रत्यय हो, तो णि प्रत्यव का लोप अथवा आवि ऐसा आदेश होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३·१५६ क्त—सूत्र ३·१५२ ऊपर की टिप्पणी देखिए। यह प्रत्यय प्राकृत में अ/य ऐसा होता है। उसके पूर्व धातु के अन्त्य का इ हो जाता है। उदा०—हस + अ = हसिअ।

३·१५७ क्त्वा··· ···प्रत्यये—क्त्वा प्रत्यय के लिए सूत्र १·२७ ऊपर की टिप्पणी देखिए। तुम्—धातु से हेत्वर्थक अव्यय सिद्ध करने का तुम् प्रत्यय है। यह प्रत्यय प्राकृत में प्रायः उं ऐसा होता है। तव्य—धातु से विध्यर्थी कर्मणि धातु साधित विशेषण साधने का तव्य प्रत्यय है। यह प्रत्यय प्राकृत में अव्व/यव्व ऐसा हो जाता है।

भविष्यत्कालविहितप्रत्यय—'भविष्य काल का' इस स्वरूप में कहा हुआ प्रत्यय। इस प्रत्यय के लिए सूत्र ३.१६६ इत्यादि देखिए।

३·१५८ वर्तमाना—वर्तमानकाल। पञ्चमी—आज्ञार्थ। शतृ—धातु से वर्तमान काल का वाचक धातु साधित विशेषण सिद्ध करने का शतृ प्रत्यय है। उसके लिए सूत्र ३.१८१ देखिए।

३·१५९ ज्जाज्जे—ज्जा और ज्ज। ये आदेश प्राकृत भाषा में बहुत व्यापक किए गए हैं (सूत्र ३·१७७ देखिए)।

३·१६० चिजि··· ···वक्ष्यामः—इसके लिए सूत्र ४·२४१ देखिए। क्यस्य स्थाने—क्य प्रत्यय के स्थान पर। धातु से कर्मणि और भावे अंग सिद्ध करने का क्य प्रत्यय है। हसीअन्तो··· ···हसिज्जमाणो—यहाँ सूत्र ३·१८१ के अनुसार अन्त और माण प्रत्यय लगे हैं।

बहुला··· ·· विकल्पेन भवति—क्वचित् क्य प्रत्यय ही लगता है यानी ज्ज (य) प्रत्यय लगता है; उसके पूर्व सूत्र ३·१५९ के अनुसार धातु के अन्त्य अ का ए होता है। उदा०—नव + ज्ज = नवेज्ज।

नविज्जेज्ज, लहिज्जेज्ज, अच्छिज्जेज्ज—सूत्र ३·१७७ और ३·१५९ देखिए। अच्छ—सूत्र ४·२१५ देखिए।

३·१६१ यथासंख्यम्—अनुक्रम से। डीस डुच्च—डित् ईस और डित् उच्च। दीसइ और वुच्चइ ये रूप संस्कृत के दृश्यते (दिस्सइ—दीसइ) और उच्यते (उच्चइ, फिर व् का आदि वर्णागम होकर, वुच्चइ) इनसे भी साध्य हो सकते हैं।

३·१६२ भूतेर्थे··· ··भूतार्थः—भूतकाल का अर्थ दिखाने के लिए संस्कृत में जो अद्यतनी इत्यादि प्रत्यय संस्कृत व्याकरण में कहे हुए हैं, वे भूतार्थ प्रत्यय। संस्कृत में भूतकाल के लिए अद्यतन, अनद्यतन और परोक्ष ऐसे प्रत्ययों के तीन वर्ग हैं। सीहीहीअ—ये तृतीय पुरुष एकवचन के प्रत्यय दिखाई देते हैं। साहित्य में इंसु और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंसु ऐसे भूतकाल में तृतीय पुरुष अनेक वचन के प्रत्यय प्रयुक्त किए दिखाई देते हैं। तथैव, अब्बवी के समान भूतकाल में तृतीय पुरुष एकवचन के रूप भी वाङ्मय में दिखाई देते हैं। स्वरान्ताः······विधिः—सी, ही, हीअ ये प्रत्यय लगाने का नियम केवल स्वरान्त धातुओं के बारे में ही हैं। अकार्षीत्······जकार—ये कृ धातु के संस्कृत में होने वाले अद्यतन; अनद्यतन और परोक्ष भूतकाल के रूप हैं। ह्यस्तन्याः प्रयोगः—ह्यस्तनी का उपयोग। ह्यस्तनी यानी अनद्यतन भूतकाल।

३·१६३ व्यञ्जनान्ता:······भवति—व्यञ्जनान्त धातु को भूतकाल में ईअ प्रत्यय लगता है। यहाँ व्यञ्जनान्त का अर्थ है संस्कृत में व्यञ्जनान्त होने वाला धातु; कारण प्राकृत में व्यञ्जनान्त शब्द ही नहीं होते हैं। अभूत्···बभूव, आसिष्ट······आसांचके, अग्रहीत्···जग्राह—भू, आस् और ग्रह धातुओं के रूप। सूत्र ३·१६२ के नीचे अकार्षीत्······चकार इस ऊपर की टिप्पणी देखिए।

३·१६४ आसि और अहेसि ये अस धातु के भूतकालीन रूप सर्व पुरुषों में और सर्व वचनों में प्रयुक्त किए जाते हैं।

३·१६५ सप्तमी—विध्यर्थ। विध्यर्थ का चिह्न इस स्वरूप में धातु के आगे ज्ज आता है और उसके आगे विकल्प से वर्तमान काल के प्रत्यय जोड़े जाते हैं।

३·१६६-१७२ इन सूत्रों में भविष्यकाल का विचार है। हि अथवा स्स भविष्य काल का चिह्न है। भविष्यकाल के प्रत्यय निम्न के अनुसार दिए जा सकते हैं :—

भविष्यकाल के प्रत्यय

पुरुष	ए० व०	अ० व०
प्र०पु०	स्सं, स्सामि, हामि; हिमि	स्सामो, स्साम, स्सामु; हामो, हाम, समु; हिमो, हिम, हिमु; हिस्सा, हित्था
द्वि०पु०	हिसि, हिसे	हित्था, हिह
तृ०पु०	हिइ, हिए	हिन्ति, हिन्ते, हिइरे

ये प्रत्यय लगने के पूर्व सूत्र ३·१५७ के अनुसार, धातु के अन्त्य अ के इ और ए होते हैं। धातु के उदाहरण :—

भविष्यकाल भण धातु

पुरुष	ए० व०	अ० व०
प्र०पु०	भणिस्सं, भणेस्सं; भणिदसामि, भणेस्सामि; भणिहामि, मणेहामि; भणिहिमि, भणेहिमि	भणिस्सामो, भणेस्सामो; भणिस्साम, भणेस्सामु; भणिस्सामु, भ॥स्सासु; भणिहामो, भणेहामो; भणिहाम, भणेहाम; भणिहिम, भणेहिम; भणिहिसु, भणेहिसु; भणिहिस्सा; भणेहिस्सा, भणिहित्था, भणेहित्था

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरुष	ए० व०	अ० व०
द्वि० पु०	भणिहिसि, भणेहिसि; भणिहिसे, भणेहिसे	भणिहित्था, भणेहित्था; भणिहिह, भणेहिह
तृ० पु०	भणिहिइ, भणेहिइ; भणिहिए, भणेहिए	भणिहिन्ति, भणेहिन्ति; भणिहिन्ते, भणेहिन्ते, भणिहि इरे, भणेहि इरे

भविष्यकाल : हो धातु

पुरुष	ए० व०	अ० व०
प्र० पु०	होस्सं होस्सामि, होहामि, होहिमि	होस्सामो, होस्साम, होस्सामु; होहामो, होहाम, होहामु; होहिमो, होहिम, होहिमु; होहिस्सा, होहित्था
द्वि० पु०	होहिसि	होहित्था, होहिह
तृ० पु०	हो हिइ	होहिन्ति, होहिन्ते, होहिइरे

३·१६६ भविष्यति भविता—संस्कृत में भविष्य काल में भू धातु के रुप और ता भविष्य काल के रूप हैं। हसिहिइ—भविष्य कालीन प्रत्यय के पूर्व धातु के अन्त्य अ के इ और ए होते हैं। उदा——हसिहिइ, हसेहिइ।

३·१६७ भविष्यत्यर्थे··· ···प्रयोक्तव्यौ—मि, मो, मु और म इन प्रत्ययों के पूर्व विकल्प से स्सा और हा आते हैं। तृतीय त्रिक—तृतीय त्रय (सूत्र ३·१४२ देखिए); प्रथम पुरुष के तीन वचन।

३·१७० कर (कृ) और दा धातुओं के भविष्यकाल प्रथम पुरुष एक वचन में काहं और दाहं ऐसे दो रूप अधिक होते हैं। करोतेः—√करोति (कृ)।

काहं—भविष्य कालीन प्रत्ययों के पूर्व, सूत्र ४·२१४ के अनुसार, कृ धातु का होता है।

३·१७१ श्रु इत्यादि धातुओं के सोच्छं इत्यादि रूप भविष्यकाल प्रथम पुरुष एक वचन के हैं।

३·१७२ श्रु इत्यादि धातुओं के भविष्य काल में सोच्छ इत्यादि अंग होते हैं। उनको केवल वर्तमान काल के प्रत्यय लगा कर ही उनका भविष्य काल सिद्ध होता है।
उदा०—सोच्छिइ। उनको भविष्यकाल के प्रत्यय भी लगते हैं। उदा०-सोच्छिहिइ।

३·१७३-१७६ इन सूत्रों में आज्ञार्थ (विध्यर्थ) का विचार है। उसके प्रत्यय ऐसे हैं :—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आज्ञार्थ के प्रत्यय

पुरुष	ए० व०	अ० व०
प्रथम	मु	मो
द्वितीय	सु, इज्जसु, इज्जहि, इज्जे, हि, ०	ह
तृतीय	उ	न्तु

आज्ञार्थ के प्रत्यय लगते समयः—(१) मु और मो प्रत्ययों के पूर्व धातु के अन्त्य अ के इ और आ होते हैं (सूत्र ३·१५५)। (२) सर्व प्रत्ययों के पूर्व धातु के अन्त्य अ का ए होता है (सूत्र ३·१५८)। (३) इज्जसु, इज्जहि, इज्जे और लोप (०) ये प्रत्यय केवल अकारान्त धातुओं के बारे में ही होते हैं।

आज्ञार्थ: हस धातु

पुरुष	ए० व०	अ० व०
प्र०पु०	हसमु, हसामु, हसिमु, हसेमु	हसमो, हसामो; हसिमो, हसेमो
द्वि०पु०	हससु, हसेज्जसु, हसेज्जहि, हसेज्जे, हसहि, हसेहि, हस	हसह, हसेह
तृ०पु०	हसउ, हसेउ	हसन्तु, हसेन्तु

आज्ञार्थ : हो धातु

पुरुष	ए० व०	अ० व०
प्र०पु०	होमु	होमो
द्वि०पु०	होसु, होहि	होह
तृ०पु०	होउ	होन्तु

३·१७३ विध्यादिष्वर्थेषु—विधि इत्यादि अर्थों में। प्राकृत में आज्ञार्थ और विध्यर्थ इनमें विशेष फर्क नहीं माना जाता, ऐसा दिखाई देता है। एकत्वे··· ···स्थाने—एक वचन में होने वाले तीन पुरुषों के (त्रयाणां) तीनों भी एक वचनों के (त्रिकाणां) स्थान पर। दकारो··· ···न्तरार्थम्—दु में से द् का उच्चारण दूसरे (यानी शौरसेनी) भाषा के लिए है।

३·१७४ सोः स्थाने—सु के स्थान पर। सु के लिए सूत्र ३·१७३ देखिए।

३·१७५ लुक्—लोप; यहाँ प्रत्ययों का लोप। अकारान्त धातुओं के आज्ञार्थ द्वितीय पुरुष एक वचन में एक रूप प्रत्यय रहित होता है। उदा——हस।

३·१७६ बहुष्व··· ···स्थाने—बहुवचन में होने वाले, तीन पुरुषों के, तीनों भी बहुवचनों के स्थान पर। हसन्तु हसेयुः हसत, हसेत हसाम हसेम—हस् धातु के अनुक्रम से तृ० पु०, द्वि० पु० और प्र० पु० इनके बहुवचनों के क्रम से आज्ञार्थी और विध्यर्थी रूप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३·१७७ वर्तमानाया:··· ···भवत:—वर्तमान काल, भविष्य काल, विध्यर्थ और आज्ञार्थ इनमें कहे हुए प्रत्ययों के स्थान पर ज्ज और ज्जा ये आदेश विकल्प से आते हैं; वे सर्व पुरुषों में और वचनों में प्रयुक्त किए जाते हैं (सूत्र ३·१७८ भविष्यन्ती—भविष्य काल। हसतु हसेत् —हस् धातु के संस्कृत में से आज्ञार्थ और विध्यर्थ तृतीय पुरुष एक वचन। अन्ये··· ···पीच्छन्ति—कुछ वैयाकरणों के मतानुसार, सर्व काल और अर्थ इनमें ज्ज और ज्जा प्रयुक्त किए जाते हैं। भवति ··· ···अभविष्यत् – ये रूप भू धातु के तृतीय पुरुष एक वचन के क्रम से वर्तमान काल, विध्यर्थ, आज्ञार्थ, अनद्यतन भूतकाल, अद्यतन भूतकाल, परोक्ष भूतकाल, आशीलिङ्. ता और स्य भविष्यकाल और संकेतार्थ इनके हैं।

३·१७८ भवतु भवेत्—सूत्र ३·१७७ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

३·१७९ क्रियातिपत्ति—संकेतार्थ।

३·१८० धातुओं को न्त और माण प्रत्यय जोड़ कर ही संकेतार्थ साधा जाता है। श्लोक १—अरिचंद्र, हिरन के स्थान पर यदि तू सिंह को (अपने स्थान पर) रखा होता, तो विजयी ऐसे उनके कारण तुझको राहु का नास सहन करना न पड़ता।

३·१८१ शतृ आनश्—धातु से वर्तमान काल वाचक धातुसाधित विशेषण साधने के लिए ये दो प्रत्यय हैं। उन्हें प्राकृत में न्त और माण ऐसे आदेश होते हैं। शतृ प्रत्यय के पूर्व के अन्त्य अ का विकल्प से ए होता है (सूत्र ३·१५८ देखिए)। उदा०—हसेन्त।

३·१८२ धातु को ई, न्ती और माणी जोड़कर स्त्रीलिंगी वर्तमानकाल वाचक धातुसाधित विशेषण सिद्ध होते हैं।

इस पाद के समाप्ति सूचक के अनन्तर कुछ पांडुलिपियों में अगला श्लोक है:—

ऊर्ध्वं स्वर्गनिकेतनादपि तले पातालमूलादपि
त्वत्कीर्तिर्भ्रमति क्षितीश्वरमणे पारे पयोधेरपि।
तेनास्या: प्रमदास्वभावसुलभैरुच्चावचैश्चापलै—
स्ते वाचंयमवृत्तमोऽपि मुनयो मौनव्रतं त्याजिता:॥

(तृतीय पाद समाप्त)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्थ पाद

टिप्पणियाँ

इस पाद में प्रारम्भ में धात्वादेश कहे हैं। अनन्तर शौरसेनी इत्यादि भाषाओं के वैशिष्ट्य कहे हैं।

धात्वादेशों में मूल धातु तथा प्रेरक धातु के आदेश दिए हैं। इन धात्वादेशों में से कुछ सम्पूर्ण देशी हैं, तो झा, गा (सूत्र ४·६), ठा (४·१६), अल्ली (४·५४), इत्यादि कुछ का संस्कृत से सम्बन्ध जोड़ा जा सकता है।

४·१ इदितः—जिनमें से इ इत् है। उदा०—कथि (कथ्+इ) में (= इत्) इत् है। प्रायः सर्व धात्वादेश वैकल्पिक हैं।

४·२ बोल्ल—मराठी में बोल, बोलणे। एतेचान्यै······प्रतिष्ठन्तामिति—अन्य वैयाकरणों ने धात्वादेशों को देशी शब्द माना है। तथापि वे धात्वादेश के स्वरूप में यहाँ देने का कारण हेमचन्द्र ऐसा देता है—अन्य धातुओं के समान इन धात्वादेशों को भी भिन्न-भिन्न प्रत्यय लगकर उनके भिन्न-भिन्न रूप सिद्ध हो। और वैसे वे होते ही हैं। उदा०—वज्जर धात्वादेश से वज्जरिओ (क०भू०धा०वि०), वज्जरिऊण (पू०का०धा०अ०), वज्जरणं (संज्ञा), वज्जरन्त (व०का०धा०वि०), वज्जरिअव्वं (वि०क०धा०वि०) इत्यादि इत्यादि।

४·४ गलोपे—धात्वादेश में से ग का लोप सूत्र १·१७७ के अनुसार होगा।

४·५ बुभुक्षें······क्विबन्तस्य—आचार अर्थ में होने वाले क्विप् प्रत्यय से अन्त होनेवाले बुभुक्ष धातु को। आचार अर्थ में क्विप् प्रत्यय संज्ञाओं को जोड़कर नाम धातु सिद्ध किए जाते हैं। उदा०—अश्वति।

४·६ णिज्झाइ—√निर्+ध्यै। झाणं गाणं—झागा से साधित संज्ञाएँ।

४·७ जाण (धातु) से जाणिअ यह क०भू०धा०वि०, जाणि ऊण यह पू०का० धा०अ०, और जाणणं यह संज्ञा सिद्ध हुए हैं। णाऊण—यह सूत्र २·४२ के अनुसार, ज्ञा धातु से बने हुए णा के पू०का०धा०अ० है।

४·९ सद्दहमाणो—सद्दह धातु का व०का०धा०वि० (सूत्र ३·१८१ देखिए)।

४·१० घोट्ट—मराठी में घोट।

४·१६ ठाअइ—सूत्र ४·२४० के अनुसार ठा धातु के आगे 'अ' आया है। पट्ठिओ··उट्ठाविओ—ये सर्व क०भू०धा०वि० चिट्ठिऊण—यह चिट्ट धातु का पू०का०धा०अ० है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·१७ उट्ठइ—मराठी में उठणे।

४·२० झिज्जइ—मराठी में झिजणे।

४·२१-५५ इन सूत्रों में प्रेरक धातुओं के धात्वादेश कहे हैं।

४·२१ ण्यन्त—'णि' इस प्रेरक प्रत्यय से अन्त होनेवाला, प्रेरक प्रत्ययान्त। णत्वेणूमइ—सूत्र १·२२८ के अनुसार नूमइ में से न का ण होता है।

४·२२ पाडेइ—मराठी में पाडणे।

४·२७ ताडेइ—मराठी में ताडणे, ताडन।

४·३० भामेइ···भभावेइ—सूत्र ३·१५१ देखिए।

४·३१ नासवइ, नासइ—मराठी में नासवणे, नासणे।

४·३२ दावइ दक्खइ—मराठी में दावणे, दाखवण।

४·३३ उग्घाडइ—मराठी में उघडणे।

४·३७ पट्ठवइ, पट्ठावइ—मराठी में पाठवणे।

४·३८ विण्णवइ—मराठी में विनवणे।

४·४३ ओग्गालइ—मराठी में उगालणे।

४·५३ भाइअ, बीहिअ—भा और बहि धातु के क०भू०धा०वि०।

४·५६ विरा—मराठी में विरणे।

४·५७ रुञ्झइ—मराठी में रुंजन, रुंजी।

४·६० हो—मराठी में होणे। हिंदी में होना। पक्षे भवइ—विकल्प पक्ष में भू धातु का भव होकर भवइ रूप होता है। •विहवो—वि+भू धातु से विहव यह संज्ञा। भविउं—भव धातु से साधा हुआ हेत्वर्थक धातुसाधित तुमन्त अव्यय।

४·६१ हुन्तो—हु धातु का व९का०धा०वि०।

४·६३ चिचिअ—सूत्र २·१८४ देखिए।

४·६९ मन्युनाकरणेन—करण होने वाले मन्युसे। करण वह है जो क्रिया के सिद्धि के बारे में अत्यन्त उपकारक होता है।

४·७६ ह्रस्वत्वे—सूत्र १·८४ के अनुसार, ह्रस्व होने पर।

४·८६ त्वजनेरपि चयइ—त्यज् शब्द में सूत्र २·१३ के अनुसार, 'त्य' का 'च' और सूत्र ४·२३९ के अनुसार अन्त मे -अ' आकर चय वर्णान्तर होता है। तरतेरपि तरइ—सूत्र ४·२३४ के अनुसार, तॄ धातु का वर्णान्तर तर होता है।

४·९६ सिम्पइ—मराठी में शिंपणे।

४·१०१ बुड्डइ—मराठी में बुडणे, बुडी।

४·१०४ तेअणं—तिज् धातु से सिद्ध की गई संज्ञा।

४·१०५ फुस, पुस—मराठी में फुसणे, पुसणे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·१०७ अणुवच्चइ--√अणु+वच्च। सूत्र ४·२५ के अनुसार व्रज् धातु का वच्च वर्णान्तर होता है।

४·१०९ जुप्प--मराठी में जुपणे, जुपणी, जुंपणे।

४·१११ उवहुंजइ--√उव + भुंज। यहाँ भ का ह हुआ है।

४·११६ तोडइ, तट्टइ, खुट्टइ--मराठी में में तोडणे, तुटणे, खुटणे, खुंटणे।

४·११७ घुलइ—मराठी में घुलणे। घोलइ–मराठी में घोलणे, घोल। धुम्मइ–हिन्दी में घूमना।

४·११९ अट्ट—मराठी में आटणे। कढइ—मराठी में कढणे।

४·१२० गण्ठी—यह संज्ञा है। मराठी में गाठ। हिन्दी में गाँठ।

४·१२१ धुसाल—मराठी में घुसकणे।

४·१२२ इकारो······ग्रहार्थं—सूत्र में ह्लाद् शब्द को इकार जोड़कर ह्लादि ऐसा शब्द प्रयुक्त किया है। यह इकार इस शब्द में सूत्र ४·१ के अनुसार इत् के स्वरूप में प्रयुक्त नहीं है। किन्तु प्रेरक प्रत्ययान्त ह्लाद् धातु का भी यहाँ ग्रहण होता है, ऐसा दिखाने के लिए इकार प्रयुक्त किया गया है।

४.१२५ अच्छिन्दइ—सूत्र ४·२१६ के अनुसार, आच्छिद् शब्द का वर्णान्तर आच्छिन्द होता है, सूत्र १·८४ के अनुसार, संयुक्त व्यञ्जन के पिछले आ का ह्रस्व होकर अच्छिन्दइ होता है।

४·१२६ मलइ—मराठी में मलणे।

४·१२७ चुलुचुल—मराठी में चुरुचुरु (बोलणे)।

४·१३० झडइ—मराठी में झडणे। यहाँ शद् (१५०) शीयति धातु है।

४·१२६ जाअइ—सूत्र ४·२४० के अनुसार जा के आगे अ आया है।

४·१३७ विरल्लइ—मराठी में विरल (होणे)।

४·१३९ कृतगुणस्य--जिसमें गुण किया है उसका इ-ई, उ-ऊ, ऋ-ॠ, ऌ इनके अनुक्रम से ए, ओ, अर्, अल् होना यानी गुण होना।

४·१४३ ह्रस्वत्वे—सूत्र १·८४ के अनुसार ह्रस्व होने पर।

४·१४५ अक्खिवइ—सूत्र ४·२३९ के अनुसार, आक्षिप् धातु के अन्त में 'अ' आकर हुए आक्खिव वर्णान्तर में सूत्र १·८४ के अनुसार,आ का ह्रस्व होकर अक्खिव वर्णान्तर हुआ है।

४·१४६ लोट्टइ—हिन्दी में लेटना।

४·१४८ वडवड—मराठी में बडबड, बडबडणे। हिन्दी में बडबडाना।

४·१४९ लिम्प--मराठी में लिंपणे।

४·१५२ पलीवइ—सूत्र १·२२१ के अनुसार प्रदीप् शब्द में द का ल होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·१५७ जम्भाअइ—सूत्र ४·२४० के अनुसार जम्भा धातु के आगे 'अ' आया है।

४·१६० अक्कमइ—सूत्र ४·२३९ और १·८४ के अनुसार यह वर्णान्तर होता है।

४·१६२ हुम्मइ··· ···भविष्यन्ति—'हुम्म गतौ' इस धातु पाठ के अनुसार, 'जाना' इस अर्थ में हुम्म धातु है; उससे हुम्मइ इत्यादि रूप होंगे।

४·१७० तुवरन्तो जअडन्तो—ये शब्द तुवर और ज अ ड इन धातुओं के व० का० धा० वि० हैं।

४·१७१ त्यादौ शतरि—धातु को लगने वाले प्रत्यय (त्यादि) और शतृ प्रत्यय आगे होने पर। शतृ प्रत्यय के लिए सूत्र ३·१८१ देखिए। तूरन्तो—तूर धातु का व० का० धा० वि०।

४·१७२ अत्यादौ—(शब्द में से) आदि अ (अत्) आगे होने पर। उदा०—त्वर् + अन्त = तु + अन्त = तुरन्त। तुरिओ—तुर धातु का क० भू० धा० वि०।

४·१७३ खिरइ झरइ पज्झरइ—मराठी में खिरणे, झरणे, पाझरणे।

४·१७७ फिट्टइ चुक्कइ भुल्लइ—मराठी में फिटणे, चुकणे, भुलणे।

४·१८१ देक्खइ—मराठी में देखण। निज्झाअइ··· ···भविष्यति—निर्ध्यै धातु से होने वाले निज्झा इस वर्णान्तर के आगे सूत्र ४·२४० के अनुसार अन्त में अ (अत्) आकर, निज्झाअ ऐसा शब्द होता है। उससे निज्झाअइ रूप होगा।

४·१८२ छिवइ—मराठी में शिवणे।

४·१८४ पीसइ—मराठी में पिसणे।

४·१८६ भुक्क—मराठी में भुकणे।

४·१८७ कड्ढइ—मराठी में काढणे।

४·१८९ ढुण्ढुल्ल ढण्ढोल्लइ—मराठी में धांडोकणे।

४·१९१ चोप्पड—मराठी में चोपडणे। मक्खइ—मराठी में माखणे।

४·१९४ तच्छइ—मराठी में तासणे।

४·१९७ परिल्हसइ—यहाँ ल्हस के पीछे परि उपसर्ग आया है।

४·१९८ डरइ—हिन्दी में डरना।

४·२०२ ह्रस्वत्वे—सूत्र १·८४ के अनुसार, ह्रस्व होने पर।

४·२०६ चडइ—मराठी में चढणे।

४·२०७ घुम्मइ—मराठी में घुम्म (होणे)।

४·२०८ डहइ—सूत्र १.२१८ देखिए।

४·२१० गेण्हिअ—सूत्र २·१४६ के अनुसार, अ प्रत्यय आता है, और उसके पूर्व सूत्र ३·१५७ के अनुसार अन्त्य अ का ए होता है। घेत्तूण घेत्तुआण—सूत्र २·१४६ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·२११ वोत्तूण—सूत्र २·१४६ देखिए।

४·२१४ अकार्षीत्······चकार—सूत्र ३·१६२ ऊपर की टिप्पणी देखिए। करिष्यति कर्ता—कृ धातु के स्य और ता भविष्यकाल के रूप।

४·२१९ सडइ—मराठी में सडणे। पडइ—मराठी में पडणे।

४·२२० कढइ—मराठी में कढणे। वड्ढइ—मराठी में वाढणे। परिअड्ढइ—यहाँ कड्ढ के पूर्व परि उपसर्ग आया है। लायण्णं—सूत्र १·१७७,१८० के अनुसार। वृधेः कृतगुणस्य—जिसमें गुण किया है ऐसे वृध् धातु का।

४·२२१ वेष्ट वेष्टने—यह धातुपाठ है। वेष्टन अर्थ में वेष्ट धातु है। वेढइ—मराठी मे वेढणे। वेढिज्जइ—वेढ धातु का कर्मणि रूप।

४·२२४ बहुवचनं···सरणार्थम्—स्विद् इस प्रकार के धातु साहित्यिक प्रयोग के अनुसार करके निश्चित करना है, यह दिखाने के लिए 'स्विदाम्' यह (स्विद् शब्द का) बहुवचन प्रयुक्त है।

४·२२६ रोवइ—यहाँ रुद् धातु में से उ का गुण हुआ है। सूत्र ४·२३७ देखिए।

४·२२८ खाइ—मराठी में खाणे, हिन्दी में खाना। खाअइ—सूत्र ४·२४० के अनुसार खा धातु के आगे अ आया है। खाहिइ खाउ—खा धातु के भविष्यकाल और आज्ञार्थ के रूप। धाइ धाहिइ धाउ—धा धातु के क्रम से वर्तमानकाल, भविष्यकाल और आज्ञार्थ इनके रूप।

४·२३० परिअट्टइ—यहाँ अट्ट के पीछे परि उपसर्ग आया है। पलोट्टइ—यहाँ प (प्र) उपसर्ग है।

४·२३१ फुट्टइ—मराठी में फुटणे।

४·२३२ पमिल्लइ······उम्मीलइ—यहाँ प्र, ति, सम् और उद् ये उपसर्ग होते हैं।

४·२३३ निण्हवइ निहवइ—यहाँ नि उपसर्ग है। पसवइ—यहाँ प (प्र) उपसर्ग है।

४.२३४ ऋवर्ण—ऋ और ॠ ये वर्ण स्वर।

४·२३७ युवर्ण—सूत्र १·६ ऊपर की टिप्पणी देखिए। क्ङित्यपि······भवति—क्ङित् यानी कित् और ङित् प्रत्यय यानी जिनमें से क और ङ् इत् हैं ऐसे प्रत्यय। संस्कृत में इन प्रत्ययों के पीछे होने वाले इ और उ इन स्वरों का गुण अथवा वृद्धि नहीं होती है। परन्तु प्राकृत में मात्र ये प्रत्यय आगे होने पर भी पिछले इ और उ इन स्वरों का गुण होता है।

४·२३८ हवइ—सूत्र ४·६० देखिए। चिणइ—सूत्र ४·२४१ देखिए। रुवइ रोवइ—सूत्र ४·२२६ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·२३९ संस्कृत में से व्यञ्जनान्त धातुओं के अन्त में अ स्वर आकर वे अकारान्त होवे हैं। कुणइ—कुण यह कृ धातु का धात्वादेश इस स्वरूप में सूत्र ४·६५ में कहा हुआ है। तथाही, कृ धातु व्यञ्जनान्त नही है; इसलिए कुण यह उदाहरण यहाँ योग्य दिखाई नहीं देता है। हरइ करइ—हृ और कृ धातुओं से हर और कर होते हैं (सूत्र ४·२३४ देखिए) । हृ और कृ धातु व्यञ्जनान्त नहीं हैं। इसलिए ये उदाहरण यहाँ योग्य नहीं हैं। शबादीनाम्—शप्+आदीनाम्।

४·२४० चिइच्छइ—सूत्र २·२१ देखिए। दुगुच्छइ—सूत्र ४·४ देखिए।

४·२४१ एषां···ह्रस्वो भवति—आगे 'ण' आने पर, पिछला स्वर दीर्घ हो, तो वह ह्रस्व हो जाता है। उदा०—लु+ण=लुण। उच्चिणइ उच्चेइ—यहाँ उद् उपसर्ग है।

४·२४२ द्विरुक्त वकारागम—द्विरुक्त वकार का आगम यानी 'व्व' का आगम। क्यस्य लुक्—क्य प्रत्यय का लोप। क्य प्रत्यय के लिए सूत्र ३·१६० देखिए।

४·२४३ संयुक्तो मः—संयुक्त म यानी म्म।

४·२४४ द्विरुक्तो मः—यानी म्म। हन्ति—यह हन् धातु का कर्तरि रूप है। हन्तव्वं हन्तूण हओ—ये हन् धातु के अनुक्रम से वि० क० धा० वि०, पू० का० धा० अ० और भू० धा० के रूप हैं।

४·२४५ द्विरुक्तो भः—द्विरुक्त भ यानी ब्भ।

४·२४६ द्विरुक्तः झः—ज्झ ऐसा द्वित्व।

४·२५१ विढविज्जइ—विढव धातु अर्ज् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१०८)।

४·२५२ जाणमुण—ये ज्ञा धातु के आदेश हैं (सूत्र ४·७)।

४·२५४ आङ्—आ उपसर्ग। आढवीअइ—आढव इस धत्वादेश को (सूत्र ४·१५५) सूत्र ३·१६० के अनुसार, ईअ प्रत्यय लगा कर बना हुआ कर्मणि रूप है।

४·२५५ स्निह्यते सिच्यते—स्निह्, सिच् धातु के कर्मणि रूप हैं।

४·२५७ छिविज्जइ—छिव धात्वादेश का (सूत्र ४.१८२) कर्मणि रूप।

४·२५८ निपात्यन्ते—सूत्र २·१७४ ऊपर की टिप्पणी देखिए। इस सूत्र के नीचे वृत्ति में कहे हुए क० भू० धा० वि० के निपात प्रायः देशी शब्द हैं।

४·२५९ संस्कृत में से कुछ धातुओं को प्राकृत में कौन से भिन्न अर्थ प्राप्त हुए हैं, वह यहाँ कहा है।

४·२६०-२८६ इन सूत्रों में शौरसेनी भाषा के वैशिष्ट्य कहे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·२६० अनादि असंयुक्त त का द का होना यह शौरसेनी का प्रमुख वैशिष्ट्य है। करेध–सूत्र ४·२६८ देखिए। तधा नधा–सूत्र ४·२६७ देखिए। भोमि–सूत्र ४·२६९ देखिए। अय्य उत्तो–र्य का य्य होना इसलिए सूत्र ४·२६६ देखिए।

४·२६३ इनो नकारस्य—इन् में से नकार को। यह इन् इन् से अन्त होने वाले (इन्नन्त) शब्दों में से है। उदा०—कञ्चुकिन्।

४·२६४ नकारस्य—यह नकार शब्द में से अन्त्य नकार है। उदा०—राजन्। भयवं—संस्कृत में भवन् ऐसा सम्बोधन का रूप है। भयव—यहाँ अन्त्य नकार का लोप हुआ है।

४·२६५ अनयोः सौ··· ···भवति—भवत् और भगवत् के प्रथमा ए० व० में भवान् और भगवान् ऐसे रूप संस्कृत में होते हैं। समणे महावीरे, पागमासणे—ये प्रथमा एक वचन के रूप सूत्र ४·२८७ के अनुसार होते हैं। संपाइ अवं कयवं—संपादितवान्, कृतवान्। ये क० भू० धा० वि० को वत् प्रत्यय जोड़ कर बने हुए कर्तरि रूप हैं।

४·२६६ पक्षे—र्य का य्य न होने पर, विकल्प पक्ष में (माहाराष्ट्री) प्राकृत के के समान र्य का ज्ज होता है।

४·२६७ अनादि असंयुक्त थ का ध होना, यह शौरसेनी का वैशिष्ट्य है।

४·२७० पक्षे—विकल्प पक्ष में (माहाराष्ट्री) प्राकृत के समान अपुव्व ऐसा वर्णान्तर होता है।

४·२७१ इय दूण—(माहाराष्ट्री) प्राकृत में क्त्वा प्रत्यय का अ आदेश है (सूत्र २·१४६); उसके पूर्व सूत्र ३·१५७ के अनुसार धातु के अन्त्य का इ होता है; इन दोनों के संयोग से इय (इअ) बना हुआ ऐसा दिखाई देता है। (महाराष्ट्री) प्राकृत में से क्त्वा के तूण आदेश को दूण होता है ऐसा कहा जा सकता है। भोत्ता··· ···रन्ता—इन रूपों में होने वाला क्त्वा का त्ता आदेश हेमचन्द्र ने स्वतंत्र रूप से नही कहा है।

४·२७३-२७४ वर्तमानकाल में तृतीय पुरुष एकवचन के दि और दे प्रत्यय हैं।

४·२७३ त्यादीनां······द्यस्य—सूत्र ३·१३९ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

४·२७५ स्सि—यह शौरसेनी में भविष्यकाल का चिह्न है।

४·२७६ य्येव—सूत्र ४·२८० देखिए।

४·२७७ दाणिं—इदानीम् शब्द में से आद्य इ का लोप हुआ।

४·२७९ यहाँ कहा हुआ णकार का आगम यह शौरसेनी का एक वैशिष्ट्य है। नवीन रूप में आने वाले इस 'ण्' में अगले इ अथवा ए मिश्र हो जाते हैं। उदा०—जुत्तं-ण्-इमं = जुत्तं णिमं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·२८१ निपात—यहाँ निपात शब्द का अर्थ अव्यय है।

४·२८२ हगे—सूत्र ४-३०१ देखिए।

४·२८४ भवं—सूत्र ४·२६५ देखिए।

४·२८६ अन्दावेदी जुवदिजणो—सूत्र १·४ देखिए। मणसिला—सूत्र १·२६, ४३ देखिए।

४·२८७-३०२ इन सूत्रों में मागधी भाषा के वैशिष्ट्य कहे हैं।

४·२८७ अकारान्त पुल्लिंगी संज्ञा का प्रथमा एकवचन एकारान्त होना, यह मागधी का एक प्रमुख विशेष है। एशे मेशे, पुलिशे—स (और ष) का श और र का ल होना, इनके लिए सूत्र ४·२८८ देखिए। यदपि……लक्षणस्य—जैनों के प्राचीन सूत्र'ग्रन्थ अर्धमागध भाषा में हैं, ऐसा वृद्ध और विद्वान् लोगों ने कह रखा है। इस अर्ध मागध से मागधी का सम्बन्ध बहुत कम है। मागधी के बारे में कहा हुआ सूत्र ४·२८७ इतना ही नियम अर्धमागध को लगता है; बाद के सूत्रों में कहे हुए मागधी के विशेष अर्धमागध में नहीं होते हैं।

४·२८८ र का ल और स (ष) का श होना, यह मागधी का एक प्रमुख विशेष है। दन्त्य सकार—दन्त इस उच्चारण स्थान से उच्चारण किया जाने वाला सकार तालव्य शकार—तालु इस उच्चारण स्थान से उच्चारित होनेवाला शकार। श्लोक १—जल्दी में नमन करने वाले देवों के मस्तकों से गिरे हुए मन्दार फुलों से जिसका पद युगुल सुशोभित हुआ है, ऐसा (वह) जिन (महा-) वीर मेरे सर्व पाप जंआल क्षालन करे। इस श्लोक में लहश, नमिल, शुल, शिल, मंदाल, लामिद, वलि, शयल इन शब्दों में यथासम्भव र और स क्रम से ल और श हुआ है। वीलयिण—जिन वीर यानी महावीर। जैन धर्म प्रकट करने वाले चौबीस जिन तीर्थंकर होते हैं। राग इत्यादि विकार जितने वाला 'जिन' होता है। वीर शब्द यहाँ महावीर शब्द का संक्षेप है। महावीर जैनों का २४वाँ तीर्थंकर माना जाता है। •यिये, •यम्बालं—ज का य होना, इसलिए सूत्र ४·२९२ देखिए। अवय्य—सूत्र ४·२९२ देखिए।

४·२८९-२९८ इन सूत्रों में मागधी में से संयुक्त व्यञ्जनों का विचार है। उससे यह स्पष्ट होता है कि (माहाराष्ट्री) प्राकृत में न चलने वाले ऐसे स्ख, स्न, स्प, स्ट, स्त, श्च, स्क, ष्ठ और ञ्ज ये संयुक्त व्यञ्जन मागधी में चलते हैं।

४·२९२ अय्युणे……गय्यदि, •वय्यिदे—यहाँ प्रथम र्य का ज्ज हुआ, फिर ज्ज का य्य हो गया है।

४·२९३ द्विरुक्तो ञः—द्वित्वयुक्त ञ यानी ञ्ञ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·२९५ तिरिच्छि—सूत्र २·१४३ देखिए। पेस्कदि—सूत्र ४·२९७ देखिए।

४·२९६ जिह्वामूलीयः—सूत्र २·७७ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

४·२९८ स्थाधातोः······त्यादेशः—सच कहे तो स्था धातु को तिष्ठ ऐसा आदेश हेमचन्द्र ने नहीं कहा है।

४·२९९ हगे—सूत्र ४·३०१ देखिए। एलिश—सूत्र १·१०५, १४२ और ४·२८८ देखिए।

४·३०० अनुनासिकान्तः डिद् आहादेशः—अनुनासिक से अन्त होने वाला डित् आह् आदेश यानी डित् आहँ ऐसा आदेश।

४·३०२ अभ्यूह्य—विचार करकर।

४·३०३-३२४ इन सूत्रों में पैशाची भाग का विचार है।

४·३०३ पैशाची में मागधी के समान ज्ञ का ञ्ञ होता है।

४·३०५ पैशाची में मागधी के समान न्य और ण्य का ञ्ञ होता है।

४·३०६ ग्रामीण मराठी में ण का न होता है। हिंदी में तो न का ही उपयोग है।

४·३०७ तकारस्यापि······बाधनार्थम्—पैशाची में प्रायः शौरसेनी के समान कार्य होता है (सूत्र ४·३२३ देखिए)। तथापि शौरसेनी के समान पैशाची में त का द न होते, त वैसा ही रहता। (माहाराष्ट्री) प्राकृत में त् को अनेक आदेश होते हैं (उदा०—१·१७७, २०४-२१४ देखिए)। ये कोई भी आदेश पैशाची में नहीं होते हैं। इसलिए तकार से त के बिना अन्य सर्व आदेशों का बाध करने के लिए, प्रस्तुत सूत्र में तकार का तकार होता है, ऐसा विधान किया है।

४·३०८ मराठी में प्राय: ल का ळ होता है।

४·३०९ न कगच······योगः—प्राकृत में श् और ष् का स् होता है, वैसा पैशाची में वह होता है, ऐसा इस सूत्र में क्यों कहा है, इस प्रश्न का उत्तर इस वाक्य में दिया है। सूत्र ४·३२४ कहता है कि माहाराष्ट्री प्राकृत को लागू पड़ने वाले सूत्र १·१७७-२६५ ये पैशाची को लागू नहीं पड़ते। इन निषिद्ध किए सूत्रों में ही श और ष का स होता है, यह कहने वाला सूत्र १·२६० है। इसलिए यह १·२६० सूत्र पैशाची को नहीं लागू होगा। परन्तु पैशाची में तो श और ष का स होता है। इसलिए सूत्र ४·३२४ में से बाधक नियम का बाध करने के लिए प्रस्तुत सूत्र में नियम (योग) कहा है।

४·३११ टोः स्थाने तुः—टु और तु ये उदित् (जिनमें उ-उत्-इत् है) अक्षर हैं। उ के पिछले वर्ण से सूचित होने वाला व्यञ्जनों का वर्ग ये उदित् अक्षर दिखाते हैं। उदा०—टु = ट वर्गीय व्यञ्जन तु = त वर्गीय व्यञ्जन।

४·३१२ तून—प्राकृत में तूण में सूत्र ४·३०६ के अनुसार ण का न हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·३१३ ष्ट्वा—संस्कृत में कुछ धातुओं को क्त्वा प्रत्यय लगने पर ष्ट्वा होता है। उदा०—दृष्ट्वा, इत्यादि।

४·३१४ रिय सिन सट—र्य, स्न और ष्ट इन संयुक्त व्यञ्जनों में स्वरभक्ति होकर ये आदेश बने हुऐ हैं।

४·३१५ क्य-प्रत्यय—सूत्र ३·१६० ऊपर की टिप्पणी देखिए।

४·३१६ डीर—डित् ईर। य्येव—सूत्र ४·२८० देखिए।

४.३१७ अञ्ञातिसो—अन्यादृश शब्द में सूत्र ४·३०५ के अनुसार न्य का ञ्ञ हुआ है।

४·३१८-३१९—पैशाची में वर्तमान काल के तृतीय पुरुष एकवचन में और ते ऐसे प्रत्यय हैं।

४·३२० एय्य······स्सिः—शौरसेनी के समान पैशाची में भविष्यकाल में स्सि (सूत्र ४·२७५) न आते, एय्य आता है।

४·३२२ पैशाची में तद् और इदम् सर्वनामों के पुल्लिंगी तृतीया एकवचन 'तेन' और स्त्रीलिंगी तृतीया एकवचन 'नाए' ऐसा होता है।

४·३२३ अध······हुवेय्य—अध शब्द में थ का ध (सूत्र ४·२६७) और भयवं (सूत्र ४·२६५) में शौरसेनी के समान हैं। एवं विधाए···कतं—कधं शब्द में शौरसेनी के समान थ का ध है। एतिसं······दद्धून—यहाँ पूर्व शब्द का पुरव वर्णान्तर शौरसेनी के समान है (सूत्र ४·२७०)। भगवं······लोक—भगवं (सूत्र ४·२६४) और दाव (सूत्र ४·२६२) शौरसेनी के समान हैं। ताव च···राजा—य्येव शब्द शौरसेनी के समान (सूत्र ४·२८०) है।

४३२४ मकरकेतू, सगर पुत्तवचनं—यहाँ क ग च त प और व इनका लोप सूत्र १·१७७ के अनुसार नहीं हुआ हैं। विजयसेनेन लपितं—यहाँ सूत्र १·१७७ के अनुसार ज, त और य का लोप नहीं हुआ, तथा सूत्र १·२२८ के अनुसार न का ण नहीं हुआ, और सूत्र १·२३१ के अनुसार प का व नहीं हुआ है। मतनं—द् का लोप (सूत्र १·१७७) और न का ण (सूत्र १·२२८) नहीं हुआ है। पापं—प् का लोप (सूत्र १·१७७) अथवा प का व (सूत्र १·२३१) नहीं हुआ है। आयुधं—य् का लोप (सूत्र १·१७७) और ध का ह (सूत्र १·१८७) नहीं हुआ है। तेवरो—व् का लोप (सूत्र १·१७७) नहीं हुआ है।

४·३२५-३२८ इन सूत्रों में चूलिका पैशाचिक भाषा का विचार है। (यह पैशाची की उपभाषा है)।

४·३२५ वर्गाणाम्—वर्ग में से व्यञ्जनों का। तुर्य—चौथा, चतुर्थ। क्वचिल्ला-क्षणि··· ताठा—व्याकरण के नियमानुसार आने वाले व्यञ्जनों के बारे में भी इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र से नियम क्वचित् लागू पड़ता है। उदा०—प्रतिभा–पडिमा (सूत्र १·२०६ के अनुसार) पटिमा; दंष्ट्रा-दाढा (सूत्र १·१३९ के अनुसार) ताठा।

४·३२६ श्लोक १–प्रेम में क्रुद्ध हुए पार्वती के पाँवों के (दस) नखों में जिसका प्रतिबिम्ब पड़ा है (इसलिए) दस नखरूपी आयने में (पड़े हुए दस और मूल का एक ऐसे) ग्यारह रूप (शरीर) धारण करने वाले शंकर को नमस्कार करो। इस श्लोक में, गोली, चलण, लुछ इन शब्दों में र का ल हुआ है। श्लोक २––बाचते समय, सहजतया रखे गये जिसके पाँव के आघात से पृथ्वी थर्रा उठी, समुद्र उफान उठे और पर्वत गिर पड़े, उस शंकर को नमस्कार करो। इस श्लोक में हल शब्द में र का ल हुआ है।

४·३२८ प्राक्तनपैशाचिकवत्—पहले (सूत्र ४·३०३-३२४ में कहे हुए पैशाची के समान।

४·३२९-४४६ इन सूत्रों में अपभ्रंश भाषा का विचार है। शौरसेनी इत्यादि भाषाओं की अपेक्षा यह विचार विस्तृत है। तथा यहाँ प्राधान्यतः पद्य उदाहरण बहुत बड़े प्रमाण में दिए गए हैं।

४·३२९ संस्कृत में से शब्द अपभ्रंश में आते समय, उनमें स्वरों के स्थान पर अन्य स्वर प्रायः आते है। उदा०—पृष्ठ–पट्ठि, पिट्ठ, पुट्ठि इत्यादि।

४·३३० श्लोक १—प्रियकर श्यामल (वर्णी) है; प्रिया चम्पक वर्णी है; कसौटी के (काले) पत्थर पर खिंची हुई सुवर्ण रेखा के समान वह दिखाई देती है।

यहाँ प्रथमा ए० व० में ढोल्ला और सामला में अ का आ यानी दीर्घ स्वर हुआ है, और धण तथा 'रेह शब्दों में आ का अ यानी ह्रस्व स्वर हुआ है।

ढोल्ल (देशी)—विट, नायक, प्रियकर। धण—धन्या, प्रिया (प्रियाया धण आदेशः। टीकाकार) नाइ—सूत्र ४·४४४ देखिए। कसवट्टइ––सूत्र ४·३३४ देखिए।

श्लोक २––हे प्रिय, मैंने तुझे कहा था (शब्दशः––निवारण किया था) कि दीर्घकाल मान मत कर; (कारण) नींद में रात बीत जायेगी और झटपट प्रभात (–काल) होगा।

यहाँ सम्बोधन में, ढोला में अ का आ यानी दीर्घ स्वर हुआ है।

मइँ––सूत्र ४·३७७ देखिए। अपभ्रंश में अनेक अनुस्वार सानुनासिक उच्चारित होते हैं; वे अक्षर के ऊपर के ँ इस चिह्न से बताए जाते हैं। तुहुँ—सूत्र ४·३६८ देखिए। करु––सूत्र ४·३८७ देखिए। निद्दए—सूत्र ४·३४९ देखिए। रत्तडी–– सूत्र ४·४२९, ४३१ देखिए। दडवड––(देशी)––शीघ्र, झटपट। माणु विहाणु–– सूत्र ४·३३१ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्लोक ३—हे बिटिया, मैंने तुझसे कहा था कि बाँकी दृष्टि मत कर। (कारण) हे बिटिया, (यह बाँकी दृष्टि) नोकदार भाले के समान (दूसरों के) हृदय में प्रविष्ट होकर (उन्हें) मारती है।

यहाँ स्त्रीलिंग में दिट्ठि, पइट्ठि, भणिय शब्दों में दीर्घ का ह्रस्व स्वर हुआ है। बिट्टीए—मराठी में। हिन्दी में बेटा, बेटी। जिवँ—सूत्र ४·४०१, ३९७ देखिए। हि अइ—सूत्र ४·३३४ देखिए।

श्लोक ४—ये वे घोड़े हैं; यह वह (युद्ध-) भूमि है; ये वे तीक्ष्ण तलवारें हैं; जो घोड़े को बाग/लगाम (पीछे) नहीं खिचता है (और रणक्षेत्र पर युद्ध करते रहता है, उसके) पौरुष की परीक्षा यहाँ होती है।

यहाँ प्रथमा अ० व० में घोडा, णिक्षिआ शब्दों में ह्रस्व स्वर का दीर्घ स्वर हुआ है, और ति, खग्ग, वग्ग शब्दों में दीर्घ स्वर का ह्रस्व हुआ है। ए इ—सूत्र ४·३६३ देखिए। ति—ते शब्द में ए ह्रस्व होकर इ हुआ है। ए ह—सूत्र ४·३६२ देखिए। एत्थु—सूत्र ४·४०५ देखिए।

४·३३१ भुवन-भयंकर ऐसा रावण शंकर को सन्तुष्ट करके रथ पर आरूढ होकर निकला। (ऐसा लग रहा था) मानों देवों ने ब्रह्मदेव और कार्तिकेय का ध्यान करके और उन दोनों को एकत्र करके उस (रावण) को बनाया था।

यहाँ दहमुहु, °भयंकरु, °संकरु, णिग्गउ, चडिअउ, घडिअउ, इन प्रथमा एकवचनों में अ का उ हुआ है। चउमुहु और छम्मुहु में द्वितीया एकवचन में अ का उ हुआ है। रहवरि—सूत्र ४·३२४ देखिए। चडिअउ—चडशब्द आरुह् धातु का आदेश है (सूत्र ४·२०६)। झाइवि—सूत्र ४·४३९ देखिए। एक्कहि—सूत्र ४·३५७ देखिए। णावइ—सूत्र ४·४४४ देखिए। दइवें—सूत्र ४·३३३, ३४२ देखिए।

४·३३२ श्लोक १—जिनका स्नेह नष्ट नही हुआ है ऐसे स्नेह से परिपूर्ण व्यक्तियों के बीच लाख योजनों का अन्तर होने दो; हे सखि, (स्नेह नष्ट न होते) जो शत वर्षों के बाद भी मिलता है, वह सौख्य का स्थान है।

यहाँ जो और सो इन प्रथमा एकवचनों में अ का ओ हुआ है। °लक्खु, ठाउ—सूत्र ४·३११ देखिए। °सएण—सूत्र ४·३३३, ३४२ देखिए। °सोक्खहँ, °निवट्टाहँ—सूत्र ४·३३९ देखिए।

श्लोक २—हे सखि, (प्रियकर के) अंग से (मेरा) अंग मिला नहीं (और) अधर से अधर मिला नहीं; (मेरे) प्रियकर के मुख-कमल देखते-देखते ही (हमारी) सुरत-क्रीडा समाप्त हो गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ अंगु, मिलिउ, सुरउ शब्दों में अ का ओ नहीं हुआ है। अंगहिँ—सूत्र ४·३३५ देखिए। हुलि--हुले (सूत्र २·१९५ देखिए) शब्द में ए का ह्रस्व स्वर हुआ है। अहरेँ--सूत्र ४·३३३, ३४२ देखिए। पिअ--सूत्र ४·३४५ देखिए। जोअन्तिहेँ--सूत्र ४·३५० देखिए। जो अ शब्द का अर्थ देखना है। एम्वइ--सूत्र ४·४२० देखिए।

४·३३३ श्लोक १--प्रवास को निकलने वाले प्रियकर ने (अवधि के रूप में) जो दिन दिए थे (= कहे थे), उन्हें गिनते-गिनते नखों से (मेरी) अंगुलियाँ जर्जरित हो गई हैं।

यहाँ दइएँ में अ का ए हुआ है। महु —सूत्र ४·३७९ देखिए। दिअहडा--सूत्र ४·४२९ देखिए। दइएँ पवसंतेण नहेण--सूत्र ४·३४२ देखिए। गणन्तिएँ--सूत्र ३·२९ देखिए। अंगुलिउ जज्जरिआउ—सूत्र ४·३४८ देखिए। ताण—यह रूप (माहाराष्ट्री) प्राकृत में षष्ठी अनेकवचन का है। यहाँ उसका उपयोग द्वितीया के बदले (सूत्र ३·१३४ देखिए) किया है।

४·३३४ श्लोक १—सागर तृणों को ऊपर (उठाकर) धरता है और रत्नों को तल में ढकेलता है। (उसी तरह) स्वामी अच्छे सेवक को छोड़ देता है और खलों का (दुष्टों का) सन्मान करता है।

यहाँ तलि इस सप्तमी एकवचन में अकार का इकार हुआ है। तले घल्लइ--यहाँ तले इस सप्तमी एकवचन में अकार का एकार हुआ है। उप्परि—उपरि शब्द में प का द्वित्व हुआ है। खलाइँ—सूत्र ४·४४५ देखिए।

४·३३५ श्लोक १--गुणों से (गुणों के द्वारा) कीर्ति मिलती है परन्तु सम्पत्ति नहीं मिलती; (दैव ने भाल पर) लिखे हुए फल ही (लोग) भोगते हैं। सिंह को एक कौडी भी नहीं मिलती; तथापि हाथिओं को लाखों रुपये पड़ते हैं (शब्दशः—हाथी लाखों (रुपयों) से खरीदे जाते हैं।

यहाँ लक्खेँहि इस तृतीया अनेकवचन में अकार का एकार हुआ है। गुणहिँ में अकार का एकार नहीं हुआ है। गुणहिँ, लक्खेंहि--यहाँ हिं और हिँ ये प्राकृत में से तृतीया अ० व० के प्रत्यय हैं (सूत्र ३·७ देखिए)। अपभ्रंश के तृतीया अ० व० प्रत्ययों के लिए सूत्र ४·३४७ देखिए। पर परम्। बोड्डिओ (देशी)--कौडी। घेप्पन्ति—सूत्र ४·२५६ देखिए।

४·३३६ अस्येति··· ···णभ्यते--सूत्र ३·२० ऊपर की 'इदुत··· ···सम्बध्यते' इस वाक्य के ऊपर की टिप्पणी देखिए। श्लोक १—मानव वृक्षों से फल लेता है और कटु पल्लवों को छोड़ देता है। तथापि सुजन के समान महान् वृक्ष उन्हें (अपने) गोद में धारण करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ वच्छहे इस पंचमी एकवचन में हे आदेश है। वच्छुहु गृण्हइ—वच्छहु में हु आदेश है। गृण्हइ—सूत्र ४·३९४ देखिए। फलइं—सूत्र ४·३५३ देखिए। तो—सूत्र ४·४१७ देखिए। जिवँ—सूत्र ४·४०१, ३९७ देखिए।

४·३३७ श्लोक १—ऊँचा उडान करके (बाद में नीचे) गिरा हुआ खल (दुष्ट) पुरुष अपने को (तथा अन्य) जनों को मारता है। जैसे, गिरि–शिखरों से गिरी हुई शिला (अपने साथ) अन्यों को भी चूर-चूर कर देती है।

यहाँ सिंगहुं इस पंचमी अ० व० में हुँ आदेश है। दूरुड्डाणें—सूत्र ४·३३३, ३४२ देखिए। जिह—सूत्र ४·४०१ देखिए।

४·३३८ श्लोक १—जो अपने गुणों को छिपाता है और दूसरों के गुणों को प्रकट करता है, ऐसे (इस) कलियुग में दुर्लभ होने वाले उस सज्जन को मैं पूजा करता हूँ।

यहाँ परस्सु, तसु, दुल्लहहो, सुअणस्सु इन षष्ठी एकवचनों में सु, हो और स्सु ये आदेश हैं। हउँ—सूत्र ४·३७५ देखिए।

किज्जउँ—सूत्र ४·३८५ देखिए।

४·३३९ श्लोक १—तृणों को तीसरा मार्ग (अथवा तीसरी दशा) नहीं होती; वे अवट के/कुएँ के किनारे पर उगते हैं (शब्दशः—रहते हैं); उन्हें पकड़ कर लोग (अवट) पार करते हैं; अथवा उनके साथ वे स्वतः (अवट में) डूब जाते हैं।

इस श्लोक के बारे में टीकाकार कहता है—अन्योऽपि यः प्रकार–द्वयं कर्तुं-कामो भवति स विषमस्थाने वसति। प्रकारद्वयं किम्। म्रियते वा शत्रून् जयति वा इति भावार्थः।

यहाँ तणहँ इस षष्ठी अनेकवचन में हं आदेश है। लग्गिवि—सूत्र ४.४३९ देखिए।

४·३४० श्लोक १—पक्षियों के लिए वन में वृक्षों पर पक्व फल देव निर्माण करता है; (उनके उपभोग का) वह सुख अच्छा है; परन्तु खलों के वचन कानों में प्रविष्ट होना (अच्छा) नहीं।

यहाँ तरुहुँ और सउणिहँ इन षष्ठी अनेकवचनों में हुँ और हं आदेश हैं। सो सुक्खु—यहाँ सुक्ख शब्द पुल्लिंग में प्रयुक्त किया है (सूत्र ४·४४५ देखिए)। कण्णहिं—सूत्र ४·३४७ देखिए। प्रायो⋯⋯हुं—प्रायः का अधिकार होने से, क्वचित् सुप् प्रत्यय को भी हुँ आदेश होता है। सुप् के नियमित आदेश सूत्र ४·३४७ में दिए हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्लोक २—(अपने) स्वामी के गुरु भार को देखकर, धवल (बैल) खिन्न होता है (= खेद करता है, और अपने को कहता है) कि मेरे दो टुकड़े करके (जोते की) दो बाजुओं को मुझे क्यों नहीं जोता गया है ?

यहाँ दुहुँ इस सप्तमी अनेकवचन में हुं आदेश है। विसूरइ— विसूर धातु खिद् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१३२ देखिए)। पिक्खे वि, करेवि—सूत्र ४·४४० देखिए। दुहुँ—प्राकृत में द्विवचन न होने के कारण यह अनेकवचन प्रयुक्त है। दिसिहिं—सूत्र ४·३४७ देखिए। खण्डइँ—सूत्र ४·३५३ देखिए।

४·३४१ श्लोक १—किसी भी भेदभाव के बिना (अरण्य में) पर्वत की शिला और वृक्षों के फल मिलते हैं (शब्दशः—लिए जाते हैं); तथापि घर का त्याग करके अरण्य (-वास) मनुष्यों को रुचता नहीं।

यहाँ गिरिहे और तरुहे इस पञ्चमी एकवचन में हे आदेश है। नीसावँन्नु—सूत्र ४·३९७ देखिए। मेल्लेप्पिणु—सूत्र ४·४४० देखिए। माणुसहं—सूत्र ४·३३९ देखिए।

श्लोक २—तरुओं से वल्कल परिधान के रूप में और फल भोजन के स्वरूप में मुनि भी प्राप्त कर लेते हैं; (वस्त्र और भोजन के साथ ही) सेवकजन स्वामियों से आदर (यह ज्यादा बात) प्राप्त कर लेते हैं।

यहाँ तरुहुं और सामिहु इन पञ्चमी अनेकवचनों में हु आदेश है। एत्तिउ—सूत्र २·१५७;४·३२१ देखिए। अग्गलउ—मराठी में आगला। सूत्र ४·४५४ देखिए।

श्लोक ३—अब कलियुग में धर्म (सचमुच) कम प्रभावी हो गया है।

यहाँ कलिहि इस सप्तमी एकवचन में हि आदेश है। जि—सूत्र ४·४२० देखिए।

४·३४ टा-वचनस्य······भवतः—सूत्र ४·३३३ के अनुसार टा प्रत्यय के पूर्व शब्द के अन्त्य अकार का ए होता है। उदा०—दइअ-दइए। अब, प्रस्तुत सूत्र के अनुसार, टा प्रत्यय को ण अथवा अनुस्वार आदेश होते हैं। इसलिए दइएं पवसन्तेण, इत्यादि रूप होते हैं।

४·३४३ श्लोक १—जग अग्नि से उष्ण और वायु से शीतल होता है। परन्तु जो अग्नि से भी शीतल होता है, उसकी उष्णता कैसे ? (अर्थात् वह गर्म नहीं होता है)।

यहाँ अग्गिएँ इस तृतीया एकवचन में एं है, और अग्गि में अनुस्वार है। तेवँ केवँ—सूत्र ४·४०१, ३९७ देखिए। उण्हत्तणु—सूत्र २·१५४ के अनुसार त्तण प्रत्यय लगकर भाववाचक संज्ञा बनी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्लोक २—यद्यपि प्रियकर अप्रिय करने वाला है, तथापि आज उसे ला। यद्यपि अग्नि से घर जल जाता है तथापि उस अग्नि से (अपना) कार्य होता ही है।

यहाँ अग्गिण में ण और अग्गि में अनुस्वार है। तें—त (तद्) सर्वनाम का तृतीया एकवचन।

४·३४४ एइ··· ···थलि—यहाँ 'एह थलि' शब्दों में सि प्रत्यय का, वग्ग में अम् प्रत्यय का, और 'एइ घोडा' शब्दों में जस् प्रत्यय का लोप हुआ है।

श्लोक १—जैसे जैसे श्यामा स्त्री आँखों के बाँकापन (वक्र, कटाक्ष, फेंकना) सीखती है, वैसे वैसे मदन कठिन पत्थर पर अपने बाणों को तीक्ष्ण करता है (= ज्यादा धार लगाता है)।

यहाँ सामलि में सि प्रत्यय का, वंकिम में अम् प्रत्यय का, और सर में शस् प्रत्यय का लोप हुआ है। जिवँ जिवँ तिवँ तिवँ—सूत्र ४·४०१, ३९७ देखिए। वम्महु—सूत्र १·२४२ देखिए।

४·३४५ श्लोक १—सैकड़ों युद्धों में, अत्यन्त मत्त, और अंकुशों की भी पर्वाह न करने वाले ऐसे हाथियों के गण्डस्थलों को फोड़ने वाला इस स्वरूप में जिसका वर्णन किया जाता है, उसे हमारे (मेरे) प्रिय करको देखो।

यहाँ गय शब्द के आगे षष्ठी अनेकवचनी प्रत्यय का लोप हुआ है। जु—ज (यद्) सर्वनाम का प्रथमा एकवचन। देक्खु—सूत्र ४·३८७ देखिए। अम्हारा—सूत्र ४·४३४ देखिए।

पृथग्योगो··· ···सारार्थः—सूत्र ४·३४४ में ही आम् प्रत्यय कहा होता, तो प्रस्तुत सूत्र स्वतन्त्र रूप से कहना जरूरी नहीं था। फिर वैसा क्यों नहीं किया ? इस प्रश्न का उत्तर यही है :—व्याकरणीय नियमों के उदाहरणों के अनुसार उचित विभक्ति का लोप है यह जाना जाय, यह सूचित करने के लिए प्रस्तुत सूत्र का नियम सूत्र ४·३४४ के पृथक् रूप से कहा है।

४·३४६ आमन्त्र्ये··· ···जसः—सम्बोधन स्वतन्त्र विभक्ति नहीं है। प्रथमा विभक्ति के प्रत्यय ही सम्बोधन विभक्ति में लगते हैं। किन्तु वे लगते समय उनमें थोड़े फर्क हो जाते हैं।

श्लोक १—हे तरुणो और हे तरुणियों, मैंने समझ लिया; अपना घात मत करो।

यहाँ तरुणहो और तरुणिहो इन सम्बोधन अनेकवचनों में हो आदेश है। करहु—सूत्र ४·३८४ देखिए। म—सूत्र ४·३२९ के अनुसार स्वर में बदल हुआ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४.३४७ गुणहिँ··· ···पर—यहाँ गुणहिँ इस तृतीया अनेकवचन में हिं आदेश है।

श्लोक १—जिस प्रकार भागीरथी (गंगा नदी) भारत में तीन मार्गों से (= प्रवाहों से) प्रवृत्त होती है।

यहाँ मग्गेहिँ और तिहिँ इन सप्तमी अनेकवचनों में हिं आदेश है। भारइ—सूत्र ४·३३४ देखिए।

४·३४८–३५२ इन सूत्रों में स्त्रीलिंगी शब्दों को लगने वाले आदेश कहे हैं। उनका अन्त्य स्वर कोई भी हो, प्रत्यय अथवा आदेश वे ही हैं।

४·३४८ अंगुलिउ··· ···नहेण—अंगुलिउ और जज्जरियाउ इन प्रथमा अनेकवचनों में उ आदेश है।

श्लोक १— सर्वांगसुन्दर विलासिनियों को देखने वालों का।

यहाँ °सव्वंगाउ में उ और विलासिणीओ में ओ आदेश है।

वचन··· ···यथासंख्यम्—सूत्र में 'जस्शसोः' ऐसा द्विवचन है और 'उदोत्' शब्द एकवचन में है। इसका अभिप्राय यह है कि भिन्न वचन प्रयुक्त करके यहाँ आदेश कहा है। यह दिखाने के लिए ऐसा वचनभेद किया है कि यहाँ कहे हुए आदेश अनुक्रम से नहीं होते हैं। (ऐसे ही शब्द आगे भी जहाँ आएंगे वहाँ भी इसी प्रकार का अर्थ जानना है)।

४·३४९ श्लोक १—सुन्दर स्त्री (मुग्धा) अन्धकार में भी अपने मुख के किरणों से हाथ देखती है तो फिर पूर्ण चन्द्र की चाँदनी में वह दूर के पदार्थ क्यों न देखती हो ?

यहाँ °चंदिमएँ इस तृतीया एकवचन में ए आदेश है। °करहिँ—सूत्र ४·३४७ देखिए। पुणु—सूत्र ४·४२६ देखिए। काइँ—सूत्र ४·३६७ देखिए।

श्लोक २—जहाँ मरकत मणि के प्रकाश से वेष्टित है।

यहाँ °कंतिएँ इस तृतीया ए० व० में ए आदेश है। जहिं—सूत्र ४·३५७ देखिए।

४·३५० श्लोक १—तुच्छ कटिभाग होने वाली, तुच्छ बोलने वाली, तुच्छ और सुन्दर रोमावली (उदर पर) होने वाली, तुच्छ प्रेम होने वाली (= दिखाने वाली), तुच्छ हंसने वाली, प्रियकर की वार्ता के न पाने के कारण जिसका शरीर तुच्छ हुआ है ऐसी, (और मानो) मदन का निवास होने वाला (अथवा—जिसे प्रियकर का समाचार नहीं प्राप्त हुआ है और जिसके कृश शरीर में मदन का निवास है, ऐसी, ऐसे वह सुन्दरी (मुग्धा) का अन्य जो कुछ भी तुच्छ है वह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं कहा जा सकता; आश्चर्य यह है कि उसके दो स्तनों के बीच का अन्तर इतना तुच्छ है कि उस (दो स्तनों के) बीच के मार्ग पर मन भी नहीं समाता है (= नहीं पहुँचता है)।

यहाँ पतला (बारीक), नाजुक, सूक्ष्म, कम, कृश, सुन्दर इत्यादि अनेक अर्थों में तुच्छ शब्द प्रयुक्त किया गया है। इस श्लोक में, तुच्छराय शब्द उस सुन्दरी के प्रियकर का सम्बोधन है ऐसा टीकाकार कहता है।

इस श्लोक में, °मज्झहे, °जम्पिरहे, °रोमावलिहे, °हासहे, अलहन्ति अहे, °निवासहे, धणहे, मुद्धडहे इन षष्ठी एकवचनी रूपों में हे आदेश है।

तुच्छयर —तुच्छ शब्द का तर-वाचक रूप है। तुच्छउँ—सूत्र ४·३५४ देखिए। अक्खणहं—सूत्र ४·४४१ देखिए। कटरि—आश्चर्यसूचक अव्यय है। विच्चि—सूत्र ४·४२१, ३३४ देखिए।

श्लोक २—जो अपना हृदय फोड़ते हैं उन (स्तनों) को दूसरों पर क्या दया आयेगी ? हे तरुण लोगों, उस तरुणी से अपनी रक्षा करो। (उसके) स्तन अभी सम्पूर्ण विषम (हृदय फोड़ने वाले) हो गए हैं।

यहाँ बालहे, इस पञ्चमी एकवचन में हे आदेश है। हियडउँ अप्पणउं—सूत्र ४·३५४ देखिए। हियडउँ—सूत्र ४·४२९–४३० देखिए।

कवण—सूत्र ४·३६७ देखिए। मराठी में कवण, कोण। रक्खेज्जहु—सूत्र ३·१७८; ४·३८४ देखिए। लोअहो—सूत्र ४·३४६ देखिए।

४·३५१ श्लोक १—हे बहिनि, भला हुआ जो मेरा प्रियकर / पति (युद्ध में) मारा गया। (कारण) पराभूत होकर या भाग कर वह घर वापस आता तो (मेरे) सखियों के सामने मैं लज्जित होती (अथवा वह लज्जित होता)।

यहाँ वयंसिअहु में पञ्चमी और षष्ठी अनेकवचन में हु आदेश है। भल्ला—मराठी में भला। महारा—सूत्र ४·४३४ देखिए।

वयस्याभ्यो वयस्यानाम्—वयस्या शब्द का अनुक्रम से पञ्चमी बहुवचन और षष्ठी बहुवचन।

४·३५२ श्लोक १—कौए को उड़ाती हुई (विरहिणी) स्त्री ने सहसा प्रियकर को देखा। (तो उसके हाथ से) आधी चूड़ियाँ जमीन पर गिर पड़ीं और अवशिष्ट आधी (चूड़ियाँ) तड़कर टूट गईं।

इस श्लोक में कल्पना ऐसी है—हमारे देश में एक धारणा ऐसी है कि घर पर बैठ कर कौआ यदि काव-काव करता हो, तो घर में मेहमान आयेगा। इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्लोक में एक विरहिणी का वर्णन है। वह कौवे की आवाज सुनती है पर आता हुआ प्रियकर उसे नहीं दिखाई देता। इसलिए वह निराश होकर कौवे को हकालती थी। पर इतने में प्रियकर उसके दृष्टिपथ में आ गया। परिणाम यह हुआ--कौवे को हकालने की क्रिया में, विरहावस्था में कृशता के कारण ढीली हुई उसकी आधी चूड़ियाँ जमीन पर गिर पड़ीं; परन्तु प्रियकर को देखने से जो आनन्द प्राप्त हुआ, उससे उसका शरीर–अर्थात् हाथ भी–बढ गया; उस कारण से उसकी शेष आधी चूड़ियाँ (हाथों पर छोटी होने के कारण) तड-तड टूट गईं।

इस श्लोक में, महिहि इस सप्तमी एकवचन में हि आदेश है। दिट्ठउ--सूत्र ४·४२९ के अनुसार दिट्ठ के आगे स्वार्थे अकार आया है।

४·३५३ यहाँ कहे हुए इं प्रत्यय के पूर्व संज्ञा का अन्त्य ह्रस्व स्वर विकल्प से दीर्घ होता है (सूत्र ४·३३० देखिए)।

श्लोक १—कमलों को छोड़ कर भ्रमर-समूह हाथियों के गण्डस्थलों की इच्छा करते हैं। दुर्लभ (वस्तु) प्राप्त करने का जिनका आग्रह है वे दूरी का विचार नहीं करते।

यहाँ °उलइं इस प्रथमा अनेकवचन में और कमलइं तथा °गण्डाइं इन द्वितीया अनेकवचनों में इं आदेश है। मेल्लवि—सूत्र ४.४३९ देखिए। मेल्ल मुच् धातु का आदेश है (सूत्र ४·९१ देखिए)। मह—यह कांक्ष् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१९२)। एच्छण—सूत्र ४·४४१ देखिए। अलि (देशी)—निबंध, हठ, आग्रह।

४·३५४ ककारान्तस्य नाम्नः—ककारान्त संज्ञा का / ककार से यानी क से अन्त होने वाली संज्ञा। संज्ञा के अन्त में आने वाला यह क स्वार्थे है (सूत्र ४·४२९ देखिए)। अन्नु······घणहे—यहाँ तुच्छउं में उं आदेश है।

श्लोक १—अपनी सेना भागती हुई या पराभूत हुई देख कर और शत्रु की सेना फैलती हुई देखकर, (मेरे) प्रियकर के हाथ में चन्द्रलेखा की समान तलवार चमचमाने लगती है।

यहाँ भग्गउं और पसरिअउं इन द्वितीया एकवचनों में उं आदेश है।

सूत्र ३३१–३५४ सूत्रों में आया हुआ अपभ्रंश में से संज्ञाओं का रूपविचार निम्नानुसार इकट्ठा करके कहा जा सकता है :—

अकारान्तपुल्लिगी देव शब्द

विभक्ति	ए० व०	अ० व०
प्र०	देव, देवा, देवु, देवो	देव, देवा
द्वि०	देव, देवा, देवु	देव, देवा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तृ०	देवे, देवें देवेण (देंविण) (देवि)	देवहिं, देवेहि
पं०	देवहे, देवहु	देवहुँ
ष०	देव, देवसु, देवस्सु, देवहो, देवह	देव, देवहं
स०	देवे, देवि	देवहिं
सं०	देव, देवा, देवु, देवो	देव, देवा, देवहो

इकारान्त पुल्लिगी गिरि शब्द

विभक्ति	ए० व०	अ० व०
प्र०	गिरि, गिरी	गिरि, गिरी
द्वि०	गिरि, गिरी	गिरि, गिरी
तृ०	गिरिएं, गिरिण, गिरिं	गिरिहिं
पं०	गिरिहे	गिरिहुं
ष०	गिरि, गिरिहे	गिरि; गिरिहं; गिरिहुं
स०	गिरिहि	गिरिहुं
सं०	गिरि	गिरि, गिरी, गिरिहो

उकारान्त पुल्लिगी शब्दों के रूप गिरि के समान होते हैं।

अकारान्त नपुंसकलिंगी कमल शब्द

विभक्ति	ए० व०	अ० व०
प्र० द्वि०	कमल, कमला	कमल, कमला, कमलइं, कमलाइं

अन्य रूप अकारान्त पुल्लिगी शब्द के समान होते हैं।

अकारान्त नपुंसकलिंगी तुच्छअ शब्द

विभक्ति	ए० व०	अ० व०
प्र०, द्वि०	तुच्छउं	

अन्य रूप कमल के समान होते हैं।

इकारान्त नपुंसकलिंगी वारि शब्द

विभक्ति	ए० व०	अ० व०
प्र० द्वि०	वारि, वारी	वारि, वारी वारिइं वारीइं

अन्य रूप इकारान्त पुल्लिगी शब्द के समान होवे हैं।

उकारान्त नपंसकलिंगी महु शब्द

विभक्ति	ए० व०	अ० व०
प्र० द्वि०	महु, महू	महु, महू, महुइं, महूइं

अन्य रूप उकारान्त पुल्लिगो नाम के समान होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आकारान्त स्त्रीलिंगी मुद्धा शब्द

विभक्ति	ए० व०	अ० व०
प्र०	मुद्ध, मुद्धा	मुद्धाउ, मुद्धाओ
द्वि०	मुद्ध, मुद्धा	मुद्धाउ, मुद्धाओ
तृ०	मुद्धए (मुद्धइ)	मुद्धहि
पं०	मुद्धहे (मुद्धहि)	मुद्धहु
ष०	मुद्धहे (मुद्धहि)	मुद्धहु
स०	मुद्धहि	मुद्धहि
सं०	मुद्ध, मुद्धा	मुद्ध, मुद्धा, मुद्धहो, मुद्धाहो

इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त और ऊकारान्त स्त्रीलिंगी शब्द मुद्धा के समान चलते हैं।

४·३५५-३६७ इन सूत्रों में अस्मद् और युष्मद् सर्वनामों को छोड़कर, अन्य सर्वनामों के जो विशिष्ट रूप अपभ्रंश में होते हैं, वे कहे गए हैं। उन्हें छोड़कर उनके अन्य रूप उस-उस स्वरान्त संज्ञा के समान होते हैं।

४·३५५ सर्वादि: अकारान्तात्—सूत्र ३·५८ ऊपर की टिप्पणी देखिए। जहां तहां कहां—इन पञ्चमी एकवचनों में हां आदेश है। होन्तउ—हो धातु के होन्त इस व० का० धा० वि० के आगे (सूत्र ३·१८१) स्वार्थे अ (सूत्र ४.४२९) आया है। होन्तउ की भवान् ऐसी भी संस्कृत छाया दी जाती है।

४·३५६ श्लोक १—यदि मेरे ऊपर का अत्यन्त दृढ (तिलतार) स्नेह टूट गया हो, तो सैकड़ों बार बाँकी दृष्टियों में क्यों भला देखा जा रहा हूँ (या देखी जा रही हूँ) ?

यहाँ किहें इस पंचमी ए० व० में इहे आदेश है। तहें—सूत्र ४·३५९ देखिए। तुट्टउ—सूत्र ४·४२९। नेहडा—सूत्र ४·४२९। मइँ—सूत्र ४·३७७। सहुँ—सूत्र ४·४१९। जोइज्जउँ—जोअ धातु के कर्मणि अंग से बना हुआ रूप है (सूत्र ४·३८५)।

४·३५७ श्लोक १—जहाँ बाण से बाण और खड्ग से खड्ग छिन्न किए जाते हैं, (वहाँ) उसी प्रकार के योद्धाओं के समुदाय में (मेरा) प्रियकर (योद्धाओं के लिए) मार्ग प्रकाशित करता है।

यहाँ, जहिँ और तहिँ इन सप्तमी एकवचनों में हिं आदेश है। सरिण खग्गिण—ये तृतीया ए० व० के रूप हैं। तेहइ—तेह के (सूत्र ४·४०२) आगे स्वार्थे अ (सूत्र ४·४२९) आकर बने तेहअ शब्द का सप्तमी एकवचन (सूत्र ४·३३४)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्लोक २—उस सुन्दरी (मुग्धा) के एक आँख में श्रावण (मास), दूसरी आँख में भाद्रपद मास है; जमीन पर स्थित बिस्तर पर माधव अथवा माघ (मास) है; गालों पर शरद् (ऋतु) अंग पर ग्रीष्म (ऋतु) है; सुखासिका (= सुख से बैठना) रूपी तिल के वन में मार्गशीर्ष मास है; और मुखकमल पर शिशिर (ऋतु) रही है।

इस श्लोक में एक विरहिणी के स्थिति का वर्णन है। उसका भावार्थ ऐसा :—श्रावण–भाद्रपद मास की बरसात की झड़ी के जैसे उसकी आँखों से अश्रु-धारा बहती थी। वसन्त ऋतु के समान उसका बिस्तर पल्लवों से बना था। शरद्—ऋतु में से बादलों के समान (अथवा काश-कुसुम के समान) उसके गाल सफेद / फीके पड़े थे। ग्रीष्म के समान उसका अंग तप्त / गर्म था। शिशिर ऋतु में से कमल के समान उसका मुखकमल म्लान हुआ था।

इस श्लोक में एक्कहि और अन्नहि इन सप्तमी एकवचनों में हि आदेश है। माहउ—माधव, वसन्त ऋतु; अथवा माघक। अंगहि—सूत्र ४·३४७ देखिए। तहेँ—सूत्र ४·३५९ देखिए। मुद्धहे—सूत्र ४·३५० देखिए।

श्लोक ३—हे हृदय तट् तट् करके फट जा; विलम्ब करके क्या उपयोग ? मैं देखूंगी कि तेरे बिना सैकड़ों दुःखों को दैव कहाँ रखता है ?

यहाँ कहिँ इस सप्तमी ए० व० में हि आदेश है। हिअडा—सूत्र ४·४२९। फुट्टि—सूत्र ४·३८७ देखिए। फुट्ट धातु भ्रंश् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१७७ देखिए); अथवा—स्फुट् धातु में ट् का द्वित्व होकर और अन्त में अकार आकर यह धातु बना है। करि—सूत्र ४·४३९ देखिए। देक्खउँ—सूत्र ४·३८५ देखिए। पइँ—सूत्र ४·३७० देखिए। विणु—सूत्र ४·४२६ देखिए।

४·३५८ श्लोक १—हला सखि, (मेरा) प्रियकर जिससे निश्चित रूप से रुष्ट होता है उसका स्थान वह अस्त्रों से शस्त्रों से अथवा हाथों से फोड़ता है।

यहाँ जासु और तासु इन षष्ठी एकवचनों में आसु आदेश है। महारउ—महार (सूत्र ४·४३४) के आगे स्वार्थे अप्रत्यय (सूत्र ४·४२९) आया है। निच्छइं—निच्छएं (सूत्र ४·३४२ देखिए)।

श्लोक २—जीवित किसे प्रिय नहीं है। धन की इच्छा किसे नहीं है ? पर समय आने पर विशिष्ट (श्रेष्ठ) व्यक्ति (इन) दोनों को भी तृण के समान समझते हैं।

यहाँ कासु इस षष्ठी एकवचन में आसु आदेश है। वल्लहउँ—सूत्र ४·४२९, ३५४ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·३५९ जहे तहे कहे—इन षष्ठी एकवचनों में अहे आदेश है। केरउ—सम्बन्धिन् शब्द को केर ऐसा आदेश होता है (सूत्र ४·४२२); उसके आगे स्वार्थे अ (सूत्र ४·४२९) आकर यह रूप बनता है।

४·३६० श्लोक १—जबकि मेरा नाथ आँगन में खड़ा है, इसी कारण वह रणक्षेत्र में भ्रमण नहीं करता है।

यहाँ ध्रुं और त्रं ये यद् और तद् सर्वनामों के प्रथमा और द्वितीया के एकवचन के वैकल्पिक रूप हैं। चिट्ठदि करदि—सूत्र ४·२७३ देखिए। बोल्लिअइ—बोल्ल धातु के कर्मणि अंग से बना हुआ रूप। बोल्ल धातु कथ् धातु का आदेश है (सूत्र ४·२)।

४·३६१ तुह—सूत्र ३·९९ देखिए।

४·३६२ श्लोक १—यह कुमारी, यह (मैं) पुरुष, यह मनोरथों का स्थान है। (जब) मूर्ख (केवल) ऐसा ही विचार करते रहते हैं (तब बाद में) (सहसा) प्रभात (सवेरा) हो जाता है।

यहाँ एह यह स्त्रीलिंगी, एहो यह पुल्लिंगी और एहु यह नपुंसकलिंगी एतद् सर्वनाम के प्रथमा एकवचन हैं। एहउँ—एह के आगे स्वार्थे अ (सूत्र ४.४२९) आया है। वढ—सूत्र ४·४२२ ऊपर की वृत्ति देखिए।

पच्छइ—सूत्र ४·४२० देखिए।

४·३६३ एइ······भलि—एइ यह एतद् का प्रथमा अनेकवचन है। एइ पेच्छ—यहाँ एइ यह एतद् का द्वितीया एकवचन है।

४·३६४ श्लोक १—यदि बड़े घर तुम पूछते हो, तो वे (देखो) बड़े घर। (परन्तु) दुःखी लोगों का उद्धार करने वाला (मेरा) प्रियकर झोंपड़ी में है (उसको) देखो।

यहाँ ओइ यह अदस् के प्रथमा और द्वितीया अनेकवचन है।

४·३६५ इदम्······भवति—विभक्ति प्रत्यय के पूर्व इदं सर्वनाम का आय ऐसा अंग होता है।

श्लोक १—लोगों के इन नयनों को (पूर्व—) जन्म का स्मरण होता है, इसमें कोई शंका नहीं है; (कारण) अप्रिय (वस्तु) को देखकर वे संकुचित होते हैं और प्रिय (पदार्थ) को देखकर विकसित होते हैं।

यहाँ आयइँ इस प्रथमा अनेकवचन में आय ऐसा आदेश है। इस श्लोक में जाई-सरइँ ऐसा एक ही शब्द लेकर, जाति स्मराणि ऐसी संस्कृत छाया लेना अधिक योग्य लगता है। मउलि अहिं—सूत्र ४·३८२ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्लोक २—समुद्र सूखे या न सूखे; उससे बडवानल को क्या ? अग्नि पानी में जलता रहता है, यही (उसका पराक्रम दिखाने के लिए) पर्याप्त नहीं क्या ?

यहाँ आएण इस तृतीया एकवचन में आय आदेश है। च्चिअ—सूत्र २·१८४ देखिए।

श्लोक ३—इस तुच्छ (दग्ध) शरीर से जो प्राप्त होता है वही अच्छा है; यदि वह ढँका जाय तो वह सड़ता है; (और यदि) जलाय जाय तो उसकी राख हो जाती है।

यहाँ आयहों इस षष्ठी एकवचन में आय आदेश है।

४·३६६ श्लोक १—बड़प्पन के लिए सब लोग तड़फड़ाते हैं। परन्तु बड़प्पन तो मुक्त हस्त से (= दान देने पर ही) प्राप्त होता है।

यहाँ साहु इस प्रथमा ए० व० में साहु आदेश है। तडप्फडइ—मराठी में तडफडणें। तणेण—सूत्र ४·४२२ देखिए।

४·३६७ श्लोक १—हे दूति, यदि वह (मेरा प्रियकर) घर न आता हो, तो तेरा अधोमुख क्यों ? हे सखि, जो तेरा वचन तोड़ता (= नहीं मानता) है, वह मुझे प्रिय नहीं (होगा)।

यहाँ किम् के स्थान पर काइँ ऐसा आदेश है। तुज्झ—अपभ्रंश में युष्मद् का षष्ठी एकवचन हेमचन्द्र तुज्झ (सूत्र ४·३७२) देता है। तुज्झु के लिए सूत्र ४·३७२ ऊपर की टिप्पणी देखिए। तउ—सूत्र ४·३७२ देखिए। मज्झु—सूत्र ४·३७९ देखिए। काइँ······देक्खइ—यहाँ किम् का काइँ आदेश है।

श्लोक २—श्लोक ४·३५०·२ देखिए। यहाँ किम् के स्थान पर कवण ऐसा आदेश है।

श्लोक ३—बताओ किस कारण से सत्पुरुष कंगु (नामक धान) का अनुकरण करते हैं। जैसा जैसा (उन्हें) बडप्पन / महत्त्व प्राप्त होता है, वैसे वैसे वे सर नीचे झुकाते हैं (यानी नम्र होते हैं)।

यहाँ कवणेण शब्द में किम् को कवण आदेश है। अणुहरहिं लहहिं नवहिं—सूत्र ४·३८२ देखिए।

श्लोक ४—(यह श्लोक एक विरही प्रियकर उच्चारता है :—) यदि उसका (मुझ पर) स्नेह / प्रेम हो, तो वह मर गई होगी; यदि वह जीती हो, तो उसका (मुझ पर) प्रेम नहीं है; एवं च दोनों प्रकारों से प्रिया (मुझको, मेरे बारे में) नष्ट हो गई है; इसलिए हे दुष्ट मेह, तू व्यर्थ क्यों गरज रहे हो ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ किम् सर्वनाम का ही प्रयोग है। गज्जहि—सूत्र ४·३८३।

४·३६८ श्लोक १—हे भ्रमर, अरण्य में गुनगुन (गुञ्जन की ध्वनि) मत कर; उस दिशा को (= दिशा की तरफ) देख; रो मत। जिसके वियोग से तू मर रहा है वह मालती अन्य देश में है।

यहाँ तुहुँ यह प्रथमा एकवचन है। रुणझुणि—मराठी में रुणझुण। रण्णडइ—अरण्य शब्द में आद्य अ का लोप (सूत्र १·६६) होकर रण्ण होता है; बाद में सूत्र ४·४३० के अनुसार स्वार्थे प्रत्यय आकर रण्णडअ होता है; उसका सूत्र ४·३३४ के अनुसार सप्तमी एकवचन। जोइ रोइ—सूत्र ४·३८७ देखिये। मरहि—सूत्र ४·३८३ देखिये।

४·३७० श्लोक १—हे सुन्दर वृक्ष, तुझ से मुक्त हुए तो भी पत्तों का पत्तापन (पत्रत्व) नष्ट नहीं होता है; परन्तु तेरी किसी भी प्रकार की छाया हो, वह तो उन्हीं पत्तों से ही है।

यहाँ युष्मद् के तृतीया ए० व० में पइं आदेश है। पत्तत्तणं—सूत्र २·१५४ देखिए। होज्ज—सूत्र ३·१७९ देखिए।

श्लोक २—(अन्य स्त्री पर आसक्त हुए नायक को उद्देश्य कर नायिका यह श्लोक उच्चारती है :—) मेरा हृदय तूने जीता है; उसने तुझे जीता है; और वह (स्त्री) भी अन्य (पुरुष) के द्वारा पीडी जा रही है।

हे प्रियकर; मैं क्या करूँ ? तुम क्या करोगे ? (एक) मछली से (दूसरी) मछली निगली जा रही है।

यहाँ युष्मद् के तृतीया ए० व० में तइं आदेश है। महु——सूत्र ४·३७९ देखिए। करउँ—सूत्र ४·३८५ देखिए।

श्लोक ३—तू और मैं दोनों भी रणांगण में चले जाने पर (अन्य) कौन भला विजयश्री की इच्छा करेगा ? यम की पत्नी को केशों के द्वारा पकड़ने पर, बता कौन सुख से रहेगा ?

यहाँ युष्मद् के सप्तमी ए० व० में पइँ आदेश है। मइँ—सूत्र ४·३७७ देखिए। बेहिँ, रण गयहि, केसहि—सूत्र ४·३४७ देखिए। लेप्पिणु—सूत्र ४·४४० देखिए। थक्के इ—थक्क यह स्था धातु का आदेश है (सूत्र ४·१६)। एवं तइं—उदा०—उदा०—तइं कल्लाण (कुमारपाल चरित, ८·३४)

श्लोक ४—(सारस पक्षी के समान) तुम्हें छोड़ते तुम्हारा मेरा मरण होगा; मुझे छोड़ते तुम्हारा मरण होगा; (कारण सारस पक्षियों में से) जो सारस (दूसरे सारस से) दूर होगा, वह कृतान्त का साध्य (यानी मृत्यु को वश) हो जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ युष्मद् के द्वितीया ए० व० में पइं आदेश है। वेग्गला—मराठी में वेगला। एवं तइं—उदा०—तइं मेउं अक्खउ ठाणु (कुमारपालचरित, ८·३२)।

४·३७१ श्लोक १—तुमने हमने (रणांगण में) जो किया, उसे बहुत लोगों ने देखा; उस समय उतना बड़ा युद्ध (हमने) एक क्षण में जीता।

यहाँ युष्मद् के तृतीया अनेकवचन में तुम्हेंहिं आदेश है। अम्हेहिं—सूत्र ४·३७८ देखिए। तेवड्डउ—सूत्र ४·४०७ के अनुसार तेवड, फिर ड् का द्वित्व होकर तेवड्ड, बाद में सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अ प्रत्यय आ गया।

४·३७२ श्लोक १—भूमंडल पर जन्म लेकर, अन्य लोग तेरी गुणसंपदा, तेरी मति और तेरी सर्वोत्तम (अनुपम) क्षमा को सीखे (शब्दशः—सीखते हैं)।

यहाँ तउ, तुज्झ और तुध्र ये तीन युष्मद् के षष्ठी एकवचन में आदेश हैं। हेमचन्द्र ने षष्ठी एकवचन का तुज्झ आदेश दिया है। इस ४·३७२·१ श्लोक में तुज्झ का पाठभेद बुज्झु ऐसा है। ४·३७०·४ श्लोक में तुज्झु है और वहाँ उसका पाठभेद तुज्झ है। ४·३६७·१ श्लोक में तुज्झु ऐसा ही रूप है; वहाँ पाठभेद नहीं है। इसलिए युष्मद् के षष्ठी एकवचन में तुज्झु ऐसा भी रूप होता है ऐसा दिखाई देता है। मद—सूत्र ४·२६०, ४८६ देखिए।

४·३७५ तसु दुल्लहहो—यहाँ अस्मद् के प्रथमा एकवचन में हउं आदेश है।

४·३७६ श्लोक १—(रणांगण पर जाते समय एक योद्धा अपनी प्रिया को उद्देश्य कर यह श्लोक उच्चारता है :—) हम थोड़े हैं, शत्रु बहुत हैं, ऐसा कायर (लोग) कहते हैं। हे सुंदरि (मुग्धे), गगन में देख। (वहाँ) कितने लोग (यानी तारे) चाँदनी/ज्योत्स्ना देते हैं ? (उत्तर—केवल चन्द्र ही)।

यहाँ प्रथमा अन्यवचन में अस्मद् को अम्हे आदेश है। एम्व—सूत्र ४·४१८ देखिए। निहालहि—मराठी में न्याहालणे।

श्लोक २—(एक विरहिणी प्रवास पर गए हुए अपने प्रियकर के बारे में कहती है :—) प्रेम/स्नेह (अम्लत्व) लगाकर जो कोई परकीय पथिक (प्रवास पर) चले गए हैं, ये अवश्य हमारे समान ही सुख से नहीं सो सकते होंगे।

यहाँ अस्मद् के प्रथमा अ० व० में अम्हइं आदेश है। लाइवि—सूत्र ४·४३१ देखिए। अवस—सूत्र ४·४२७ देखिए। अम्हे······देक्खइ—यहाँ अस्मद् के द्वितीया अनेकवचग में अम्हे और अम्हइं आदेश हैं।

४·३७७ श्लोक १—हे प्रियकर, मैंने समझाया कि विरहीजनों को संध्या समय में कुछ आधार (अवलम्बन, दुःखनिवृत्ति, धरा) मिलता है; परन्तु प्रलयकाल में जैसा सूर्य, वैसा ही चन्द्र (इस समय) ताप दे रहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ अस्मद् के तृतीया ए० व० में मइँ आदेश है। णवर—सूत्र २·१८७ देखिए। तिह, जिह—सूत्र ४·४०१ देखिए। पइं···गयहिं—यहाँ अस्मद् के सप्तमी एकवचन में मइँ आदेश है। मइं······तुज्झु—यहाँ अस्मद् के द्वितीया एकवचन में मइं आदेश है।

४·३७८ तुम्हेंहिं······किअउं—यहाँ अस्मद् के तृतीया अनेकवचन में अम्हेहिं ऐसा आदेश है।

४·३८९ श्लोक १—मेरे प्रियकर के दो दोष हैं, हे सखि, झूठ मत छिपाव। जब वह दान देता है तब केवल मैं अवशिष्ट/बच रहती हूँ, और जब वह युद्ध करता है तब केवल तलवार अवशिष्ट/बच रहती है।

यहाँ अस्मद् के षष्ठी एकवचन में महु आदेश है। हेल्लि—सूत्र ४.४२२ देखिए। झंखहि—यहाँ झंख धातु बिलप् (सूत्र ४·१४८) धातु का आदेश लेकर, 'झूठ मत बोल' ऐसा ही अर्थ ले जा सकता है। आलु—मराठी में आल।

श्लोक २—हे सखि, यदि शत्रुओं का पराभव हो गया होगा, तो वह मेरे प्रियकर से ही; यदि हमारे पक्षवाले पराभूत हो गए होंगे. तो उसके (=मेरे प्रियकर के) मारे जाने पर ही।

यहाँ अस्मद् के षष्ठी एकवचन में मज्झु आदेश है। पारक्कडा—परकीय शब्द को सूत्र २·१४८ के अनुसार पारक्क आदेश; उसके आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अड प्रत्यय आकर पारक्कड शब्द बनता है। मारिअडेण—मारिअ शब्द के आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अड प्रत्यय आया है।

४·३८० अम्हहं······आगदा—यहाँ पञ्चमी अ० व० में अम्हहं आदेश है। अह······तणा—अहाँ अस्मद् के षष्ठी अ० व० में अम्हहं आदेश है।

सूत्र ४·३६८–३८१ में आया हुआ युष्मद् और अस्मद् सर्वनामों का रूप-विचार एकत्र करके आगे दिया है :—

युष्मद् सर्वनाम

विभक्ति	ए० व०	अ० व०
प्र०	तुहुं	तुम्हे, तुम्हइं
द्वि०	पइं, तइं	तुम्है, तुम्हइं
तृ०	पइं, तइं	तुम्हेहिं
पं०	तउ, तुज्झ, तुध्र	तुम्हहं
ष०	तउ, तुज्झ, तुध्र	तुम्हहं
स०	पइं, तइं	तुम्हासु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्मद् सर्वनाम

विभक्ति	ए० व०	अ० व०
प्र०	हउं	अम्हे, अम्हइं
द्वि०	मइं	अम्हे, अम्हइं
तृ०	मइं	अम्हेहिं
पं०	महु, मज्झु	अम्हहं
ष०	महु, मज्झु	अम्हहं
स०	मइं	अम्हासु

४·३८२–३८८ इन सूत्रों में अपभ्रंश का धातुरूप विचार है। यहाँ (माहाराष्ट्री) प्राकृत से जो कुछ भिन्न है, उतना ही बताया गया है।

४·३८२ त्यादि—सूत्र १·९ ऊपर की टिप्पणी देखिए। आद्यत्रयस्य··· ···वचनस्य—सूत्र ३·१४२ ऊपरकी टिप्पणी देखिए।

श्लोक १—उस (सुन्दरी) के मुख और केशबन्ध (ऐसी) शोभा धारण करते हैं कि मानो चन्द्र और राहु मल्ल युद्ध कर रहे हैं। भ्रमरों के समुदाय से तुल्य ऐसे उसके घुंघराले केशों की लटें (ऐसी) शोभती हैं कि मानो अन्धकार के बच्चे एकत्र क्रीडा कर रहे हैं।

यहाँ धरहिं, करहिं, सहहिं इन तृतीय पुरुष अनेक वचनों में हिं आदेश है। नं—सूत्र ४·४४४ देखिए। सहहिं—सह धातु राज् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१०० देखिए)। इसलिए यहाँ राजन्ते ऐसा ही संस्कृत प्रतिशब्द होगा। कुरल—मराठी में कुरला। खेल्ल—मराठी में खेलणं।

४·३८३ मध्य··· ···वचनम्—सूत्र ३·१४० के ऊपर की टिप्पणी देखिए।

श्लोक १—(इस श्लोक में 'पिउ' शब्द श्लिष्ट है। स्त्री के बारे में प्रियः (= प्रियकर) और चातक के सन्दर्भ में पिबामि (पीता हूँ) इन अर्थों में वह प्रयुक्त किया है :—) हे चातक, 'पीऊँगा पीऊँगा' ऐसा कहते, अरे हताश, तू कितना रोएगा (शब्दशः रोता है) ? (हम) दोनों की भी तेरी जल-विषयक और मेरी वल्लभ-विषयक—आशा पूरी नहीं हुई है।

यहाँ रुअहि इस द्वितीय पुरुष ए० व० में हि आदेश है। बप्पहि—चातक पक्षी। यह पक्षी केवल मेघ से गिरने वाला जल पीता है, भूमि परका नहीं पीता है, ऐसा कवि-संकेत है। भणिवि—सूत्र ४·४३९ देखिए। कित्तिउ—सूत्र २·१५७ के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुसार कियत् शब्दको केत्तिअ आदेश होता है; सूत्र १.८४ के अनुसार 'के' में से ए ह्रस्व होता है, इसलिए उसके स्थान पर इकार आके कित्तिअ शब्द होता है।

श्लोक २—हे निघृ्ण चातक, बार-बार तुझे कहकर क्या उपयोग है कि विमल जल से भरे हुए सागरमें से तुझको एक बूंद (शब्दश:—धारा) भी जल नहीं प्राप्त हो सकता है।

यहाँ कहहि इस द्वितीय पुरुष एकवचन में हि आदेश है। कईं—किम् सर्वनाम को सूत्र ४.३६७ के अनुसार प्रथम काइं आदेश हुआ, और सूत्र ४.३२९ के अनुसार स्वर में बदल होकर कइं ऐसा शब्द बन गया। बोल्लिअ—बोल्ल (कथ् का आदेश-सूत्र ४.२) का क० भू० धा० वि०। इ—यह पादपूरणार्थी अव्यय है (सूत्र २.२१७ देखिए)। भरिअइ—भरिअ इस क० भू० धा० वि० के आगे सूत्र ४.४२९ के अनुसार स्वार्थे अ प्रत्यय आया है। एक्क इ—एकां अपि। यहाँ 'अपि' शब्द में से आद्य अ और प् इनका लोप हुआ है। सप्तम्याम्—विध्यर्थ में।

श्लोक ३—हे गौरि, इस जन्म में तथा अन्य जन्मों में (मुझे) वही प्रियकर देना कि जो हँसते-हँसते मदमत्त और अंकुश को पर्वाह न करने वाले हाथियों से भिड़ता है।

यहाँ दिज्जहि इस विध्यर्थी द्वितीय पुरुष एकवचन में हि आदेश है। आयहिँ—इदम् सर्वनाम के आय अंग से (सूत्र ४.३६५) सप्तमी एकवचन (सूत्र ४.३५७)। अन्नहिँ—सूत्र ४.३५७ देखिए। जम्महिँ—सूत्र ४.३४७ देखिए। गम—सूत्र ४.३४५ देखिए। अब्भिड—यह संगम् धातु का आदेश है (सूत्र ४.१६४)।

४.३८४ मध्यम……वचनम्—सूत्र ३.१४३ ऊपर की टिप्पणी देखिए। श्लोक १—बलिके पास याचना करते समय, वह विष्णु (मधुमथन) भी लघु हो गया। (इसलिए) यदि महत्ता/बड़प्पन चाहते हो, तो (दान) दो; (परन्तु) किसी से भी (कुछ भी) मत माँगो।

यहाँ इच्छहु इस द्वितीय पुरुष अ० व० में हु आदेश है।

४.३८५ अन्त्य… …वचनम्—सूत्र ३.१४१ ऊपर की टिप्पणी देखिए। श्लोक १—दैव विन्मुख हो; ग्रह पीडा दें, हे सुंदरि, विषाद मत कर। यदि (मैं) व्यवसाय/प्रयास करूँगा तो वेश के समान (मैं) संपदा को खींचकर लाउँगा।

यहाँ कड्ढउँ इस प्रथम पुरुष एकवचन में उं आदेश है। करहि—सूत्र ३.१७४ देखिए। संपइ—सूत्र ४.४०० देखिए। छुडु—यदि (सूत्र ४.४२२ देखिए)।

४.३८६ श्लोक १—हे प्रियकर, जहाँ तलवार को काम मिलेगा उस देश में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(हम) जाएंगे। रणरूपी दुर्भिक्ष के कारण (युद्ध न होने के कारण) हम पीड़ित हैं; युद्धके बिना हम सुखसे नहीं रह सकेंगे।

यहाँ लहहुँ, जाहुँ और बलाहुँ इन प्रथम पुरुष अनेक वचनों में हुं आदेश है।

सूत्र ४·३८२-३८६ में कहे हुए अपभ्रंश के वर्तमानकाल के प्रत्यय ऐसे हैं:—

पुरुष	ए० व०	अ० व०
प्रथम	उं	हुँ
द्वितीय	हि	हु
तृतीय	—	हिं

४-३८७ पञ्चम्यास्—आज्ञार्थ में।

श्लोक १—हे हाथि, मल्लकी (नामक वृक्ष) का स्मरण मत कर, लंबी (दीर्घ) साँस मत छोड़; दैववश प्राप्त हुए कवल खा, (पर) मान को मत छोड़।

यहाँ सुमरि, मेल्लि और चरि इन द्वितीय पुरुष एकवचनोंमें इ आदेश है। म—मा (सूत्र ४·३२९ देखिए)। जि—सूत्र ४·४२० देखिए।

श्लोक २—हे भ्रमर, घने पत्ते और बहल (बहुत) छाया होने वाला कदंब (नामक वृक्ष) फूलने तक, यहाँ नीम (के) वृक्ष पर कुछ दिन व्यतीत कर।

यहाँ बिलम्बु इस द्वितीय पुरुष एकवचन में उ आदेश है। एत्थु—सूत्र ४·४०४ देखिए। लिम्बडइ—लिंब शब्द को सूत्र ४·४२९-४३० के अनुसार स्वार्थे प्रत्यय लगे हुए हैं। दियहडा—सूत्र ४·४२९ के अनुसार दियह शब्द को स्वार्थे अड प्रत्यय लगा है। जाम—सूत्र ४·४०६ देखिए।

श्लोक ३—हे प्रियकर, अब हाथमें (ऐसे ही) भाला रख, तलवार छोड़ दे, जिससे (गरीब) बेचारे का मालिक (कम से कम) न फूटा हुआ कपाल (भिक्षा पात्र के रूप में) लेंगे।

यहाँ करे इस द्वितीय पुरुष एकवचन में ए आदेश है। एम्बहिँ—सूत्र ४·४२० देखिए। सेल्ल—(देशी)—भाला। बप्पुडा—मराठी में बापुडा बापडा।

४·३८८ स्यस्य—स्य का। स्य यह संस्कृत में भविष्यकाल का चिन्ह है।

श्लोक १—दिवस झटपट जाते हैं, मनोरथ (मात्र) पीछे पड़ जाते हैं। (इसलिए) जो है उसे माने (=स्वीकार करे); 'होगा होगा' ऐसा कहते हुए मत (स्वस्थ) ठहरिए।

यहाँ होसइ इस रूप में स आया है। झडप्पडहिं—मराठी में झटपट। पच्छि—सूत्र २·२१ के अनुसार, पश्चात् शब्द का पच्छा हुआ, फिर सूत्र ४·३२९ के अनुसार पच्छि हुआ। करतु—सूत्र ३·१८१ के अनुसार करंतु, फिर अनुस्वार का लोप होकर करतु रूप बना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·३८९ क्रिये--कृ धातु के कर्मणि अंग में वर्तमानकाल प्रथम पुरुष एकवचन।

श्लोक १--विद्यमान भोगों का जो त्याग करता है उस प्रियकर की मैं पूजा करती हूँ। जिसका मस्तक गंजा है उसका मुंडन तो दैव ने ही किया है।

यहाँ क्रिये शब्द को कीसु आदेश है। साध्यमानावस्था—सूत्र १·१ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

४·३९० श्लोक १—स्तनों का जो आततुंगत्व (= अत्यन्त ऊँचाई) है, वह लाभ न होने से हानि ही है। (कारण) हे सखि, प्रियकर बहुत कष्ट से और देर से (मेरे) अधर तक पहुँचता है।

यहाँ पहुच्चइ शब्द में भू धातु को हुच्च आदेश है।

हु—सूत्र २.१९८ देखिए।

४·३९१ ब्रुवह्... ... किंपि—यहाँ ब्रुवह रूप में ब्रुव आदेश है।

श्लोक १—(श्री कृष्णकी उपस्थिति से दुर्योधन कितना असमंजस में पड़ा था (= भौंचक्का हो गया था) उसका वर्णन इस श्लोकमें है। दुर्योधन कहता है :—) इतना कहकर शकुनि चुप रहा; फिर (उतना ही बोलकर दु:शासन चुप हो गया; तब मैंने समझा कि (जो बोलना था वह) बोलकर यह हरि (श्रीकृष्ण) मेरे आगे (खड़ा हो गया)।

यहाँ ब्रू धातु के ब्रोप्पिणु और ब्रोप्पि ऐसे रूप हैं। इत्तउ—इयत् शब्द को सूत्र २·१५७ के अनुसार एत्तिअ आदेश हुआ; सूत्र १·८४ के अनुसार ए ह्रस्व हो गया; फिर ह्रस्व ए के बदले इ आकर इत्तिअ रूप हुआ; अनन्तर सूत्र ४·३२९ के अनुसार इत्तउ हो गया। ब्रोप्पिणु, ब्रोप्पि—सूत्र ४·४४० देखिए।

४·३९२ वुत्रेप्पि; वुत्रेप्पिणु--सूत्र ४·४४० देखिए।

४·३९४ गृण्हेप्पिणु--सूत्र ४·४४० देखिए।

४·३९५ श्लोक १--कुछ भी (शब्दश:--जैसे तैसे) करके यदि तीक्ष्ण किरण बाहर निकालकर चन्द्रको छीला जाता, तो इस जगमें गोरीके (सुन्दरीके) मुखकमलसे थोड़ासा सादृश्य उसे मिल जाता।

यहाँ छोल्लिज्जन्तु में छोल्ल धातु तक्ष् धातु का आदेश है। छोल्लिज्जन्तु—छोल्ल (मराठी में सोलणें) के कर्मणि अंगसे बना हुआ व० का० धा० वि०। सरिसिम--सूत्र २·१५७ के अनुसार बना भाववाचक नाम है।

श्लोक २--हे सुन्दरि, गाल पर रखा हुआ, (गर्म) सांसरूपी अग्नि की ज्वालाओं से तप्त हुआ और अश्रुजल से भीगा हुआ कंगन (कंकण) अपने आप ही (स्वयं ही) चूर-चूर होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ "झलक्किअउ में से झलक्क धातु तापय् धातु का आदेश है।

चडल्लउ––सूत्र ४·४२९–४३० देखिए। झलक्क––मराठीमें झलकणे।

श्लोक ३––जब प्रेम (= प्रिया) दो पग चल कर लौट आए, तब सर्व खाने वाले (= अग्नि) का जो शत्रु (यानी पानी, समुद्र), उससे उत्पन्न हुआ जो चन्द्र, उसके किरण परावृत्त होने लगे (= चन्द्र का अस्त होने लगा)।

यहाँ अब्भडवंचिउ में अब्भडवंच धातु अनुगम् धातु का आदेश है। अब्भडवंचिउ––सूत्र ४·४३९ देखिए। जावँ––सूत्र ४·४०६ के अनुसार यावत् शब्द का जाम ऐसा वर्णान्तर होता है; फिर सूत्र ४·३९७ के अनुसार जावँ होता है। सव्वासणरिउ सम्भव––सर्वाशन यानी सर्वभक्षक अग्नि, यहाँ वडवानल; उसका शत्रु पानी, यहाँ समुद्र; उस समुद्र से उत्पन्न हुआ चन्द्र। तावँ––सूत्र ४·४०६, ३९७ देखिए।

श्लोक ४––हृदय में सुन्दरी शल्य के समान चुभती है; गगन में मेघ गरज रहा है; वर्षा (ऋतु) की रात में प्रवासियों के लिए यह महान् संकट है।

यहाँ खुडुक्कइ धातु शल्यायते का और घुडुक्कइ धातु गर्जति का आदेश है। गोरडी––सूत्र ४·४२९, ४३१ देखिए। खुडुक्कइ––मराठी में खुडुक होऊन बसणे। °पवासुअ––सूत्र १·४४ देखिए।

एहु––सूत्र ४·३६२ देखिए।

श्लोक ५––हे अम्मा, (ये मेरे) स्तन वज्रमय हैं; (कारण) वे नित्य मेरे प्रियकरके सामने होते हैं, और समरांगण में गजसमूह नष्ट करनेके लिए जाते हैं।

यहाँ थन्ति में थ धातु स्था धातु का आदेश है। भज्जिउ––सूत्र ४·४३९ के अनुसार होने वाला यह पू० का० धा० अ० यहाँ हेत्वर्थक धातुसाधित अव्यय के रूप में प्रयुक्त किया है।

श्लोक ६––यदि बापकी भूमि (संपत्ति) दूसरेके द्वारा छीन ली जाय, तो पुत्र के जन्म से क्या लाभ/उपयोग ? और उसके मरने से क्या हानि ?

यहाँ चंपिज्जइ में चंप धातु आक्रम् धातु का आदेश है। बप्पीकी––√बप्प (देशी शब्द)–बाप। चंप––मराठी में चापणे।

श्लोक ७––सागरका वह उतना जल और वह उतना विस्तार। परंतु थोडी भी तृषा दूर नहीं होती। पर वह व्यर्थ गर्जना करता है।

यहाँ धुट्ठुअइ धातु शब्दायते धातु का आदेश है। (यहाँ धुद्धुअइ ऐसा भी पाठ भेद है)। तेत्तिउ––सूत्र २·१५७ देखिए।

तेवडु––सूत्र ४·४०७ देखिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·३९६ श्लोक १—जब कुलटाओं ने/असतियों ने चंद्रग्रहणको देखा तब वे निःशंक रूप से हँस पड़ी (और बोली) प्रिय मानुष को विक्षुब्ध करने वाले चन्द्रको, हे राहु, निगल (रे) निगल।

यहाँ विच्छोहगरु शब्द में क का ग हुआ है। गिलि— सूत्र ४·३८७ देखिए।

श्लोक २—हे अम्मा, आराम में रहने वाले (मनुष्यों) से मान का विचार किया जाता है। परन्तु जब प्रियकर दृष्टिगोचर होता है, तब व्याकुलत्व के कारण अपना विचार कौन करता है ?

यहाँ सुघि में ख का घ हुआ है। सुधि—सूत्र ४·३४२ के अनुसार होने वाले सुधें वर्णान्तर में सूत्र ४·४१० के अनुसार उच्चार लाघव होकर सुधिँ रूप हुआ है। हल्लोहल (देशी)—व्याकुलता।

श्लोक ३—शपथ लेके मैंने कहा—जिसका त्याग (= दानशूरता), पराक्रम (आरभटी) और धर्म नष्ट नहीं हुए हैं उसका जन्म संपूर्णतः सफल हुआ है।

यहाँ सबधु में प का ब और थ का ध, कधिदु में थ का ध और त का द, और सभलउँ में फ का भ हुए हैं। करेप्पिणु—सूत्र ४·४४० देखिए।

पम्हट्ठउ—सूत्र ४·२५८ देखिए।

श्लोक ४—यदि कथंचित् मैं प्रियकर को प्राप्त कर लूं, तो पहले (कभी भी) न किया हुआ ऐसा (कुछ) कौतुक मैं कर लूं, नये कसोरे में जैसे पानी सर्वत्र प्रविष्ट होता है वैसे मैं सर्वांगसे (उस प्रियकरमें) प्रविष्ट होऊँगी।

यहाँ अकिआ, नवइ शब्दों में क का ग नहीं हुआ है। कुड्ड—कोड्ड (सूत्र ४·४·२) में से ओ ह्रस्व होकर कुड्ड बना है। करीसु पइसीसु—सूत्र ४·३८८ देखिए।

श्लोक ५—देख, सुवर्ण कान्तिके समान चमकने वाला कणिकार वृक्ष प्रफुल्लित हुआ है। मानो सुंदरी के मुख से जीते जाने के कारण वह वन में रहता है (शब्दशः—वनवास सेवन कर रहा है)।

यहाँ पफुल्लिअउ में फ का भ, 'पयासु में क का ग, और विणिज्जिअउ में त का द नहीं हुए हैं। उअ—सूत्र २·२११ देखिए।

४·३९७ मराठी में भी म का व होता है। उदा०—ग्राम-गाव, नाम-नाव इत्यादि। भवँरु—हिंदी में भँवर। जिवँ तिवँ जेवँ तेवँ—जिम, तिम, जेम, तेम (सूत्र ४·४०१ देखिए)।

४·३९८ जइ ···पिउ—यहाँ पिउ में रेफ का लोप हुआ है। जइ भग्गा··· प्रियेण—यहां प्रियेण में रेफ का लोप नहीं हुआ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·३९९ श्लोक १—व्यास महर्षि ऐसा कहते हैं—यदि वेद और शास्त्र प्रमाण हैं तो माताओं के चरणों में नमन करने वालों को हररोज गंगास्नान होता है।

यहाँ व्यास शब्द में रेफ जा आगम होकर व्रासु शब्द बना है। दिविदिवि—सूत्र ४·४१९, ४१० देखिए।

वासेण······बद्ध—इसके स्थान पर 'बासेण बि भारहं खंभि बद्धं' (व्यासेन अपि भारतं स्तम्भे बद्धम्—व्यास ने भी भारत स्तम्भ में ग्रथित किया) ऐसा पाठभेद है। यहाँ बासेण में रेफ नहीं आया है।

४·४०० श्लोक १—बुरा (कर्म) करने वाले पुरुषपर आपत्ति आती है।

यहाँ आवइ शब्द में, दकार का इकार हुआ है। आवइ—आपद्। आवइ—आयाति। गुणहिँ······पर—यहा संपय में द का इकार नहीं हुआ है।

४·४०१ श्लोक १—दुष्ट दिवस कैसे समाप्त हो ? रात कैसे शीघ्र आए ? (अपनी) नववधू को देखने के लिए उत्सुक हुआ वह भी (ऐसे) मनोरथ करता है।

यहाँ कथम् को केंव और किध आदेश हुए हैं। समप्पउ—सूत्र ३·१७३ देखिए। छुडु (देशी)—शीघ्र, झटपट।

श्लोक २—मुझे लगता है (ओ)—सुंदरी के मुख से जीत गया चंद्र बादलों के पीछे छिपता है। जिसका शरीर पराभूत हुआ है ऐसा दूसरा कोई भी निःशंक भाव से कैसे घूमेगा ?

यहाँ कथम् को किम (किवँ) आदेश है। ओ—सूत्र २·२०३ देखिए। भवँइ—भ्रमति में सूत्र ४·३९७ के अनुसार म का वँ हुआ है।

श्लोक ३—हे श्रीआनंद, सुंदरी के बिंबाधर पर दंत व्रण कैसे (स्थित) है ? (उत्तर—) मानो उत्कृष्ट रस पीकर प्रियकर ने अवशिष्टपर मुद्रा (मुहर) दे दी है।

यहाँ कथम् को किह आदेश हुआ है। पिअवि—सूत्र ४·४३९ देखिए। जणु—सूत्र ४·४४४ देखिए।

श्लोक ४—हे सखि, यदि मेरा प्रियकर मुझसे सदोष है, तो वह (तू) छिपकर (चुराकर) इसी प्रकार (मुझे) बता कि (जिससे) उसमें पक्षपाती होने वाला मेरा मन न समझे।

यहाँ तथा को तेम (तेवँ) और यथा को जेम (जेवँ) आदेश हुए हैं।

श्लोक ५—श्लोक ४·३७७·१ देखिए। एवं······हायौं—जिध-तिध के उदा०—जिध तिध तोडहि कम्मु (कुमारपालचरित, ८·४९)।

४·४०२ श्लोक १—(शुक्राचार्य कहता है—) हे राजा बलि, मैंने तुझे कहा था कि किस प्रकार का याचक यह है। अरे मूर्ख, यह जैसा तैसा (कोई) नहीं है, वह ऐसा स्वयं नारायण है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ केहउ, जेहु और तेहु में एहु आदेश है। (पहले पंक्तिमें से—)एहु—एहो (सूत्र ४·३६२) में से ओ ह्रस्व हुआ है।

४·४०४ श्लोक १—यदि वह प्रजापति कहीं से शिक्षा प्राप्त कर (प्रजा को) निर्माण करता है, तो इस जगत में जहाँ वहाँ (यानी कहीं भी) उस सुन्दरी के समान कौन है, बताओ।

यहाँ जेत्थु, तेत्थु में त्र को एत्थु आदेश हुआ है। तहि—तहे (सूत्र ४.३५९) में से ए ह्रस्व हुआ है। सारिक्खु—सादृक्ष्यं (सूत्र २·१७)।

४·४०५ केत्थु··· ···जगि—यहाँ केत्थु, जेत्थु, तेत्थु में त्र को एत्थु आदेश हुआ है।

४·४०६ अपभ्रंशे··· ···भवन्ति—इस नियम के अनुसार, जाम—ताम, जाउं-ताउं, जामहिं—तामहिं ऐसे वर्णान्तर होते हैं। पश्चात् सूत्र ४·३९७ के अनुसार म का वँ होकर जावँ·तावँ इत्यादि वर्णान्तर होते हैं।

श्लोक १—जब तक सिंह के चपेटे का प्रहार गण्डस्थल पर नहीं पड़ा है, तब तक ही सर्व मदोन्मत्त हाथियों का ढोल/नगारा पग-पग पर बजता है।

यहाँ जाम—ताम में म आदेश है।

श्लोक २—जब तक तेल निकाला नहीं है तब तक तिलों का तिलत्व (रहता) है; तेल निकल जाने पर तिल तिल न रहके खल (खली, दुष्ट) हो जाते हैं।

यहाँ जाउं—ताउं में उं आदेश है। पणट्ठइ—पणट्ठ के आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अ आया है। जिज—जि (सूत्र ४·४२०) का द्वित्व हुआ है। फिट्टवि—सूत्र ४·४३९ देखिए। फिट्ट धातु भ्रंश् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१७७ देखिए)।

श्लोक ३—जब जीवों पर विषम कार्यगति आती है, तब अन्य जन रहने दो (परन्तु) सुजन भी अन्तर देता है।

यहाँ जामहिं—तामहिं में हिं आदेश है।

४·४०७ अत्वन्तयो :—सूत्र २·१५६—१५७ ऊपर की टिप्पणी देखिए। जेवडु ··· ···गामहँ—जितना अन्तर राम-रावण में है उतना अन्तर नगर और गाँव में हैं। यहाँ जेवडु-तेवडु में एवड आदेश है। जेवडु तेवडु—मराठी में जेवढा-तेवढा; गुजराती में—जेवडुं तेवडुं। जेत्तुलो तेत्तुलो—जेत्तिल-तेत्तिल में (सूत्र २·१५७) स्वरभेद होकर (सूत्र ४·३२९) जेत्तुल-तेत्तुल वर्णान्तर हो गया है।

४·४०८ एवड केवडु—मराठी में एवढा-केवढा। एत्तुलो केत्तुलो—एत्तिल-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केत्तिल में (सूत्र २·१५७) भिन्न स्वर आकर (सूत्र ४·३२९) एत्तुल केत्तुल वर्णान्तर हुआ है।

४·४०९ श्लोक १––परस्पर युद्ध करने वालों में से जिनका स्वामी पीड़ित हुआ, उन्हें जो अन्न (शब्दशः––मूंग) परोसा गया वह व्यर्थ हो गया।

यहाँ अवरोप्परु में आदि अकार आया है। मुग्गडा––सूत्र ४·४२९ देखिए। जोहन्ताहं––इस पाठ के बदले जो अन्ताहं पाठ डॉ० प० ल० वैद्य जी ने स्वीकृत किया है। गञ्जिउ ––मराठी में गांजणे, गांजलेला।

४·४१० उच्चारणस्य लाघवम्–ए और ओ का ह्रस्व उच्चारण उनके स्थान पर इ और उ लिखकर अथवा उनके शीर्ष पर ˘ यह चिह्न रखकर (एँ, ओँ) दिखाया जाता है। उदा०––सुधेँ का ह्रस्व उच्चारण सुधिं ऐसा ४·३९६·२ में दिखाया गया है। तो, दुल्लहहोँ में ओ का ह्रस्व उच्चारण ˘ इस चिह्न से दिखाया है।

४·४११ उं हुं······लाघवम्––इन अनुस्वारान्तों का उच्चारण-लाघव होकर, उसका होनेवाला सानुनासिक उच्चारण ˘ इस चिन्ह से दिखाया जाता है। उदा०––उँ, हुँ इत्यादि। यहाँ आगे दिये उदाहरणों में तुच्छउँ, किज्जउँ में उं का, तरुहुँ में हुँ का, जहिँ में हिं का और तणहँ में हं का उच्चार-लाघव है।

४·४१२ मकाराक्रान्तो भकारः––मकार से युक्त भकार यानी म्भ।

श्लोक १––हे ब्राह्मण, जो सर्व अंगों में (प्रकारों में) निपुण हैं ऐसे जो कोई नर होते हैं, वे दुर्लभ/बिरला होते है। जो वक्र (बाँके) हैं वे वंचक होते हैं; जो सीधे होते हैं, वे बैल होते हैं।

यहाँ बम्भ में म्ह का म्भ हुआ है। छइल्ल––हिंदी में छैला। उज्जुअ––ऋजु शब्द में से ऋ का उ (सूत्र १·१३१) और ज् का द्वित्व (सूत्र २·९८) होकर हुए उज्जु शब्द के आगे स्वार्थे अ आया है। बइल्ल––हिंदी मराठी में बैल।

·४१४ श्लोक १––वे दीर्घ लोचन अन्यही (= कुछ औरही) हैं; वह भुजयुगल अन्यही है; वह घन स्तनों का भार अन्य ही है, वह मुखकमल अन्य ही है; केशकलाप अन्यही है; और गुण और लावण्य का निधि ऐसे उस सुंदरी को (नितम्बिनी) जिसने बनाया, वह विधि (ब्रह्मदेव) भी प्रायः अन्यही है।

यहाँ प्रायस् शब्द को प्राउ आदेश हुआ है।

श्लोक २––प्रायः मुनियों को भी भ्रांति है, वे केवल मणि गिनते हैं, (परन्तु) वे अब भी/अद्यापि अक्षर और निरामय ऐसे परमपद में नहीं लीन हुए हैं।

यहाँ प्रायस् को प्राइव आदेश हैं। भन्तडी––भन्ति शब्द के आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अड प्रत्यय आया और बाद में सूत्र ४·४३१ के अनुसार स्त्रीलिंग का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ई प्रत्यय लगा है। मणिअडा--सूत्र ४·४३० के अनुसार मणि शब्द के आगे स्वार्थे प्रत्यय आये हैं।

श्लोक ३--हे सखि, (मुझे लगता है कि) सुंदरी के नयनरूपी सरोवर प्रायः अश्रुजल से भर-भरकर बहते हैं, इसलिए वे (नयन) जब (किसी की ओर देखने के लिए) सामने मुड़ते हैं, तब वे तिरछी चोट करते हैं।

यहाँ प्रायस् को प्राइम्व आदेश हुआ है। घत्त—घात शब्द में से त का द्वित्व होकर (सूत्र २·९८-९९) यह वर्णान्तर हुआ है।

श्लोक ४—प्रियकर आयेगा; मैं रूठ जाऊँगी; रूठी हुई मुझे वह मनाएगा (मेरा अनुनय करेगा)। प्रायः दुष्ट (दुष्कर) प्रियकर ऐसे मनोरथ करवाता है।

यहाँ प्रायस् को पग्गिम्व आदेश है। रूसे सुँ—सूत्र ४·३८८, ३८५, ४१० देखिए; सूत्र ३·१५७ के अनुसार धातु के अन्त्य अ का ए हुआ है। मणोरहइं--यहाँ मणोरह शब्द नपुंसकलिंग में प्रयुक्त है।

४·४१५ श्लोक १--विरहाग्नि की ज्वाला से प्रदीप्त (जला) कोई पथिक (यहाँ) डूब कर स्थित है; अन्यथा (इस) शिशिरकाल में शीतल जल से भाप/धुँआ कैसे उठा हो।

यहाँ अन्यथा को अनु आदेश है। बुड्डिवि--सूत्र ४·४३९ देखिए। बुड्ड धातु मस्ज् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१०१)। ठिअउ उट्ठिअउ--ठिअ और उट्ठिअ के आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अ प्रत्यय आया है। कहंतिहु—सूत्र ४·४१६ देखिए।

४·४१६ श्लोक १--मेरा कान्त / प्रियकर घर में स्थित होने पर, झोंपडे कहाँ से (= कैसे) जल रहे हैं (जलेंगे) ? शत्रु के रक्त से अथवा अपने रक्त से वह उन्हें बुझायेगा, इसमें शंका नहीं है।

यहाँ कुतस् को कउ आदेश है। झुंपडा--मराठी में झाप, झोपडी। धूमु··· ··· उट्ठिअउ--यहाँ कुतस् को कहन्तिहु आदेश है।

४·४१७ श्लोक १—श्लोक ४·३७९·२ देखिए।

४·४१८ श्लोक १—प्रिय-संगम के काल में निद्रा कहाँ से आयेगी ? प्रियकरके सन्निध न होने पर कहाँ से निद्रा ? मेरी दोनों भी (प्रकार की) निद्राएँ नष्ट हुई हैं। मुझे यों ही (ऐसे भी) न नींद आती है न त्यों भी (वैसे भी) नींद आती है।

यहाँ एवम् को एम्व आदेश है। कउ—सूत्र ४·४१६ देखिए। निद्दडी—सूत्र ४·४२९, ४३१ देखिए। केम्व तेम्व—कथम् और तथा इनके ये आदेश हेमचन्द्र ने नहीं कहे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्लोक २–(मेरे) प्रियकरकी सिंह से जो तुलना की जाती है, उससे मेरा अभिमान खण्डित होता है (= मुझे लाज आती है)। कारण सिंह रक्षक-रहित हाथियों को मारता है; (पर मेरा) प्रियकर (तो) रक्षकों के साथ (उन्हें) मारता है।

श्लोक ३—जीवित चञ्चल है; मरण निश्चित है; हे प्रियकर, क्यों रूठा जाय ? जिन दिनों में क्रोध है वे दिन सैंकड़ों दिव्य वर्षों के समान होते हैं।

होसहिँ—सूत्र ४·३८८, ३८२ देखिए।

श्लोक ४—(अपना) मान नष्ट हो जाने पर, यदि शरीर नहीं तो भी देश को छोड़ दे। (परन्तु) दुष्टों के करपल्लवों से दिखाए जाने, (वहाँ) मत घूमो।

यहाँ का वैसा ही रहा है। देसडा—सूत्र ४·४२९–४३० देखिए। भमिज्ज—सूत्र ३·१७८, १५९ देखिए। यहाँ सूत्र १·८४ के अनुसार, 'मे' में से ए ह्रस्व हुआ; उसके स्थान पर इकार आके भमिज्ज रूप बना है।

श्लोक ५—नमक (लवण) पानी में घुलता है; अरे दुष्टमेघ, मत गरज। कारण वह जलाई हुई झोंपड़ी में पानी टपक रहा है; (अन्दर) सुन्दरी आज भीगेगी।

यहाँ मा का म हुआ है। अरि—सूत्र २·२१७ देखिए। गज्जु—सूत्र ४.३८७ देखिए। अज्जु—अद्य के समान अव्यय भी अपभ्रंश भाषा में उकारान्त होते हैं।

श्लोक ६—वैभव नष्ट होने पर बाँका (और) वैभव में मात्र नित्य जैसा (जनसामान्य) ऐसा चन्द्र—अन्य कोई भी नहीं—मेरे प्रियकर का किंचित् अनुकरण करता है।

४·४१९ श्लोक १—सच कहें तो कृपण मनुष्य न खाता भी है और न पीता भी है, न (मन में) गीला भी होता (पिघलता) है और धर्म के लिए एक रुपया भी नहीं खर्च करता है; वह जानता भी नहीं कि यम का दूत एक क्षण में प्रभावी होगा।

वेच्चइ—मराठी में वेचणे। रूअडउ, दूअडउ—सूत्र ४·४२९–४३० देखिए। पहुच्चइ—सूत्र ४·३९० देखिए।

अहवइ······खोडि—अथवा अच्छे वंश में जन्म लेने वालों का यह दोष (खोडि) नहीं। खोडि—मराठी में खोड, खोडी।

श्लोक २—उस देश में जाए जहाँ प्रियकर का पता (प्रमाण) मिलेगा। यदि वह आएगा तो उसे लाया जाएगा। अन्यथा वहीं पर (मेरा) मरण होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ अथवा का अहवा वर्णान्तर हुआ है। देसडइ—सूत्र ४·४२९ के अनुसार देस के आगे स्वार्थे प्रत्यय आया। जाइज्जइ, लब्भइ, आणिअइ—ये सब कर्मणि रूप है।

श्लोक ३—प्रवास पर गए हुए प्रियकर के साथ (मैं) न गई और उसके वियोग से न मरीभी; इस कारण से उस प्रियकर को संदेश देने में हम लजाती हैं। संदेसडा—सूत्र ४·४२९ देखिए।

श्लोक ४—इधर मेघ पानी पीते हैं; उधर बड़वानल क्षुब्ध हुआ है। (तथापि) सागर की गंभीरता को देखो; (जल का) एक कण भी कम नहीं हुआ है। एत्तहे—सूत्र ४·४२० देखिए। गहीरिम—सूत्र २·१५४ देखिए।

४·४२० श्लोक १—जाने दो (उसे); जाने वाले (उस) को पीछे मत बुलाओ, (मैं) देखती हूँ कितने पैर (वह आगे) डालता है। उसके हृदय में मैं टेढी बैठी हूँ; (परंतु मेरा) प्रियकर जाने का केवल आडंबर करता है।

जाउ—सूत्र ३·१७३ देखिए। पल्लवह—सूत्र ३·१७६ देखिए।

श्लोक २—हरि को आँगन में नचाया गया; लोगों को आश्चर्य में डाला गया, अब राधा के स्तनों का जो होता है वह होने दो।

श्लोक ३—सर्वांगसुंदर गोरी (सुंदरी) कोई (अद्‌भुत) नवीन विषग्रन्थि के समान है; परन्तु जिसके कंठ से वह नहीं चिपकती, वह (तरुण) वीर (मात्र) मरता है (पीड़ित होता है)।

नवखी—मराठी में नवखी। सूत्र ४·४२२ देखिए।

४·४२१ श्लोक १—मेंने कहा—हे धवल बैल, तू धुरा को धारण कर, बुरे बैलों ने हमें पीड़ा दे दी है; तेरे बिना यह बोझ नहीं वहा जा सकेगा, (परंतु) तू अब विषण्ण क्यों?

कसर (देशी)—बुरा बैल।

४·४२२ श्लोक १—एक तो तू कदापि नहीं आता; दूसरे, (आये तो भी तू) शीघ्र जाता है। हे मित्र, मैंने जाना है कि तेरे समान दुष्ट कोई भी नहीं है।

यहाँ शीघ्र को वहिल्ल आदेश है कइअह 'कदापि' का यह आदेश हेमचन्द्र ने नहीं दिया है। आवही—आवहि (सूत्र ४·३८३) में सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वर बदल हो गया है। वहिल्लउ—वहिल्ल के आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अ प्रत्यय आया है। जाहि—सूत्र ४·३८३ देखिए। मित्तडा—सूत्र ४·४२९ देखिए।

जेहउ—जेह (सूत्र ४·४०२) के आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अ प्रत्यय आया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्लोक २—जैसे सत्पुरुष हैं वैसे कलह हैं, जैसी नदियाँ हैं वैसे घुमाव/मोड हैं; जैसे पर्वत हैं वैसे कंदराएँ हैं। हे हृदय, तू क्यों खिन्न होता है ?

डोंगर—मराठी में डोंगर। विसूरहि—सूत्र ४·३८३ देखिए। विसूर धातु खिद् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१३२)।

श्लोक ३—सागर को छोड़कर जो अपने को तट पर फेंकते हैं, उन शंखों का अस्पृश्य-संसर्ग है; केवल (दूसरों के द्वारा) फूंके जाते हुए वे (इधर-उधर) भ्रमण करते है।

छड्डेविणु—सूत्र ४·४४० देखिए। छड्ड धातु मुच् धातु का आदेश है (सूत्र ४·९१)। घल्ल (देशी)—मराठी में घालणे। विट्टाल—मराठी में विटाल।

श्लोक ४—हे मूर्ख, (अनेक) दिनों में जो अर्जित/संचित किया है, उसे खा; एक दाम (पैसा) भी मत संचित कर। कारण ऐसा कोई भय आता है कि जिससे जन्म का ही अंत होता है।

वढ—श्लोक ४·४२२·१२ के बाद देखिए। द्रवक्कउ—द्रवक्क को सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अ प्रत्यय लगा है।

श्लोक ५—यद्यपि अच्छे प्रकार से, सर्व आदरपूर्वक, हरि (=श्रीकृष्ण) एकेक (गोपी) को देखता है, तथापि जहाँ कहाँ राधा है वहाँ उसको नजर पड़ती है। स्नेह से भरे हुए नयनों को रोकने के लिए कौन समर्थ है ?

राही—राधा। सूत्र ४·३२९ के अनुस्वार राधा शब्द में से स्वर में बदल हुआ।

संवरेबि—सूत्र ४·४४१ देखिए। पलुट्टा—पलोट्ट (सूत्र ४·२५८) शब्द में ओ का उ हुआ है।

श्लोक ६—वैभव में स्थिरता किसकी ? यौवन में गर्व किसका ? इसलिए गाढे रूप से बिंबित होगा (शब्दशः-लगेगा) ऐसा लेख भेजा जा रहा है।

थिरत्तणउँ—थिर (स्थिर) शब्द को सूत्र २·१५४ के अनुसार त्तण प्रत्यय लगा; बाद में उसके आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अ प्रत्यय आया।

मरट्ट (देशी)—गर्व। लेखडउ—सूत्र ४·४३० के अनुसार लेख के आगे स्वार्थे प्रत्यय आया है।

श्लोक ७—कहाँ चंद्रमा और कहाँ समुद्र ? कहाँ मयूर, कहाँ मेघ ? यद्यपि सज्जन दूर (रहते) हो, तो भी उनका स्नेह असाधारण होता है।

असड्ढल—असाधारण।

श्लोक ८—अन्य अच्छे वृक्षों पर हाथी अपनी सूंढ कौतुक से (क्रीडा के स्वरूप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में) घिसता/रगड़ता है; परंतु सच बात पूछो तो उसका मन मात्र केवल सल्लकी (नामक वृक्ष) पर ही है।

कुड्डेण—सूत्र १.८४ के अनुसार कोड्ड शब्द में से ओ स्वर ह्रस्व होकर उसके स्थान पर उ आया है।

श्लोक ९—हे स्वामिन्, हमने खेल किया; तुम ऐसे क्यों बोलते हो ? (अथवा—तुम क्या निश्चय बोलते हो ?) अनुरक्त ऐसे हम भक्तों का त्याग मत कीजिए।

खेड्डयं—खेड्ड शब्द को स्वार्थे य (क) प्रत्यय लगा है।

श्लोक १०—अरे मूर्ख, नदीयों से अथवा तडागों से किंवा सरोवरों से या उद्यानों से किंवा बनों से देश रमणीय नहीं होते हैं, परंतु सुजनों के निवास से (देश रम्भ होते हैं)।

सरिहिँ, सरेहिँ, सरवरेँहिँ—वणेहिँ, निवसन्तेहिँ, सुअणेहिँ—सूत्र ४.३४७ देखिए।

श्लोक ११—हे अद्भुत शक्तियुक्त शठ हृदय, तूने सैकड़ों बार मेरे आगे कहा था कि यदि प्रियकर प्रवास पर जाएगा तो मैं फूट जाऊँगा।

हिअडा—सूत्र ४.४२९ देखिए। भंडय (देशी)—विट, शठ, स्तुतिपाठक। फुट्टिसु—सूत्र ४.३८८, ३८५ देखिए।

श्लोक १२ (इस श्लोक में मानव शरीर का रूपकात्मक वर्णन है। यहाँ पंच यानी पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ। अर्थ-) एक (शरीररूपी) कुटी/झोंपड़ी है; उस पर पाँचों का अधिकार है (रुद्ध); पाँचों की बुद्धि पृथक्-पृथक् है। हे बहिनि, यह बता जहाँ परिवार अपनी-अपनी इच्छा से चलता है, वह घर कैसे आनंदी रहेगा ?

कुडुल्ली—कुडी शब्द को सूत्र ४.४२९ के अनुसार स्वार्थे उल्ल प्रत्यय लगकर, फिर सूत्र ४.४३१ के अनुसार स्त्रीलिंगी ई प्रत्यय लगा।

श्लोक १३—जो मन में ही व्याकुल होकर चिंता करता है परंतु एक दाम/पैसा किंवा रुपया देता नहीं वह एक मूर्ख। रतिवश होकर घूमनेवाला और घर में ही अंगुलियों से भाला नचानेवाला वह एक मूर्ख।

°भमिरु—सूत्र २.१४५ देखिए।

श्लोक १४—हे बाले, तेरे चंचल और अस्थिर कटाक्षों से (शब्दशः—नयनों से) जो देखे गये हैं उन पर अपूर्ण काल में ही मदन का आक्रमण/हल्ला होता है।

°दडवडउ—दडवड के आगे सूत्र ४.४२९ के अनुसार स्वार्थे प्रत्यय आया।

श्लोक १५—हे हरिणो, जिसके हुंकार से (तुम्हारे) मुखों से तृण गिर पड़ते थे, वह सिंह (अब) चला गया, (इसलिए अब तुम) निश्चित रूप से जल पीओ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पिअहु—सूत्र ४·३८४ देखिए। केरएँ—केर शब्द के आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अ प्रत्यय आया; फिर सूत्र ४·३४२ के अनुसार केरएँ यह तृतीया एकवचन हुआ। हुंकारडएं—हुँकारड शब्द का तृतीया ए०व० (सूत्र ४·३४२)। हुंकारड शब्द में हुँकार के आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे प्रत्यय आया है। तृणाइं—यहाँ तणाइं ऐसा भी पाठभेद है।

श्लोक १६—स्वस्थ अवस्था में रहने वालों से सभी लोग बोलते हैं। परंतु पीडित/दुःखित लोगों से 'डरो मत' ऐसा वचन जो सज्जन है वही कहता है।

साहु—सूत्र ४·३६६ देखिए। आदन्न—(देशी)-आर्त। मब्भीसडी—मब्भीसा शब्द को सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अड प्रत्यय लगकर, फिर सूत्र ४·४३१ के के अनुसार स्त्रीलिंगी ई प्रत्यय लगा है।

श्लोक १७—अरे मुग्ध हृदय, जिसे-जिसे तुम देखते हो, उस-उस पर (यदि तुम) अनुरक्त/असक्त हो जाते, तो फटने वाले लोहको जैसे घन के प्रहार सहन करने पड़ते हैं वैसे ताप तुम्हें सहन करना पड़ेगा।

फुट्टणएण—सूत्र ४·४४३ देखिए। घण—मराठी में घण।

४·४२३ श्लोक १—मैंने समझा था कि हुहुरु शब्द करके मैं प्रेमरूपी सरोवर में डूब जाऊँगी। परंतु अकस्मात् कल्पना न होते ही विरहरूपी नौका (मुझे) मिल गई।

यहाँ हुहुरु शब्द ध्वनि-अनुकारी है। नवरि—सूत्र २·१८८ देखिए।

श्लोक २—जब आँखों से प्रियकर देखा जाता है तब कस्-कस् शब्द करके नहीं खाया जाता है अथवा घुट् घुट् शब्द करते नहीं पीया जाता है। तथापि योंही (एवमपि) सुखस्थिति होती है।

यहाँ कसरक्क और घुंट शब्द ध्वनि-अनुकारी हैं। खज्जइ—खा धातु का कर्मणि रूप हैं। नउ-यहाँ 'न' शब्द को स्वार्थे प्रत्यय लगा है।

श्लोक ३—मेरा नाथ जैन प्रतिमाओं को वंदन करते हुए अद्यापि घर में ही है (यानी प्रवास को नहीं गया है); तब तकही गवाक्ष में विरह मर्कट-चेष्टा करने लगा है।

यहाँ घुग्घ चेष्टानुकरणी शब्द है। ताउँ—सूत्र ४·४०६ देखिए।

श्लोक ४—यद्यपि उसके माथे पर जीर्ण कमली थी और गले में (पूरे) बीसकी मणियाँ नहीं थी, तो भी सुंदरी ने सभागृह में सभासदों से उठक-बैठक (ऊठ-बैस) करवायी।

यहाँ उट्ठ बईस चेष्टानुकरणी शब्द है। लोअडी—लोमपुटी।

मणियडा—मणि शब्द को सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अड प्रत्यय लगा है। उट्ठबईस—मराठी में ऊठ बैस, उठा बशा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४·४२४ श्लोक १—अरी माँ, मुझे पश्चात्ताप हो रहा है कि सायंकाल में मैंने प्रियकरके साथ कलह किया। सचमुच विनाशकाल में बुद्धि विपरीत होती है।

यहाँ घइं यह निपात निरर्थक (विशेष अर्थ न होते) प्रयुक्त किया गया है। अम्मडि, बुद्धडी—यहाँ सूत्र ४·४२९ के अनुसार पहले स्वार्थे अड प्रत्यय आया और बाद में सूत्र ४·४३१ के अनुसार स्त्रीलिंगी ई प्रत्यय लगा है पच्छायावडा—सूत्र ४·४२९ देखिए।

४·४२५ श्लोक १—अरे प्रिय, बताओ कि यह (ऐसा) परिहास किस देश में किया जाता है। हे प्रिय, तुम्हारे लिए मैं क्षीण होती हूँ और तुम तो किसी दूसरी के लिए (क्षीण होते हो)।

यहाँ केहिँ और रेसि ये तादर्थ्यी निपात हैं। परिहासडी—सूत्र ४·४२९-४३१ देखिए। एवं······हायौँ—तेहिं और रेसिं के उदा०—कहि कसु रेसि तुहुँ अवर कम्मारंभ करेसि। कसु तेहिं परिगहु (कुमार—पालचरित, ८·७०-७१)। वड्ड··· तणेण—यहाँ तणेण तादर्थ्यी निपात है।

४·४२६ श्लोक १—जो थोड़ा भूला जाता है फिर भी स्मरण किया जाता है वह प्रिय (कहा जाता है); परंतु जिसका स्मरण होता है और जो नष्ट होता है उस स्नेह का नाम क्या ?

यहाँ पुणु में स्वार्थे डु है। मणाउँ—सूत्र ४·४१८ देखिए। कइँ—काइं (सूत्र ४·३६७) में से आ का ह्रस्व (सूत्र ४·३२९) स्वर हुआ है।
विणु······वलाहुं—यहाँ विणु में स्वार्थे डु है।

४·४२७ श्लोक १—जिसके अधीन में अन्य इंद्रियाँ हैं (ऐसे) मुख्य जिव्हेंद्रिय को वश में करो। तुम्बिनी के मूल नष्ट हो जाने पर (उसके) पत्ते अवश्य सूख जाते हैं।

यहाँ अबसें में स्वार्थें डें है। सुक्कहिं—सूत्र ४·३८२ देखिए। अवस······अहिं यहाँ अवस शब्द में स्वार्थे ड (अ) है।

४·४२८ श्लोक १—एक ही बार जिनका शील खंडित हुआ है उन्हें प्रायश्चित्त दिये जाते है; परंतु जो हररोज (शील) खंडित करता है, उसे प्रायश्चित्त का क्या उपयोग ?

यहाँ एक्कसि में स्वार्थे डि है। देज्जहिँ—दे धातु के कर्मणि अंग के वर्तमानकाल तृ० पु० अ० व०।

४·४२९ श्लोक १—जब विरहाग्नि की ज्वालाओं से जला हुआ पथिक रास्ते पे दिखाई पड़ा तब सब पथिकों ने मिलके उसको अग्नि पर रखा (कारण वह मर गया था)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ करालिअउ, दिट्ठउ, किअउ, अग्गिट्ठउ इन शब्दों में स्वार्थे अ प्रत्यय है। महु......दोसडा—यहाँ दोसडा में स्वार्थे अड प्रत्यय है। एक्क......रुद्धी—यहाँ कुडुल्ली में स्वार्थे उल्ल प्रत्यय है।

४·४३० फोडेन्ति......अप्पणउँ—यहाँ हिअडउं में स्वार्थे अडअ प्रत्यय है। चूडुल्लउ......सइ—यहाँ चूडुल्लऊ में स्वार्थे उल्लअ प्रत्यय है।

श्लोक १—(अपने प्रियकर पर) स्वामी का प्रसाद, सलज्जप्रियकर, सीमासंधि पर वास और (प्रियकरका) बाहुबल देखकर (आनंदित हुई) सुंदरी निःश्वास छोड़ती है।

यहाँ बलुल्लडा में उल्लअड यह स्वार्थे प्रत्यय है। पेक्खवि—सूत्र ४·४३९ देखिए। बाहुबलुल्लडउ—यहाँ उल्ल, अड और अ ऐसे स्वार्थे प्रत्यय हैं।

४·४३१ श्लोक १—(एक पथिक अपनी प्रिया के बारे में दूसरे पथिक से पूछता है—) हे पथिक, (तुमने मेरी) प्रिया देखी क्या ? (दूसरा उत्तर देता है–) 'तेरा मार्ग देखने वाली और अश्रु और श्वासों से (अपने) कंचुकको गीला करती और सूखा करती (ऐसी) मुझसे देखी गई।'

यहाँ गोरडी में ई (डी) प्रत्यय है। निअन्त—सूत्र ३·१८१ देखिए। निअ धातु दृश् धातु का आदेश है (सूत्र ४·१८१)। करन्त—सूत्र ३·१८१ देखिए। एक्क... रुद्धी—यहाँ कुडुल्ली में ई प्रत्यय है।

४·४३२ श्लोक १—प्रियकर आया (यह) वार्ता सुनी; (उसकी शब्द–) ध्वनि कानों में प्रविष्ट हुई; नष्ट होने वाले उस बिरह की धूल भी न देखी गई।

यहाँ धूलडिआ में आ प्रत्यय है। वत्तडी—वत्ता (वार्ता) शब्द को सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अड प्रत्यय लगा; फिर सूत्र ४·४३१ के अनुसार स्त्रीलिंगी ई प्रत्यय लगा। कन्नडइ—कन्न (√कर्ण) को स्वार्थे अड प्रत्यय सूत्र ४·४२९ के अनुसार लगा है। नासन्तअहो–नासन्त (सूत्र ३·१८१) शब्द के आगे स्वार्थे अ प्रत्यय आया। धूलडिआ—सूत्र ४·४३३ देखिए।

४·४३३ धूलडिआ—यहाँ धूलड शब्द के आगे आ प्रत्यय होने पर, ड में से अकार का इकार हुआ है।

४·४३४ ईय-प्रत्ययस्य—ईय यह एक मत्वर्थी प्रत्यय है।

श्लोक १—हे प्रियकर, (तेरा) संग/सहवास नहीं मिलता; (फिर) तेरे संदेश का क्या उपयोग है ? सपने में पिए जल से (सच्ची) प्यास क्या मिटती है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ तुम्हारेण में आर आदेश है। देक्खु······कन्तु--यहाँ अम्हारा में आर आदेश है। बहिणि······कन्तु--यहाँ महारा में आर आदेश है।

४·४३५ अतोःप्रत्ययस्य—सूत्र २·१५६ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

४·४३६ त्र-प्रत्ययस्य--सूत्र २·१६१ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

श्लोक १--यहाँ पर, वहाँ पर, दरवाजे पर, घर में (इसी प्रकार) चंचल लक्ष्मी दौड़ती/घूमती है; प्रियकर से वियुक्त हुए सुंदरी के समान वह निश्चलरूप से कहीं भी नहीं ठहरती।

यहाँ एत्तहें, तेत्तहें में एत्तहे (डेत्तहे) आदेश है। कहिँ–सूत्र ३·६० देखिए।

४·४३७ त्वतलोः प्रत्यययोः--त्व और तल् (ता) ये भाववाचक संज्ञा सिद्ध करने के प्रत्यय हैं। उदा०–बालत्व, पीनता, वड्डप्पणु पाविअइ–यहाँ वड्डप्पणु में प्पण आदेश है। वड्डत्तणहों तणेण--यहाँ वड्डत्तणहों में सूत्र २·१५४ के अनुसार त्तण प्रत्यय लगा है।

४·४३८ तव्य-प्रत्ययस्य--तव्य यह वि० क० धा० वि० सिद्ध करने का प्रत्यय है।

श्लोक १—(टीकाकार के मतानुसार, विद्यासिद्धि के लिए, कोई सिद्ध पुरुष ने नायिका को धन इत्यादि देकर, उसका पति माँगा; तब वह स्त्री कहती है: —) इस (धन इत्यादि) को लेकर यदि मुझे प्रियकरका त्याग करना हो, तो मुझे मर जाना ही कर्तव्य (रहता) है, और कुछ भी नहीं।

यहाँ करिएव्वउँ, मरिएव्वउँ में इएव्वउं आदेश है।

ध्रुं—सूत्र ४·३६० देखिए।

श्लोक २—जग में अतिरिक्त (ऐसे) मंजिष्ठा (नामक) वनस्पति को किसी देश से उच्चाटन/उखाड़ा जाना), अग्नि में औटना और घन से कूटा जाना ये सब सहन करना लगता है।

यहाँ सहेव्वउँ में एव्वउं आदेश है।

श्लोक ३—यद्यपि वह वेद प्रमाण है तो भी रजस्वला स्त्री के साथ सोना मना है, परंतु जागृत रहने को कौन रोकेगा ?

यहाँ सोएवा, जग्गेवा में एवा आदेश है।

४·४३९ क्त्वा-प्रत्ययस्य—सूत्र १·२७ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

श्लोक १—हे हृदय, यद्यपि मेघ अपने वैरी/शत्रु हैं तो भी हम आकाश पर चढ़ेंगे क्या ? हमारे दो हाथ हैं; यदि मरनाही हो तो उन्हें मारकर ही (हम) मरेंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ मारि में क्त्वा प्रत्यय को इ आदेश है। अम्हहं—सूत्र ४·३८० देखिए। हत्थडा—सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे प्रत्यय हत्थ के आगे आया है। गय······ जन्ति—यहाँ भञ्जिउ में क्त्वा-प्रत्यय को इउ आदेश है।

श्लोक २—(इस श्लोक में, मुंज शब्द से मुंज नाम का मालव देश का राजा अथवा मुंज नाम का चालुक्य राजाओं का एक मंत्री अभिप्रेत है, ऐसा कुछ लोग कहते हैं) जिसमें मुंजका प्रतिबिंब पड़ा था ऐसा जल, पानी में प्रविष्ट न होकर, जिन हाथों से पिया गया है,उन दो हाथों का चुंबन लेकर,वह जलवाहक(पनिहारिनि) (बाला अपने) जीव की रक्षा करती है।

यहाँ चुम्बिवि में क्त्वा-प्रत्यय को इवि आदेश है।

श्लोक ३—हाथों को छोड़कर तू जा, ऐसा ही होने दो, उसमें क्या दोष है? (परंतु) यदि तू मेरे हृदय से बाहर निकल जाएगा, तो मैं समझूँगी कि (सचमुच) मुंज क्रुद्ध हुआ है।

यहाँ विछोडवि में क्त्वा प्रत्यय को अवि आदेश है।

नीसरहि—सूत्र ४·३८३ देखिए।

४·४४० श्लोक १—संपूर्ण कषायरूपी सैन्य को जीतकर, संसार को (जगको) अभय देकर, महाव्रत लेकर, (और) तत्त्वका ध्यान करके, (ऋषि/मुनि) आनंद (शिव) को प्राप्त करते हैं।

यहाँ जप्पि, देप्पिणु, लेवि, झाएविणु में क्रम से एप्पि, एप्पिणु, एवि, एविणु ये क्त्वा-प्रत्यय के आदेश हैं : कसाय—क्रोध, मान, माया और लोभ इनको जैनधर्म में कसाय (कषाय) कहते हैं।

४·४४१ तुमः प्रत्ययस्य–हेत्वर्थक धातुसाधित अव्यय साधने का तुम् प्रत्यय है।

श्लोक १—अपना धन देना दुष्कर है; तप करना (किसी को भी) अच्छा नहीं लगता। योंही सुख भोगा जाय ऐसा मन को लगता है,परंतु भोगना मात्र नहीं आता।

यहाँ देवं, करण, भुंजणहं, भुंजणहि इनमें क्रम से एवं, अण, अणहं, अणहि ये तुम्–प्रत्यय के आदेश है।

श्लोक २—संपूर्ण पृथ्वी को जीतना और (जीतकर) उसका त्याग करना, व्रत (तप) लेना और (लेकर) उसका पालन करना, यह (सब) जग में शांति (–नाथ) तीर्थंकर–श्रेष्ठ के बिना अन्य कौन कर सकता है?

यहाँ जेप्पि में एप्पि, चएप्पिणु में एप्पिणु, लेविणु में एविणु और पालेवि में एवि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऐसे तुम्—प्रत्यय के आदेश हैं। सन्तें तित्थेसरेण—जैनधर्म में २४ तीर्थंकर माने जाते हैं; उनमें शान्तिनाथ एक तीर्थंकर हैं।

४·४४२ श्लोक १—वाराणसी जाकर (बाद में) उज्जयिनी जाकर, जो लोग मरण प्राप्त करते हैं वे परम पद जाते हैं; अन्य तीर्थों का नाम भी मत लो।

यहाँ गम्पिणु और गम्पि में एप्पिणु और एप्पि में आदि एकार का लोप हो गया है। परावहिँ—सूत्र ४·३८२ देखिए।

श्लोक २—जो गंगा जाकर और काशी (शिवतीर्थ) जाकर मरता है, वह यमलोक को जीतकर, देवलोक में जाके क्रीडा करता है।

यहाँ गमेप्पिणु और गमेप्पि में एप्पिणु और एप्पि में से आदि एकार का लोप नहीं हुआ है। सिवतित्थ—काशी। कीलदि—यहाँ कील (सूत्र १·२०२) के आगे दि प्रत्यय (सूत्र ४·२६०) आया है। जिणेप्पि—सूत्र ४·४४० देखिए। जिणेप्पि—सूत्र ४·४४० देखिए। जिण शब्द के लिए सूत्र ४·२४१ देखिए।

४·४४३ तृनः प्रत्ययस्य–धातु से कर्तृवाचक संज्ञा सिद्ध करने का तृन् प्रत्यय है।

श्लोक १—मारनेवाला हाथी, कहनेवाला मनुष्य, बजनेवाला पटह, (और) भौंकनेवाला कुत्ता।

यहाँ मारणउ, बोल्लणउ, वज्जणउ, भसणउ इनमें अणअ यह तृन् प्रत्यय का आदेश है। पडहु—पटह, वाद्यविशेष, नौबत, नगारा।

४·४४४ नं मल्ल······करहिं—यहाँ नं शब्द इव के अर्थ में आदेश है।

श्लोक १—सूर्यास्त के समय व्याकुल चक्रवाक (नामक पक्षि) ने मृणालिका का (=कमल के डंठल का) टुकड़ा कंठ में डाला (परंतु) उसे छिन्न (यानी खाया) मात्र नहीं किया; मानो जीव को बाहर न निकलने देने के लिए अर्गला डाली है।

श्लोक २—कंकणसमूह गिर पड़ेगा इस डरसे सुंदरी हाथ ऊपर करके जाती है; मानो वल्लभके विरहरूपी महासरोवरकी थाह ढूंढती है।

श्लोक ३—दीर्घ नयन होनेवाले और लावण्युक्त ऐसा जिन वरका मुख देखकर, अतिमत्सरसे भरा हुआ लवण मानो अग्निमें प्रवेश करता है।

पवीसइ—पविस में से इ सूत्र ४·३२९ के अनुसार दीर्घ ई हुई है।

जिणवर—श्रेष्ठ जिन। सूत्र ४·२८८ ऊपर की टिप्पणी देखिए।

श्लोक ४–हे सखि, चंपक फूलके मध्यमें भ्रमर प्रविष्ट हुआ है; मानो सुवर्णमें जड़ा हुआ इंद्रनीलमणि जैसा वह शोभित हो रहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भसलु—सूत्र १·२४४ देखिए। पइट्ठउ, बइट्ठउ—पइट्ठ और बइट्ठ के आगे सूत्र ४·४२९ के अनुसार स्वार्थे अ प्रत्यय आया है।

४·४४५ श्लोक १—डूंगरोंसे मेघ लगे हैं; पथिक रोता हुआ जा रहा है; पर्वतको निगलनेकी इच्छा करनेवाला यह मेह सुंदरीके प्राणोंपर क्या दया करेगा?

रडन्तउ—रडन्त (सूत्र ३·१८१) शब्द को स्वार्थे अ प्रत्यय (सूत्र ४·४२९) लगा है।

श्लोक २—पैरपर अंतड़ी चिपटी है; शिर कंधे से गिर पड़ा है; तथापि (जिसका) हाथ (अद्यापि अपने) कटारी पर है (ऐसे उस) प्रियकरकी पूजा की जाती है (किंवा—मैं पूजा करती हूँ)।

खंधस्सु—यह षष्ठी पंचमी के बदले प्रयुक्त की गई है। अन्त्रडी—अन्त्र के आगे स्वार्थे अड (सूत्र ४·४२९), फिर स्त्रीलिंगी ई (सूत्र ४·४३१) प्रत्यय आकर यह शब्द स्त्रीलिंगी बना है। हत्थडउ—सूत्र ४·४३० देखिए।

श्लोक ३—पक्षी शिरपर आरूढ होकर फल खाते हैं और शाखाओं को तोड़ते हैं; तथापि महान् वृक्ष पक्षिओं को पीड़ा नहीं पहुँचाते हैं अथवा न समझते हैं कि अपना अपमान हुआ है।

डाल (देशी)-शाखा। हिंदी में डाल;

४·४४६ श्लोक १—मजेमें क्षणभरमें शिर पर शेखरके (गजरा) स्वरूपमें रखा, क्षणभरमें रतिके कंठपर लटकते रखा, क्षणभरमें (अपने) गलेमें डाला हुआ, ऐसे उस कामके पुष्प (दाम) धनुष्यको नमस्कार करो।

यहाँ शौरसेनी भाषाके समान किद, रदि, विणिम्मविदु, विहिदु इन शब्दोंमें त का द हो गया है।

४·४४७ प्राकृत इत्यादि भाषाओंके लक्षणोंका होनेवाला व्यत्यय यहाँ कहा है।

४·४४८ अष्टमे—अष्टम अध्यायमें। प्रस्तुत प्राकृत व्याकरण हेमचंद्रके व्याकरण का आठवाँ अध्याय है। सप्ताध्यायी निबद्ध संस्कृतवत्—हेमचंद के व्याकरण के पहले सात अध्यायोंमें संस्कृत व्याकरणका विवेचन है।

श्लोक १—नीचे स्थित सूर्यके तापका निवारण करनेके लिए मानो छत्र नीचे धारण करती है ऐसी, (और) वराहके श्वाससे दूर फेंकी गई, (ऐसी) शेषसहित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्वी विजयी है। (विष्णुने वराह अवतार लेकर पृथ्वीको समुद्रसे बाहर निकाला, यह पौराणिक कथा इस श्लोकमें अभिप्रेत है)। अत्र चतुर्थ्या⋯ ⋯सिद्धः—इस प्राकृत व्याकरणमें चतुर्थीका आदेश नहीं कहा है; वह संस्कृतके समानही सिद्ध होता है। उदा०—हेट्ठट्ठिय इत्यादि श्लोकमें °निवारणाय (यह चतुर्थी एकवचन है)।

सिद्धग्रहणं मङ्गलार्थम्—यह प्राकृत व्याकरण सूत्र-निबद्ध है। सूत्रका लक्षण ऐसा है:—अल्पाक्षरमसंदिग्धं सारवद् विश्वतोमुखम्। अस्तोभमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदुः॥ इसलिए सूत्रमें अनावश्यक शब्द नहीं होते हैं। तथापि प्रस्तुत सूत्रमें 'सिद्धम्' शब्द आपाततः अनावश्यक दिखता है। परंतु उसका प्रयोजन है। हेमचंद्र उसके बारेमें कहता है:—ग्रंथके अंतमें मंगल हो, इस प्रयोजनसे सिद्ध शब्द इस सूत्रमें प्रयुक्त किया है।

इस पादके समाप्तिसूचकके अनन्तर कुछ पांडुलिपियोंमें ग्रंथकृत्-प्रशस्ति के स्वरूपमें अगले श्लोक दिए गए दिखाई देते हैं:—

आसीद् विशां पतिरमुद्रचतुः समुद्र—
मुद्राङ्कितक्षितिभरक्षम बाहुदण्डः।
श्रीमूलराज इति दुर्धर वैरि कुम्भि—
कण्ठीरवः शुचि चुलुक्यकुलावतंसः॥ १ ॥

तस्यान्वये समजनि प्रबलप्रताप—
तिग्मद्युतिः क्षितिपतिर्जयसिंहदेवः।
येन स्ववंश-सवितर्यपरं सुधांशौ
श्रीसिद्धराज इति नाम निजं व्यलेखि॥ २ ॥

सम्यग् निषेव्य चतुरश्चतुरोप्युपायान्
जित्वोपभुज्य च भुवं चतुरब्धिकाञ्चीम्।
विद्याचतुष्टयविनीतमतिर्जितात्मा
काष्ठामवाप पुरुषार्थचतुष्टये यः॥ ३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेनातिविस्तृतदुरागमविप्रकीर्ण—
शब्दानुशासनसमूह–कदर्थितेन
अभ्यर्थितो निरवमं विधिवद् व्यधत्त
शब्दानुशासनमिदं मुनिहेमचंद्रः ॥ ४ ॥

राजहंसो न भोम्भोजे क्रीडतो यावदन्वहम् ।
वाच्यमानं बुधैस्तावत् पुस्तकं जयतादिदम् ॥ ५ ॥

(चतुर्थपाद समाप्त)

(हेमचंद्रकृत प्राकृत व्याकरण समाप्त)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संक्षेप

अ० व०	अनेकवचन
इ०	इत्यादि
उदा०	उदाहरण
ए० व०	एकवचन
क० भू० धा० वि०	कर्मणि भूतकालवाचक धातुसाधित विशेषण
तृ०	तृतीया (विभक्ति)
तृ० पु०	तृतीय पुरुष
द्वि०	द्वितीया (विभक्ति)
द्वि० पु०	द्वितीय पुरुष
नपुं०	नपुंसकलिंग, नपुंसकलिंगी
पं०	पंचमी (विभक्ति)
पू० का० धा० अ०	पूर्वकालवाचक धातुसाधित अव्यय
प्र०	प्रथमा (विभक्ति)
प्र० पु०	प्रथम पुरुष
ब० व०	बहुवचन
व० का० धा० वि०	वर्तमानकालवाचक धातुसाधित विशेषण
व० वर्त०	वर्तमानकाल
वि० क० धा० वि०	विध्यर्थी कर्मणि धातुसाधित विशेषण
श०	शब्दशः
ष०	षष्ठी (विभक्ति)
स०	सप्तमी (विभक्ति)
सं०	संबोधन (विभक्ति)
सू०	सूत्र
हेत्व० धा० अ०	हेत्वर्थक धातुसाधित अव्यय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राकृतव्याकरण सूत्र सूची

अइर्दैत्यादौ च	१·१५१	४१	अधः क्वचित्	४·२६१	२३५
अइ संभावने	२·२०५	१२०	अधसो हेट्ठं	२·१४१	१०२
अउः पौरादौ	१·१६२	४३	अधो मनयाम्	२·७८	८६
अक्लीबे सौ	३.१९	१२९	अनङ्कोठा–	२·१५५	१०५
अङ्कोठे ल्लः	१·२००	५४	अनादौ शेषा–	२·८९	८९
अचलपुरे	२·११८	९७	अनादौ स्वरा–	४·३९६	२८३
अजातेः पुंसः	३·३२	१३५	अनुत्साहोत्सन्ने	१·११४	३४
अडडडुल्लाः	४·४२९	३०२	अनुव्रजेः	४·१०७	२०४
अण णाइं	२·१९०	११५	अन्त्यत्रयस्या–	४·३८५	२७८
अत इज्जस्वि–	३·१७५	१८०	अन्त्यव्यञ्जनस्य	१·११	८
अत एत्सौ	४·२८७	२४२	अन्यादृशोन्ना–	४·४१३	२९०
अत एवैच्	३·१४५	१७०	अभिमन्यौ	२·२५	७५
अतसीसात–	१·२११	५७	अभूनोपि	४·३९९	२८५
अतः समृद्ध्यादौ	१·४४	१८	अम्याङोम्मत्थः	४·१६५	२१४
अतः सर्वादे–	३·५८	१४४	अमेणम्	३·७८	१५०
अतः सेर्डोः	३·२	१२४	अमोस्य	३·५	१२५
अतां डइसः	४·४०३	२८६	अम्महे हर्षे	४·२८४	२४१
अतो ङसेर्डातो–	४·३२१	२५४	अम्मो आश्चर्ये	२·२०८	१२१
अतो ङसेर्डादो–	४·२७६	२३९	अम्ह अम्हे	३·१०६	१५९
अतो डो विसर्गस्य	१·३७	१६	अम्ह मम	३·११६	१६१
अतो देश्च	४·२७४	२३८	अम्हहं भ्यसा–	४·३८०	२७६
अतो रिआर–	२·६७	८३	अम्हे अम्हो	३·१०८	१५९
अतोर्डेत्तुलः	४·४३५	३०४	अम्हेहि अम्हाहि	३·११०	१५९
अत्थिस्त्यादिना	३·१४८	१७२	अम्हेहिं भिसा	४·३७८	२७६
अथ प्राकृतम्	१·१	१	अयौ वैत्	१·१६९	४५
अदस ओइ	४·३६४	२७०	अरिर्दृप्ते	१·१४४	४०
अदूतः सूक्ष्मे	१·११८	३५	अर्जेविढप्पः	४·२५१	२३०
अदेल्लुक्यादे–	३·१५३	१७३	अर्जेविढवः	४·१०८	२०४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्पेरल्लिव- ४·३९ १९१
अलाहि निवारणे २·१८९ ११५
अवतरेरोह- ४·८५ २००
अवर्णाद्वा ४·२९६ २४६
अवर्णो यश्रुतिः १·१८० ४९
अवश्यमो ४·४२७ ३०१
अवात्काशो ४·१·९ २१६
अवादगाहे- ४·२०५ २२१
अवापोते १·१७२ ४५
अविति हुः ४·६१ १९५
अवेर्जृम्भो २·१५७ २१२
अव्ययम् २·१७५ ११२
अव्वो सूचना- २·२०४ ११९
असावक्खोडः ४·१८८ २१८
अस्मदो म्मि ३·१०५ १५८
अस्येदे ४·४३३ ३०३
अहं वयमो- ४·३०१ २४७

आ

आ अरा ३·४६ १४०
आ आमन्त्र्ये ४·२६३ २३५
आ कृगो ४·२१४ २२३
आक्रन्देर्णीहरः ४·१३१ २०८
आक्रमेरोहा- ४·१६० २१३
आक्षिपेर्णीवः ४·१४५ २१०
आघ्रेराइग्घः ४·१३ १८६
आङा अहि- ४·१६३ २१४
आङा ओम- ४·१२५ २०६
आङो रभे ४·१५५ २१२
आचार्ये १·७३ २५
आच्च गौरवे १·१६३ ४४
आजस्य ३·५५ १४३
आट्टो णानु- ४·३४२ २६२
आत्कश्मीरे १·१०० ३१
आत्कृशा- १·१२७ ३६
आत्तेश्च ४·३१९ २५३
आत्मनष्टो ३·५७ १४४
आदृङेः संनामः ४·८३ १९९
आहृते ढिः १·१४३ ४०
आदेः १·३२ १७
आदेर्यो १·२४५ ६३
आदेः श्मश्रु- २·८६ ८९
आनन्तर्ये २·१८८ ११५
आन्तान्ताड्डाः ४·४३२ ३०१
आपद्विपत् ४·४०० २८५
आम अभ्युपगमे २·१७७ ११२
आमन्त्र्ये ४·३४६ २६४
आमो डाहं ४·३०० २४६
आमो डेसिं ३·६१ १४६
आमो हं ४·३३९ २६१
आयुरप्सर- १·२० १०
आरभेराढप्पः ४·२५४ २३२
आरः स्यादौ ३·४५ १४०
आरुहेश्चड- ४·२०६ २२१
आरोपेर्वलः ४·४७ १९३
आर्यायां र्यः १·७७ २५
आर्षम् १·३ ४
आलाने २·११७ ९७
आलीडोल्ली ४·५४ १९४
आल्लिबल्लोल्ला- २·१५९ १०६
आश्चर्ये २·६६ ८३
आश्लिष्टे २·४९ ८०
आ सौ न ३·४८ १४१

इ

इचेचः ४·३१८ २५३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इच्च मोमु–	३·१५५	१७४
इजेराः पाद–	२·२१७	१२३
इणममा–	३·५३	१४२
इत एद्वा	१·८५	२७
इतेः स्वरात्	१·४२	१७
इतौ तो	१·९१	२९
इत्कृपादौ	१·१२८	३६
इत्वे वेतसे	१·२०७	५६
इत्सैन्धव–	१.१४९	४१
इदम आयः	४·३६५	२७०
इदम इयः	३·७२	१४९
इदम इमुः	४·३६१	२६९
इदमर्थस्य	२·१४७	१०३
इदमेतत्–	३·६९	१४८
इदं किमश्च	२·१५७	१०५
इदानीमो	४·२७७	२३९
इदितो वा	४·१	१८४
इदुतो दीर्घः	३·१६	१२७
इदुतौ वृष्ट–	१·१३७	३९
इदेतौ नूपुरे	१·१२३	३६
इदेदोद्–	१·१३९	३९
इन्धौ झा	२·२८	७६
इर्जस्य णो–	३·५२	१४२
इर्भ्रुकुटौ	१·११०	३३
इवार्थे नं–	४·४४४	३०८
इः सदादौ	१·७२	२५
इः स्वप्नादौ	१·४६	१९
इहरा इतरथा	२·२१२	१२२
इहहचो–	४·२६८	२३७

ई

ई अइज्जो	३·११०	१७६
ईः क्षुतेः	१·११२	३३
ई च स्त्रियाम्	३·१८२	१८३
ईतः सेश्चा	३·२८	१३३
ई दुतोर्ह्रस्वः	३·४२	१३८
ईद्धैर्ये	१·१५५	४२
ईद्भिस्भ्य–	३·५४	१४२
ईद्भ्यः स्सा	३·६४	१४७
ईयस्यात्मनो	२·१५३	१०४
ईर्जिह्वा–	१·९२	२९
ईर्वोद्व्यूढे	१·१२०	३५
ईः स्त्यान–	१·७४	२५
ई र्हरे वा	१·५१	२०

उ

उअ पश्य	२·२११	१२१
उच्चार्हति	२·१११	९६
उच्चैर्नीचै–	१·१५४	४२
उच्छल	४·१७४	२१६
उज्जीर्णे	१.१०२	३२
उतो मुकुला–	१.१०७	३३
उत्क्षिपेर्गुल–	४.१४४	२१०
उत्सौन्दर्यादौ	१.१६०	४३
उदष्ठकु–	४.१७	१८७
उदूदोन्मृषि	१.१३६	३९
उदृत्वादौ	१.१३१	३७
उदोद्वा–	१.८२	२६
उदो ध्मो	४.८	१८६
उद्घटेरुग्गः	४.३३	१९०
उद्धूलेगुण्ठः	४.२९	१८९
उद्वातेरो–	४.११	१८६
उद्विजः	४.२२७	२२४
उन्नमेरु–	४.३६	१९१
उपरेः संव्याने	२.१६६	१०६
उपसर्पे र–	४.१३९	२०९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपालम्भे–	४.१५६	२१२
उमो निषण्णे	१.१७४	४६
उर्भ्रूहनुमत्–	१.१२१	३५
उल्लसेरूस–	४.२०२	२२०
उवर्णस्याव:	४.२३३	२२६
उ: सास्ना–	१.७५	२५
ऊ		
ऊ गर्हाक्षेप–	२.१९९	११८
ऊच्चोपे	१.१७३	४६
ऊत्वे दुर्भग–	१.१९२	५२
ऊत्सुभग–	१.११३	३४
ऊत्सोच्छ्वासे	१.१५७	४२
ऊद्वासारे	१.७६	२५
ऊर्हीनविहीने	१.१०३	३२
ऊ: स्तेने	१.१४७	४१
ऋ		
ऋक्षे वा	२.१९	७४
ऋणर्ज्वृषभ–	१.१४१	३९
ऋतामुदस्य–	३.४४	१३९
ऋतोत्	१.१२६	३६
ऋतोद्वा	३.३९	१३७
ऋवर्णस्यार:	४.२३४	२२६
ऌ		
ऌत इलि:	१.१४५	४०
ए		
ए इर्जस्–	४.३६३	२७०
एकशसो	४.४२८	३०१
एकस्वरे	२.११४	९७
एक्क सरिअं	२.२१३	१२२
एच्च क्त्वातुम्–	३.१५७	१७५
एच्च दैवे	१.१५३	४२
एच्छय्यादौ	१.५७	२१
एट्टि	४.३३३	२५९
एण्हि एत्ताहे	२.१३४	१००
एत इद्वा	१.१४६	४०
एतद: स्त्री–	४.३६२	२७०
एत: पर्यन्ते	२.६५	८३
एत्	३.१२९	१६५
एत् त्रयोदशादौ	१.१६५	४४
एत्थु कुत्रात्रे	४.४०५	२८७
एत्पीयूषा–	१.१०५	३२
एदोतो:	१.७	६
एद् ग्राह्ये	१.७८	२६
एप्प्येप्पिण्वे–	४.४४०	३०६
एं चेदुत:	४.३४३	२६२
एम्वर्हि	४.४२०	२९४
एरदीतौ	३.८४	१५२
एवंपरं–	४.४१८	२९१
एवार्थेय्येव	४.२८०	२४०
ऐ		
ऐत एत्	१.१४८	४१
ओ		
ओच्च द्विधा–	१.९७	३०
ओतोद्वान्यो–	१.१५६	४२
ओत्कूष्माण्डी–	१.१२४	३६
ओत्पद्मे	१.६१	२२
ओत्पूतर–	१.१७०	४५
ओत्संयोगे	१.११६	३४
ओदाल्यां पङ्क्तौ	१.८३	२७
ओ सूचना–	२.२०३	११९
औ		
औत ओत्	१.१५९	४३
क		
ककुदे ह:	१.२२५	५९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ककुभो हः	१.२१	१०	किलाथवा–	४.४१९	२९३
क ग च ज—	१.१७७	४७	किसलय–	१.२६९	६८
क ग ट ड—	२.७७	८६	कुतसः कउ	४.४१६	२९१
कथंयथा—	४.४०१	२८१	कुतूहले	१.११७	३५
कथेर्वज्जर—	४.२	१८४	कुब्जकर्पर–	१.१८१	४९
कदम्बे वा	१.२२२	५९	कूष्माण्ड्यां	२.७३	८५
कर्दथिते	१.२२४	५९	कृगमो	४.२७२	२३८
कदल्याम—	१.२२०	५९	कृगेः कुणः	४.६५	१९६
कन्दरिका—	२.३८	७८	कृगो डीरः	४.३१६	२५३
कबन्धे मयौ	१.२३९	६३	कृत्तिचत्वरे	२.१२	७२
कमेर्णि हुवः	४.४४	१९२	कृत्वसो हुत्तं	२.१५८	१०६
कम्पेर्विच्छोलः	४.४६	१९२	कृदो हं	३.१७०	१७८
करवीरे	१.२५३	६५	कृषेः कड्ढ–	४.१८७	२१८
करेणूवारा—	२.११६	९७	कृष्णे वर्णे	२.११०	९६
कर्णिकारे	२.९५	९२	कैटभे भो	१.२४०	६३
कश्मीरे	२.६०	८२	कौक्षेयके	१.१६१	४३
काङ्क्षेराहा—	४.१९२	२१९	क्ते	३.१५६	१७४
काणेक्षिते	४.६६	१९६	क्तेनाप्फुण्णा–	४.२५८	२३३
कादिस्थैदो—	४.४१०	२८८	क्ते हूः	४.६४	१९६
कान्तस्यात	४.३५४	२६७	क्त्व दूउइवि–	४.४३९	३०६
कार्षापणे	२.७१	८४	क्त्वईयदूणौ	४.२७१	२३८
किणो प्रश्ने	२.२१६	१२२	क्त्वस्तुमत्तूण–	२.१४६	१०३
किमः कस्त्र	३.७१	१४९	क्त्वस्तूनः	४.३१२	२५२
किमः काइ—	४.३६७	२७१	क्त्वातुमुत्तव्येषु	४.२१०	२२२
किमः किं	३.८०	१५१	क्त्वास्यादे–	१.२७	१२
किमो डिणो	३.६८	१४८	क्यङोर्यलुक्	३.१३८	१६८
किमो डिहे	४.३५६	२६७	क्यस्येय्यः	४.३१५	२५२
कितद्भ्यां	३.६२	१४६	क्रपोवहो	४.१५१	२११
कियत्तदो—	३.३३	१३६	क्रियः किणो	४.५२	१९३
कियत्तद्भ्यो	३.६३	१४६	क्रियातिपत्तेः	३.१७९	१८२
किंशुके वा	१.८६	२८	क्रियेः कीसु	४.३८९	२८०
किराते चः	१.१८३	५०	क्रुधेर्जूरः	४.१३५	२०८
किरिभेरे	१.२५१	६५	क्लीबे जस्शसो	४.३५३	२६७
किरेर हिर	२.१८६	११४	क्लीबे स्यमे–	३.७९	१५१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्लीबे स्वरा—	३·२५	१३२
क्वचिद् द्वितीयादेः	३·१३४	१६७
क्वथवर्धां	४·२२०	२२४
क्वथेरट्टः	४·११९	२०६
क्विपः	३·४३	१३९
क्षः खः क्वचित्तु	२·३	७०
क्षण उत्सवे	२·२०	७४
क्षमायां कौ	२·१८	७३
क्षरः खिर—	४·१७३	२१५
क्षस्य ᳵ कः	४·२९६	२४५
क्षिपेर्गल—	४·१४३	२१०
क्षुदो हा	१·१७	९
क्षुभे खउर—	४·१५४	२११
क्षुरे कम्मः	४·७२	१९७
क्षेर्णिज्झरो	४·२०	१८८
क्ष्माश्लाघा—	२·१०१	९३
क्ष्वेटकादौ	२·६	७१
ख		
खघथध—	१·१८७	५१
खचितपिशा—	१·१९३	५२
खचेर्वेअडः	४·८९	२००
खादधावो—	४·२२८	२२५
खिदेर्जूर—	४·१३२	२०८
ग		
गमादीनां	४·२४९	२३१
गमिष्वमासां	४·२१५	२२३
गमेरई—	४·१६२	२१३
गमेरेप्पि—	४·४४२	३०७
गर्जेर्बुक्कः	४·९८	२०२
गर्ते डः	२·३५	७८
गर्दभे वा	२·३७	७८
गर्भितातिमुक्तके	१·२०८	५६
गवये वः	१·५४	२१

गवेषेर्ढुण्ढुल्ल—	४·१८९	२१८
गव्यउआअः	१·१५८	४३
गुणाद्याः क्लीबे	१·३४	१५
गुप्येर्विर—	४·१५०	२११
गुरौ के वा	१·१०९	३३
गुर्वादेरविर्वा	३·१५०	१७२
गृहस्य घरो—	२·१४४	१०२
गोणादयः	२·१७४	११०
गौणस्येषत	२·१२९	९९
गौणान्त्यस्य	१·१३४	३८
ग्मो वा	२·६२	८२
ग्रन्थेर्गण्ठः	४·१२०	२०६
ग्रसेर्घिसः	४·२०४	२२१
ग्रहेर्गृण्हः	४·३९४	२८१
ग्रहेर्घेप्पः	४·२५६	२३२
ग्रहो वल—	४·२०९	२२२
घ		
घइमादयो—	४·४२४	३००
घञ् वृद्धे—	१·६८	२४
घटेर्गढः	४·११२	२०४
घटेः परिवाडः	४·५०	१९३
घूर्णो घुल—	४·११७	२०५
ङ		
ङञणनो	१·२५	११
ङसः सुहो—	४·३३८	२६१
ङसः स्सः	३·१०	१२६
ङसिङसोः	३·२३	१३१
ङसिङस्भ्यां	४·३७२	२७४
ङसिभ्यस्—	४·३४१	२६२
ङसेस्तोदो—	३·८	१२५
ङसेर्म्हा	३·६६	१४७
ङसेर्लुक्	३·१२६	१६५
ङसेर्हेंहू	४·३३६	२६०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ङस्ङस्योर्हुं	४.३५०	२६५
ङिनेच्च	४.३३४	२५९
ङेर्डाहे	३.६५	१४७
ङेर्डे:	३.१२८	१६५
ङेर्मेंम	३.७५	१५०
ङे: स्सिम्मि–	३.५९	१४५
ङेर्हि	४.३५२	२६६
ङेर्हिं	४.३५७	२६८

च

चतुरश्चत्तारो	३.१२२	१६२
चतुरो वा	३.१७	१२८
चतुर्थ्याः षष्ठी	३.१३१	१६६
चन्द्रिकायां	१.१८५	५०
चपेटापाटौ	१.१९८	५३
चाटौ गुलल:	४.७३	१९८
चिजिप्रुहु–	४.२४१	२२८
चिह्ने न्धो वा	२.५०	८०
चूलिकापैशाचिके	४.३२५	२५५

छ

छदेर्णेर्णुम—	४.२१	१८८
छस्य श्चोनादौ	४.२९५	२४५
छागे ल:	१.१९१	५२
छायायां होकान्तौ	१.२४९	६४
छायाहरिद्रयो:	३.३४	१३६
छिदिभिदो	४.२१६	२२३
छिदेर्दुहाव–	४.१२४	२०६
छोक्ष्यादौ	२.१७	७३

ज

जटिले जो	१.१९४	५२
जद्यां य:	४.२९२	२४४
जनोजाजम्मौ	४.१३६	२०८
जस्शस इं–	३.२६	१३२
जस्शसोरम्हे	४.३७६	२७५
जस्शसोर्णो	३.२२	१३०
जस्शसोर्लुक्	३.४	१२४
जस्शसोस्तुम्हे	४.३६९	२७२
जस्शस्ङसिङसां	३.५०	१४१
जस्शस्ङसित्तो–	३.१२	१२६
जाग्रेर्जग्ग:	४.८०	१९९
जुगुप्सेर्झुण–	४.४	१८५
जेण तेण	२.१८३	११३
ज्जा ज्जे	३.१५९	१७५
ज्जात्सप्तम्या	३.१६५	१७७
ज्ञो जाणमुणौ	४.७	१८५
ज्ञो ञ:	२.८३	८८
ज्ञो ञ: पैशाच्याम्	४.३०३	२४९
ज्ञो णत्वे भिज्ञादौ	१.५६	२१
ज्ञो णव्वणज्जौ	४.२५२	२३१
ज्यायामीत्	२.११५	९७

ट

ट ए	४.३४९	२६५
टा आमोर्णः	३.६	१२५
टाङस्ङे–	३.२९	१३४
टाड्यमा पइं	४.३७०	२७३
टाड्यमा मइं	४.३७७	२७५
टाणशस्येत्	३.१४	१२७
टो ड:	१.१९५	५३
टो णा	३.२४	१३१
टो णा	३.५१	१४२
टोस्तुर्वा	४.३११	२५१
ट्टष्ठयोस्ट:	४.२९०	२४३

ठ

ठो ढ:	१.१९९	५३
ठोस्थिविसंस्थुले	२.३२	७७

ड

डाहवौ कतिपये	१.२५०	६५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डिल्ल डुल्लौ	२·१६३	१०७	तस्मात्ता:	४·२७८	२३९
ङे म्मि ङे:	३·११	१२६	तादर्थ्यङेर्वा	३·१३२	१६६
ङो दीर्घो वा	३·३८	१३७	तादर्थ्ये केहिं—	४·४२५	३००
डो ल:	१·२०२	५४	ताम्राम्रे म्ब:	२·५६	८१
ड्मक्मो:	२·५२	८०	तिजेरो सुक्क:	४·१०४	२०३
ण			तित्तिरो र:	१·९०	२९
णइ चेअ	२·१८४	११४	तिर्यचस्ति—	२·१४३	१०२
णं नन्वर्थे	४·२८३	२४१	तिष्ठश्चिष्ठ:	४·२९८	२४६
णवर केवले	२·१८७	११५	तीक्ष्णे ण:	२·८२	८८
णवि वैपरीत्ये	२·१७८	११२	तीर्थे हे	१·१०४	३२
णे णं मि	३·१०७	१५९	तुच्छे तश्चछौ	१·२०४	५५
णे णो मज्झ	३·११४	१६०	तुडेस्तोड—	४·११६	२०५
णेरदेदावावे	३·१४९	१७१	तु ज्रु वतुम—	३·१०२	१५८
णो न:	४·३०६	२५०	तुब्भतुय्हो—	३·९८	१५६
णोमृशस्टा—	३·७७	१५०	तुम ए वभ—	४·४४१	३०७
त			तुमे तुमए	३·१०१	१५७
तइतुते—	३·९९	१५७	तुम्हासु सुपा	४·३७४	२७४
तइतुव—	३·९६	१५६	तुय्ह तुब्भ	३·९७	१५६
तक्षेस्तच्छ—	४·१९४	२१९	तुरोत्यादौ	४·१७२	२१५
तक्ष्यादीनां	४·३९५	२८१	तुले रो ह्राम:	४·२५	१८६
तगरत्रसर—	१·२०५	५५	तु वो भे	३·१००	१५७
तडेराहोड—	५·२७	१८९	तृतीयस्य मि:	३·१४१	१६९
ततस्तदोस्तो:	४·११७	२०५	तृतीयस्य मो—	३·१४४	१७०
तदश्च त:	३·८६	१५३	तृनोण अ:	४·४४३	३०८
तदिदमोष्टा	४·३२२	२५४	तृपस्थिप्प:	४·१३८	२०९
तदो डो:	३-६७	१४८	तेनास्तेरा—	३·१६४	१७७
तदो ण:	३·७०	१४८	तैलादौ	२·९८	९२
तदोस्त:	४·३०७	२५०	तो दोनादौ	४·२६०	२३४
तनेस्तड—	४·१३७	२०९	तो न्तरि	१·६०	२२
तन्वीतुल्येषु	२·११३	९६	त्तो दो तसो	२·१६०	१०७
तं तुं तुमं	३·९२	१५५	त्थे च तस्य	३·८३	१५२
तं वाक्योप—	२·१७६	११२	त्यदाद्य व्ययात्	१·४०	१७
तव्यस्य इएव्वउं	४·४३८	३०५	त्यादिशत्रो—	४·१७१	२१५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्यादीनामा–	३·१३९	१६८
त्यादेः	१·९	७
त्यादेराद्य–	४·३८२	२७७
त्योचैत्ये	२·१३	७२
त्रपो हिहत्थाः	२·१६१	१०७
त्रसेर्डर–	४·१९८	२२०
त्रस्तस्य हित्थ–	२·१३६	१००
त्रस्य डेत्तहे	४·४३६	३०४
त्रेस्तिण्णिः	३·१२१	१६२
त्रेस्ती तृतीयादौ	३·११८	१६१
त्वतलोः	४·४३७	३०५
त्वथ्वद्वध्वां	२·१५	७२
त्वरस्तुवर–	४·१७०	२१५
त्वस्थ डिमा–	२·१५४	१०५
त्वादेः सः	२·१७२	१०९
थ		
थठावस्पन्दे	१·९	७१
थू कुत्सायाम्	२·२००	११८
थो धः	४·२६७	२३७
द		
दक्षिणे हे	१·४५	१९
दग्धविदग्ध–	२·४०	७८
दंशदहोः	१·२१८	५८
दंष्ट्रायादाढा	२·१३९	१०१
दराधाल्पे	२·२१५	१२२
दलिवल्यो–	४·१७६	२१६
दशनदष्ट–	१·२१७	५८
दशपाषाणे	१·२६२	६७
दशार्हे	२·८५	८९
दहेरहिऊला–	४·२०८	२२१
दहो ज्झः	४·२४६	२३०
दिक्प्रावृषोः	१·१९	९
दिरिचेचोः	४·२७३	२३८
दिवसे सः	१·२६३	६७
दीपौ धो वा	१·२२३	५९
दीर्घह्रस्वौ	१·४	४
दीर्घे वा	२·९१	९१
दुकूले वा	१·११९	३५
दुःखदक्षिण–	२·७२	८४
दुःखे णिव्वरः	४·३	१८४
दुःखे णिव्वलः	४·९२	२०१
दुर्गादेव्युदु–	१·२७०	६९
दुरे दोण्णि	३·१२०	१६२
दु सु मु	३·१७३	१८०
दुहितृ–	२·१२६	९९
दूङो दूमः	४·२३	१८८
दृप्ते	२·९६	९२
दृशः क्विप्	१·१४२	४०
दृशस्तेन	४·२१३	२२२
दृशिवचे–	३·१६१	१७६
दृशेः प्रस्सः	४·३९३	२८१
दृशेर्दाव	४·३२	१९०
दृशो निअच्छा–	४·१८१	२१७
दे संमुखी–	२·१९६	११७
दोले रंखोलः	४·४८	१९३
द्धूनत्थूनौ	४·३१३	२५२
द्यय्यर्यां जः	२·२४	७५
द्रे रो न वा	२·८०	८८
द्वारे वा	१·७९	२६
द्वितीयतुर्य–	२·९०	९०
द्वितीयस्य	३·१४०	१६९
द्वितीया–	३·१३५	१६७
द्विन्योरुत्	१·९४	३०
द्विवचनस्य	३·१३०	१६६
द्वेर्दोवे	३·११९	१६२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध		
धनुषो वा	१·३२	१०
धवलेर्दुमः	४·२४	१८८
धातवोर्था–	४·२५९	२३३
धात्र्याम्	२·८१	८८
धूगेर्धूवः	४·५९	१९१
धुतेर्दिहिः	२·१३१	१००
धृष्टद्युम्ने	२·९४	९१
धैर्ये वा	२·६४	८२
ध्यागोर्झा–	४·६	१८५
ध्वजे वा	२·२७	७५
ध्वनिविष्व–	१·५२	२०
न		
न कगच–	४·३२४	२५५
न त्थः	३·७६	१५०
न दीर्घानु–	२·९२	९१
न दीर्घो णो	३·१२५	१६४
नमस्कार–	१·६२	२२
न युवर्णस्यास्वे	१·६	५
न वा कर्म–	४·२४२	२२९
न वानिद–	३·६०	१४५
न वा मयूख–	१·१७१	४५
न वा र्यो य्यः	४·२६६	२३६
नशेर्णिरणास–	४·१७८	२१६
नशेर्विउड–	४·३१	१९०
न श्रदुदोः	१·१२	८
नात आत्	३·३०	१३५
नात्पुनर्या–	१·६५	२३
नादियुज्यो–	४·३२७	२५६
नामन्त्र्यात्	३·३७	१३७
नाम्न्यरं वा	३·४०	१३८
नाम्न्यरः	३·४७	१४१
नावर्णात्पः	१·१७९	४९
नाव्यावः	१·१६४	४४
निकषस्फटिक–	१·१८६	५०
निद्रातेरो	४·१२	१८६
निम्बनापिते	१·२३०	६०
निरः पदे	४·१२८	२०७
निर्दुरोर्वा	१·१३	८
निर्मो निम्माण	४·१९	१८७
निलीङे–	४·५५	१९४
निवृत्त–	१·१३२	३८
निवृपत्यो–	४·२२	१८८
निशीथ–	१·२१६	५८
निःश्वसे–	४·२०१	२२०
निषधे धो	१·२२६	६०
निषेधेर्हक्कः	४·१३४	२०८
निष्टम्भाव–	४·६७	१९६
निष्पाताच्छोटे	४·७१	१९७
निष्प्रती ओत्	१·३८	१६
निस्सरेर्णीहर–	४·७९	१९९
नीडपीठे	१·१०६	३२
नीपापीडे	१·२३४	६१
नेः सदो मज्जः	४·१२३	२०६
नो णः	१·२२८	६०
न्त माणौ	३·१८०	१८२
न्मो मः	२·६१	८२
न्यण्यज्ञञ्जां	४·२९३	२४४
न्यण्योर्ञ्ञः	४·३०५	२५०
न्यसो णिम–	४·१९९	२२०
प		
पक्वाङ्गार–	१·४७	१९
पक्ष्मश्मष्म–	२·७४	८५
पचेः सोल्ल	४·९०	२०१
पञ्चम्यास्तृतीया	३·१३६	१६७
पञ्चाशत्–	२·४३	७९
पथिपृथिवी–	१·८८	२८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पयोण्यस्ये–	२·१५२	१०४
पदयोः संधिर्वा	१·५	५
पदादपेर्वा	१·४१	१७
पदान्ते उं–	४·४११	२८९
पद्मछद्म	२·११२	९६
परराजभ्यां	२·१४८	१०३
परस्परस्यादिरः	४·४०९	२८८
पर्यसः पलोट्ट–	४·२००	२२०
पर्यस्तपर्याण–	२·६८	८३
पर्यस्ते थटौ	२·४७	७९
पर्याणे डा	१·२५२	६५
पलिते वा	१·२१२	५७
पश्चादेव–	४·४२०	२९४
पाटिपरुष–	१·२३२	६१
पानीयादि–	१·१०१	३१
पापर्द्धौ रः	१·२३५	६१
पारापते	१·८०	२६
पिठरे हो	१·२०१	५४
पिबेः पिज्ज–	४·१०	१८६
पिषेर्णिवह–	४·१८५	२१८
पीते वो ले	१·२१३	५७
पुञ्जे रारोल–	४·१०२	२०३
पुणरुत्तं	२·१७९	११९
पुनर्विनः	४·४२६	३०१
पुन्नाग–	१·१९०	५२
पुंसि जसो	३·२०	१२९
पुंस्त्रियोर्न	३·७३	१४९
पुंस्यन आणो	३·५६	१४३
पुरुषे रोः	१·१११	३३
पूरेरग्घाडा	४·१६९	२१५
पूर्वस्य पुरवः	४·२७०	२३७
पूर्वस्य पुरिमः	२·१३५	१००
पृथकि धो	१·१८८	५२
पृथक् स्पष्टे	४·६२	१९५
पृष्ठे वानुत्तर–	१·१२९	३७
पो वः	१·२३१	६०
प्यादयः	२·२१८	१२३
प्रकाशेर्णुव्वः	४·४५	१९२
प्रच्छः पुच्छः	४·९७	२०२
प्रतीक्षेः सामय–	४·१९३	२१९
प्रत्यये ङीर्न	३·३१	१३५
प्रत्याङा पलोट्टः	४·१६६	२१४
प्रत्यादौ डः	१·२०६	५५
प्रत्यूषे	२·१४	७२
प्रत्येकमः	२·२१०	१२१
प्रथमे पथोर्वा	१·५५	२१
प्रदीपिदोहदे	१·२२१	५९
प्रदीपेस्तेअव	४·१५२	२११
प्रभूते वः	१·२३३	६१
प्रभौ हुप्पो	४·६३	१९५
प्रवासीक्षौ	१·९५	३०
प्रविशे रिअः	४·१८३	२१७
प्रसरेः पयल्लो–	४·७७	१९८
प्रस्थापेः पट्ठव–	४·३७	१९१
प्रहृगेः सारः	४·८४	२००
प्रादेर्मीलेः	४·२३२	२२६
प्रान्मृशमुषोः–	४·१८४	२१७
प्रायसः प्राउ	४·४१४	२९०
प्रावरणे	१·१७५	४६
प्रावृट्शर–	१·३१	१३
प्लक्षे लात्	२·१०३	९४
प्लावेरोम्वाल	४·४१	१९२
फ		
फक्कस्थक्कः	४·८७	२००
फो भहौ	१·२३६	६२
ब		
बन्धो न्धः	४·२४७	२३०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बले निर्धारण— २·१८५ ११४
बहि सो बाहि २·१४० १०१
बहुत्वे हुं ४·३८६ २७९
बहुत्वे हुः ४·३८४ २७८
बहुलम् १·२ ४
बहुषु न्तु ३·१७६ १८१
बहुष्वाद्यस्य ३·१४२ १६९
बाष्पे होश्रुणि २·७० ८४
बाहोरात् १·३६ १६
बिसिन्यां भः १·२३८ ६२
बुभुक्षि वीज्योः— ४·५ १८५
बृहस्पति— २·६९ ८४
बृहस्पतौ २·१३७ १०१
बो वः १·२३७ ६२
ब्भो दुहलिह— ४·२४५ २३०
ब्भो म्ह ज्झौ ३·१०४ १५८
ब्रह्मचर्यं— २·६३ ८२
ब्रह्मचर्ये १·५९ २२
ब्रूगो ब्रुवो ४·३९१ २८१

भ

भञ्जेर्वेमय— ४·१०६ २०३
भवद्भगवतोः ४·२६५ २३६
भविष्यति स्सः ४·२७५ २३९
भविष्यति हिरादिः ३·१६६ १७७
भविष्यत्येय्य ४·३२० २५४
भवेभुक्कः ४·१८६ २१८
भस्मात्मनोः २·५१ ८०
भाराक्रान्ते ४·१५८ २१२
भावेभिसः ४·२०३ २३१
भियो भाबीहो ४·५३ १९४
भिसा तुम्हेहिं ४·३७१ २७३
भिसो हि ३·७ १२५
भिस्भ्यस्सुपि ३·१५ १२७
भिस्येद्वा ४·३३५ २६०
भिस्सुपोर्हिं ३·३४७ २६४
भीष्मे ष्मः २·५४ ८१
भुजो भुञ्ज— ४·११० २०४
भुवः पर्याप्तौ ४·३९० २८०
भुवेर्हो— ४·६० १९५
भुवो भः ४·२६९ २३७
भे तुब्भे ३·९१ १५४
भे तुब्भे ३·९१ १५४
भे तुब्भेहिं ३·९५ १५५
भे दि दे ३·९४ १५५
भ्यसश्च हिः ३·१२७ १६५
भ्यसस्तोदो— ३·९ १२५
भ्यसामोर्हुं ४·३५१ २६६
भ्यसाम्भ्यां ४·३७३ २७४
भ्यसि वा ३·१३ १२६
भ्यसो हुं ४·३३७ २६०
भ्रमरे सो १·२४४ ६३
भ्रमे राडो ३·१५१ १७१
भ्रमेष्टिरि— ४·१६१ २१३
भ्रमेस्तालि— ४·३० १८९
भ्रंशेः फिड— ४·१७७ २१६
भ्रुवो मया २·१६७ १०९

म

मइमम ३·१११ १६०
मणे विमर्शे २·२०७ १२१
मण्डेश्चिञ्च— ४·११५ २०५
मधूके वा १·१२२ ३५
मध्यत्रय— ४·३८३ २७७
मध्यमकतमे १·४८ २०
मध्यमस्ये— ३·१४३ १७०
मध्याह्ने हः २·८४ ८९
मध्ये च स्वरान्ता— ३·१७८ १८२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ममाको न	२·१६९	१०९
मन्थेर्घुसल–	४·१२१	२०६
मन्मथे वः	१·२४२	६३
मन्युनौष्ठ–	४·६९	१९७
मन्यौन्तो वा	२·४४	७९
ममाम्हौ भ्यसि	३·११२	१६०
मयट्यइर्वा	१·५०	२०
मरकतमद–	१·१८२	५०
मलिनोभय–	२·१३८	१०१
मसृणमृगाङ्क–	१·१३०	३७
मस्जेराउड्ड–	४·१०१	२०३
महमहो	४·७८	१९८
महाराष्ट्रे	१·६९	२४
महाराष्ट्रे हरोः	२·११९	९८
महु मज्झु	४:३७९	२७६
माइं मार्थे	२·१९१	११५
मातुरिद्वा	१·१३५	३८
मातृपितुः	२·१४२	१०२
मात्रटि वा	१·८१	२६
मामिहला	२·१९५	११६
मांसादिष्व–	१·७०	२४
मांसादेर्वा	१·२९	१२
मार्जारस्य	२·१३२	१००
मि मइ ममाइ	३·११५	१६१
मि मे ममं	३·१०९	१५९
मि मो मु मे	३·१६७	१७८
मिमो मैर्म्हि–	३·१४७	१७१
मिरायाम्	१·८७	२८
मिव पिव	२·१८२	११३
मिश्राड्डालिअः	२·१७०	१०९
मिश्रेर्वीसाल–	४·२८	१८९
मुचेश्छड्डा–	४·९१	२०१
मुः स्यादौ	३·८८	१५३
मुहेर्गुम्म–	४·२०७	२२१
मृजेरुग्घुस–	४·१०५	२०३
मृदो मल–	४·१२६	२०७
मेथिशिथिर–	१·२१५	५८
मे मइ मम	३·११३	१६०
मेः स्सं	३·१६९	१७८
मोनुनासिको	४·३९७	२८४
मोनुस्वारः	१·२३	१०
मोन्त्याण्णो	४·२७१	२३९
मोमुमाणं	३·१६८	१७८
मोरउल्ला	२·२१४	१२२
मो वा	४·२६४	२३६
मौ वा	३·१५४	१७४
म्नज्ञोर्णः	२·४२	७९
म्मश्चेः	४·२४३	२२९
म्मावयेऔ	३·८९	१५४
म्रक्षेश्चोप्पडः	४·१९१	२१९
म्लेर्वापव्वा–	४·१८	१८७
म्हो म्भो वा	४·४१२	२८९
य		
यत्तत्किम्भ्यो	४·३५८	२६८
यत्तदः स्यमो–	४·३६०	२६९
यत्तदेतदो–	२·१५६	१०५
यत्रतत्र–	४·४०४	२८७
यमुनाचामुण्डा–	१·१७८	४८
यष्ट्यां लः	१·२४७	६३
यादृक्तादृ–	४·४०२	२८६
यादृशादे–	४·३१७	२५३
यापेर्जवः	४·४०	१९१
यावत्ताव–	१·२७१	६९
यावत्तावतो–	४·४०६	२८७
युजोजुञ्ज–	४·१०९	२०४
युधबुध–	४·२१७	२२३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

युधिष्ठिरे	१.९६	३०
युवर्णस्य	४.२३७	२२७
युष्मदस्तं	३.९०	१५४
युष्मदस्म–	२.१४९	१०४
युष्मदः सौ	४.३६८	२७२
युष्मदादे–	४.४३४	३०४
युष्मद्यर्थ–	१.२४६	६४
योगजाश्चैषाम्	४.४३०	३०२
र		
रक्ते गो वा	२.१०	७२
रचेरुग्ग–	४.९४	२०१
रञ्जे रावः	४.४९	१९१
रमेः संखुड्ड–	४.१६८	२१५
रसोर्लशौ	४.२८८	२४२
रस्य लो वा	४.३२६	२५६
रहोः	२.९३	९१
राजेरग्ध–	४.१००	२०२
राज्ञः	३.४९	१४१
राज्ञो वा चिञ्	४.३०४	२५०
रात्रौ वा	२.८८	८९
रिः केवलस्य	१.१४०	३९
रुते रुञ्जु–	४.५७	१९४
रुदनमो	४.२२६	२२५
रुदभुज–	४.२१२	२२२
रुदिते दिना	१.२०९	५६
रुधेरुत्थंघः	४.१३३	२०८
रुधो न्धम्भौ	४.२१८	२२३
रुष्यादीनां	४.२३६	२२७
रे अरे	२.२०१	११८
रो दीर्घात्	२.१७१	१०९
रोमन्थेरो–	४.४३	१९२
रो रा	१.१६	९
लंस्याधूर्ता–	२.३०	७५
यंस्नष्टां	४.३१४	२५२
लुंकि दुरो	१.११५	३४
लुंकि निरः	१.९३	२९
शर्षतप्त—	२.१०५	९४
र्हंश्रीह्री—	२.१०४	९४
ल		
लघुके लहोः	२.१२२	९८
ललाटे च	१.२५७	६६
ललाटे लडोः	२.१२३	९८
लस्जेर्जीहः	४.१०३	२०३
लात्	२.१०६	९५
लाहल—	१.२५६	६६
लिङ्गमतन्त्रम्	४.४४५	३०९
लिपो लिम्पः	४.१४९	२११
लूक्	१.१०	७
लुगावी क्त—	३.१५२	१७३
लुग् भाजन—	१.२६७	६८
लुप्तयरव—	१.४३	१८
लुप्ते शसि	३.१८	१२८
लुभेः संभावः	४.१५३	२११
लोठः	४.३०८	२५१
ल्लो नवैका—	२.१६५	१०८
व		
वक्रादावन्तः	१.२६	११
वचो वोत्	४.२११	२२२
वर्चेर्वेहव—	४.९३	२०१
वणे निश्चय—	२.२०६	१२०
वतेर्व्वः	२.१५०	१०४
वधाड्डाइ–	३.१३३	१६६
वनिताया	२.१२८	९९
वन्द्रखण्डिते	१.५३	२०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्गेन्त्यो वा	१·३०	१३	विवृतेढंसः	४·११८	२०५
वर्तमानापञ्चमी-	३·१५८	१७५	विश्रमेर्णिव्वा	४·१५९	२१३
वर्तमानाभवि-	३·१७७	१८१	विषण्णोक्त-	४·४२१	२९५
वत्स्यंतिस्यस्य	४·३८८	२८०	विषमे मो	१·२४१	६३
वल्ल्युत्कर-	१·५८	२२	विसंवदे-	४·१२९	२०७
वा कदले	१·१६७	४४	विस्मुः पम्हुस-	४·७५	१९८
वाक्यर्थवच-	१·३३	१४	वीप्स्यात्स्यादे-	३·१	१२४
वादसोऽस्य	३·८७	१५३	वृक्षक्षिप्त-	२·१२७	९९
वादेस्तावति	४·२६२	२३५	वृत्तप्रवृत्त-	२·२९	७६
वादौ	१·२२९	६०	वृन्ते ण्टः	२·३१	७७
वाधो रो लुक्	४·३९८	२८४	वृश्चिके श्चे-	२·१६	७३
वा निर्झरे	१·९८	३१	वृषभे वा	१·१३३	३८
वान्यथोनुः	४·४१५	२९१	वृषादीना-	४·२३५	२२७
वाप ए	३·४१	१३८	वृषे ढिक्कः	४·९९	२०२
वा बृहस्पतौ	१·१३८	१३९	वेणौ णो वा	१·२०३	५५
वाभिमन्यौ	१·२४३	६३	वेतः कर्णिकारे	१·१६८	४४
वा यत्तदो-	४·४०७	२८८	वेदंकिमो	४·४०८	२८८
वापौ	१·६३	२२	वेदंतदे-	३·८१	१५१
वालाब्वरण्ये	१·६६	२३	वेपेराय-	४·१४७	२१०
वा विह्वले	२·५८	८१	वेमाञ्जल्याद्याः	१·३५	१५
वाव्ययोत्खा-	१·६७	२३	वेव च	२·१९४	११६
वा स्वरेमश्च	१·२४	१०	वेव्वे भय-	२·१९३	११६
विकसेः	४·१९५		वेष्टः	४·२२१	२२४
विकोशेः	४·४२	१८२	वेष्टेः परि-	४·५१	१९३
विगलेस्थिप्प-	४·१७५	२१६	वैकाद्दः सि	२·१६२	१०७
विज्ञपेर्वोक्का-	४·३८	१९१	वैडूर्यस्य	२·१३३	१००
वितस्तिवसति-	१·२१४	५७	वैतत्तदः	३·३	१२४
विद्युत्पत्र-	२·१७३	११०	वैतदो ङसे-	३·८२	१५२
विपात्यादे-	१·२८	१२	वैरादौ वा	१·१५२	४२
विरिचेरो-	४·२६	१८९	वैसेणमि-	३·८५	१५२
विलपेर्झङ्ख	४·१४८	२१०	वो नुज्झ	३·९३	१५५
विलीङेर्विरा-	४·५६	१९४	वोतो डवो	३·२१	१३०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बीतरीबा—	१·२४८	६४
वोत्साहे थो	२·४८	८०
वोद:	४·२२३	२२४
वोपरी	१·१०८	३३
वोपेन कम्मव·	४·१११	२०४
वोर्ध्वे	२·५९	८२
वौषधे	१·२२७	६०
व्यञ्जनाद—	४·२३९	२२८
व्यञ्जनादी—	३·१६३	१७७
व्यत्ययश्च	४·४४७	३१०
व्याकरण	१·२६८	६८
व्यापेरो अग्ग:	४·१४१	२०९
व्याप्रेरा अड्ड:	४·८१	१९९
व्याहृगे: कोक्क—	४·७६	१९८
व्याहृगेर्वा	४·२५३	२३२
व्रजनृत—	४·२२५	२२५
व्रजेर्वुज:	४·३९२	२८१
व्रजो ज:	४·२९४	२४५
श		
शकादीनां	४·२३	२२६
शकेश्चय—	४·८६	२००
शक्तमुक्त—	२·२	७०
शत्रानशः	३·१८१	१८३
शदो झड—	४·१३०	२०८
शनैसो डिअं	२·१६८	१०९
शबरे बो	१·२५८	६६
शमे: पडिसा—	४·१६७	२१४
शरदादेरत्	१·१८	९
शषो: स:	१·२६०	६७
शषो: स:	४·३०९	२५१
शाङ्गें ङात्	२·१००	९३
शिथिलेङ्गुदे	१·८९	२८
शिरायां वा	१·२६६	६८
शीकरे भहौ	१·१८४	५०
शीघ्रादीनां	४·४२२	२९५
शीलाद्यर्थ—	२·१४५	१०२
शुल्के ङ्गो वा	२·११	७२
शुष्कस्कन्दे	२·५	७१
शृङ्खले खः	१·१८९	५२
शेषं प्राकृतवत्	४·२८६	२४१
शेषं प्राग्वत्	४·३२८	२५७
शेषं शौरसेनीवत्	४·३०२	२४७
शेषं शौरसेनीवत्	४·३२३	२५५
शेषं संस्कृतवत्	४·४४८	३११
शेषेदन्तवत्	३.१२४	१६३
शैथिल्यलम्बने	४·७०	१९७
शौरसेनीवत्	४·४४६	३१०
श्चो हरिश्चन्द्रे	२·८७	८९
श्यामाके म:	१·७१	२५
श्रदो धो दहः	४·९	१८६
श्रद्धर्धिमूर्धा	२.४१	७८
श्रमेर्वावम्फ:	४·६८	१९७
श्रुगमिरुदि—	३·१७१	१७८
श्रुटेर्हण:	४·५८	१९४
श्लाघ: सलहः	·८८	१००
श्लिषे: सामग्गा—	४·१९०	२१८
श्लेष्मणि वा	१·५५	८१
ष		
षट्शमी—	१·१६५	६८
षष्ठ्या:	४·३४५	२६३
ष्कस्कयो—	२·४	७०
ष्टस्यानुष्ट्रे—	२·३४	७७
ष्पस्पयो: फ:	२·५३	८१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स

सङ्ख्यागद्गदे	१·२१९	५८	सुपा अम्हासु	४·३८१	२७७
सङ्ख्याया आमो	३·१२३	१६२	सुपि	३·१०३	१५८
सटाशकट	१·१९६	५३	सुपि	३·११७	१६१
सदपतोर्डः	४·२१९	२२४	सूक्ष्मश्नष्ण–	२·७५	८५
सन्तपेर्झङ्खः	४·१४०	२०९	सृजोरः	४·२२९	२२५
सन्दिशेरप्पाहः	४·१८०	२१७	सेवादौ वा	२·९९	९३
सप्ततौ रः	१·२१०	५७	सैन्ये वा	१·१५०	४१
सप्तपर्णे वा	१·४९	२०	सोच्छादय	३·१७२	१७९
सप्तम्या द्वितीया	३·१३७	१६८	सोहिर्वा	३·१७४	१८०
समनूपा–	४·२४८	२३०	सौ पुंस्योद्वा	४·३३२	२५८
समः स्त्यः खाः	४·१५	१८७	स्कः प्रेक्षाचक्षोः	४·२९७	२४६
समा अब्भिडः	४·१६४	२१४	स्तब्धे ठढौ	२·३९	७८
समापेः समाणः	४·१४२	२०९	स्तम्भे स्तो वा	२·८	७१
समारचे–	४·९५	२०२	स्तवे वा	२·४६	७९
समासे वा	२·९७	९२	स्तस्य थो	२·४५	७९
समो गलः	४·११३	२०५	स्तोकस्य	२·१२५	९९
समो ल्लः	४·२२२	२२४	स्त्यानचतुर्था	२·३३	७७
सम्भावेरा–	४·३५	१९०	स्त्रिया इत्थी	२·१३०	१००
सम्मर्दवितर्दि–	२·३६	७८	स्त्रियामाद–	१·१५	९
संयुक्तस्य	२·१	७०	स्त्रियामुदोतौ	३·२७	१३३
संवृगेः साहर–	४·८२	१९९	स्त्रियां जस्–	४·३४८	२६४
सर्वत्र लव–	२·७९	८७	स्त्रियां ङहे–	४·३५९	२६९
सर्वस्य साहो	४·३६६	२७१	स्त्रियां तदन्ता–	४·४३१	३०३
सर्वाङ्गादी–	२·१५१	१०४	स्थर्थयोस्तः	४·२९१	२४४
सर्वादेर्ङसे–	४·३५५	२६७	स्थविरविच–	१·१६६	४४
सषोः संयोगे	४·२८९	२४१	स्थष्ठाथक्क–	४·१६	१८७
साध्वसध्य–	२·२६	७६	स्थाणावहरे	२·७	७१
सामर्थ्योत्सुको–	२·२२	७५	स्थूणातूणे	१·१२५	३६
सावस्मदो–	४·३७५	२७५	स्थूले लोरः	१·२५५	६६
सिचेः सिञ्च–	४·९६	२०२	स्नमदाम–	१·३२	१४
सिनास्तेः सिः	३·१४६	१७१	स्नातेरब्भुत्तः	४·१४	१८७
सी ही हीअ	३·१६२	१७६	स्निग्धे वादितौ	२·१०९	९६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्निहुसिचोः	४·२५५	२३२
स्नुषायां ण्हो	१·२६१	६७
स्नेहाग्न्योर्वा	२·१०२	९४
स्पन्देश्चुलु—	४·१२७	२०७
स्पृशः फास—	४·१८२	२१७
स्पृशेश्छिप्पः	४·२५७	२३३
स्पृहः सिहः	४·३४	१९०
स्पृहायाम्	२·२३	७५
स्फटिके लः	१·१९७	५३
स्फुटिचलेः	४·२३१	२२६
स्मरेर्झर—	४·७४	१९८
स्यमोरस्योत्	४·३३१	२५८
स्यम्‌जस्—	४·३४४	२६३
स्यादौ दीर्घ—	४·३३०	२५७
स्याद् भव्य—	२·१०७	९५
स्रंसेल्हंस—	४·१९७	२२०
स्वपावुच्च	१·६४	२३
स्वपेः कमवस—	४·१४६	२१०
स्वप्ननीव्योर्वा	१·२५९	६७
स्वप्ने नात्	२·१०८	९५
स्वयमोर्थे	२·२०९	१२१
स्वरस्योद्वृत्ते	१·८	७
स्वराणां स्वराः	४·२३८	२२७
स्वराणां स्वराः प्रायो—	४·३२९	२५७
स्वरादनतो	४·२४०	२२८
स्वरादसंयुक्त	१·१७६	४६
स्वरेरन्त—	१·१४	८
स्वस्रादेर्डा	३·३५	१३६
स्वार्थे कश्च	२·१६४	१०८
स्विदां ज्जः	४·२२४	२२४
स्सिस्सयोरत्	३·७४	१४९

ह

हञ्जे चेट्याह्वाने	४·२८१	२४०
हद्धी निर्वेदे	२·१९२	११६
हन्खनो—	४·२४४	२२९
हन्द च	२·१८१	११३
हन्दि विषाद—	२·१८०	११३
हरिताले	२·१२१	९८
हरिद्रादौ	१·२५४	६५
हरीतक्यामी—	१·९९	३१
हरे क्षेपे	२·२०२	११८
हसेर्गुञ्जः	४·१९६	२१९
हासेन स्फुटे—	४·११४	२०५
हिस्वयोरि—	४·३८७	२७९
हीमाणहे	४·२८२	२४०
हीहीविदूषकस्य	४·२८५	२४१
हु खु निश्चय—	२·१९८	११७
हुं चेदुद्भ्याम्	४·३४०	२६१
हुं दानपृच्छा—	२·१९७	११७
हुहुरु घुग्घा—	४·४२३	२९९
हृ कृ तृज्राभीरः	४·२५०	२३१
हृदये यस्य	४·३१०	२५१
हो घोनुस्वारात्	१·२६४	६७
ह्ये ह्योः	२·१२४	९९
ह्रदे ह्रदोः	२·१२०	९८
ह्रस्वः संयोगे	१·८४	२७
ह्रस्वात् थ्यश्च—	२·२१	७४
ह्रस्वोमि	३·३६	१३६
ह्लादेरनअच्छः	४·१२२	२०६
ह्लो ल्हः	२·७६	८६
ह्वो भो वा	२·५७	८१

सूत्रसूची समाप्त ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- **धातु-रूप कौमुदी** । धातु रूपों का बृहद् संकलन । सम्पादक डॉ० राजू (राजेश्वर) शास्त्री मुसलगाँवकर (चौ.सं.भ. ५७)
- **परिभाषेन्दुशेखरः** । नागेशभट्ट कृत । भैरवमिश्र कृत 'भैरवी' टीका तथा लक्ष्मण त्रिपाठी कृत 'तत्वप्रकाशिका' टीका । सदाशिव शर्मा कृत नोट्स (का. ३१)
- **प्राकृतप्रकाशः** । वररूचि कृत भामह कृत 'मनोरमा' संस्कृत टीका तथा मथुराप्रसाद कृत हिन्दी टीका उदयराम शास्त्री डबराल कृत नोट्स भूमिका। सं० जगन्नाथ शास्त्री होशिंग (का. ३८)
- **प्रौढ़मनोरमा** । भट्टोजिदीक्षित कृत। हरिदीक्षित कृत 'लघुशब्द रत्न' भैरवमिश्र कृत 'भैरवी' वैद्यनाथ पायगुंडे 'भाव प्रकाश' तथा गोपाल शास्त्री नेने कृत 'सरला' टीका। अव्ययी-भावान्त (का. १२५)
- **रूपचन्द्रिका** । शब्द-धातुरुपाणां संग्रहः। सम्पादक- डॉ० राजू (राजेश्वर) शास्त्री मुसलगाँवकर (चौ.सं.भ. ५६)
- **लघुसिद्धान्तकौमुदी** । वरदराज कृत । 'ललिता' संस्कृत हिन्दी टीका सहित । डॉ० दीनानाथ तिवारी एवम् डॉ० कौशलकिशोर पाण्डेय । (का. २८४)
- **वाक्यपदीयम् ब्रह्मकाण्ड** । भर्तृहरि कृत। सूर्यनारायण शुक्ल कृत 'भावप्रदीप' टीका तथा नोट्स एवं रामगोविन्द शुक्ल कृत हिन्दी टीका तथा रुद्रप्रसाद अवस्थीकृत परिशिष्ट (का. १२४)
- **वार्त्तिकप्रकाशः** । अष्टाध्यायी की वृत्ति काशिका के वार्त्तिकों की व्याख्या, आनन्द प्रकाश मेधार्थी। (का. २४६)
- **शब्द-रूप कौमुदी**। शब्द रूपों का बृहद् संकलन। सं० डॉ० राजू (राजेश्वर) शास्त्री मुसलगाँवकर (चौ.सं.भ. ४८)

चौखम्भा संस्कृत भवन, वाराणसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org